एम०ए० संस्कृत प्रथम सत्र पाठ्यक्रम –MSKTC-102

संस्कृत

गद्य काव्य तथा साहित्यालोचन

इकाई 1-23

डॉ० सपना चन्देल

दूरवर्ती एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला - 5

विषयानुक्रमणिका पृ. संख्या

इकाई -1	संस्कृत गद्य-साहित्य : उद्भव एवं विकास	2-18
इकाई -2	बाणभट्ट का जीवन परिचय : काल एवं कृतित्व	19-27
इकाई -3	बाणभट्ट का काव्य-सौष्ठव	28-34
इकाई -4	महाकवि बाणभट्ट से सम्बन्धित प्रसिद्ध उक्तियाँ	35-49
इकाई -5	कादम्बरी कथामुख	50-61
इकाई -6	राजा शूद्रक वर्णन	62-76
इकाई -7	चाण्डाल कन्या वर्णन	77-91
इकाई -8	शुक परिचय एवं शूद्रक दिनचर्या वर्णन	92-105
इकाई -9	शूद्रक नित्य-कृत्य वर्णन	106-112
इकाई -10	विन्ध्याटवी एवं अगस्त्य आश्रम वर्णन	113-124
इकाई -11	पम्पा सरोवर एवं शाल्मलीतरु वर्णन	125-134
इकाई -12	शुक वर्णन	135-146
इकाई -13	शबर सैन्य वर्णन	147-159
इकाई -14	शुक-शावक वर्णन	160-170
इकाई -15	हारीत वर्णन	171-188
इकाई -16	जाबालि वर्णन	189-212
इकाई -17	आचार्य विश्वनाथ एवं साहित्यदर्पण का परिचय	213-220
इकाई -18	काव्य लक्षण	221-231
इकाई -19	वाक्य, महावाक्य, पद एवं शब्द शक्तियों के लक्षण	232-241
इकाई -20	शब्द शक्तियाँ	242-248
इकाई -21	रस सिद्धान्त	249-260
इकाई -22	रस के आवश्यक तत्त्व	261-266
इकाई -23	रस	267-277

इकाई-1
संस्कृत गद्य-साहित्य : उद्भव एवं विकास

संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 संस्कृत गद्य साहित्य का उद्भव एवं विकास

1.3.1 महाकवि बाणभट्ट के पूर्ववर्ती गद्यकार

1.3.2 महाकवि बाणभट्ट के परवर्ती गद्यकार

- स्वयं आकलन प्रश्न

1.4 सारांश

1.5 कठिन शब्दावली

1.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1.7 सहायक ग्रन्थ

1.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

स्नातकोत्तर द्वितीय सत्र प्रश्न पत्र गद्य काव्य तथा साहित्यालोचन से सम्बन्धित यह प्रथम इकाई है। वैदिक साहित्य में गद्य साहित्य का रूप उनमें वर्णित आख्यानों में दिखाई पड़ता है। इन आख्यानों में गद्य के साथ पद्य का भी भाग मिलता है जिसे 'गाथा' कहते है। ऋग्वेद में 'नाराशंसी' गाथाओं का उल्लेख मिलता है। वैदिक गद्य में छोटे-छोटे सरल एवं सुबोध शब्दों का प्रयोग है। संस्कृत गद्य का आरम्भ ब्राह्मण ग्रन्थों और उपनिषदों के गद्य में देखा जा सकता है। आरम्भिक शिलालेखों में गद्य-काव्य प्राप्त होते हैं। रूद्रदमन का गिरनार शिलालेख तथा हरिषेण रचित समुद्रगुप्त प्रशस्ति महत्वपूर्ण गद्यकाव्य के उत्तम उदाहरण है। पद्य की अपेक्षा गद्य काव्य की रचना बहुत कम हुई है। परन्तु जितना भी गद्यकाव्य प्राप्य है वह उत्तम श्रेणी का है। इस इकाई में आप संस्कृत गद्य काव्य की परम्परा का उद्भव, विकास, गद्यकाव्य के भेद, प्रमुख गद्य काव्यकारों का परिचय तथा आधुनिक संस्कृत गद्यकाव्य के बारे में अध्ययन करेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप संस्कृत गद्य काव्य की परम्परा का उद्भव किस प्रकार हुआ। साथ ही गद्यकाव्य के विकास क्रम के विषय में विस्तार से विश्लेषण कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- काव्य की गद्यविद्या के स्वरूप को जान सकेंगे।
- संस्कृत गद्यकाव्य की परम्परा के विकास से परिचित होंगे।
- गद्य परम्परा से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्यों का अध्ययन कर सकेंगे।
- गद्यकाव्य के भेदों को समझ सकेंगे।
- प्रमुख गद्यकाव्यकारों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

1.3संस्कृत गद्य साहित्य का उद्भव एवं विकास

संस्कृत गद्य-साहित्य का उद्भव और विकास दो रूपों में हुआ है-

(क) वैदिक संस्कृत गद्य साहित्य, (ख) लौकिक संस्कृत गद्य साहित्य।

(क) वैदिक संस्कृत गद्य-साहित्य- वैदिक काल में गद्य-साहित्य का सर्वप्रथम दर्शन हमें याजुष मन्त्रों में होता है। प्राचीनतम गद्य का उदाहरण कृष्ण-यजुर्वेद की तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त होता है। कृष्ण-यजुर्वेद की अन्य काठक, मैत्रायणी आदि संहिताओं में भी गद्य की मात्रा पद्य की अपेक्षा किसी प्रकार भी कम नहीं है। यजुर्वेद के बाद हमें अथर्ववेद में गद्य का प्रयोग मिलता है। इस वेद का छठा भाग गद्य में ही उपनिबद्ध है।

वैदिक मन्त्रों और यज्ञों की व्याख्या प्रस्तुत करने वाला समग्र ब्राह्मण-साहित्य गद्यात्मक ही है। ब्राह्मणों के परवर्ती-ग्रन्थ आरण्यकों एवम् उपनिषदों में गद्य की प्रचुरता स्पष्ट दिखाई देती है। संस्कृत गद्य इन मंत्रों आदि के रूप में हमको कृष्ण-यजुर्वेद में मिलता है। इन मंत्रों को 'यजुष्' कहते हैं। इसके पश्चात् हमको ब्राह्मण ग्रन्थों निरुक्त तथा सूत्र-ग्रन्थों के सूत्रों के गद्य के पश्चात् वृत्ति और भाष्य का गद्य प्राप्त होता है। महाभाष्य को **पतञ्जलि** ने लिखा है। गद्य-साहित्य में अधिक टीकाकारों की गद्य-रचनाएँ हैं।

"गद्यं कवीनाम् निकषं वदन्ति"- यह उक्ति प्राचीन-काल से ही गद्य की श्रेष्ठता प्रतिपादित करती हुई प्रचलित रही है। वैदिक काल से ही संस्कृत में गद्य प्रयुक्त हुआ है। प्राचीन-काल से ही गद्य का उपयोग प्रधानतया व्याकरण ग्रन्थों, टीकाओं, ज्योतिष आदि ग्रन्थों में हुआ है।

विश्व का सबसे प्राचीन साहित्य संस्कृत-साहित्य है, यह सर्वमान्य सिद्धान्त है। भारतीय सामाजिक जीवन का चरम लक्ष्य सदा ही शाश्वत-आनन्दोपलब्धि रहा है। अन्य देशों की तरह भारतीय भौतिक उन्नति के क्षेत्र में जीवनोपयोगी साधनों को जुटाने में ही व्यस्त न रहकर सत्य, शिव और सुन्दर के शाश्वत आनन्द की खोज ही भारतीयों की परम उपास्य रही है, यह प्राचीन संस्कृत-साहित्य के अनुशीलन से प्रमाणित है- "**संस्कृतं नामं दैवी वागन्वाख्याता महर्षिभिः"।** संस्कृत भाषा एक अमूल्य एवम् अनुपम निधि है। अनादि काल से हमारे देश में सामाजिक जीवन पर संस्कृत भाषा का अपरिमित प्रभाव पड़ा है। भारतीय साहित्य

उससे पूर्णतया अनुप्राणित है। 'देववाणी' पद से विभूषित होकर वह आज भी भारतीय जनता के हृदय में श्रद्धा का संचार करती है।

अंग्रेजी की अपेक्षा संस्कृत हम भारतीयों के जीवन को अधिक स्पर्श करती है। हमारा धार्मिक जीवन इसका ज्वलन्त प्रमाण है। 'वेदों' और 'उपनिषदों', 'रामायण' एवं 'महाभारत' तथा 'गीता' व 'भागवत' का आज भी देशव्यापी प्रचार है। हमारे देवालयों तथा तीर्थस्थानों में उसका प्रभाव आज भी अक्षुण्ण है। हमारे उपनयन, विवाह आदि समस्त संस्कार तथा अन्य अनगिणत धार्मिक कृत्य संस्कृत में ही सम्पन्न होते हैं। साधारण शिक्षा-प्राप्त भारतीय भी संस्कृत के दो-चार श्लोक अवश्य जानता है। संस्कृत साहित्य' जीवित' साहित्य है और दूसरों को जीवन प्रदान करने की क्षमता रखता है। इसी साहित्य की उत्कृष्टता ने जर्मनी, फ्रान्स, इंग्लैण्ड, अमेरिका आदि पाश्चात्य देशों के मनीषियों को अपनी ओर आकृष्ट किया। **आचार्य मम्मट** ने 'काव्यप्रकाश' में लिखा है-

"नियतिकृत नियमरहितां मयीमन्यपरतन्त्राम्।
नवरसरुचिरां निर्मितिमादधति भारती कवेर्जयति।।"

संस्कृत-साहित्य का इतिहास पिछले चार हजार वर्षों से हमारे पूर्वजों के मानसिक एवम् बौद्धिक विकास का इतिहास है। यह ज्ञान का प्रचार आर्य जाति का भौगोलिक प्रसार तथा उसकी संस्कृति की प्रगति है। जहाँ-जहाँ आर्य जाति की संस्कृति और वैभव फैला है, वहाँ-वहाँ संस्कृत-भाषा का विस्तार हुआ है। जब तक आर्य जाति पूर्णतया पंगु न हो गयी, तब तक वह बराबर इसी भाषा में अपने विचार लिखती गयी। चार-सहस्र वर्षों तक निरन्तर उस जाति ने अपनी विलक्षण बुद्धि का जादू इस भाषा में उतारा। इस लम्बी अवधि के बीच आर्यों में एक से एक उत्कृष्ट मेधावी हुए, एक से एक प्रकाण्ड मनीषी जन्मे। सबने अपनी प्रज्ञा की उर्वरता से संस्कृत को सजाया। वैदिक गद्य सरल, वर्णनात्मक एवं संवादात्मक है। उसमें अलंकारों, समास एवं प्रौढ़ि का अभाव है। मानवीय चेतना में सुख-दुख, करुणा, क्रोध, भय विलासादि की मार्मिक अनुभूति होती है। जब हृदय के मर्मस्थल पर इन अनुभूतियों के संवेग का गंभीर आघात होता है, तब सहसा उन अनुभूतियों से अनुस्यूत भाव प्रकट हो जाते हैं। इन्हीं भावों को काव्य कहा जाता है। वैदिक गद्य में इस प्रकार का न तो संवेग है और न ही अभिव्यञ्जना। अतः वैदिक गद्य मात्र गद्य है,काव्य नहीं। वैदिक गद्य का विकास चतुर्विध- (1) संहिता ग्रन्थों में, (2) ब्राह्मण ग्रन्थों में, (3) आरण्यक ग्रन्थों में तथा (4) निरुक्तादि वेदाङ्गों में हुआ है।

(ख) लौकिक संस्कृत गद्य-साहित्य- वाल्मीकि रामायण की अत्यधिक ख्याति के कारण लौकिक संस्कृत साहित्य को गद्य-रूप गौण होता चला गया। यद्यपि लौकिक संस्कृत गद्य की प्राचीनतम रचनाएँ आज उपलब्ध नहीं हैं, तथापि प्राचीन उपलब्ध ग्रन्थों में इनके सम्बन्ध में पर्याप्त विवरण प्राप्त होते हैं। सुप्रसिद्ध व्याकरण-वार्तिककार **कात्यायन** (400 ई०पू०) ने गद्य-काव्य की आख्यायिका नामक विधा का

स्पष्ट उल्लेख किया गया है। **पतञ्जलि** (200 ई पू०) के महाभाष्य में 'वासवदत्ता', 'सुमनोत्तरा' एवम् 'भैमरथी' नामक गद्य-काव्यों का उल्लेख प्राप्त होता है। इसके उपरान्त प्राचीन काल के शिलालेखों में भी गद्य का प्रयोग हुआ है। रुद्रदामन का गिरनार शिलालेख (150 ई०पू०) गुप्तकालीन शिलालेख, हरिषेण की प्रयाग प्रशस्ति का शिलालेख तथा विभिन्न स्थानों से प्राप्त सैकड़ों शिलालेख आज भी गद्य के प्राचीन-रूप के परिचायक हैं। प्रयाग के विजय स्तम्भ की निम्नलिखित उक्ति विदग्धों को सदा चमत्कृत करती रहेगी-

"सर्व पृथ्वी विजय जनितोदय व्याप्त निखिलवनितलां कीर्तिमितास्त्रिदशपति भवनगमनवाप्त ललितसुखं विचारमत्तक्षण इव भुवो बाहुरयमच्छ्रितः स्तम्भः।"

इन सभी शिलालेखों की भाषा प्रौढ़, समासबहुल, उदात्त एवम् अलंकृत है। कथाकार बाणभट्ट ने एक सिद्धहस्त गद्यकार भट्टारक हरिश्चन्द्र का नाम उद्धृत किया है। इसी प्रकार वररुचि-कृत, 'चारुमती', रोमिल्ल सौमिल्ल-कृत 'शूद्रक कथा', तिलकमञ्जरीकार धनपाल के कथनानुसार श्री पालित-कृत, 'तरंगवती कथा' और सातवाहन राजाओं के समय लिखी गयी 'शतकर्णी हरण' एवम् 'नोमवती कथा' आदि ग्रन्थ भी प्राचीन गद्य-परम्परा का समर्थन करते हैं। शंकराचार्य के गद्य का अनोखापन और रोचकता किसे बलात् आकृष्ट नहीं कर लेता है। शंकराचार्य के गद्य की प्रशंसा करते हुए बहुमुखी दार्शनिक विद्वान् **वाचस्पति मिश्र** ने उसे प्रशस्त तथा गम्भीर कहा है। उनके गद्य में जहाँ एक ओर ज्ञानजनित आनन्द की मन्दाकिनी बहती है, वहीं उनकी वाणी में दूसरी ओर मुरली की मधुर तान भी सुनायी पड़ती है। उन्होंने सभी उपनिषदों, ब्रह्म-सूत्र और गीता-जैसे दार्शनिक ग्रन्थों के अवाध प्रवाहपूर्ण भाष्य में अद्वैतवाद सिद्धान्त की स्थापना को उपस्थित किया है-

"न चायमस्ति नियमः पुरोऽवस्थिते एव विषये विषयान्तरमध्यस्थितम् इति। अप्रत्यक्षे अपि ह्याकारे बलास्तन मलिनता।"

जयन्त भट्ट न्यायशास्त्र के प्रौढ़ पण्डित हैं, उनकी 'न्यायमञ्जरी' न्यायदर्शन का प्रामाणिक ग्रन्थ-रत्न है। उनकी व्यंजनामयी रोचक ग्रन्थ-शैली का उदाहरण-

"आः क्षुद्र तार्किक! सर्वत्रानभिज्ञोऽसि ब्रह्मैव जीवात्मनो नहि ततोऽन्ये नहि दहनपिंडाद्विभेदनापि भान्त: स्फुलिंगा अग्निस्वरूपा भवन्ति तत् किं ब्राह्मण अविद्या न च ब्राह्मणोऽविद्या।"

इन आचार्यों के बाद संस्कृत-साहित्य का गद्य अत्यधिक कृत्रिम और अलंकृत शैली में विकसित हुआ। गद्य-काव्य के दो भेद हैं- (1) कथा और (2) आख्यायिका।

कथा लक्षण का साहित्यदर्पणकार ने 'साहित्यदर्पण' के परिच्छेद 6में निम्नलिखित कारिका में इस प्रकार वर्णित किया है-

"कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम्।"
"क्वचिदत्रभवेदार्या क्वचिद्वक्त्रापवक्त्रके।

आदौ पद्यैर्नमस्कारः खलादेर्वृत्तकीर्तनम्।।"

"कथांशानां व्यवच्छेद आश्वास इति बध्यते।

आर्या वक्त्रापवक्त्राणां छंदसा येन केनचित्।।"

"अन्यापदेशेनाश्वासमुखे भाव्यर्थ सूचनम्।"

कथा कल्पना पर आधारित होती है तथा आख्यायिका में ऐतिहासिक तथ्यों का स्पष्टीकरण होता है। कथा का वर्णन करने वाला लेखक भी हो सकता है तथा अन्य कोई भी हो सकता है। कथा को उपविभागों में बाँटा जा सकता है, जिन्हें लम्बक कहते हैं। इसमें पद्य आर्या छन्द में होते हैं। आख्यायिका के उच्छ्वास नामक उपविभाग होते हैं। इसमें पद्मों का प्रणयन वक्त्र और अपवक्त्र नामक छन्दों में होता है। कथा में कन्या-हरण, युद्ध, वियोग, प्रकृति आदि का वर्णन होता है, किन्तु आख्यायिका में नहीं। कथा में लेखक के द्वारा कुछ ऐसे विशेष शब्दों का प्रयोग किया जाता है जो कथा और आख्यायिका में भेद स्थापित करते हैं। संस्कृत ही ऐसी भाषा है, जिसमें गद्य भी काव्य कहलाता है। वास्तव में संस्कृत में कविता के लिए छन्द अनिवार्य नहीं है। छन्दबद्धता तो उसका बाह्य आकार है। यदि भाषा इससे ओत-प्रोत हो, सुष्ठु हो, पद-लालित्य हो, कल्पनाएँ सुन्दर और उच्च हों, वर्णन में मधुरता और अलंकार-वैभव आदि सब गुण हों तो संस्कृत गद्य-काव्य वास्तविक पद्य-काव्यों के आनन्द का संचार करता है। अतः गद्य भी काव्य कहलाता है। अलंकारशास्त्रियों ने ऐसे गद्य को भी काव्य कहा है। उन्होंने काव्य में दो भेद किये हैं- (1) पद्य-काव्य और (2) गद्य-काव्य।

गद्य-काव्य-सौष्ठव- संस्कृत-गद्य की प्रथम विशिष्टता है-लाघव या लघुता। जो विचार अन्य भाषाओं में लम्बे वाक्यों में प्रकट किये जाते हैं, वे संस्कृत में केवल कुछ शब्दों में ही स्पष्ट कर दिये जाते हैं। समास संस्कृत भाषा का प्राण है। ओज-गुण के कारण संस्कृत-गद्य में विचित्र प्रकार की भावग्राहिता तथा गाढ़-बन्धता का संचार होता है, जिससे गद्य का सौन्दर्य पूर्णरूप में खिल जाता है। ओज का प्रधान लक्षण है-समासबहुलता। यही ओज गद्य का प्राण है- **"ओजः समासभूयस्त्वमेतद्गद्यस्य जीवितम्"** यह उक्ति अलंकारिक दण्डी की है।

विजयस्तंभ के वर्णन में कवि की यह उक्ति सदा विदग्धों को चमत्कृत करती रहती है-

सर्वपृथ्वी विजयजनितोदय निखिलवनितलां कीर्तिमतास्त्रिदशपति।
भवनगमनावाप्तं ललितसुखविचरणामात्तलक्षण इव भुवो बाहुरयमुच्छ्रितः स्तम्भः।

गद्य-काव्यों में कृत्रिमता तथा अलंकारों के आधिक्य से बहुत जटिलता होती है, परन्तु फिर भी वे मधुर और काव्य के रस आदि गुणों से युक्त होने के कारण बहुत चित्ताकर्षक होते हैं। शृंगार इनका प्रधान रस होता है। गद्य-काव्यों की एक विशेषता यह भी है कि उनके विषय सांसारिक होते हैं। गद्य तो विचारों के प्रकट करने का मुख्य माध्यम है। उसके बिना युक्तियुक्त तथा प्रौढ़ बनाये अपने दार्शनिक विचारों को यथार्थ-रूप से प्रकट नहीं कर सकते। इसी दृष्टि से दार्शनिकों ने अपनी दार्शनिक शैली की सृष्टि की है। तथ्य तो यह है कि कोमल भावों को प्रकट करने की जितनी शक्ति संस्कृत में है, उतनी ही या उससे अधिक शास्त्र के दुरूह

तथ्यों के अभिव्यक्त करने की क्षमता भी उसमें विद्यमान है। अतः देववाणी का गद्य प्राचीनता, प्रौढ़ता, उपादेयता तथा भावाभिव्यक्ति की पुष्टि साहित्य का एक गौरवपूर्ण अंग है।

गद्य चार प्रकार का होता है-मुक्तक, वृत्तगन्धि, उत्कलिकाप्राय और चूर्णक। मुक्तक समासरहित होता है। वृत्तगन्धि में पद्य के अंश पड़े रहते हैं। उत्कलिकाप्राय में दीर्घ समास और चूर्णक में छोटे-छोटे समास होते हैं। साहित्यदर्पणाकार आचार्य विश्वनाथ ने भी कहा है –

वृत्तगन्धोज्झितं गद्यं मुक्तकं वृतगन्धि च
भवेदुत्कलिकाप्रायं चूर्णकं च चतुर्वधिम्।
आद्यं समास रहितं वृत्तभागयुतं परम्।।
अन्यदीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकम्।

1.3.1 बाणभट्ट के पूर्ववर्ती गद्यकार

गद्यकार सुबन्धु का समय-हम गद्य-काव्य के वास्तविक स्वरूप और उसके चर्मोत्कर्ष के विधायक सुबन्धु, दण्डी और बाण के समय और कृतियों का वर्णन करेंगे। इस विषय में एक विचित्र तथ्य यह है कि सुबन्धु और दण्डी के काल-निर्धारण में तथा बाण के साथ इन दोनों के काल-क्रम में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद हैं। **ए०वी० कीथ** ने सुबन्धु की अपेक्षा दण्डी का समय पहले माना है और इसकी पुष्टि में मुख्य रूप से निम्नलिखित बातों को प्रमाण के रूप में उपस्थित किया है-

(1) उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर दण्डी का अलंकार-ग्रन्थ 'काव्यादर्श' 500 ईसा-पूर्व का सिद्ध होता है।

(2) दण्डी की रचना सुबन्धु एवं बाण की अपेक्षा सरल है।

(3) सुबन्धु दण्डी के परवर्ती थे, इसका कोई पुष्ट प्रमाण नहीं है।

इस प्रकार बाण की अपेक्षा सुबन्धु को पहले मानने में कीथ ने निम्नलिखित बातों का सन्देह किया है-

(1) बाण के 'हर्षचरित' में सुबन्धु की रचना 'वासवदत्ता' का संकेत मिलता है।

(2) वाक्पतिराज के द्वारा भास, कालिदास और हरिश्चन्द्र के साथ सुबन्धु का स्पष्ट उल्लेख है।

पूज्यपाद बलदेव उपाध्याय ने सुबन्धु को बाण के पहले और दण्डी के बाद में रखा है। **डॉ० भोलाशंकर व्यास** ने सुबन्धु को सबसे पहले और बाण को सबसे बाद में रखा है। सुबन्धु और दण्डी की अपेक्षा अधिकतर विद्वान् बाण के 'हर्षचरित' में प्राप्त 'वासवदत्ता' के संकेतानुसार सुबन्धु को पहले मानते हैं। ये तीनों गद्य-काव्य के प्रणेता 550 ई० से लेकर 650 ई० के बीच में सौ वर्षों में माने जाते हैं। इनमें काल-क्रम की दृष्टि से सुबन्धु सबसे प्राचीन, दण्डी उसके बाद और बाण इन दोनों के बाद के हैं। इस तरह सुबन्धु के काल की अन्तिम सीमा छठी शताब्दी का मध्य है, जिसके काव्य की छाया बाण पर स्पष्ट रूप से पड़ी है।

दण्डी का समय भी छठी शताब्दी का उत्तरार्द्ध और सातवीं का पूर्वार्द्ध माना जाता है, क्योंकि कीथ और कुछ अन्य विद्वान् दण्डी को भास, और बाण से पूर्ववर्ती मानते हैं।

सुबन्धु की कृति-गद्य-काव्य के लेखकों में सुबन्धु ही सर्वप्रथम हैं, जिनका ग्रन्थ अलंकृत शैली में निबद्ध गद्य का उत्कृष्ट उदाहरण है। इनका एक ही ग्रन्थ है जो 'वासवदत्ता' के नाम से प्रसिद्ध है। सुबन्धु की 'वासवदत्ता' प्राचीन भारत की प्रसिद्ध आख्यायिका वत्सराज तथा उदयन की प्रणय-कहानी के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। यह पूरा कथानक कवि के मस्तिष्क की उपज है।

सुबन्धु का काव्य-शिल्प-सुबन्धु के बुद्धि-तत्व ने शैली-शिल्प को अत्यधिक आवृत कर लिया है। इस कारण रागात्मक तत्व का विधिवत् निर्वाह नहीं हो पाया है। कवि की चित्तवृत्ति पात्रों के हर्ष-विषाद आदि भावों के चित्रण में इतनी लीन होती दिखाई नहीं देती, जितनी शाब्दी-क्रीड़ा में। कवि की शास्त्रीय ज्ञान-प्रदर्शन की प्रवृत्ति तथा अलंकारों की प्रयत्नपूर्वक योजना करने की प्रवृत्ति उनके कल्पना-तत्व की वृत्ति में अधिकांश स्थलों पर पाठक के हृदय पर वर्ण्य विषय के संश्लिष्ट तथा प्रभावपूर्ण चित्रांकन के स्थान पर पाठक की बुद्धि को ही चमत्कृत करने की सामर्थ्य पायी जाती है-

"हृदय विलिखितमिव, उत्कीर्णमिव, प्रसुप्तमिव, कीलितमिव, निगलितमिव, वज्रलेपघटितमिव, अस्थिपञ्जर प्रविष्टमिव, मर्मान्तरस्थितमिव, मज्जारसशबलितमिव, अन्तरात्मानमधिाष्ठितमिव, रुधिरशयदवी भूतमिव, पलल-संविभान्तमिव, कन्दर्पकेतुमन्यमान: उन्मतेव अन्धेव, बधिरेव, मुकेव, शून्येव,निरस्तेन्द्रियग्रामेव, मूर्च्छाग्रहीतेव, यौवन-सागर तरलतरंगपरस्य परिवारतेव, रागरज्जुभि: परिवारतेव, कन्दर्पकुसुमवातैः कीलितेव, शृंगार भावनाविषसंघूणितेव, रूपपरिभावन शल्यकीलितेव, मल्यानिलापहृत जीवितं, वासवदत्ता, सखाजनेन सममेवमुमूर्च्छ।"

भाव-सौष्ठव-'वासवदत्ता' के गिने-चुने स्थल ऐसे अवश्य हैं, जहाँ भाव-पक्ष की सरलता देखने को मिलती है। स्वप्न में राजकुमार कन्दर्पकेतु को देखने पर प्रेमाकुल हुई राजकुमारी वासवदत्ता का चित्रण अच्छा बन पड़ा है। वासवदत्ता की सब इन्द्रियाँ सूनी सूनी हो रही थीं। वह राजकुमार कन्दर्पकेतु को अपने हृदयपटल पर चित्रित-सा, खुदा-हुआ-सा, जड़ा-हुआ-सा, विधा-हुआ-सा, अस्थिपञ्जर में धंसा हुआ-सा, शृंगार से जड़ा हुआ-सा, वज्रलेप से जड़ा हुआ-सा, मर्म-स्थलों में रमा हुआ-सा, मज्जा-रस में मिश्रित हुआ-सा, प्राणों में रमा हुआ-सा, अन्तःकरण में स्थित-सा, रुधिराशय में मिला हुआ-सा तथा माँस के साथ विभक्त हुआ-सा मान रही थी। वासवदत्ता उन्मत्त-सी, बहरी-सी, गूँगी-सी, शून्य-सी, इन्द्रियों से रहित-सी, मूर्च्छित-सी, अनिष्ट गृहों से उमड़ते हुए यौवन-रूपी सागर की लहरों से घिरी हुई-सी, स्नेहपाश से जकड़ी हुई-सी, कामदेव के बाणों से विद्ध हुई-सी, शृंगाररूपी विष से प्रभावित हुई-सी, मलयानिल से मृतप्राय होती हुई-सी सखियों के साथ मूर्च्छित हो गयी।

शब्द-चमत्कार-सुबन्धु के विषय में **श्री आनन्दवर्धन** का यह कथन पूर्णतया चरितार्थ होता है कि कविगण बहुधा कथावस्तु के प्रवाह तथा रस की अभिव्यक्ति का ध्यान नहीं रखते और अपना शब्द-कौशल दिखाने में ही मग्न रहते हैं-

"दृश्यन्ते च कवयोऽलंकार निबन्धनैकरसा अनपेक्षितरसाः प्रबन्धेषु।।"

विषय-विविधता-सुबन्धु की कृति में विषयान्तरों के बाहुल्य के साथ-साथ शब्द-भंडार का परिचय भी स्थल-स्थल पर मिलता है। वहाँ कल्पना तथा चरित्र-चित्रण का अभाव खटकता है।

श्लिष्ट-पद रचना-

"प्रत्यक्षारश्लेषमयी प्रपञ्चविन्यास वैदग्ध्यनिधिप्रबन्धम्।

सरस्वतीदत्तवरप्रसादश्चॅकः सुबन्धुः सुजनैकबन्धुः।।"

सुबन्धु में न हास, ओज और वैचित्र्य है और न बाण की-सी कल्पना-शक्ति एवं वर्णन-प्रतिभा ही। उनकी भाषा में सौष्ठव, प्रसाद और माधुर्य कम है तथा कृत्रिमता और शब्द-आदुम्बर अधिक है।

चित्रोपमता-सुबन्धु की चित्रोपम एवम् अलंकृत गद्य-शैली की आलोचना करते समय यह स्मरण रखना होगा कि उनके कथानक के लिए सरल और अलंकाररहित शैली अनुपयुक्त सिद्ध होती। शृंगारिक वैभव के चित्रण में, तीव्र मनोराग की अभिव्यक्ति में एवम् प्रभावोत्पादक वर्णन में 'पंचतंत्र' की-सी सरल शैली सर्वथा अप्रासंगिक होती है। यह दूसरी बात है कि सुबन्धु अलंकारों का मात्रातीत प्रयोग करके अपनी शैली के लालित्यमय प्रवाह की रक्षा नहीं कर सके हैं।

आलंकारिकता-सुबन्धु की रचना में श्लेष तथा विरोधाभास अलंकारों का ऐसा दुर्गम महाकान्तार है, जिसमें वास्तविक काव्य-सौंदर्य को ढूँढ़ निकालना कठिन हो जाता है। वे अलंकारों, दीर्घकाय समासों तथा पौराणिक संकेतों के प्रयोग में औचित्य की सीमा का अतिक्रमण कर बैठते है। इस कारण रस का आस्वादन दुर्लभ हो जाता है। दण्डी में वीरता, विचित्रता तथा शृंगारिकता का स्निग्ध एवम् स्मरणीय चित्रण है, किन्तु सुबन्धु चित्रकाव्य लिखने के फेर में पड़कर इन रम्य भावों का सफल अंकन नहीं कर सके। स्थान-स्थान पर नये रंगों को भरकर उन्होंने प्रत्येक चित्र को अतीव विचित्र बना डाला है।

कोमलकान्त पदावली-जहाँ सुबन्धु ने अपने श्लेष प्रेम को छोड़कर काव्य का प्रणयन किया है, वहाँ की शैली रोचक है तथा सहृदयों का पर्याप्त मनोरंजन करती है। वे पद्यों की रचना में सर्वथा समर्थ है-

"अविदितगुणापि सत्कवि भणितिः कवीनां नयति मधुधाराम्।
अनधिगतपरिमलपि हि, हरति नेत्रम् मालती माला।।"

(अर्थात् जिनको गुणों का ज्ञान नहीं होता है, सत्कवियों की वाणी उन श्रोताओं के कानों में मधु को उँडेलती है। गन्ध से परिचय न मिलने पर भी मालती पुष्पों की माला नेत्रों को बरबस खींचती है।)

प्रकृति-वर्णन-सुबन्धु ने प्राकृतिक दृश्यों का सुन्दर वर्णन किया है, जो श्लेष के प्रपंच से रहित होने के कारण पर्याप्त मनोरंजक है। प्रभात का वर्णन इसका स्पष्ट उदाहरण है। परन्तु यहाँ भी उपमा तथा उत्प्रेक्षा का समन्वय नहीं है, अपितु कुन्तक के द्वारा वर्णित विचित्र मार्ग का सबसे सुन्दर उदाहरण है। सुबन्धु की कृति पर बाणभट्ट की यह आलोचना वस्तुतः श्लाघ्य तथा पूर्ण है-

"कवीनामगलद् दर्पो नूनं वासवदत्तय।
शक्त्येव पांडुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम्।।"

उपर्युक्त श्लोक में वासवदत्ता के द्वारा कवियों के दर्प को चूर्ण कर देने की बात कही गयी

दण्डी का समय और उनकी कृति-दण्डी के आविर्भाव-काल के विषय में विद्वानों में बहुत मतभेद है। 9वीं शताब्दी के ग्रन्थों में दण्डी का उल्लेख पाया जाता है। **डॉ० बानेंट** का कथन है कि सिंहल भाषा के अलंकार-ग्रन्थ 'सिय-बस-लंकार' (स्वभाषालंकार) की रचना 'काव्यादर्श' के आधार पर की गयी है। इसके रचयिता राजा सेन प्रथम का समय 846-866 ई० था। 814 ई० के कन्नड़ी अलंकार-ग्रन्थ'कविराज मार्ग' में भी 'काव्यादर्श' की यथेष्ट छाप दीख पड़ती है। अतः दण्डी 400 ई के पहले ही हुए होंगे। दण्डी बाण के पहले हुए थे, या बाद में इस विषय में भी मतभेद है। **पीटरसन** और **याकोबी** की सम्मति में 'काव्यादर्श' के एक पद में 'कादम्बरी' के 'शुकनासोपदेश' की झलक मिलती है। दण्डी ने बाण और मयूर की प्रशंसा की है। 'अवन्तिसुन्दरी कथा' में कादम्बरी का वर्णन बाण की प्रसिद्ध कथा से मिलता-जुलता है। **डॉ० वेलवेलकर** ने दण्डी का समय सातवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध माना है। कुछ विद्वान् 'अवन्तिसुन्दरी कथा' के आधार पर दण्डी की रचनाओं में भारवि का संकेत मानकर उनका उक्त समय ही निर्धारित करते हैं। 'काव्यादर्श' में कालिदास के आधार पर पद मिलता है-

1. **"लक्ष्म-लक्ष्मीं तनोतीहि प्रतीतिसुभंगं वचः।"** **(दण्डी)**
2. **"मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म-लक्ष्मीं तनोति।।"** **(कालिदास)**
3. **"अरत्नालोक संहार्यमवार्यं 'सूर्यरश्मिभिः'।**
   दृष्टिरोधकरं यूनां यौवनप्रभवं तमः।। **(काव्यादर्श)**
4. **"केवलं च निसर्गत एवाभानुय भेद्यमरत्नलोकोच्छेद्यम्**
   प्रदीप प्रभापनेयमति गहनं तमो यौवन प्रभवम्।" **(कादम्बरी)**

किन्तु दण्डी की शैली के अध्ययन से वे बाण के पूर्ववर्ती प्रतीत होते हैं। 'दशकुमारचरित' की सरल एवम् प्रासादिक शैली बाण की शैली से प्रभावित हुई नहीं जान पड़ती। यदि दण्डी बाण के परवर्ती होते तो उनकी शैली बाण की शैली के समान श्लेष और वक्रोक्ति आदि अलंकारों से आक्रान्त अवश्य होती। इसके अतिरिक्त 'दशकुमारचरित' का भौगोलिक और राजनैतिक चित्रण हर्षवर्धन से पूर्व के भारत की ओर संकेत करता है, इसलिए दण्डी का स्थिति-काल 600 ई० के लगभग प्रतीत होता है।

रचना-महाकवि दण्डी के द्वारा प्रणीत तीनों ग्रन्थों की उपलब्धि वर्तमान साहित्य के इतिहासकारों की गवेषणा का फल है। इनमें 'दशकुमारचरित' और 'काव्यादर्श' तो दण्डी की निर्विवाद कृतियाँ हैं, किन्तु 'अवन्तिसुन्दरी कथा' जो हाल ही में प्रकाश में आयी है, उसे दण्डी की कृति मानने में विद्वानों में थोड़ा मतभेद अवश्य है। अधिकांश विद्वान् उसे दण्डी की रचना मानने के पक्ष में हैं। 'अवन्तिसुन्दरी कथा' के आधार पर दण्डी दाक्षिणात्य थे और उनकी जन्मभूमि काञ्ची थी। उनका जन्म एक शिक्षित ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बहुत भटकने के बाद उन्होंने काञ्ची के पल्लव-नरेशों की छाया में अपने दिन सुखपूर्वक बिताये थे। दण्डी का' दशकुमारचरित' गद्य-काव्यत्रयी में अपने कथानक की विविधता और घटनाओं की विचित्रता के कारण अपना स्थान नहीं रखता। संभवतः दण्डी को अपने कौतूहलपूर्ण रोचक आख्यानों को गद्य काव्य के रूप में देने की प्रेरणा **गुणाढ्य** की'बृहत्कथा' से मिली हो। इसमें पुष्पपुर नगर के दस राजकुमारों के विचित्र चरित्र का वर्णन है। यह दो पीठिकाओं में विभक्त है। 'काव्यादर्श' में 'छन्दोविच्छित्ति' नाम का उल्लेख पाकर कुछ विद्वानों ने 'छन्दोविच्छित्ति' को ही दण्डी की तीसरी रचना माना है, किन्तु यह उसी प्रकार उल्लेखित 'कलापरिच्छेद' नामक परिच्छेद की भाँति 'काव्यादर्श' का परिशिष्ट-स्वरूप ही प्रतीत होता है। सन् 1924 ई० में 'अवन्तिसुन्दरी कथा' नामक एक अपूर्ण गद्य-काव्य प्रकाशित हुआ, जिसे इसके सम्पादक **रामकृष्ण कवि महोदय** ने दण्डी की रचना माना है। 'अवन्तिसुन्दरी कथा' और 'दशकुमारचरित' के कथानकों में समानता है।

'पूर्व-पीठिका'-में पाँच उच्छ्वास हैं। **'दशकुमारचरित'-**में आठ उच्छ्वास हैं तथा **'उत्त-पीठिका'-** उच्छ्वास सहित है। इनमें केवल मध्य भाग 'दशकुमारचरित' ही दण्डी की रचना माना जाता है। 'दशकुमारचरित' में दस राजकुमारों ने अपने-अपने पर्यटनों के विचित्र अनुभवों तथा पराक्रमों का मनोहर वर्णन किया है। इसमें ऐन्द्रजालिक और मायावी साधुओं, कपटी-ब्राह्मणों, धूर्त-कूटनीतिज्ञों, व्यभिचारिणी-स्त्रियों और उन पर अनुरक्त प्रेमियों का स्पष्ट और चित्रात्मक वर्णन पाया जाता है।

दण्डी का चरित्र-चित्रण-दण्डी के यथार्थवादी दृष्टिकोण का प्रभाव उनके पात्र चयन तथा चरित्र-चित्रण पर स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ता है। संस्कृत के अधिकांश आदर्शवादी लेखकों के विपरीत दण्डी समाज के विभिन्न वर्गों से अनेक प्रकार के भले-बुरे पात्रों को अपनी आख्यानकों में स्थान देते हैं। इन कथाओं में हम न केवल राजाओं और राजकुमारों को पाते हैं, बल्कि ब्राह्मण भिक्षुकों, वेश्याओं तथा सुन्दर राजकुमारियों के विचित्र प्रसंग भी इन कथाओं में रखे गये हैं। 'मृच्छकटिकम्' के रचनाकार ने भी विविध वर्ग के पात्रों का चुनाव किया है। चरित्र-चित्रण के क्षेत्र में दण्डी असफल नहीं रहे हैं। हर्ष-विषाद, आशा-निराशा तथा मानवोचित सबलताएँ-दुर्बलताएँ आदि भी उनके पात्रों में विद्यमान हैं। प्रमुख पात्र राजवाहन उदार तथा प्रेमी-हृदय है। उपहार वर्मा दूसरों की सहायता के लिए चोरी का व्यवसाय भी अपना लेता है, किन्तु दूसरों के दुःखों के प्रति उसे सहानुभूति बनी रहती है। वह कुवेरदत्त की पुत्री को उसके प्रेमी से मिला देता है। साहसपूर्ण ढंग से चण्ड वर्मा की हत्या करने में भी वह संकोच नहीं करता।

विषय-वर्णन-'दशकुमारचरित' का कथानक घटना-प्रधान है, जिसमें नाना प्रकार की उल्लासमयी रोमांचक घटनाएँ पाठकों के हृदय में कभी विस्मय की और कभी विषाद की रेखाएँ खींचने में नितान्त समर्थ होती हैं। दण्डी ने तत्कालीन समाज को अपनी पैनी दृष्टि से देखा था, इसलिये तत्कालीन समाज का व्यंग्य और विनोद से भरा हुआ यथार्थ चित्रण विशेष हृदयद्रावक है। समाज के शोभन-पक्ष की अपेक्षा अशोभन पक्ष का ही चित्र प्रस्तुत करके दण्डी ने अपने चित्रण में जान डाल दी है। दण्डी के युग में शैव-धर्म की प्रधानता थी। उज्जयिनी शैव-धर्म की प्रधान पीठस्थली थी, जहाँ महाकाल का मन्दिर कालिदास के समय से ही धार्मिक जनता का ध्यान आकृष्ट करता था। उस युग में यह शिक्षा का केन्द्र भी था, जहाँ बालक शिक्षण के निमित्त भेजे जाते थे।

साहित्यिकता-साहित्यिक दृष्टि से 'दशकुमारचरित' श्लाघनीय रचना है। यह आख्यान-काव्य का उज्ज्वल दृष्टान्त है। इसके पात्र जीते-जागते प्राणी हैं, जिनका चित्रण शिष्ट हास्य व मधुर व्यंग्य का आश्रय लेकर किया गया है। कथानक में पारस्परिक मनोरम समन्वय मिलता है। वर्णन की स्वल्पता न तो कथानक के प्रवाह को रोकती है और न ही अवान्तर कथाएँ मुख्य कथा में किसी प्रकार का अवरोध खड़ा करती हैं।

गद्य-सौष्ठव (हास्य और व्यंग्य)-दण्डी की गद्य-शैली हास्य और व्यंग्य के भी सर्वथा अनुरूप बन पड़ी है। काममंजरी वेश्या अपना रूपजाल फैलाकर प्रतिष्ठित महर्षि मारीचि को भी अपने वश में कर लेती है। बेचारा मारीचि ऋषिवेश का परित्याग करके कामी पुरुष का बानक बना लेता है; किन्तु वह निष्ठुर वेश्या यह कहकर मारीचि की समस्त आशा-लताओं पर तुषारपात कर देती है- **"भगवन् अयमञ्जलिः। चिरमनुग्रहीतोऽयंदासीजनः, स्वार्थम् इदानीमनुष्ठेयः।"**

महर्षि-जनोचित व्यवहार छोड़कर विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करने के इच्छुक मारीचि को जब वेश्या- "अब अपना काम देखिये" कहकर फटकार देती है तो पाठक वेश्या की निष्ठुरता पर खीझ उठता है और साथ ही मारीचि की बेबसी एवं दुरवस्था पर भी उसे हँसी आये बिना नहीं रहती।

सरसता एवम् स्वाभाविकता-दण्डी की वर्णन-प्रणाली सरस और प्रासंगिक है। वे अपनी भाषा को आलंकारिकता के आडम्बरों से चित्र-विचित्र वनाने का प्रयास नहीं करते। इसी कारण वह नैसर्गिक, प्रवाहपूर्ण, मँजी हुई और मुहावरेदार है। दण्डी के गद्य में अपनी निजी विशेषता है। न तो वह सुबन्धु के समान 'प्रत्यक्ष व श्लेषमय' है, और न बाण के गद्य की भाँति 'सरस-स्वर वर्ण-पद' से सुशोभित साहित्यिक गद्य का आदर्श है। वह तो बहुत कुछ प्रतिदिन के कार्य में आने वाले व्यावहारिक गद्य का नमूना है। वाक्य प्रायः छोटे-छोटे हैं। वाक्य-विन्यास आयासजनक नहीं, अपितु ओजस्वी है। अर्थ की स्पष्टता, रस की सम्यक् अभिव्यक्ति, शब्द-विन्यास की चारुता तथा कल्पना की उर्वरता दण्डी की शैली के विशेष गुण हैं।

पदलालित्य-दण्डी के पदलालित्य की विद्वानों ने बड़ी प्रशंसा की है। अनुप्रास तथा मनोरम पद-विन्यास में वे कुशल हैं, जैसे-

"अयुग्मशरः परशयने चयमिष्यति निशाष्वपि श्मशानमधिसमे सखे! सैवा सज्जनाचारिता सारणि: रमणीयसि कारणेऽमणियानादरः संदृश्यते।"

सानुप्रास पदावली अतीव ललित बन पड़ा है। दण्डी में कहीं भी दीर्घकाय समासों का विकास काँट नहीं है। उनकी पदशय्या संस्कृत के अन्य गद्य-कवियों की महिमा मनोरम एवं लालित्य से मनोरम है, इसी प्रकार **'दण्डिनः पदलालित्यम्'** कहा गया है।

ओजस्विता-दण्डी अपने शब्द-शोधन में तथा लौकिक-अलौकिक सत्यों को ओजपूर्ण भाषा में व्यक्त करने में विशेष रूप से कुशल हैं, जैसे-

"देशान्तरमितिनेयं गणना विदग्धस्य पुरुषस्य आत्मानमात्मनाऽनवज्ञा दैवोद्धरन्ति सन्त:,न हि अलमिति निपुणोऽपि पुरुषोनियतिलिखितां लेखामतीक्रमितुम, इह जगति हि न निरीह देहिनं श्रियः संश्रयन्ते। जीवित हि नाम जन्मवतां चतुपाश्चान्हारनि।"

दण्डी भाषा को अलंकारमयी बनाने से नहीं चूकते हैं। एक भारतीय आलोचक ने दण्डी को ही एकमात्र कवि बताया है-**"कविर्दण्डी न संशयः।"** प्रस्तुत पद भी द्रष्टव्य है-

"जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाऽभवत्।"
कवी इति ततो व्याससे कवयः सत्यपि दण्डिनि।।"

1.3.2 महाकवि बाण के परवर्ती गद्यकार

बाण के परवर्ती प्रमुख गद्यकार निम्नलिखित हैं-

(1) भूषण भट्ट-बाणभट्ट के पुत्र भूषणभट्ट योग्य पिता के योग्य पुत्र हैं। **धनपाल** ने 'तिलकमंजरी' में बाण के पुत्र का नाम पुलिन्द बताया है। कुछ विद्वानों ने उसका नाम पुलिन भट्ट माना है। भूषण भट्ट ने' कादम्बरी' के उत्तरार्द्ध की रचना की है। भूषण भट्ट का कहना है कि पिता के स्वर्गवास के कारण कथा अधूरी रह गयी थी, किन्तु अनेक विद्वानों की माँग थी कि कथा पूरी की जाय, अतः उन्होंने आग्रह पूर्ण करने हेतु यह कथा पूरी की है, न कि कवित्व के दर्प से-

"याते दिवं पितरि तद्वचसैव सार्धं विच्छेदमपि मुवि यस्तु कथा प्रबन्धः।
दुःखं सतां तदसमाप्तिकृतं विलोक्य प्रारब्ध एव स मया न कवित्वदर्पात्।।"

कवित्व और योग्यता की दृष्टि से भूषण भट्ट बाण से बहुत न्यून हैं, तथापि उनके गुणों का उन्मूलन नहीं किया जा सकता है। उनमें वर्णन की चातुरी तथा उच्च कोटि का कवि-हृदय विद्यमान है। अधूरी कथा को उन्होंने जिस प्रकार दक्षता के साथ पूरा किया है, वह अत्यन्त प्रशंसनीय है।

(2) त्रिविक्रम भट्ट-'नलचम्पू' के प्रारंभ में त्रिविक्रम भट्ट ने अपने वंश का परिचय दिया है। उससे ज्ञात होता है कि ये शाण्डिल्य गोत्र के एक ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुए थे। इनके पितामह का नाम श्रीधर था और इनके पिता का नाम देवादित्य या नेमादित्य था। इनका समय 915 ई० के लगभग है। इनकी प्रमुख कृक्ति 'नलचम्पू' है, जो चम्पू होने के कारण गद्य-पद्यमयी रचना है। इनकी दूसरी कृति 'मदालसा चम्पू' है।

'नलचम्पू' में आर्यावर्त-वर्णन अत्यन्त रोचक और प्रभावकारी हुआ है। त्रिविक्रम भट्ट भी सुबन्धु के तुल्य श्लेष के प्रेमी कवि हैं। पूरे' नलचम्पू' में श्लेष की ही प्रधानता है। भावाभिव्यक्ति में सौन्दर्य है और अर्थ की रमणीयता सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। इनमें वर्णन की अपूर्व क्षमता है। इनके विरोधाभास के प्रयोग भी रोचक बन पड़े हैं।

3. धनपाल-'तिलकमंजरी' में धनपाल ने अपना संक्षिप्त परिचय दिया है। इसके अनुसार ये उज्जयिनी के निवासी ब्राह्मण थे। ये धारा के राजा मुंज और उनके भतीजे राजा भोज के सभा-पण्डित थे। अतः इनका समय 11वीं शती का पूर्वार्द्ध माना जाता है। 'प्रबन्ध-चिन्तामणि' में इनका जीवन-वृत्त मिलता है। इनकी 'तिलकमंजरी' पर बाण भट्ट का प्रभाव स्पष्ट रूप से लक्षित होता है। इन्होंने राजा मेघवाहन के वर्णन में बाण की शैली का पूर्णतया उपयोग किया है। इस ग्रन्थ में शब्द-सौष्ठव, अर्थ-गाम्भीर्य, वर्णन-वैचित्र्य, अलंकार-नैपुण्य, रस-नैपुण्य तथा भाव-प्रवणता प्रशंसनीय है। इसमें श्लेष अलंकार का संतुलित प्रयोग किया गया है।

4. वादीभ सिंह-जैन महाकवि वादीभ सिंह ने 'गद्य-चिन्तामणि' नामक ग्रन्थ की रचना की है। इनका समय 11वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध माना जाता है। इन्होंने **जिनसेन** के 'महापुराण' (9वीं शताब्दी) के आधार पर 11 लम्बों में 'जीवन्धर की कथा' का वर्णन किया है।

5. वामन भट्ट बाण-वामन भट्ट का समय 1500 ई० के लगभग है। इन्होंने 'वेमभूपालचरित' नामक गद्य-काव्य की रचना की है। यह 'हर्षचरित' के अनुकरण पर लिखा गया अपने आश्रयदाता का जीवन-चरित है। इस ग्रन्थ के आधार पर इन्हें 'बाण' की उपाधि दी गयी थी।

6. विश्वेश्वर पाण्डेय-ये अल्मोड़ा जिले के पाटिया ग्राम के निवासी थे। बाद में ये काशी में आकर बस गये थे। इनका समय 18वीं शताब्दी का पूर्व-भाग माना जाता है। इन्होंने 'मन्दार-मंजरी' नामक गद्य-काव्य के अतिरिक्त अन्य बीस ग्रन्थों की रचना की है। इनके अधिकांश ग्रन्थ व्याकरण और काव्यशास्त्र से सम्बद्ध हैं। इनकी काव्य-सम्बन्धी प्रमुख रचनाएँ 'आर्यासप्तशती', 'रोमावलीशतकम्', 'षड्ऋतुवर्णनम्', 'होलिकाशतकम्' एवम् 'कवीन्द्रकर्णाभरणम्' हैं। इनकी अन्तिम रचना 'मन्दार-मंजरी' अपूर्ण है। इसका उत्तरार्द्ध इनके किसी शिष्य ने लिखा है, ऐसी किंवदन्ती है। इस गद्य-काव्य में पुष्पपुर के राजा राजशेखर और रानी मलयवती के पुत्र चित्रभानु और मन्दारमंजरी के प्रेम और विवाह का वर्णन है।

7. हृषीकेश शास्त्री भट्टाचार्य- संस्कृत में गद्य लेखन की प्राचीन परम्परा वर्तमान युग में भी अक्षुण्ण रूप से चलती रही है और अब भी चल रही है। संस्कृत गद्य की प्राचीन परम्परा में यद्यपि शैली के प्रौढ़त्व और पाण्डित्य का परिचय विशेष रूप से मिलता है। आधुनिक लेखकों ने गद्य-साहित्य की नई भावना, नए विचार और नवीन भावाभिव्यक्ति की शैली को अपनाकर इसे सरल, सुबोध और प्रगतिशील बनाने में विशेष सहयोग दिया है। संस्कृत में इस प्रकार की शैली के प्रवर्तक श्री हृषीकेश शास्त्री भट्टाचार्य हैं।

भट्टाचार्य के पूर्वज बंगलादेश के यशोहर के (वर्तमान जैसोर जिले के धूलियापुर के) निवासी थे। ये शिक्षा के लिए पंजाब चले आये थे। इनका जन्म 1850 ई० में हुआ था। ये लाहौर में ओरिएन्टल कॉलेज के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष थे। इनसे पूर्व संस्कृत में पाश्चात्य शैली में लिखे गये निबन्धों का अभाव था, अतः इन्होंने इस नयी विधा को अपनाया और इस शैली में अनेक निबन्धों की रचना की। इस प्रकार से संस्कृत में नवीन निबन्ध-शैली के भी ये प्रवर्तक है।

8. अम्बिकादत्त व्यास- श्री अम्बिकादत्त व्यास आधुनिक गद्य के उन नायकों में अग्रणी हैं। इनके पूर्वज राजस्थान में जयपुर राज्य के अन्तर्गत भानपुरा के निवासी थे। इनके पितामह बाराणसी में आकर बस गये थे। इनका जन्म 1858 ई० में हुआ था। 12 वर्ष की आयु में ही इन्हें सुकवि की उपाधि मिल गयी थी। इन्हें 'भारत-रत्न' और 'घटिकाशतक' की उपाधियाँ भी मिली थीं। ये एक घड़ी (24 मिनट) में 100 श्लोक बनाने की क्षमता रखते थे, अतः इन्हें 'घटिकाशतक' की उपाधि दी गयी थी। व्यासजी नवीन शैली के उन नायकों में प्रमुख स्थान रखते हैं। इनको रचनाओं में 'शिवराज विजय' सर्वोत्तम उपन्यास है।

9. पण्डिता क्षमाराव- नवीन शैली के उन नायकों में पण्डिता क्षमाराव भी प्रमुख हैं। इनका जन्म पूना में सन् 1890 ई० में हुआ था। इनके पिता पंण्डित शंकर पांडुरंग थे। वे अपने समय के संस्कृत के उद्भट विद्वान् थे। क्षमाराव के बचपन में ही इनके पिता का स्वर्गवास हो गया था, अतः इनका बचपन अभाव में ही बीता। बड़ी ही कठिनाई से इनकी शिक्षा हो सकी। हाईस्कूल उत्तीर्ण होने से पूर्व ही ये संस्कृत में काव्य-रचना करने लगी थीं। ये बचपन से ही अत्यन्त प्रतिभाशालिनी थी।

क्षमाराव ने 1930 ई० में संस्कृत में लिखना प्रारम्भ किया। उससे पूर्व वे अँग्रेजी में लिखती थीं। इनकी 'सत्याग्रह-गीता' का प्रकाशन पेरिस से हुआ था। इन्होंने संस्कृत में महाकाव्य, खण्डकाय, गीतिकाव्य, जीवनचरित और आधुनिक पद्धति पर निबन्ध एवम् कहानियाँ आदि लिखी हैं। इनकी कथाओं में सामयिक विषयों की चर्चा है और सामाजिक कुरीतियों आदि पर विचारों की अभिव्यक्ति है।

वर्तमान युग में संस्कृत गद्य-परम्परा को जीवित और प्रगतिशील बनाये रखने में उपर्युक्त लेखकों के अतिरिक्त, जिन गद्यकारों का विशेष सहयोग रहा है, उनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं-

1. श्री शैल दीक्षित या तिरुमलाचार्य- इनका जन्म चिन्नपट्ट के निकट 1809 ई० में हुआ था। इन्होंने 'भारती-विलास' में शेक्सपीयर के 'कॉमेडी ऑफ एरर्स' का संस्कृत में रूपान्तर किया है।

2. श्री तिम्म कवि (19वीं शती कास्टार)- ये पिट्टापुर के निकट चंद्रपालयम के रहने वाले थे। समकक्ष 'सुजन्मनः कुमुदचन्द्रिका' नामक संस्कृत गद्य-काव्य की रचना की है।

3. श्री शैल ताताचार्य (1863-1926 ई०)- इनका जन्म कांची में हुआ था। इन्होंने कतिपय संस्कृत नाटक लिखे हैं।

4. श्री कृष्णमाचार्य (1869-1924 ई०)- ये मद्रास में संस्कृत स्टडीज के अधीक्षक थे। 'सहृदय' नामक पत्र में इनकी संस्कृत-रचनाएँ प्रकाशित होती थीं।

5. श्री अप्पा शास्त्री- इनका जन्म कोल्हापुर में 1873 ई० में हुआ था। ये 'संस्कृत-चन्द्रिका' पत्रिका के सम्पादक थे। इनकी प्रारम्भिक रचनाएँ इस पत्रिका में प्रकाशित हुई हैं।

6. श्री अनन्ताचार्य- इनका जन्म 1874 ई० में कांची में हुआ था। ये 'मंजुभाषिणी' पत्रिका के सम्पादक थे।

7. महामहोपाध्याय पं० रामावतार शर्मा (1878-1929)- इन्होंने संस्कृत निबन्ध-कला का गौरव विशेष रूप से बढ़ाया है। इनके साहित्यिक निबन्ध 'कला-कौमुदी' में संगृहीत हैं। ये निबंध 'मित्रगोष्ठी' में भी प्रकाशित हुए थे।

8. श्री कल्याणराम शास्त्री (रचना-काल 19वीं शती का अन्तिम चरण और 20वीं शती का प्रारंभ)- इन्होंने 'कनकलता' नामक उपन्यास लिखा है।

9. श्री हरिचरण भट्टाचार्य- इनका जन्म 1879 ई० में हुआ था। इन्होंने बंकिमचन्द्र के उपन्यास 'कपालकुण्डला' का सन् 1918 में संकृत में अनुवाद प्रकाशित कराया था।

10. श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी- इनका जन्म मैसूर में 1887 ई० में हुआ था। ये 1922 ई० में बंगलौर के सेन्ट्रल कॉलेज में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष थे। इन्होंने दो उपन्यास लिखे है- 'शैवालिनी' और 'कुमुदिनी'।

11. श्री कविरत्न कृष्णमाचार्य (1883-1933 ई०) इन्होंने कुछ निबन्ध लिखे हैं। इनकी प्रसिद्ध रचना 'मन्दारवती' उपन्यास है।

12. श्री दिलीप दत्त शर्मा- इनका जन्म 1886 ई० में हुआ था। ये गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर में प्रधानाध्यापक थे। इन्होंने 1935 ई० के लगभग दो ग्रन्थ 'मुनि चरितामृतम्' और 'प्रतापचम्पू' प्रकाशित कराये।

13. श्री नारायण शास्त्री खिस्ते- ये 'वाराणसेय सरस्वती भवन' के पुस्तकालय के अध्यक्ष थे। इन्होंने संस्कृत में अपने युग के उन्नायक पाँच महान् विद्वानों का चरित 'विद्वच्चरितपंचकम्' नामक पुस्तक में लिखा है।

14. श्री भगीरथ प्रसाद त्रिपाठी 'वागीश'-इन्होंने 1942 ई० के लगभग 'कथा-संवर्तिका' नामक काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित कराया है। इसमें 13 बालोपयोगी कथाएँ हैं जो लोककथाओं पर आधारित हैं।

उपर्युक्त लेखकों के अतिरिक्त अन्य आधुनिक लेखकों में **(1) श्रीपादशास्त्री हसूरकर (इन्दौर)** ने सरल और प्रवाहपूर्ण गद्य में अनेक चरितात्मक ग्रन्थ लिखे हैं। **(2) श्री स्वामी भागवताचार्य** और **श्री चारुदेव शास्त्री** ने 'कालिदास नाट्य-कथामंजरी' नाम से कालिदास के नाटकों की कथा सुन्दर संस्कृत गद्य में लिखी है। **(3) श्री महालिंगम् शास्त्री** ने भास के नाटकों की कथा गद्य में लिखी है। इनका 'कलिप्रादुर्भाव' नाटक विशेष प्रशंसनीय रहा है। **(4) श्री टी० के० गणपति शास्त्री** ने 'सेतुयात्रानुवर्णनम्' नामक यात्रा-ग्रन्थ लिखा है। यह सरल संस्कृत का सुन्दर नमूना है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. वैदिक काल में गद्य-साहित्य का सर्वप्रथम उल्लेख कहाँ मिलता है?
2. प्राचीनतम गद्य का उदाहरण कृष्ण यजुर्वेद की किस संहिता में मिलता है?
3. कथा किस पर आधारित होती है?
4. आख्यायिका किस पर आधारित होती है?
5. मुख्य रूप से काव्य के कितने भेद हैं?
6. गद्य कितने प्रकार का होता है?
7. कथायां .... वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम्।
8. गद्यं कवीनाम् .... वदन्ति।

1.4 सारांश

इस अध्याय में संस्कृत गद्य-साहित्य के उद्भव एवं विकास को वर्णित किया गया है। इसमें गद्य काव्य के भेदों तथा प्रकारों का वर्णन उदाहरण सहित किया गया है। इस ईकाई में बाणभट्ट के पूर्ववर्ती, परवर्ती गद्यकाव्यकारों एवं आधुनिक गद्यकाव्यकारों का वर्णन वर्णित है।

1.5 कठिन शब्दावली

1. निकषम् - कसौटी **2. उद्भव** - उत्पत्ति **3. प्रशस्ति** - प्रशंसा

4. दुरूह - कठिन **5. सौष्ठव** - उत्तमता **6. चारूता** - सुदंरता

1.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. याजुष मंत्रों में 2. तैत्तिरीयसंहिता 3. कल्पना पर
4. ऐतिहासिक तथ्यों पर 5. दो 6. चार प्रकार
7. सरसं 8. निकषं

1.7 सहायक ग्रन्थ

1. कादम्बरी - सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2. कादम्बरी कथामुख - सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3. साहित्य दर्पण - सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4. बाणभट्ट का साहित्यिकअनुशीलन - अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बंग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5. बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी - नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6. साहित्यदर्पण - सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

1.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. संस्कृत गद्य-साहित्य के उद्भव पर प्रकाश डालिए।
2. संस्कृत गद्य साहित्य के विकास क्रम का वर्णन कीजिए।
3. बाणभट्ट के पर्वूवर्ती गद्यकाव्यकार का परिचय दीजिए।
4. आधुनिक गद्यकाव्यकारों का उल्लेख कीजिए।

इकाई-2
बाणभट्ट का जीवन परिचय : काल एवं कृतित्व

संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 महाकवि बाणभट्ट : एक परिचय

2.3.1 बाणभट्ट का स्थिति काल

2.3.2 बाणभट्ट की रचनाएँ

2.3.3 कादम्बरी की कथावस्तु

- स्वयं आकलन प्रश्न

2.4 सारांश

2.5 कठिन शब्दावली

2.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

2.7 सहायक ग्रन्थ

2.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

आपने महाकवि बाणभट्ट के विषय में पूर्व में अवश्य पढ़ा होगा। प्रस्तुत इकाई में महाकवि बाणभट्ट के परिचय के साथ-साथ बाणभट्ट का स्थिति काल, कर्तृत्व, कादम्बरी की कथावस्तु का वर्णन किया जाएगा।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- महाकवि बाणभट्ट के जीवनवृत्त से परिचित होंगे।
- समय के माध्यम से बाणभट्ट के काल को जानने में सक्षम होंगे।
- बाणभट्ट की कृतियों से अवगत होंगे।
- कादम्बरी की कथावस्तु का ज्ञान होगा।

2.3 महाकवि बाणभट्ट : एक परिचय

संस्कृत साहित्य में बाणभट्ट का नाम अत्यन्त प्रसिद्ध है। संस्कृत महाकवियों में आपका स्थान अतीव उन्नत है। संस्कृत गद्य के तो आप आचार्य हैं। 'गद्य कवीनां निकषं वदन्ति' उक्ति प्रसिद्ध ही है- गद्य कवियों की कसौटी है। उनकी 'कादम्बरी' संस्कृत साहित्य में गद्य काव्य का आदर्श है। इनका जीवन-परिचय स्वयं की रचनाओं में प्राप्त होता है।

'हर्षचरित' के पहले तीन उच्छ्वासों में बाण ने अपनी आत्मकथा लिखी है। 'कादम्बरी' के प्रारम्भ में भी उन्होंने अपने वंश का संक्षिप्त परिचय दिया है। बाण ने अपने कुल की पौराणिक उत्पत्ति का विस्तार से वर्णन किया है। उनके वंश के प्रवर्तक दधीच तथा सरस्वती के पुत्र सारस्वत के चचेरे भाई वत्स थे। वत्स के कुल में कुबेर का जन्म हुआ, जिनका समय 450-430 ई० के लगभग प्रतीत होता है। कुबेर उद्भट विद्वान थे।

जगुगृहेभ्यसत्समस्तवाङ्गयैः ससारिकैः पंजरवर्तिमिः शुकैः।
निगृह्नमाणा वटवः पदे-पदे यंजूषि सामानि च यस्य शंकिताः।।

कुबेर के चार पुत्र हुए-अच्युत, ईशान, हर और पाशुपत। पाशुपात बाण के प्रपितामह थे। कादम्बरी में बाण ने इसका उल्लेख नहीं किया है। इनके पुत्र अर्थपति हुए, जिनके ग्यारह पुत्रों में से एक बाण के पिता चित्रभानु थे। बाण की माता का नाम राजदेवी था। बाण के दो पारशव (शूद्र-स्त्री से उत्पन्न) भाई चित्रसेन और मित्रसेन तथा चार चचेरे भाई गणपति, अधिपति, तारापति और श्यामल थे। बाण की जब बाल्यावस्था रही थी, तभी उनकी माता का देहान्त हो गया था, अतः उनके पिता ने उनका माता की भाँति लालन-पालन किया।

वत्स के समय से ही बाण के पूर्वजों का निवास स्थान प्रीतिकूट नामक ग्राम था, जो हिरण्यवाह अथवा शोणनदी के पश्चिमी तट पर स्थित था। उसी के समीप मल्लकूट और यष्टिगृह नाम के दो ग्राम थे, जिनके उपरान्त हर्ष का साम्राज्य आरम्भ होता था। पिता की मृत्यु के समय बाण की अवस्था चौदह वर्ष की थी। उस समय तक बाण का उपनयन संस्कार हो चुका था। पिता की मृत्यु से बाण को बड़ा दुःख हुआ और वे कुछ दिन तक घर पर ही बड़े कष्ट से दिन बिताते रहे। योग्य संरक्षक का अभाव हो जाने पर अब बाण का स्वभाव बदल गया।

अतः वह अनेक शैशवोचित चपलताओं में फँस गये और देशाटन करने के लिए निकल पड़े। इस पर्यटन-कार्य में बाण के अनेक समवयस्क मित्र भी सहायक हो गये। बाण ने इन मित्रों और सहायकों की एक लम्बी सूची हर्षचरित में दी है, जिसमें विभिन्न वर्गों के भिन्न-भिन्न रुचियों वाले लोग सम्मिलित हैं। बाण के इस प्रकार स्वच्छन्द हो जाने पर उनका उपहास भी किया गया। अपनी यह यात्रा करते हुए बाण ने अनेक बड़े-बड़े राजकुलों को देखा, गुरुकुलों में विद्या प्राप्त की तथा अनेक गुणवान् व्यक्तियों और विद्वानों के सम्पर्क में आने का अवसर भी उन्हें मिला।

पर्याप्त समय बाद बाण इस पर्यटन को समाप्त करके फिर अपने घर बाह्मणाधिवास (प्रीतिकूट) लौट आये। बाण के लौटने पर उनके परिचितों को बड़ा हर्ष हुआ और अब वे अपने मित्रों के साथ सानन्द घर

पर रहने लगे। ग्रीष्म के दिनों में एक दिन बाण का पारशव-भ्राता चन्द्रसेन, उनके घर आकर बोला- आर्य ! महाराजाधिराज श्री हर्षदेव के भ्राता कृष्ण ने किसी दीर्घाध्वग को आपके समीप भेजा है, जो दरवाजे पर खड़ा है।

तब बाण ने कहा-उसे शीघ्र अन्दर ले आओ। अन्दर प्रवेश करते हुए लेखहारक को देखकर बाण ने कृष्ण का कुशल पूछा। कुशल सुनाकर उसने कृष्ण का पत्र बाण को दिया। बाण ने उस पत्र को स्वयं पढ़ा।

तदनन्तर मेखलक ने मौखिक संदेश में कृष्ण की ओर से कहा- मेरा तुम पर निर्व्याज स्नेह है। चुगलखोर लोगों ने तुम्हारी अनुपस्थिति में सम्राट् के कान भर दिये हैं। ईर्ष्या-द्वेष रखने वाले कुछ लोगों ने लड़कपन की तुम्हारी चंचलता-भरी खुराफातों से उद्विग्न होकर कुछ झूठी-सच्ची बातें सम्राट् से कह दी हैं। अन्य लोगों ने उन बातों को सत्य समझकर इधर-उधर प्रचार कर दिया है। अनेक मुखों से एक-सी बातें सुनकर सम्राट् ने भी वैसी ही अपनी धारणा बना ली है।

किन्तु तुम्हारे विषय में मैंने सम्राट् से निवेदन किया तो मेरी बात को उन्होंने स्वीकार कर लिया है। अतः अब समय को व्यर्थ बिताना उचित नहीं है। अब तुम शीघ्र ही राजभवन में आओ। पर्याप्त संकल्प-विकल्प करने के बाद बाण ने सम्राट् हर्ष की सेवा में उपस्थित होने का निश्चय किया। प्रस्थान कालोचित्त अनेक मांगलिक कृत्यों को सम्पादित करके बाण प्रीतिकूट से चले और तीसरे दिन वे हर्ष के दरबार में पहुँचे। बाण को हर्ष के सामने उपस्थित किया गया। सर्वप्रथम तो सम्राट् का उसके प्रति व्यवहार क्रोधपूर्ण रहा और सम्राट् ने उन्हें 'महानयं भुजङ्ग' तक कह डाला। बाण हर्ष का ऐसा रुख देखकर कुछ क्षण तो मौन रहे, किन्तु फिर भी अपने सम्बन्ध में जनता में फैले हुए प्रवादों की नम्रतापूर्वक निस्सारता बताते हुए उन्होंने अपने द्वारा की गयी भूलों को लड़कपन का दोष बताया और भविष्य में सम्राट् को अच्छी प्रकार जीवन बिताने का विश्वास दिलाया। शीघ्र ही बाण हर्ष के कृपाभाजन बन गये और राज्य द्वारा उन्हें धनमान की प्राप्ति हुई।

2.3.1 बाणभट्ट का स्थिति काल

सम्राट् हर्षवर्धन के सभा-पण्डित होने के कारण बाणभट्ट का समय सरलतापूर्वक निश्चित किया जा सकता है। हर्ष का राज्याभिषेक अक्टूबर 606 ई० में हुआ तथा उनकी मृत्यु 648 ई० में हुई। ये तिथियाँ ताम्र-दानपत्रों तथा 621 से 645 ई० तक भारत में भ्रमण करने वाले चीनी यात्री ह्वेनसांग के संस्मरणों के आधार पर स्वीकृत हो चुकी है। अतः बाण कासमय सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध है।

उक्त समय की पुष्टि बहिरंग एवं अन्तरंग प्रमाणों से भी होती है। रुय्यक ने अपने 'अलंकारसर्वस्व' (1150 ई०) में बाण के 'हर्षचरित' का अनेक बार उल्लेख किया है। क्षेमेन्द्र(1050 ई०) ने अपनी रचनाओं में अनेक स्थलों पर बाण के नाम का उल्लेख किया है। रुद्रट-कृत 'काव्यालंकार' के टीकाकार नमिसाधु (1060 ई०) ने 'कादम्बरी' और 'हर्षचरित' को क्रमशः कथा तथा आख्यायिका का नमूना बताया है। भोज (1025 ई०) ने अपने 'सरस्वतीकण्ठाभरण' में एक स्थल पर बाण के पद्य की अपेक्षा उनके गद्य को अधिक उत्कृष्ट बताया है- **"यादृग्गद्यविधी बाणः पद्यबन्ध न तादृशः।"**

धनंजय (1000 ई०) के 'दशरूपक' में बाण का इस प्रकार उल्लेख हुआ है-**'यथा हि महाश्वेतावर्णनावसरे भट्टबाणस्य।'**आनन्दवर्धन (850 ई०) के 'ध्वन्यालोक' में बाण की दोनों गद्य-कृतियों का उल्लेख है। वामन (800 ई०) ने अपनी 'काव्यालंकारसूत्रवृत्ति' में 'कादम्बरी' के **'अनुकरोति भगवतो नारायणस्य'**इन शब्दों को उद्धृत किया है। इस प्रकार आठवीं शताब्दी से लगाकर बारहवीं शताब्दी के प्रमुख लेखकों ने बाण तथा उनकी कृतियों का स्पष्ट उल्लेख किया है। अतः सप्तम शतक के पूर्वार्द्ध में उनकी स्थिति थी।

अन्तरंग प्रमाणों से भी उक्त समय ही सिद्ध होता है। अपने 'हर्षचरित' के प्रारम्भिक पद्य में बाण ने इन कवियों एवं कृतियों का उल्लेख किया है- व्यास, वासवदत्ता, भट्टार, हरिश्चन्द्र, सातवाहन, प्रवरसेन-कृत सेतुबन्धु, भास, कालिदास, बृहत्कथा और आढयराज। इन कवियों में से कोई भी सातवीं शताब्दी के बाद में नहीं हुए। हर्ष की सभा में बाण का प्रवेश इनके शासनकाल के उत्तरार्द्ध में हुआ था।

2.3.2 बाणभट्ट की रचनाएँ

महाकवि बाण की कीर्ति उनके हर्षचरित और कादम्बरी नामकगद्यकाव्य पर ही आधारित है। किन्तु बाण की कुछ अन्य रचनाएँ भी बतायी जाती हैं, जोनिम्नलिखित हैं-

(1) चण्डीशतक-इसमें चण्डीदेवी की स्तुति एक सौ श्लोकों में की गई है।

(2) पार्वती परिणय-यह कालिदास के 'कुमारसम्भव' महाकाव्य की कथा पर आधारित एक नाटक है।

(3) मुकुटताडित-यह नाटक ग्रन्थ आज उपलब्ध नहीं है। इसे नलचम्पू की एक प्राचीन टीका में तथा भोज के 'शृंगारप्रकाश' में बाण रचित बताया गया है।

(4) शारदान्द्रिका-'दशरूपक' तथा 'भावप्रकाश' में इसका कुछ संकेत मिलता है, किन्तु उपलब्ध न होने के कारण इसके विषय में कुछ भी कहना कठिन है। वस्तुतः 'हर्षचरित' और 'कादम्बरी' ही बाण की प्रामाणिक एवं प्रख्यात रचनायें हैं। अन्य रचनाओं की प्रामाणिकता के विषय में प्रायः विद्वानों में मतभेद ही है-

(i) हर्षचरित-'हर्षचरित' का अध्ययन करने से पता चलता है कि यह कवि की प्रथम रचना है। इसे बाण ने स्वयं एक आख्यायिका बताया है। इसमें सम्राट हर्षवर्धन का चरित्र वर्णन है।

(ii) कादम्बरी-'कादम्बरी' बाण का ही नहीं, सम्पूर्ण संस्कृत-साहित्य का सर्वोत्कृष्ट गद्य काव्य है। इसकी कथा काल्पनिक है। बाण ने इसे 'कथा' बताया है। इसके दो भाग हैं-पूर्व भाग और उत्तर भाग।

बाणभट्ट 'कादम्बरी' पूर्ण नहीं कर पाये थे कि उनका देहान्त हो गया। उनके पुत्र ने इसकी पूर्ति उनके मरणोपरान्त की। यही 'कादम्बरी' का उत्तरार्द्ध है। ऐसा निःस्पृह तथा पितृभक्त पुत्र साहित्य-संसार में शायद ही कोई दूसरा मिल सके। उत्तरार्द्ध के आरम्भ में बाणतनय ने लिखा है-

याते दिवं पितरि तद्वचसैव सार्धे विच्छेदमाप भुवि यस्तु कथाप्रबन्धः।
दुःखं सतां तदसमाप्तिकृतं विलोक्य प्रारब्ध एप च मया न कवित्वदर्पात्।।

पिताजी के स्वर्गवासी होने पर यह कथा प्रबन्ध भी उनके वचन के साथ ही संसार में विच्छिन्न हो गया। इसके समाप्त न होने से सज्जनों के दुःख को देखकर ही मैंने इसे आरम्भ किया है, कवित्व के घमण्ड से नहीं। यह तो पिताजी का ही प्रभाव है कि उनके गद्य की भाँति में लिख सका हूँ। निम्नलिखित श्लोक दृष्टव्य है-

कादम्बरीरसभरेण समस्त एव मत्तो न किञ्चिदपि चेतयते जनोऽयम्।
भीतोऽस्मि यन्न रसवर्णविवर्जितेन तच्छेपमात्मवचसाध्यनुसंदधानः।।

ऐसे निःस्पृह पुत्र का साहित्य-संसार नाम तक नहीं जानता। डॉ० व्यूलर ने इनका नाम भूषण भट्ट रखा था। परन्तु खोज से इनका नाम 'पुलिन' या 'पुलिन्द भट्ट' सिद्ध होता है। 'कादम्बरी' की शारदा लिपि में लिखित किसी प्रति की पुष्पिका में यही नाम मिलता है। इसकी प्रामाणिकता मुंज के समय (100 वीं सदी के अन्त) में लिखित धनपाल की 'तिलकमंजरी' से सिद्ध होती है-

केवलोऽपि स्फुरन् बाणः करोति विमदान् कवीन्।
किं पुनः क्लृप्तसन्धानः पुलिन्दकृतसन्निधिः।।

इस पद्य में श्लेषालंकार के द्वारा बाण के पुत्र का नाम 'पुलिन्द' बताया गया है। इसके बाद में 'हर्षचरित' में सम्राट् हर्ष की जीवन-गाथा वर्णित है। बाण के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली अन्य किसी घटना की इससे कोई सूचना नहीं मिलती, फिर भी हर्षचरित में बाण ने अपना जीवन-परिचय दिया है, जिससे अनेक उपयोगी निष्कर्ष निकलते हैं। अनेक संस्कृत कवियों की भाँति बाण का जीवन निर्धनता में नहीं बीता था। 'हर्षचरित' के उपर्युक्त विवरण के आधार पर कहा जा सकता है कि बाण के पास पैतृक सम्पत्ति भी पर्याप्त थी और हर्ष के आश्रय में रहने पर वे और भी अधिक समृद्ध बन गये थे।

बाणभट्ट ने अपनी सन्तति के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा है। इसका कारण सम्भवतः यह रहा हो कि 'हर्षचरित' की रचना करने के काल तक इनके कोई सन्तान न हुई हो। बाद में इनके पुत्र हुआ, जिसने 'कादम्बरी' के उत्तर-भाग की रचना की। बाणभट्ट अपने ग्रन्थ 'कादम्बरी' का पूर्व-भाग ही लिख पाये थे कि उनका देहावसान हो गया और शेषांश को उनके पुत्र ने पूर्ण किया।

'कादम्बरी' संस्कृत-साहित्य का सर्वश्रेष्ठ गद्य-काव्य है। यदि प्राचीन आचार्यों द्वारा किये गये गद्य-काव्य के उपभेदों की दृष्टि से विचार करें तो कह सकते हैं कि 'कादम्बरी' में कथा का लक्षण प्रायः ठीक बैठ जाता है। अतः वह कथा है। 'हर्षचरित' के कथासार से यह स्पष्ट है कि इसकी कथावस्तु में कवि ने कल्पना के द्वारा कुछ परिवर्तन भले ही कर दिये हों, मूलतः वह एक प्रख्यात ऐतिहासिक कथानक ही है। इसके विपरीत कादम्बरी की कथा कल्पित है, किन्तु इस कथा की मौलिकता में कुछ विद्वानों को सन्देह है। उनका कहना है

कि बाण ने कादम्बरी की कथा गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' से ग्रहण की है। इस प्रकार संक्षेप में महान् कवि बाणभट्ट के जीवन, समय एवं कृतित्व के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से पर्याप्त जानकारी उपलब्ध होती है।

2.3.3 कादम्बरी की कथावस्तु

एक दिन विदिशा नगरी में राजा शूद्रक नव-प्रभात की स्वर्णिम वेला में राज-सभा के धर्मासन पर विराजमान थे। उसी समय एक चाण्डाल कन्या ने सभा-मण्डप में प्रवेश किया। वह अपने साथ पिंजरे में वैशम्पायन नामक एक अद्‌भुत मेधावी शुक को लेकर आयी थी।

उस शुक ने राजा की प्रशंसा में अपने दक्षिण चरण को उठाकर एक श्लोक पढ़ा और उनका समुचित अभिवादन किया।तोते के इस आश्चर्यजनक शास्त्र-ज्ञान और व्यवहार को देखकर राजा ने उसके वृत्तान्त को जानने का कौतूहल प्रकट किया। उत्तर में तोते ने राजा को विन्ध्याटवी में अपने जन्म से लेकर जाबालि के आश्रम तक पहुँचने का इतिहास सुनाया और साथ ही जाबालि के द्वारा वर्णित अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त भी इस प्रकार निवेदित किया-

उज्जयिनी में तारापीड़ नाम के एक राजा थे। उनकी महारानी का नाम विलासवती था। राजा के बृहस्पति के समान बुद्धिमान मन्त्री का नाम शुकनास और मन्त्री की पत्नी का नाम मनोरमा था। राजा के कोई सन्तान नहीं थी, अतः महारानी विलासवती सदा चिन्तित रहती थीं। राजा ने बार-बार धैर्य बँधाकर रानी को देवार्चन की सलाह दी। बहुत दिनों की अर्चना के बाद भगवान की अनुकम्पा से उन्हें पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई। उसी दिन महामन्त्री शुकनास को भी एक पुत्र हुआ। राजा ने अपने कुमार का नाम चन्द्रापीड तथा महामन्त्री ने अपने पुत्र का नाम वैशम्पायन रखा। एक साथ ही दोनों का पालन-पोषण हुआ। एक ही गुरुकुल में दोनों कुमारों ने सभी प्रकार की शिक्षाएँ प्राप्त की। अध्ययन-समाप्ति के बाद राजा ने युवराज चन्द्रापीड का राज्याभिषेक किया। इस अवसर पर महामन्त्री शुकनास ने युवराज को सारगर्भित उपदेश देकर उनके समुचित कर्तव्य-मार्ग का निर्देश किया। शिकार खेलने के प्रसंग में एक दिन राजकुमार किन्नर-मिथुन का पीछा करते हुए जलाशय की खोज में अच्छोद सरोवर पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने वीणा पर आलाप करती महाश्वेता नाम की एक गन्धर्व कन्या को देखा। युवराज के पूछने पर महाश्वेता ने उनको बताया कि वह पुण्डरीक नाम के एक तपस्वी युवक को देखकर उस पर मोहित हो गयी थी। लेकिन संयोग के पूर्व ही पुण्डरीक मदन-व्यथा से इस संसार से चल बसा। पुण्डरीक के दिवंगत होने पर वह तपस्विनी के वेष में उससे पुनर्मिलन की आशा लिए अच्छोद सरोवर पर रहने लगी। महाश्वेता के दुःख से दुःखी होकर उसकी सखी कादम्बरी ने भी कौमार्य-व्रत की प्रतिज्ञा की।

वहीं पर चन्द्रापीड और कादम्बरी का साक्षात्कार हुआ। प्रथम दर्शन में ही दोनों एक-दूसरे के प्रेम-पाश में उलझ गये, किन्तु इसी बीच पिता की आज्ञा पाकर मित्र वैशम्पायन को सेना के साथ लौट आने को कहकर चन्द्रापीड शीघ्र राजधानी को लौट गये। जब बहुत दिन के बाद भी वैशम्पायन नहीं लौटा तो चन्द्रापीड को संदेह हुआ तथा वे अपने मित्र को ढूँढ़ने के लिए निकल पड़े। वहाँ पर उनको फिर महाश्वेता मिली। एक ब्राह्मण कुमार ने उस पर आसक्त होकर उससे प्रणय-याचना की थी। बहुत समझाने पर भी जब वह नहीं माना, तब महाश्वेता ने इस अशिष्ट प्रसंग से क्रुद्ध होकर उसे शुक हो जाने का शाप दे दिया।

उधर पत्रलेखा से चन्द्रापीड के आगमन का समाचार सुनकर कादम्बरी भी उससे मिलने के लिए महाश्वेता के आश्रम में आई। लेकिन अपने प्रियतम के मृत-शरीर को देखकर अचेत होकर भूमि पर गिर

पड़ी। जब चन्द्रापीड की चिता पर अपने प्राण विसर्जित करने को वह उद्यत हुई तो उसी समय आकाशवाणी ने उसे ऐसा करने से मना करके चन्द्रापीड की शरीर रक्षा का आदेश दिया। आकाशवाणी ने यह भी सूचना दी कि कादम्बरी और महाश्वेता का अपने-अपने प्रियतम से निकट भविष्य में ही पुनर्मिलन होने की निश्चित संभावना है।

महाराज। जाबालि मुनि के द्वारा अपने पूर्व-जन्म की कथा सुनकर मेरी समस्त विद्या उद्‌बुद्ध हो गयी। मेरे हृदय में पुनः महाश्वेता के प्रति अपने पूर्व-प्रेम की स्मृति हो आयी। मैं उससे मिलने के लिए आतुर होकर उड़ चला, किन्तु इस चाण्डाल-कन्या ने मुझे पकड़कर रख लिया और आज आपके उपहार के रूप में इस सभा भवन में उपस्थित किया है। इसके अतिरिक्त में और कुछ नहीं जानता हूँ। इतनी कथा सुनने के बाद चाण्डाल-कन्या ने राजा से निवेदन किया-"मैं इस शुक के रूप में विद्यमान पुण्डरीक की माता लक्ष्मी हूँ। मैंने अब तक इसे दुष्कर्मों से बचाया है। आप चन्द्रापीड हैं। आप दोनों ने अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त जान लिया है। आपके तथा इस शुक के शाप की अवधि समाप्त हो रही है। आप दोनों ही अब इस शरीर का परित्याग करके मनोवांछित आनन्द का उपभोग करें।"लक्ष्मी की इतनी बात सुनकर राजा शूद्रक को भी अपने पूर्वजन्म का स्मरण हो आया। उसी क्षण शूद्रक के प्राण निकल गये। उधर वसन्त का आगमन हुआ। कादम्बरी ने चन्द्रापीड के शरीर को अलंकृत किया। चन्द्रापीड जीवित हो उठे। इतने ही में पुण्डरीक भी चन्द्रलोक से उतर पड़ा। राजा और रानी के हर्ष की सीमा न रही। चन्द्रापीड तथा पुण्डरीक इन दोनों का अपनी प्रियतमा कादम्बरी और महाश्वेता से पुनर्मिलन हुआ और सभी सुख व शान्ति से रहने लगे।

लक्ष्मी ने जिस शाप का संकेत शूद्रक से किया था, उसका रहस्य यह था कि महाश्वेता के प्रेमी पुण्डरीक ने चन्द्रमा को पुनःपुनः जन्म लेने का शाप दिया था। चन्द्रमा ने भी पुण्डरीक को वही शाप दिया। इसी पारस्परिक शाप के कारण चन्द्रमा ने चन्द्रापीड और पुण्डरीक ने वैशम्पायन के रूप में जन्म लिया। पुनः उसी शाप के कारण चन्द्रापीड शूद्रक का और वैशम्पायन ने शुक का जन्म ग्रहण किया। शुक की कथा समाप्त होने के साथ ही शाप की अवधि भी समाप्त हो चली, तब चन्द्रापीड तथा कादम्बरी और पुण्डरीक तथा महाश्वेता का सुखद संयोग हुआ।

'कादम्बरी' में बाण की सबसे मौलिक और अनूठी कल्पना जो प्रेम के अलौकिक स्वरूप तथा रहस्य की प्रतीक है- वह है नायिका की नायक की शरीर-रक्षा करते हुए पुनर्मिलन की प्रतीक्षा। इस भावना के लिए बाण **"आशावन्यः कुसुमसदृशप्रायशो हाङ्गनानाम्। सद्यः पाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रुणद्धि।।"** कालिदास की इस मान्यता के ऋणी मालूम पड़ते हैं।

इस प्रकार बाण ने अपनी काव्य-कल्पना से 'बृहत्कथा' की शुष्क और निष्प्राण कथा में सरसता और सजीवता का संचार किया और 'हर्षचरित' में हर्ष के रूखे-सूखे ऐतिहासिक जीवन-वृत्त को काव्य की अलंकृत साज-सज्जा से रमणीयता प्रदान की। बाण ने ही सर्वप्रथम साहित्य नियमानुसारी प्रौढ़ गद्य-काव्य का भव्य स्वरूप निर्धारित किया। उनकी काव्य-कला का सुन्दर विलास 'कादम्बरी' और 'हर्षचरित' में विद्यमान है।

उनकी एकमात्र उपन्यास-रचना कादम्बरी समग्र संस्कृत-साहित्य में उपन्यासों के अभाव की पूर्ति करती है। इन्होंने 'कादम्बरी' में भाव-पक्ष तथा कला-पक्ष का समान रूप से निर्वाह किया है।

कादम्बरी में तीन जन्मों की अद्‌भुत कथा और उपकथाओं के मिश्रण से कुछ जटिलता अवश्य आयी है, किन्तु उसके स्वाभाविक विकास और निर्वाह में कवि-कला को पर्याप्त सफलता मिलती है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. कादम्बरी के रचयिता कौन है?
2. कादम्बरी किस विधा की रचना है?
3. कादम्बरी का प्रमुख रस कौन सा है?
4. कादम्बरी के नायक कौन है?
5. कादम्बरी की नायिका कौन है?
6. कादम्बरी की रीति क्या है?
7. कादम्बरी के कथानक का मूल स्रोत क्या है?
8. चन्द्रापीड़ कहाँ का युवराज है?
9. कादम्बरी के पूर्वार्द्ध भाग का रचयिता कौन है?
10. कादम्बरी के उतरार्ध भाग का रचयिता कौन है?
11. बाणभट्ट के पूर्वज कहाँ रहते थे?
12. बाणभट्ट के पिता कौन थे?
13. बाणभट्ट की माता का क्या नाम है?
14. कादम्बरी का अर्थ क्या है?
15. कादम्बरी का नायक प्रथम जन्म में किस पात्र के रूप में उपस्थित होता है?
16. बाण के पुत्र का क्या नाम है?
17. उज्जैन के राजा तारापीड़ के पुत्र कौन है?
18. पुण्डरीक का घनिष्ठ मित्र कौन है?
19. शुकनास किस राजा का मंत्री था?
20. शुकनास की पत्नी कौन थी?
21. चन्द्रपीड़ की सेविका कौन है?
22. इन्द्रायुध कौन है?
23. इन्द्रायुध पूर्वजन्म में कौन था?
24. पुण्डरीक की माता कौन थी?
25. पुण्डरीक के पिता कौन थे?
26. महाश्वेता किसी प्रेमिका थी?

2.4 सारांश

इस इकाई में बाण के वंशानुक्रम का वर्णनवर्णित है। बाणभट्ट के काल, उनकी रचनाओं एवं कादम्बरी की संक्षिप्त कथावस्तु का वर्णन किया है। कथावस्तु के आधार पर बाणभट्ट के पाण्डित्य को वर्णित किया है।

2.5 कठिन शब्दावली

1. क्लिष्टता - कठिनता **2. रूक्षता** - रूखापन, **3. जगत्सर्वम्** - सारा जगत

4. गर्भित - जिसने कुछ छिपा रखा हो **5. कटु**-कड़वा **6. सौन्दर्य**-सुन्दरता

7. परिलक्षित-जो स्पष्ट रूप से दिखाई दे।

2.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. महाकवि बाणभट्ट	2. कथा	3. शृंगार	4. चन्द्रापीड़
5. कादम्बरी	6. पांचाली	7. बृहत्कथा	8. उज्जियनी
9. महाकवि बाणभट्ट	10. पुलिन्द भट्ट	11. प्रीतिकूट	12. चित्रभानु,
13. राजदेवी	14. मदिरा	15. चन्द्रापीड़	16. पुल्लिंद भट्ट
17. चन्द्रापीड़	18. कपिंजल	19. तारापीड़	20.मनोरमा,
21. पत्रलेखा	22. चन्द्रापीड़ का घोड़ा	23. कपिंजल	24.लक्ष्मी
25. श्वेतकेतु	26. पुण्डरीक		

2.7 सहायक ग्रन्थ

1. कादम्बरी - सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2. कादम्बरी कथामुख - सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3. साहित्य दर्पण - सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4. बाणभट्ट का साहित्यिकअनुशीलन - अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5. बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी - नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाला दिल्ली।
6. साहित्यदर्पण - सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

2.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. महाकवि बाणभट्ट का जीवन परिचय लिखो।
2. कादम्बरी की कथावस्तु लिखिए।
3. बाणभट्ट का स्थिति काल स्पष्ट कीजिए।
4. कादम्बरी की कथामुख के आधार पर समीक्षा कीजिए।

इकाई-3
बाणभट्ट का काव्य-सौष्ठव

संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 बाणभट्ट का काव्य-सौष्ठव

3.3.1 वस्तु-विन्यास

3.3.2 चरित्र-चित्रण

3.3.3 प्रेम और सौन्दर्य का वर्णन

3.3.4 प्रकृति-वर्णन

3.3.5 मानव-सौन्दर्य का चित्रण

3.3.6 रस-पेशलता

3.3.7 बाण की आलंकारिक भाषा-शैली

- स्वयं आकलन प्रश्न

3.4 सारांश

3.5 कठिन शब्दावली

3.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

3.7 सहायक ग्रन्थ

3.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में महाकवि बाणभट्ट के काव्य सौष्ठव के अन्तर्गत वस्तु-विन्यास, प्रेम और सौन्दर्य, प्रकृति वर्णन, मानव सौन्दर्य का चित्रण, रसपेशलता, अलंकारिक भाषा शैली, चरित्र-चित्रण, अलंकृत शैलीगत विशेषता का वर्णन किया गया है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जानने में सक्षम होंगे-

- बाणभट्ट की काव्यगत विशेषता से परिचित होंगे।
- बाणभट्ट की अलंकारिक भाषा शैली से अवगत होंगे।

- प्रकृति-चित्रण, वस्तु विन्यास का ज्ञान होगा।

3.3 बाणभट्ट का काव्य-सौष्ठव

महाकवि बाणभट्ट वीणावादिनी भारती के वरद पुत्र थे। इनकी कादम्बरी गद्य रचना की अद्वितीय पुस्तक है। बाणभट्ट की कविता-कामिनी की भारतीय आलोचकों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। **गोवर्धनाचार्य** ने इनको साक्षात् वाणी का अवतार माना है। महाभारत- काल में जिस प्रकार शिखण्डिनी शिखण्डी बनी थी। उसी प्रकार वीणावादिनी सरस्वती ने भी अत्यधिक प्रगल्भता उपलब्ध करने हेतु बाण के रूप में अवतार लिया। यथा-

जाता शिखण्डिनी प्राग्यथा शिखण्डी तथाऽवगच्छामि।
प्रागल्भ्यमधिकमासुं वाणी बाणो वभूवेति।।

बाण में गद्य-काव्यकार की सभी विशेषताएँ मुखरित हो उठी हैं। एक ओर वे चमत्कारवादी कवियों की कोटि में आते हैं, तो दूसरी ओर वे उन रससिद्ध कवियों की श्रेणी में आते हैं, जिनके यशःकाय में जरा-मरणज भय की शंका नहीं होती। उनके महाकाव्य की आलोचना करते समय समीक्षकों को तत्कालीन काव्यादर्श को नहीं भूलना चाहिए। बाण के समय में गद्य-काव्य की आदर्श श्लेषमय रचना होती थी। वक्रोक्ति को ही काव्य का प्राण समझा जाता था। यही कारण है कि बाण ने अपने वर्णन में वक्रोक्ति को विशेष महत्त्व दिया है। बाण का उद्देश्य अपनी कथा एवं आख्यायिका के द्वारा अलंकृत गद्य-काव्य की रचना करना था, क्योंकि उस युग में अलंकृत गद्य-शैली ही समादृत थी। बाण की रचनाएँ सामान्य पाठक के लिए नहीं, अपितु उनके लिए हैं जो अलंकृत काव्य से रस प्राप्त करने में समर्थ विद्वान् हैं। बाण ने अपनी रचनाएँ सहृदय जन के लिए ही प्रस्तुत की थीं। उनकी शैली में सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति, अलंकृत-वर्णन प्रणाली उत्कृष्ट प्रकृति-प्रेम उर्वर-कल्पना, अजस्त्र शब्द-राशि तथा मौलिक अर्थो की उद्भावना- ये समस्त गुण सर्वत्र समान रूप से उपलब्ध रहते हैं।

3.3.1 वस्तु-विन्यास-

भारतीय मानस-हंस गन्धर्वों के दिव्य-लोक का अन्तरंग वरण करने के लिए आकुल थे। चन्द्रापीड और कादम्बरी उस सुपर्ण के दो पंख हैं, जिनके बल पर कवि की कल्पना ने पृथ्वी और आकाश के बीच में ऊँचे उठने का प्रयत्न किया। इसके विपरीत कादम्बरी की कथा-वस्तु काल्पनिक, बहुत विस्तृत एवं जटिल है। इसमें तीन जन्मों के कथानक को लिया गया है और कथानक में कथानक इस प्रकार से गुँथे हुए हैं कि पाठक कभी-कभी मूल तारतम्य को खो बैठता है। संक्षेप में कथा का उपसंहार स्वयं कवि द्वारा होता है। इस प्रकार सम्पूर्ण कथानक एक पहेली-सा ज्ञात होता है। किसी भी एक पात्र द्वारा सम्पूर्ण कहानी नहीं कही जाती। पात्र उतनी ही सूचना देते हैं, जितनी उन्हें ज्ञात है। इन सब सूचनाओं के सम्मिलन से घटना-प्रवाह आगे बढ़ता चला जाता है। इस प्रकार अनेक विविधताओं के कारण रोचकता बनी रहती है। अन्त में चाण्डाल कन्या ने भी बताया है कि मैं पुण्डरीक की माता लक्ष्मी हूँ, यह शुक पुण्डरीक है और आप (शूद्रक) चन्द्रापीड हैं। इतना बताते ही शूद्रक को कादम्बरी का प्रेम स्मृत हो उठा। उसके प्राण निकल गये और उधर चन्द्रापीड

(जिसके शव की देखरेख कादम्बरी रो रही थी) जीवित हो उठा। शुक की आत्मा भी पुण्डरीक के मृत शरीर में प्रविष्ट हो गयी जो चन्द्र लोक मेंसुरक्षित था। तत्पश्चात् महाश्वेता, पुण्डरीक, कादम्बरी और चन्द्रापीड सब एकत्र हो गये तथा विवाहित होकर सुखपूर्वक रहने लगे।

3.3.2 चरित्र-चित्रण-

'कादम्बरी' का चरित्र चित्रण बड़ा उदात्त एवं बाण के कल्पना-वैभव और वर्णन-कौशल का परिचायक है। कवि ने बड़ी सूक्ष्मता से कादम्बरी के पात्रों की मनोवृत्तियों को मार्मिक शब्दों में प्रस्तुत किया है। पं० चन्द्रशेखर पाण्डेय के शब्दों में सुकुमार सौम्य युवक हारीत, उदार नृपति तारापीड, आदर्श अमात्य शुकनास, रानी विलासवती, छाया की भाँति चन्द्रापीड का अनुसरण करने वाली किन्तु कवि की उपेक्षिता, पत्रलेखा, स्नेहमय कठोर कपिंजल, शुभ्रवदना-तपस्विनी महाश्वेता- ये पाठक के अन्तःस्थल पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं। कादम्बरी का चरित्र तो नितरां मनोहर है। कादम्बरी बाण की लेखिनीरूपी तूलिका से चित्रित होकर एक सजीव तथा अत्यन्त प्रभावशाली पात्र के रूप में पाठक के मानस पर छा जाती है। कादम्बरी मुग्धा नायिका है जो केवल प्रणय करना जानती है। कादम्बरी के भावों का बाण ने सूक्ष्मता से वर्णन किया है। बाण ने उसके अन्तर्द्वन्द्व, उसकी संयोग और वियोगमयी अवस्थाओं एवं उसकी गम्भीर भावुकता का अत्यन्त सूक्ष्म एवं कौशलपूर्ण सजीव वर्णन किया है जो पाठक को आत्म विभोर कर देता है। बाण ने प्रजापालक शूद्रक और वृद्ध अनुभवी अमात्य शुकनास का चित्रण भी बहुत सुन्दर ढंग से किया है। महाश्वेता एक तपी हुई वनिता है जो प्रणय के सच्चे मार्ग पर प्रतिष्ठित कादम्बरी की प्रिय सखी है। कादम्बरी महाश्वेता का व्यक्तित्व किसी भी अंक में दुर्बल नहीं है। पत्रलेखा को भी बाण ने विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान किया है। बाण ने पात्रों के रूप-सौन्दर्य के चित्रण में भी अपनी कवित्व शक्ति का परिचय दिया है। व्यक्ति के चरित्र में, उसके रूप-सौन्दर्य की सूक्ष्मतम कल्पना में बाण को अद्भुत सफलता मिली है। कादम्बरी के सौन्दर्य का वर्णन अत्यन्त आकर्षक है।बाण की व्यंगप्रियता एवं हास्यप्रियता का परिचय उनके पात्रों के चरित्र-चित्रण से मिलताहै।

3.3.3 प्रेम और सौन्दर्य का वर्णन-

कादम्बरी बाण की प्रेम और सौन्दर्य-भावना का ही साकार रूप है। सम्पूर्ण कृति का आधार प्रेम-तत्व ही है, किन्तु बाण का प्रेम उस सरोवर की भाँति है, जहाँ पहले प्रवेश करने पर तो उथलापन मिलता है, किन्तु क्रमशः गहराई बढ़ती जाती है। महाश्वेता और कादम्बरी के प्रेम-कथानकों में यही बात दृष्टिगोचर होती है। आरम्भ में दोनों का प्रेम बाध्यरूप के आकर्षण पर आधारित यौन-प्रेम है, किन्तु क्रमशः जैसे-जैसे वह विरहरूपी अग्नि में तपता है, वैसे-वैसे सुवर्ण की भाँति उज्ज्वल हो जाता है और उसकी गंभीरता बढ़ती जाती है।

बाण ने बाह्य-सौन्दर्य पर आधारित वासनाजन्य प्रेम की असफलता को दिखा कर अमर्यादित प्रेम की निष्फलता भी दिखा दी है। प्रेम के सम्बन्ध में बाण की आदर्शवादिता उनकी अनन्यता से भी प्रकट होती है। बाण के सभी पात्र केवल एक ही व्यक्ति को प्रेम करते हैं। महाश्वेता इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है।

पुण्डरीक के मर जाने पर भी उसके प्रति उसका प्रेम अडिग है। इसी प्रकार चन्द्रापीड का प्रेम आरम्भ से ही कुछ ऐसा प्रदर्शित किया गया है कि वह केवल एक ही स्त्री के प्रति आकृष्ट होता है और वह है- कादम्बरी। चन्द्रापीड के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कवि ने प्रस्तुत किया है।

3.3.4 प्रकृति-वर्णन-

'कादम्बरी' में बाण ने अपने अद्भुत वर्णन कौशल का परिचय दिया है। उन्होंने नगर, प्रासाद, जलाशय, वन, उपवन, आश्रम, राजमार्ग, दरबार, शिष्टाचार आमोद-प्रमोद आदि का तत्कालीन वातावरण के अनुकूल सजीव चित्रण किया है। बाण बहुमुखी प्रतिभा एवं विविध अनुभवों वाले उत्कृष्ट कवि थे। 'कादम्बरी' में बाण ने नदी, वन, वृक्ष सरोवर नगर, सायं-प्रातः चन्द्रोदय, धूमिल पटल, राजकुल, इन्द्रायुध अश्व आदि के वर्णनों में बड़ी दूरदर्शिता से काम लिया है। अच्छोद-सरोवर तथा हिमालय के भव्य दृश्यों का वर्णन अत्यन्त प्रभावोत्पादक है। द्रविड़ यति का वर्णन इस बात का सूचक है कि बाण उपहासयोग्य विषयों का भी सफल मिश्रण कर सकते हैं। इन्द्रायुध अश्व के सजीव वर्णन से बाण को 'तुरंगबाण' की पदवी मिली। बाण की रचनाओं में प्रकृति का आलम्बन रूप में भी चारु चित्रण है। उनके प्रकृति-वर्णन समुचित वातावरण की सृष्टि करने में सक्षम है, सजीव है, विशद एवं अलंकृत हैं। सुखद, सुशीतल, प्रभातकालीन तरुण अरुण का वर्णन दृष्टव्य है-

"एकदा तु नातिदूरोदिते नवनलिनदल सम्पुटभिदि किञ्चिदुन्मुक्त पाटलिम्नि भगवति मरीचिमालिनि.....। संध्या-वर्णन तो बाण-कृत प्रकृति-वर्णनों में सर्वोत्कृष्ट है। सूर्य की किरणें धीरे-धीरे कमलिनी वनों का परित्याग कर रही हैं और विरहिणी कमलिनी पुनः अपने प्रियतम सूर्य के समागमार्थ कमलकुड्मल-रूपी कमण्डलु को धारण किये, हंसरूपी श्वेत दुकूल पहने, मृणाल-रूपी यज्ञोपवीत से युक्त, भ्रमररूपी अक्षमाला को धारण किये हुए मानो व्रत का पालन कर रही है।

3.3.5 मानव-सौन्दर्य का चित्रण-

मानव-सौन्दर्य का चित्रण करने में बाण की लेखनी निःसन्देह पटु है। स्त्रियों के रूप के वर्णन में चाण्डाल कन्या, पत्रलेखा, महाश्वेता और कादम्बरी के चित्रण में उन्होंने अपने समस्त साधनों का भण्डार खोल डाला है। सञ्चारिणी इन्द्रनील मणि की पुतली- सी श्याम-चाण्डाल-कन्या का चित्रण भी इसी विशेषता से किया है कि बरबस पाठक के सामने एक भव्य आकृति आ जाती है।

गौरवर्णा महाश्वेता के चित्रण में, बाण की एक से एक उत्कृष्ट कल्पनाएँ देखने को मिलती हैं, वह दृष्टा के अन्दर नेत्रपथ से प्रवेश करके उसके मन को भी श्वेत कर देती है। अत्यन्त धवल प्रभा से घिरी हुई देह होने के कारण उसके अवयव स्पष्ट नहीं दिखाई पड़ते, अतः ऐसा प्रतीत होता है, मानो वह स्फटिक के घर में बैठी है, अथवा क्षीर सागर में डूबी हुई है। कादम्बरी का कवि ने नख-शिख वर्णन अपेक्षाकृत अधिक विस्तार से किया है और उसके अनेक अंगों के सौन्दर्य को अनेक मौलिक अप्रस्तुतों द्वारा स्पष्ट किया है- उसके नख मानो क्षितितल के तारागण हैं। चरण-तल से वह मानो विद्रुम-रस की नदी को प्रवर्तित करती है।

3.3.6 रस-पेशलता

कादम्बरी शृंगार-रस-प्रधान प्रेमाख्यान है। यह रसाभिव्यक्तिपूर्ण रचना है। इसमें बाण ने युगों के उदात्त एवं उत्कृष्ट प्रेम का वर्णन किया है तथा शृंगार रस की सुषमा से कादम्बरी की कथा का कोना-कोना आलोकित है, किन्तु उनका शृंगार चित्रण मर्यादा का कहीं उल्लंघन नहीं करता। बाण ने पुण्डरीक के माध्यम से असंयत वासना का दुष्परिणाम भी चित्रित किया है। सच्चा प्रणय ही स्थायी होता है, जिसे काल की कराल छाया भी आक्रान्त नहीं कर सकती। कादम्बरी की रस-पेशलता की प्रशंसा में भूषण भट्ट ने लिखा है-

कादम्बरी रसभरेण समस्त एव।मत्तो न किंचिदपि चैतयते जनोऽयम्।।

बाण को रस सम्राट् ही कहा जा सकता है। रस के लिए विभावादि की जो आवश्यकता होती है, उसके निदर्शन के लिए गद्य में असीम अवसर होता है। उदाहरण के लिए वात्सल्य भाव का उद्रेक कराना है। बाण ने तारापीड के मुँह से कहलवाया है कि यदि पुत्र होता तो क्या होता। बाण ने अभिनव उद्भावनाओं को ही उड़ेलकर प्रस्तुत कर दिया है।

कादम्बरी प्रधानतः शृंगार-रस और तत्सम्बन्धी भावों की निष्पत्ति कराने में अतीव सफल कथा है। शृंगार के अतिरिक्त इसमें वात्सल्य, करुण और अद्‌भुत रसों का स्थान-स्थान पर अच्छा परिपाक हुआ है। कहीं-कहीं हास्य-रस के मनोरम अवसर भी प्रस्तुत किये गये हैं। तमालिका का प्रणयी शुक और जरद्रविड धार्मिक विशेष रूप से ऐसी सामग्री प्रस्तुत करते हैं। शान्त रस की गाथाएँ मुनियों और तपस्वियों के द्वारा प्रस्तुत उनके उदात्त चरित्रों के वातावरण में अनेकशः प्रस्तुत की गयी हैं।

3.3.7 बाण की आलंकारिक भाषा-शैली-

बाण के गद्यों का सौन्दर्य उनके विस्तृत वर्णनों में मिलता है, जहाँ शब्दों का कलात्मक विनिवेश पाया जाता है। कालिदास के बाद संस्कृत काव्यों में अलंकृत भाषा-शैली को अधिक स्थान दिया जाने लगा था, किन्तु शब्द-वैचित्र्य जैसा बाण में पाया जाता है, अन्यत्र अलभ्य है। गद्य में विस्तार की छूट होने के कारण बाण जिस विषय को भी लेते हैं। अपनी अलंकृत शैली से उसका चित्र-सा प्रस्तुत कर देते हैं। बाण की शैली एक ओर जहाँ प्रौढ़ साहित्यिक गद्य को सफलतापूर्वक प्रस्तुत करती है, वहीं दूसरी ओर व्यावहारिक गद्य की कसौटी पर भी खरी उतरती है। बाण की कविता की प्रसन्नराघवकार जयदेव, गोवर्धनाचार्य, धर्मदास आदि ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। बाण ने अपनी शैली में उन सभी विशेषताओं को समाविष्ट कर लिया है जो उनके समय में उत्कृष्ट काव्य के लिएआवश्यक समझी जाती थीं। बाण ने कादम्बरी की शैली की विशेषताओं को सूत्र रूप में नीचे लिखे श्लोकों में स्वयं दे दिया है-

स्फुरत्कलालापविलास कोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम्।
रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा वधूरिव।

निष्कर्ष- इस ग्रन्थ को बाण ने केवल काव्यामृत का परिपाक ही नहीं बनाया, अपितु मानव-समाज के किसी भी वर्णाश्रम या पद पर खड़े हुए व्यक्ति के लिए आदर्श व्यक्तित्व का मानदण्ड-सा रख दिया है। 'कादम्बरी' की सूक्तियों से भी इसके उदात्त स्तर की सहज कल्पना होती है। यथा-**अनाथपरिपालनं हि**

धर्मोऽस्मद्विधानाम्।अर्थात्, अनाथों का पालन ही हमारे जैसे मुनियों का धर्म है।**प्राणपरित्यागेनापि रक्षणीयाः सुहृदसवः।** अर्थात्, प्राण देकर भी मित्र के प्राण की रक्षा करनी चाहिए।**धर्मपरायणानां हि समीप संचारिण्यः कल्याणसम्पदो भवति।** अर्थात्, धर्म पालक लोगों के पास ही कल्याणमयी संपत्तियाँ रहती हैं।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

    1. साक्षात् वाणी का अवतार महाकवि बाणभट्ट को किसने माना है?
    2. पुण्डरीक के मृत शरीर में किसकी आत्मा प्रविष्ट हुई थी?
    3. इन्द्रायुध अश्व के सजीव वर्णन के कारण बाण को कौन सी पदवी मिली?
    4. कादम्बरी का प्रधान रस कौन-सा है ?
    5. कादम्बरी कथा की उपमा किससे की गई है?

3.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में बाण के काव्य-सौष्ठव का वर्णन किया है। इसमें कवि द्वारा प्रकृति के अनूठे वर्णन, चरित्र चित्रण भाषा शैली इत्यादि का वर्णन वर्णित है।

3.5 कठिन शब्दावली

1. विकट-कठिन **2. अन्तर्द्वन्द्व-**दुविधा **3. रस-पेशलता-** किसी वस्तु में अनोखी विशेषता **4. समाविष्ट-**व्याप्त होना **5. पिष्टपेपन-**व्यर्थ परिश्रम

3.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. गोवर्धनाचार्य 2. शुक 3. तुरंगबाण 4. शृंगार 5. नववधू

3.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिकअनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

3.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. महाकवि बाणभट्ट की अलंकृत शैलीगत विशेषता का वर्णन कीजिए।
2. बाणभट्ट की कादम्बरी में वर्णित प्रकृति-चित्रण का वर्णन कीजिए।
3. बाणभट्ट की कादम्बरी में वर्णित प्रेम सौन्दर्य एवं चरित्र चित्रण का वर्णन कीजिए।

इकाई-4
महाकवि बाणभट्ट से सम्बन्धित प्रसिद्ध उक्तियाँ

संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 महाकवि बाणभट्ट से सम्बिन्धत प्रसिद्ध उक्तियाँ

4.3.1 गद्यं कवीना निकषं वदन्ति

4.3.2 बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्

4.3.3 बाणस्तु पंचानन:/वाणी बाणो बभूव इति

4.3.4 कादम्बरी रसज्ञानामाहारोऽपि न रोचते

- स्वयं आकलन प्रश्न

4.4 सारांश

4.5 कठिन शब्दावली

4.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

4.7 सहायक ग्रन्थ

4.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में महाकवि बाणभट्ट से सम्बन्धित जगत प्रसिद्ध उक्तियों का वर्णन किया गया है। जिसके विषय में विस्तृत रूप से विवेचना की गई है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप समझने मेंसक्षम होंगे-

- बाणभट्ट से सम्बन्धित प्रसिद्ध उक्तियों के विषय में जानेंगे।
- बाणभट्ट के गद्य काव्य के महत्त्व के विषय में ज्ञान अर्जित करेंगे।

4.3 महाकवि बाणभट्ट से सम्बिन्धत प्रसिद्ध उक्तियाँ

4.3.1गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति

काव्यशास्त्रियों ने काव्य के प्रमुख रूप से दो भेद किये हैं- (1) श्रव्य-काव्य तथा (2) दृश्य-काव्य। इनमें भी श्रव्य-काव्य के तीन भेद होते हैं- (1) महाकाव्य, (2) खण्डकाव्य (मुक्तक काव्य) तया (3) मिश्रित काव्य (गद्य-पद्य मिश्रित), जिसको चम्पू काव्य भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त श्रव्यकाव्य का प्रमुख भेद गद्य-काव्य भी है। दृश्य-काव्य में नाटक-नाटिका आदि आते हैं। नाटक को रूपक भी कहते हैं। धनञ्जय ने अपने ‘दशरूपक’ में इन्हीं के भेदों-उपभेदों का सर्वांगीण विवेचन किया।

श्रव्य-काव्य में पद्यमय-काव्य लय, छन्द, स्वरादि से निबद्धित होता है, किन्तु गद्य-काव्य में इस प्रकार का बन्धन नहीं होता है। इसकी भाषा-शैली, शब्द-विन्यास, काव्यपटुत्य आदि में गुणों का इस प्रकार समावेश होता है कि इसमें पद्य-काव्य से अधिक रसमग्नता उद्भासित होती है। इसकी अलंकार-प्रधान भाषा-शैली क्लिष्टता के साथ-साथ सौन्दर्यातिरेक से आप्लावित रहती है, जिसमें पाठक अवगाहन कर रस-निमज्जित हो, एक अनिवर्चनीय आह्लाद की मधुमयी भूमिका में संचरण करे, दूसरी ओर लोक व्यवहार में भी नित्य-प्रति के प्रयोग में गद्य का प्रचलन होता ही है। फिर भी साहित्य में कवियों का आकर्षण गद्य की अपेक्षा पद्य की ओर अधिक रहा है, क्योंकि संगीतात्मकता के कारण पद्य अधिक सरलता से स्मरणीय है। वह आकर्षक तथा मनमोहक भी है। गद्य-साहित्य की रचना इस रूप में विरले ही कवियों की होती है। संस्कृत साहित्य में इस श्रेणी में महाकवि बाणभट्ट का स्थान सर्वोपरि है। **"गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति"** इस उक्ति के आधार पर बाण गद्य लिखने की कसौटी पर खरे उतरते हैं। उनकी 'कादम्बरी' संस्कृत-साहित्य में ही नहीं, अपितु विश्व के गद्य-साहित्य में भी अपूर्व स्थान रखती है और गद्य-काव्य का आदर्श है।

गद्य-रचना की परम्परा वैदिक काल से है। 'ब्राह्मण' 'उपनिषद्' आदि ग्रन्थों की रचना में भी गद्य का प्रयोग हुआ है। बाद में पुराणों तथा लौकिक संस्कृत-साहित्य में भी इसका प्रचलन अक्षुण्ण रहा, किन्तु गद्य-काव्य की चमत्कृति दण्डी से विशेषतः प्रारम्भ हुई और उनके 'दशकुमारचरित' को आदर्श बनाकर परवर्ती आचार्यों ने गद्य-काव्य की रचना की। संस्कृत-साहित्य में गद्य- काव्य का चरमोत्कर्ष बाणभट्ट की कृतियों में उपलब्ध होता है। इनके दो गद्य-काव्य 'हर्षचरित' तथा 'कादम्बरी' प्रमुख हैं।

सुबन्धु की 'प्रत्यक्षरश्लेषमयी' प्रौढ़ गद्य-शैली को भी इन्होंने अपना आधार बनाया। 'पञ्चतन्त्र', 'हितोपदेश' आदि सरल गद्य रचनाओं के बाद गद्य-शैली का यह स्वाभाविक विकास था जो सरलता से क्रमशः जटिलता की ओर उन्मुख हुआ। पद्य-बद्ध काव्यों की भावतरलता, कल्पना- प्रियता और अलङ्कृति गद्य-काव्यों में भी अनायास ही समाविष्ट हो गयी थी और पद्य-काव्यों की भाँति गद्य-काव्यों में भी इन विशेषताओं का विकास क्रम बना रहा। इस प्रकार सुबन्धु ने अलंकृत गद्य-शैली का जो मार्ग प्रशस्त किया था, बाण उस शैली के प्रौढ़तम कलाकार हैं। बाण ने गद्य-काव्य की अन्तरात्मा को परखकर जो कुछ लिखा, उसमें सुबन्धु के गद्य की रुक्षता स्पृहणीय कोमलता में परिणत हो गई और दण्डी का पदलालित्य भी उचित अनुपात में सन्निहित रहा। साथ ही उसमें पद्यबद्ध काव्यों की सरसता भी अक्षुण्ण बनी रही। इस प्रकार बाण के गद्य का जो रूप दिखाई पड़ा, वह अंशतः परम्परागत होते हुए भी अपने समग्र रूप में अत्यन्त नवीन था।

बाणभट्ट सरस्वती देवी के वरद पुत्र थे। इनका गद्य-काव्य कादम्बरी अपने विषय में अद्वितीय माना जाता है। कादम्बरी बाणभट्ट की अमर कृति है। यह उनकी ही नहीं, अपितु समस्त संस्कृत वाङ्मय की सर्वोत्कृष्ट गद्य-रचना है। कादम्बरी संस्कृत साहित्य की वह अक्षय निधि है जो अकेले ही समग्र उपन्यास-प्रकार के साहित्य-भेद की कमी को पूर्ण करती है। यह दो भागों में विभक्त है-पूर्व-भाग तथा उत्तर-भाग।

पूर्वभाग सम्पूर्ण ग्रन्थ का दो-तिहाई है और यही बाण की अपनी कृति है। उनके दिवंगत होने के बाद उनके योग्य पुत्र भूषणभट्ट ने उत्तर-भाग की रचना करके कादम्बरी को पूर्ण किया है।

कादम्बरी 'कथा' है। बाण ने स्वयं प्रस्तावना के अन्तिम पद्य में **'धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा'** कहकर इसे 'कथा' के रूप में स्पष्ट स्वीकार किया है। तीन जन्मों से सम्बन्ध रखने वाली कादम्बरी की कथा बहुत ही रोचक शैली में लिखी गयी है। कादम्बरी के विषय में स्वभावतः एक जिज्ञासा होती है कि इसकी प्रेरणा बाण को कहाँ से मिली? क्या यह बाण के मस्तिष्क की अपनी उपज है अथवा इसका भी कोई प्राचीन उपजीव्य है?सूक्ष्म गवेषणा के बाद प्रायः समालोचकों ने इस निश्चय पर पहुँचने में सफलता पायी है कि बाण को कादम्बरी की कथा लिखने की प्रेरणा गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' से मिली होगी।

'कादम्बरी' संस्कृत-साहित्य का सर्वोत्कृष्ट उपन्यास है। उसके कथानक में कथा और उपकथा के सम्मिश्रण से कुछ जटिलता अवश्य आ गयी है, फिर भी इसके स्वाभाविक विकास और कुशल निर्वाह में कवि को पर्याप्त सफलता मिली है। सारी कथा कुतूहलमय रोचकता से ओत-प्रोत है। पाठक की रुचि और उत्सुकता उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। प्रधान नायिका कादम्बरी का उल्लेख कथा के मध्य भाग में जाकर होता है।

महाश्वेता की प्रणय कथा तो कादम्बरी के प्रणय की भूमिका मात्र है। शूद्रक की राजसभा में चांडाल-कन्या का विलक्षण वैशम्पायन (शुक) को लेकर प्रवेश करना, यह प्रारम्भिक घटना ही ऐसे रहस्य में लिपटी हुई है कि उसके उद्घाटन के लिए आगे बरबस बढ़ना पड़ता है। यह रहस्योद्घाटन कथा के अन्त में जाकर होता है। वहाँ शूद्रक को ही प्रधान नायक जानकर 'अद्भुत रस' की प्रतीति होती हैं। कवि ने कादम्बरी और महाश्वेता दोनों की प्रणय कथा स्वाभाविक रूप से परस्पर सम्बद्ध करके अपने वस्तु-विन्यास-कौशल का परिचय दिया है।

'कादम्बरी' में अनेक व्यक्तियों द्वारा कही गयी कथा की समष्टि एक नवीन प्रभाव उत्पन्न करती है। 'पञ्चतन्त्र' आदि में भी विभिन्न नीति-कथाओं को परस्पर जोड़ देने की प्रणाली पायी जाती है, किन्तु कादम्बरी की कथा सम्बन्धी यह योजना 'पञ्चतंत्र', 'हितोपदेश' की कथाओं को दूसरी कथाओं के साथ सम्बद्ध करने का कारण किसी पात्र को उपदेश देना या किसी सिद्धान्त विशेष को स्पष्ट करना रहता है- जटिल कथा के घटनाचक्र की पूर्णता उसको विभिन्न कथाओं के द्वारा होती है।

एक दृष्टि से 'पंचतंत्र' तथा 'कादम्बरी' में अपनायी गयी यह पद्धति समानता रखती है। दोनों में ही एक कथा में दूसरी और दूसरी में तीसरी कथाएँ गूँथ दी गयी हैं, जिससे पाठक मूल कथा से कभी-कभी दूर जा पड़ता है। 'दशकुमारचरित' में प्रत्येक कुमार अपना-अपना अनुभव उत्तम पुरुष की शैली में सुनाता है, जबकि कादम्बरी की कथा अधिकांश में अन्य पुरुष की शैली में कही गई है। अन्य पुरुष की शैली में कथा

कहने वाले जाबालि को बाण ने त्रिकालदर्शी महर्षि के रूप में प्रस्तुत किया है, जिनसे कोई घटना छिपी नहीं रहती।

'कादम्बरी' में बाण ने केवल अपनी कल्पना के अतिरंजित चित्र ही उपस्थित नहीं किये हैं, प्रत्युत अपने बहुमुखी जीवन के विविध अनुभवों को भी रोचक रूप में प्रस्तुत किया है। प्रासाद, नगर, वन तथा आश्रमों का यथातथ्य वर्णन उनके पर्याप्त भ्रमण का रोचक रूप में प्रस्तुत किया गया है। शुकनास के मुख से उन्होंने चन्द्रापीड को जो उपदेश दिलाया है, वह आज भी प्रत्येक नवयुवक स्नातक के दीक्षांत भाषण से कम नहीं है।

वस्तुतः 'कादम्बरी' भारतीय विचारधारा की अनेक विशेषताओं को अपने में अन्तर्निहित किये हुए है। 'कादम्बरी' में इस लोक के पात्रों के साथ-साथ दिव्य पात्रों की सङ्गति भी दिखाई गयी है। वह किसी विदेशी पाठक को भले ही उचित न प्रतीत हो, किन्तु यह बात भारतीय दृष्टिकोण से सर्वथा सामंजस्य रखती है। मनुष्यों के अनेक योनियों में जन्म लेने की मान्यता भी इसी प्रकार की है। उनकी अलौकिक प्रतिभा से आकृष्ट होकर अनेक परवर्ती कवियों ने उनका अनुकरण किया है, जिनमें 'तिलकमंजरी' के लेखक धनपाल, 'गद्य-चिन्तामणि' के रचयिता वादीभ सिंह, 'उदयसुन्दरी कथा' के लेखक सोड्ढल आदि प्रमुख हैं। परवर्ती कवियों पर बाण की वर्णन-शैली का भी प्रभाव पड़ा, बाण के वर्णनों की भी छाया कहीं-कहीं स्पष्ट दीखती है।वास्तव में गद्य-काव्य का जीवन है- ओज गुण विशिष्ट समास बहुलता-**"ओज: समासभूयस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्।"**अतएव एक कवि में गद्य-काव्य को अनुप्राणित करने के लिए काव्य-सौन्दर्य के साथ ही शब्दशास्त्र का पाण्डित्य भी अपेक्षित है, जिससे वह अपने वर्णन के अनुकूल शब्दों को सजाकर गद्य का भव्य स्वरूप उपस्थित कर सके। पद्य रचना करने वाले कवि प्रायः निर्धारित नियमों का दास होता है। वह अपनी रचना के प्रवाह को नियत संख्या वाले अक्षरों तक ही सीमित रखता है।

गद्य-कवि की स्थिति इससे सर्वथा भिन्न होती है। वह लकीर का फकीर नहीं होता, वह नियमित अक्षरों के बन्धन में अपनी काव्य-कला को छटपटाने नहीं देता। वह तो अपने अभिप्रेत भावों की अभिव्यक्ति के लिए यथेच्छ शब्दों के प्रयोग हेतु स्वतन्त्र है। पद्म के नियमित बन्धन की आड़ में कवि के दोष छिप सकते हैं, किन्तु स्वच्छन्द गद्य-प्रवाह में कवि में दोष सिकता-कण की भाँति स्पष्ट रूप से झलक जाते हैं। पद्य में कभी-कभी अन्त्यानुप्रास और छन्दोभंग के बचाव के लिए शब्दों की तोड़-मरोड़ अपेक्षित हो जाती है, अतः उसमें व्याकरण की अशुद्धियों को खपने का अवसर मिल जाता है। गद्य में ऐसा प्रसंग नहीं है, इसलिए इसमें तो स्वच्छ और व्याकरण की दृष्टि से परिमार्जित शब्दों का विलास ही कवि की उन्नत काव्य-कला का परिचायक है। गद्य-काव्य के निर्माण में कवि के लिए स्वतन्त्र शब्द-साम्राज्य, काव्यकला की सर्वाङ्गीण कुशलता और शब्द-शास्त्र का प्रगाढ़ पाण्डित्य- इन तीनों का एकत्र समन्वय आवश्यक है।अतः उस समय

कवियों की वास्तविक काव्य-कला का मूल्यांकन गद्य-काव्य के माध्यम से ही किया जाता था। **'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति'**इस प्राचीन उक्ति की यही वास्तविकता है।

4.3.2. बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्

"बाणेन हृदिलग्नेव यमन्मन्दोऽपि पदक्रमः।
प्रायः कवि कुरङ्गाणां चापलं न च कारणम्।।"

यद्यपि किसी भी महाकवि के सम्बन्ध में कही गयी प्रशस्ति उसकी काव्य-प्रतिभा की समीक्षा का ही प्रतीक है, फिर भी आलोचक-मनीषा मौन न रहकर उस प्रशस्ति की कसौटी पर उस कवि के कृतित्व को कसने की परम्परा का निर्वाह करती आयी है।

संस्कृत-काव्य-जगत् के प्रजापति आदिकवि वाल्मीकि, महाकवि कालिदास, भारवि, माघ, नाट्यकार भवभूति, गद्यकवि बाणभट्ट प्रभृति उन्नत कोटि के महाकवियों के कृतित्व और व्यक्तित्व का समीक्षण करके उनके सम्बन्ध में समीक्षकों ने कुछ प्रशस्तियाँ कही हैं। ये प्रशस्तियाँ भी आलोचक-बुद्धि को, सम्बद्ध कवियों की कृतियों के आलोचना-व्यापार में प्रेरित करती हैं। ऐसी ही प्रशस्तियों में गद्य-काव्य प्रणेता बाणभट्ट के सम्बन्ध में **"बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्"** यह प्रशस्ति पण्डित मण्डली में अत्यन्त प्रसिद्ध है।

"बाणोच्छिष्टम् जगत्सर्वम्" इस उक्ति का सामान्य अर्थ होता है- समस्त विश्व बाण का उच्छिष्ट (जूठन) है। यद्यपि यह उक्ति किसी ऐसे भावुक प्रशंसक की प्रतीत होती है, जो बाण की काव्य-प्रतिभा से अत्यन्त प्रभावित हो, तथापि इस उक्ति की यथार्थ स्थिति का मूल्यांकन गम्भीर विवेचना का विषय है। विचार करने पर इस प्रशस्ति के सम्बन्ध में विचार के दो पक्ष उपस्थित हो सकते हैं- एक पक्ष इस उक्ति के समर्थन में और दूसरा इसके विरोध में, दोनों पक्षों में तर्कउपस्थित करके इसका समीक्षण किया जा सकता है।

इस उक्ति से पूर्व काव्यशास्त्र मर्मज्ञ विद्वत्समाज में 'व्यासोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' यह प्रशस्तिअर्थतः प्रसिद्ध थी। अर्थात् इस अर्थ-प्रशस्ति का आधार "यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न कुत्रचित्" यह महर्षि व्यास की महाभारत की प्रशंसापरक उक्ति है। महर्षि व्यास ने महाभारत के विषय की व्यापकता का निर्देश करते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा है कि महाभारत में जितने विषयों का वर्णन है, उसके अतिरिक्त संसार में अन्य कुछ भी नहीं है। इस स्पष्टोक्ति के अनुसार व्यास साहित्य के अतिरिक्त अन्य साहित्य उसके उच्छिष्ट मात्र सिद्ध होते हैं। व्यास के अत्यन्त प्राचीन होने के कारण इस कथन की सार्थकता सिद्ध होती है।

बाण की अलौकिक काव्य-कल्पनाओं को ध्यान में रखकर समीक्षकों द्वारा उद्धृत "बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्" में जगत् शब्द का अर्थ है- परवर्ती कल्पनामय काव्य-जगत् और उच्छिष्ट का अर्थ है-पूर्ववर्णित। इसका भाव यह है कि बाण के बाद होने वाले कवियों की काव्य-कल्पनाओं में नवीनता का चमत्कार नहीं मिलता अर्थात् बाण की परवर्ती काव्य-कल्पना के समस्त प्रकारों का वर्णन काव्य में पहले से ही विद्यमान है-

यथा-शूद्रक-वर्णन, शबर सेनापति-वर्णन, जाबाल्याश्रम-वर्णन, सन्ध्या-वर्णन, उज्जयिनी वर्णन, तारापीड-वर्णन, राजभवन-वर्णन, महाश्वेता-वर्णन, कादम्बरी-वर्णन आदि।

सन्ध्या-वर्णन में उपमा और उत्प्रेक्षा अलंकारों की माला-सी दिखाई पड़ती है-**"क्वापि विहृत्य दिवसावसाने लोहिततारका तपोवनधेनुरिव कपिला परिवर्तमानामन्ध्या मुनिभिरदृश्यत। अचिर प्रोषिते सवितरिकमनिली दिनपति-समागमव्रतम् इवाचरत्। अम्भः सीकरनिकरम् इव तारागणम् अम्बरम् अधारयत्।"**

कादम्बरी के नख-शिख-वर्णन में प्रत्येक अंग का सौन्दर्य, अंगों के आभूषण और उनकी विशेषताओं के साथ-साथ कवि की अलंकारयुक्त कल्पना की उड़ान दृष्टव्य है-**"उन्नत-कुचान्तरित-मुख-दर्शन-दुःखेनेव क्षीयमाण-मध्यभागान्नाभिमण्डलीमावर्तिनीम् उद्वहन्तीम्स्तनभरेण भूषिताम् निजरूपतो लक्ष्मीशतानीव सृजन्तीम्, आकाश कमलिनीमिव स्वच्छाम्बरदृश्यमान-मृणाल कोमलोरुम्लाम्, कल्पतरुलतामिव कामफलप्रदाम्, कादम्बरी ददर्श।"**

उपदेश-प्रधान और गंभीर भावों वाले स्थलों पर भाषा अत्यन्त सरस और प्रवाहपूर्ण है। वहाँ भावों का नैसर्गिक प्रवाह दिखाई पड़ता है। कृत्रिमता का आवरण उसके सौन्दर्य को नष्ट नहीं करता है। शुकनासोपदेश और कपिंजल के विलाप में ऐसे वर्णन अधिकांश रूप से दिखायी पड़ते हैं; जैसे-**"न परिचयं रक्षति। नाभिजनमीक्षते। न रुपमालोकयते। न कुलक्रमनुवर्तते।**

न शीलं पश्यति। न वैदग्ध्यं गणयति। न श्रुतमाकर्णयति। न धर्ममनुरुध्यते।"

कपिंजल पुण्डरीक के शोक में कहता है-**"हा हतोऽस्मि, हा दग्धोऽस्मि, हा वञ्चितोऽस्मि, हा किम् इदम् आपतितम् किं वृत्तम् ..... हा तपो निराश्रयमसि, हा सरस्वति विधवासि, हा सत्यम् अनाथमसि।"**

शुकनासोपदेश और महाश्वेता के दुःख के वर्णन में कवि ने हार्दिक भावों की इतनी गंभीर और मार्मिक अभिव्यक्ति की है कि विश्व के सभी विद्वानों ने इन संदर्भों की मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। बाण ने दुरूह समासों एवं विस्तृत वाक्यों के प्रयोग की शैली सर्वत्र नहीं अपनायी है। वस्तुतः जहाँ विषय भाव-प्रधान होता है, गम्भीर होता है, वहाँ भावों को द्रुत वेग से व्यक्त करने के लिए, बात समझाने के लिए विशेषण-पद-रहित, समास-रहित छोटे-छोटे वाक्यों का उन्होंने प्रयोग किया है। जन्म से ही प्राप्त ऐश्वर्य, अभिनव यौवन, अप्रतिम रूप-सम्पदा- ये सब महान् अनर्थ की परम्परा है और कुमार चन्द्रापीड को यह सब कुछ प्राप्त है। विषय-रस का आस्वाद न किये हुए चन्द्रापीड को कहीं लक्ष्मी भ्रमित न कर दे, उपभोग-मृगतृष्णा कहीं उसके इन्द्रिय-रूपी हरिणों का हरण न कर ले, अतएव दूरदर्शी मन्त्री शुकनास कुमार को लक्ष्मी के स्वभाव से परिचित करा रहे हैं। लोक-व्यवहार एवं कूटनीति में अपरिपक्व कुमार उपदेश के मर्म को समझ लें। अतएव कवि की भाषा सरल हो गयी है। सरल भाषा, अतिलघु वाक्य-विन्यास से युक्त बाण की सरल शैलीके निदर्शनार्थ है।

अलंकार-विन्यास में भी बाण प्रवीण हैं। शब्दालंकारों और अर्थालंकारों-दोनों के प्रयोग से कवि ने अपनी कृतियों में रमणीयता का संचार किया है। अनुप्रास का उद्धरण प्रस्तुत है-

"इभकलभकोम्ललनपमलववेल्लितलवलीवलयै:।"

"मधुकरकुलकलङ्ककालीकृतकालेयक कुसुमकुड्मलेषु।" आदि।

रसनोपमा की श्री भी द्रष्टव्य है-**"क्रमेण च कृतं मे वपुषि वसन्त इव मधुमासेन, मधुमास इव नवपल्लवेन, नवपल्लव इव कुसुमेन, कुसुम इव मधुकररेण, मधुकर इव मदेन नवयौवनेन पदम्।"**

क्रमशः जिस प्रकार वसन्त में मधुमासु, मधुमास में नवपल्लव, नवपल्लव में पुष्प, पुष्प में भ्रमर और भ्रमर में मद स्थान ग्रहण करता है, उसी प्रकार नव-यौवन ने महाश्वेता के शरीर में प्रवेश किया। बाण द्वारा प्रयुक्त विरोधाभास भी अतीव चमत्कारोत्पादक हैं। उनके तारापीड शीतल होते हुए भी रिपुजन को संतप्त करने वाले, स्थिर होते हुए भी निरन्तर भ्रमण करने वाले, निर्मल होते हुए भी शत्रुओं की पत्नियों के मुख-कमलों को मलिन करने वाले, धवल होते हुए भी सर्वजन रागकारी, इस प्रकार वस्तुतः अविरोधी, किन्तु परस्पर विरोध से प्रतीत होने वाले गुणों के आश्रय हैं।

श्री चन्द्रदेव कहते हैं कि कुछ लोग श्लेष में, कुछ शब्दों के उपर्युक्त गुम्फन में, कुछ रसाभिव्यक्ति में, कुछ अलंकार, सत्-अर्थ अथवा कथावर्णन में कुशल होते हैं, किन्तु बाण तो गम्भीर-धीर कवितारूपी विन्ध्याटवी में चातुरी से सर्वत्र घूमने वाले, कविरूपी हाथियों केकुम्भस्थलों को विदीर्ण करने वाले सिंह हैं- **"श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्र से चापरेऽलंकारे कतिचित्सदर्थविषये चान्ये कथावर्णन।आसर्वत्र गभीर धीरधीर कविता विन्ध्याटवी चातुरीसंचारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पंचाननः।"**

वास्तव में क्या शब्दों के क्षेत्र में, क्या भावों के क्षेत्र में और क्या अलंकारों के क्षेत्र में, सभी जगह काव्य का एक-एक कोना बाण ने छान लिया है। अन्य कवियों के लिए फिर उसी काअनुकरण करने के अतिरिक्त और क्या रह जाता है? बाण गद्य-सम्राट् हैं। **'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्'-** इस उक्ति में कोरा अर्थवाद नहीं है, तथ्यवाद भी व्याप्त है। अलंकारों का समुचित सन्निवेश, भावगाम्भीर्य, उच्छल रसोद्रेक विशद प्रकृति-वर्णन, सूक्ष्म-निरीक्षण, अजस्र शब्द-भण्डार, उदात्त चरित्र-चित्रण बाण की शैली की विशेषताएँ है।

'हर्षचरित' एवं 'कादम्बरी' ऐसे अनगिनत रमणीय चित्रों से भरे हुए हैं। अपने समय की सभी शैलियों में बाणभट्ट ने गद्य-रचना की है। आज की गद्य-शैली के मापदण्ड से उनके गद्य को मापना उनके साथ अन्याय होगा। इस प्रकार पात्रों की सजीवता, वर्णन-शैली की विशदता, स्फुटता तथा सरसता, मानव और प्रकृति का यथार्थ चित्रण, स्वभावोक्ति, उपमा, उत्प्रेक्षा, श्लेष, विरोध, परिसंख्या, रूपक, समासोक्ति, अतिशयोक्ति, भ्रान्तिमान्, व्यतिरेक, निदर्शना, काव्यलिग, समुच्चय, तुल्ययोगिता, व्याजोक्ति, विभावना,

अप्रस्तुत प्रशंसा, तद्गुण, दृष्टान्त, परिकर, सहोक्ति, यमक, अनुप्रास आदि अलंकारों का यथावसर विन्यास, कथा की गति, अमानवीय पवित्र त्यागमय प्रेम का रंगीन चित्रण, कवि का अक्षय शब्दकोश और पदावलियों का अविराम स्पन्दन आदि बाण की कृतियों में वर्तमान काव्य के लिए अपेक्षित समस्त तत्त्वों को देखकर ही, 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' की उक्ति चल पड़ी है, जो सार्थक भी है, क्योंकि बाण के सम्बन्ध में प्राचीन आलोचकों की उक्तियाँ संस्कृत-गद्य कवियों में बाण की सर्वोत्कर्षता को प्रकट करती हैं। उनके काव्यों पर समग्र रूप से विचार करने पर स्पष्ट हो जाता है कि जैसे पद्य काव्यकारों में कालिदास अपना सानी नहीं रखते, उसी प्रकार बाण का गद्य-काव्य 'हर्षचरित' और 'कादम्बरी' अद्वितीय एवं अनुपम है।उपर्युक्त विवरण के आधार पर बाण को गद्य-काव्यकारों में प्राचीन भारतीय समालोचकों ने जो गौरवपूर्व स्थान दिया है, बाण वास्तविक रूप में उसके अधिकारी हैं।

4.3.3. बाणस्तु पंचानन:/वाणी बाणो बभूव इति

श्री चन्द्रदेव ने बाण की प्रशंसा में कहा है कि बाण काव्य के सभी अंगों के प्रयोग में अत्यन्त सिद्धहस्त हैं, जो कवितारूपी विन्ध्यवन में सिंह की भाँति विचरण करते हैं। अन्य कवियों में कोई श्लेष में दक्ष है, कोई शब्द-सौष्ठव में, कोई रस-निरूपण तुल्य अबाध गति से में, कोई अलंकार प्रयोग में, कोई अर्थ-गौरव में और कोई कथा वर्णन में चतुर है, किन्तु बाण सभी के प्रयोग में दक्ष हैं और काव्य की कोई विधा ऐसी नहीं है, जिसका उन्होंने पूर्ण औचित्य और पाण्डित्य के साथ प्रयोग न किया हो-**श्लेषे केचन शब्दगुम्फ विषये केचिद् रसे चांपरेऽलंकारे कतिचित् सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने।आः सर्वत्र गंभीर-धीर-कविता-विन्ध्याटवी-चातुरीसंचारी कवि-कुम्भि-कुम्भ-भिदुरो बाणस्तु पंचाननः।।**

प्रत्येक वर्णन में बाण ने पहले विषय का विस्तृत वर्णन किया है। उसके बाद उपमा और उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों की छटा दिखायी है। तदनन्तर विरोधाभास, श्लेष और परिसंख्या-जैसे कठिन अलंकारों का प्रयोग करते हुए विषय की समाप्ति की है। लम्बे वर्णनों के तुरन्त बाद अत्यन्त सरल पदावली, सरल पदावली के बाद पुनः लम्बे वर्णन और अलंकारों के प्रयोग प्रारम्भ हो जाते हैं। इस प्रकार सरल और कठिन का एक क्रमिक प्रयोग दिखायी देता है। ऐसा करने से पाठक घबड़ाने नहीं पाता और कथा के प्रवाह में बहता चला जाता है। सुकुभार, मनोहर और सरस वर्णन बाण की विशेषता है। यही कारण है कि सभी रुचि के व्यक्तियों को सन्तुष्ट करने में बाण सफल हुए हैं। भाषा का सौष्ठव यमुना की मनोज्ञ धारा है, भावों की उदात्तता गंगा की पवित्र धारा है और रस का अक्षुण्ण प्रवाह सरस्वती की कमनीय धारा है। इस प्रकार बाण की 'कादम्बरी' में तीन गुणों के समन्वय के कारण तीनों धाराओं का संगम है। **कवयित्री गंगादेवी** बाण की रचना में सरस्वती के करतल से बजायी गई वीणा की झंकार की सुखद अनुभूति करती हैं-**वाणी-पाणि-परामृष्ट-वीणा-निक्वाणहारिणीम्।भावयन्ति कथं वान्ये भट्टबाणस्य भारतीम्।।**

समास-बहुलता और ओज-गुण गद्य की प्रशस्ति है-**'ओजः समासभूयस्त्वमेतद्गद्यस्य जीवितम्'**अतएव समासबहुलता बाण की रचनाओं के लिए आवश्यक और सामयिक तथ्य था। संस्कृत

काव्यशास्त्र में प्रधानतया तीन रीतियाँ मानी गयी हैं वैदर्भी, गौडी और पाञ्चाली। ये तीनों क्रमशः माधुर्य,ओज और प्रसाद गुणों पर आधृत हैं। समासबहुला गौडी रीति और ओज-गुण बाण की रचना के प्रधान गुण हैं। लम्बे-लम्बे विस्तृत वर्णनों में बाण की लेखिनी कभी थकती नहीं। प्रत्येक विषय में, चाहे वह छोटा हो या बड़ा ओजपूर्ण शैली से प्रवाह भर देना बाण की विशेषता है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि माधुर्य और प्रसाद गुण छूट गये हैं। लघु और प्रशस्त पदों में इनके प्रवाह देखे जा सकते हैं। वस्तुतः बाण की ओजमय पदावली माधुर्य और प्रसाद की ही सृष्टि करती है। सम्पूर्ण को मधुरतम बनाने के लिए ओज का विनिवेश किया गया है।

शुकनासोपदेश में व्यावहारिकता से युक्त भाषा में प्रसाद गुण की छटा मनोमुग्धकारी है।यथा- **"आलोकयतु तावत् लक्ष्मीमेव प्रथमं भवान्। न हि एवंविधम् अपरिचितम् इह जगति किञ्चिदस्ति यथेयम् अनार्या। लब्धापि खलु दुःखेन पाल्यते। न परिचयं रक्षति न अभिजनमीक्षते। न रूपमालोकयते। न कुलक्रममनुवर्तते। न शीलं पश्यति। न वैदग्ध्यं गणयति। न श्रुतमाकर्णयति। न धर्मम् अनुरुध्यते। न त्यागमाद्रियते। न विशेषज्ञतां विचारयति। नाचारं पालयति।"**

उपर्युक्त उदाहरण में वैदर्भी का रमणीय स्वाभाविक सरल, स्पष्ट चित्रण हृदयावर्जक है। इस प्रकार के वर्णन हर्षचरित में भी भरे पड़े हैं। माधुर्य गुण की चित्ताकर्षक मनोरम दृश्यावली उनकी कादम्बरी तथा हर्षचरित में यत्र-तत्र सौदामिनी की तरह चमक उठती है। यहाँ श्लेष-परिपुष्ट परिसंख्या अलंकार से माधुर्य गुण दृष्टव्य है। बाण की मधुरिमा उनके अन्तस के मधुरतम की अभिव्यक्ति है। जितना ही 'कादम्बरी' के अन्तर में प्रवेश करते जाते हैं, उतना ही मधुर और नवीन मिलता जाता है। भूत और भावी प्रत्यक्ष बनता जाता है। इसी को कविजन भाविक अलंकार की संज्ञा प्रदान करते हैं-**"प्रत्यक्षा इव यद्भावा क्रियन्ते भूतभाविनः।"**

इस प्रकार बाण की रचना में तीनों गुण देखे जा सकते हैं। पाञ्चाली रीति का यह सुन्दरतम मार्ग है। रस को काव्य की आत्मा कहा गया है। रचना के लिए बाण इसकी अनिवार्यता को स्वीकार करते हैं-**"स्फुटो रसः तथा रसेन शय्यां स्वयमभ्युपगता"** इसको स्वीकार किया है। 'हर्षचरित' वीर-रस-प्रधान है। उसमें अन्य रस वीर-रस के सहायक के रूप में उपात्त हैं। 'कादम्बरी' का प्रधान रस शृंगार है। अन्य नव रस उसका उपस्कार करते हैं। शृंगार को रसराज कहा गया है। कादम्बरी और चन्द्रापीड तथा महाश्वेता और पुण्डरीक का अलौकिक प्रेम 'कादम्बरी' की मुख्य वस्तु है।

सम्पूर्ण 'कादम्बरी' ही शृंगारमय है। वस्तुतः बाण ने प्रेम के दो रूप प्रस्तुत किये हैं- उच्छृङ्खल और मर्यादित। उच्छृङ्खल प्रेम उन्हें अभीष्ट नहीं है। दूसरा ही अभिप्रेत है। मानव- शरीर को वह साधन-द्वार मानते हैं। सुख-दुःख सबका भोग मानव शरीर से ही सम्भव है। इसलिए उनकी दिव्य नायिकाएँ भी मानवीय-प्रेम-पात्र की पूजा करती हैं।

डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल का यह कथन मार्मिक है- "कादम्बरी के पात्र गन्धर्व-लोक और मनुष्य-लोक की जीवन विभूति और मानव सम्पत्ति एक-दूसरे की संप्रीति और कुशलक्षेम के लिए समर्पित करते हैं। उसकी मूल प्रेरणा सदा प्रेम है। यह स्वर्गीय तत्त्व मनुष्य लोक को गन्धर्व लोक के साथ मिलता है। इसकी साधना करते हुए इस लोक के पात्र देव-लोक में आते-जाते हैं। बाण ने अपने सौन्दर्य वर्णन में काव्य-रूढियों का उपयोग किया है। वह अपने वर्णनों में पौराणिक सन्दर्भ प्रस्तुत करने में अधिक रुचि लेते हैं। चाहे वह विन्ध्याटवी का वर्णन हो या शबर सेनापति का, बाण की प्रतिभा सादृश्य विधान पौराणिक सन्दर्भ प्रस्तुत करने में जागरूक परिलक्षित होती है।" कादम्बरी में लोककथा की अनेक रूढियाँ हैं; यथा- सर्वशास्त्र विशारद मनुष्य की तरह बोलता हुआ शुक, त्रिकालदर्शी जाबालि, स्वर्गीय वातावरण में रहने वाले किन्नर, गन्धर्व और अप्सराएँ, शाप के कारण आकृति परिवर्तन, पुनर्जन्म की धारणा तथा पूर्वजन्म के जाति-स्मरण से संबद्ध कई लोक कथा रूढियों की बाण ने विनियोजना की है। बाण के पात्र चन्द्रलोक, गन्धर्वलोक तथा मृत्युलोक में निर्बाध गति से संचार करने वाले आदर्श पात्र हैं।

बाण के गद्य का सौन्दर्य उनके विस्तृत वर्णनों में मिलता है। जहाँ शब्दों का कलात्मक विनिवेश पाया जाता है। कालिदास के बाद संस्कृत काव्यों में अलंकृत शैली को अधिक स्थान दिया जाने लगा था, किन्तु शब्द-वैचित्र्य जैसा बाण में पाया जाता है, अन्यत्र अलभ्य है। गद्य में विस्तार की छूट होने के कारण बाण जिस विषय को लेते हैं, अपनी अलंकृत शैली से उसका चित्र ही प्रस्तुत कर देते हैं। इसके लिए वर्णन में अनुकरणात्मक ध्वनि और लय को ही वे सहज उपस्थित कर देते हैं। उनकी उपमाएँ विषय को और भी विशद तथा रंगीन बना देती हैं। बाण ने 'कादम्बरी' में विविध मानवीय भावों की सूक्ष्म व्यंजना की है। महाश्वेता और कादम्बरी के विविध मनोभावों की कादम्बरी में बड़ी सूक्ष्म व्यंजना हुई है। कादम्बरी जो संदेश केयूरक द्वारा महाश्वेता को भेजती है। उसके निश्चय, स्नेह, सौहार्द की अच्छी झाँकी मिल जाती है। उसका हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है- तुम जानती ही हो कि मेरा हृदय (तुम्हारे) स्वाभाविक प्रेम के प्रवाह से परिपूर्ण है, फिर भी ऐसा कठोर सन्देश भेजते हुए तुम्हें लज्जा क्यों नहीं आई?मित्र के दुख से दुःखी मन होने पर सुख की आशा ही क्या? या शान्ति ही कैसी?सम्भोग कैसा? हास-परिहास कैसा?सूर्यास्त होने के कारण कमलिनियों के दुःखी होने पर उनकी सहवासिनी चक्रवाक वधू भी प्रिय-मिलन के सुख का त्याग कर देती है, फिर स्त्रियों का तो कहना ही क्या?

बाण प्रकृति के परम प्रेमी थे। अनेक स्थानों का परिभ्रमण करने के कारण वह प्रकृति के रंगीन, मधुर, मृदु, रुक्ष आदि विभिन्न स्वरूपों से भली भाँति परिचित थे। वृक्ष, जंगल, लताएँ, सरोवर, उनमें रहने वाले बतख, कमल, फल-फूल, आश्रम तत्स्थ प्राणि-जगत्, साधु, पवित्र अग्नि, सुनहरे प्रातः सायं के रंगीन चित्र, ऋतुओं का वातावरण पर परिवर्तित स्वरूप, पशु-पक्षी आदि कवि के हृदय को स्पर्श करते हैं, जिनका उसने विशद वर्णन प्रस्तुत किया है। संस्कृत-साहित्य में प्रकृति को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

इस प्रकार कुछ कवि श्लेष के प्रयोग में ही पण्डित होते हैं, कुछ शब्दों के गुम्फन में, कुछरसाभिव्यंजना में, कुछ अलंकारों में, कुछ अर्थ की योजना में और कुछ कथार्जन में ही, किन्तु कविता-रूपी विन्ध्याटवी में सब ओर चतुरता से संचरण करने वाले तथा अन्य कविरूपी हाथियों के कुम्भस्थल को विदीर्ण करने वाले 'पञ्चानन' (सिंह) तो अकेले बाण ही हैं। बाण के विषय मेंयह कथन अत्यन्त युक्तिसंगत है-**"वाणी बाणो वभूवेति"**

4.3.4. कादम्बरी रसज्ञानामाहारोऽपि न रोचते

'कादम्बरी' महाकवि बाणभट्ट की अमर कृति है। बाण के दूसरे ग्रन्थ 'हर्षचरित' का सांस्कृतिक अध्ययन बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के व्याख्यानों में प्रस्तुत किया गया था। बाण की सहज प्रफुल्लित प्रकृति, चित्रग्रहिणी प्रतिभा, कल्पनाशील मन और असामान्य पाण्डित्य के विषय में जो कुछ भी है, 'हर्षचरित' में है। 'कादम्बरी' के चित्रों में उनका व्यक्तित्व उससे कहीं अधिक विकसित परिलक्षित होता है। 'हर्षचरित' इसी पृथिवी की तथ्यात्मक आख्यायिका है, पर 'कादम्बरी' दिव्य लोक को भूतल पर लाने वाली काव्य-कल्पना है, जिसमें कवि का मानस अपने युग के उस विराट् मानस में अन्तर्लीन हुआ मिलता है, जब देव और मानव एक-दूसरे से मिलने के लिए निकटतम आ गये थे। शंकर ने अद्वैतपरक 'अहं ब्रह्मास्मि' का जो उद्घोष बाण के कुछ वर्षों बाद किया, उस दिव्य वसंत की श्रीपंचमी बाण की 'कादम्बरी' है।

प्रेमाभिव्यक्ति-'कादम्बरी' बाण की प्रेम और सौन्दर्य-भावना का ही साकार रूप है। सम्पूर्ण कृति का आधार प्रेम-तत्त्व है, किन्तु बाण का प्रेम उस सरोवर की भाँति है, जहाँ पहले प्रवेश करने पर तो उथलापन मिलता है, लेकिन क्रमशः गहराई बढ़ती जाती है। महाश्वेता और कादम्बरी के प्रेम-कथानकों में यही बात दृष्टिगोचर होती है। आरम्भ में दोनों का प्रेम बाह्यरूप के आकर्षण पर आधारित यौन-प्रेम है, किन्तु क्रमशः जैसे-जैसे वह विरहरूपी अग्नि में तपता है, वैसे-वैसे सुवर्ण की भाँति उज्ज्वल हो जाता है और उसकी गंभीरता बढ़ती जाती है।

बाण ने बाह्य सौन्दर्य पर आधारित वासनाजन्य प्रेम की असफलता को दिखाकर अमर्यादित प्रेम की निष्फलता भी दिखा दी है। प्रेम के सम्बन्ध में बाण की आदर्शवादिता उसकी अनन्यता से भी प्रकट होती है। बाण के सभी पात्र केवल एक ही व्यक्ति को प्रेम करते हैं। महाश्वेता इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है। पुण्डरीक के मर जाने पर भी उसके प्रति उसका प्रेम अडिग है। चन्द्रापीड जैसे सुन्दर और प्रतापी नवयुवक सम्राट् के प्रति भी उसमें तनिक भी यौन-आकर्षण नहीं है। यहाँ तक कि उसी का प्रेमी पुण्डरीक जब अपने नये जन्म में वैशम्पायन होकर उसकी ओर आकृष्ट होता है और प्रणय-निवेदन करता है तो महाश्वेता उसे पहचान न पाने के कारण उसकी ओर तनिक भी आकृष्ट नहीं होती और उसके अधिक जिद करने पर क्रुद्ध होकरउसे शाप दे बैठती है।

रसाभिव्यक्ति-चन्द्रापीड को देखकर कादम्बरी की मनोदशा का कवि ने कितना मार्मिक चित्र उपस्थित किया है-**"अथ तस्या कुसुमायुध एव स्वेदमजनयत् ससम्भ्रमोत्थानश्रमो व्यपदेशोऽभवत्। उरुकम्प**

एवं गतिरुरोध, नूपुरवाकृष्ट हंसमण्डलम् यशोलेभे। निश्वासप्रवृत्तिरेव अंशुकं चलं चकार, चामरानिलो निमित्ततां ययौ। अन्तः प्रविष्टचन्द्रा-पीडस्पर्शलोभेनैव निपपात हृदेय हस्तः, स एव स्तनावरणव्याजो बभूव। आनन्द एवाश्रुजलमपातयत्, चलितकर्णा-वतंसकुसुमरजो व्याज आसीत्।''

बाण आधुनिक आदर्शवादियों की भाँति शृंगारयुक्त प्रेम को काम-भावना से परे कोई अलौकिक भावना नहीं मानते थे। इस दृष्टि से बाण ने संचारीभावों, सात्त्विकभावों और अनुभावों की अत्यन्त सूक्ष्म और सुन्दर योजना की है। विरह के भी कुछ सुन्दर चित्र उपलब्ध हैं। महाश्वेता और कादम्बरी के विरह-चित्र उसके उदाहरण हैं। पुरुषों के विरह-चित्र भी कवि ने पुण्डरीक और चन्द्रापीड की विरह दशाओं में खींचे हैं। बाण का विरह-वर्णन यद्यपि बहुत कुछ परम्परागत है, किन्तु उनकी विशद कल्पना ने उसी में अनेक रंग भरे हैं और विरह की सभी दशाओं का चित्रण किया है। बाण के पुत्र भूषणभट्ट का चन्द्रापीड़ के विरह का वर्णन ऊर्वर कल्पना के द्वारा कितना हृदयावर्जक है।

पं० चन्द्रशेखर पाण्डेय ने बाण की वर्णन विविधता की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि कादम्बरी काव्य एक चित्रशाला है- इस कुंजवन की गली में नये-नये रंगों के अनेक लता वितान हैं, प्रलोभनीय अंशो की बहुलता है। कहीं विन्ध्याचल की विकट अटवी का रोमांचकारी दृश्यहै, कहीं जाबालि के शान्त और पावन आश्रम की सात्त्विक शोभा का चित्र है, कहीं शूद्रक और तारापीड़ के राजकीय विलास और वैभव का वर्णन है, कहीं वीणावादिनी महाश्वेता की विरह-विधुरा मूर्ति का दर्शन है, तो कहीं कमनीय-कलेवरा कादम्बरी के प्रणयोन्माद और सलज्ज कौमार्य का स्निग्ध चित्र है।'' अच्छोद सरोवर तथा हिमालय के भव्य दृश्यों का वर्णन अत्यन्त प्रभावोत्पादक है। द्रविड़ यति का वर्णन इस बात का सूचक है कि बाण उपहासयोग्य विषयों का सफल अन्त कर सकते हैं। इन्द्रायुध-अश्व के सजीव वर्णन से बाण को 'तुरंगबाण' की पदवी मिली।

सौन्दर्याभिव्यभक्ति-मानवसौन्दर्य का चित्रण करने में बाण की लेखनी निःसन्देह पटु है। स्त्रियों के रूप के वर्णन में चाण्डाल-कन्या, पत्रलेखा, महाश्वेता और कादम्बरी के चित्रण में उन्होंने अपने समस्त साधनों का भण्डार खोल डाला है। 'सञ्चारिणी इन्द्रनील मणि की पुतली-सी' श्याम चाण्डाल कन्या का चित्रण भी इस भव्यता से किया है कि बरबस पाठक के सामने एक भव्य आकृति आ जाती है। एक के बाद एक उत्प्रेक्षाओं और उपमाओं की परम्परा देते-देते बाण का मन नहीं भरता।

कादम्बरी का कवि ने नख-शिख चित्रण अपेक्षाकृत अधिक विस्तार से किया है और उसके अनेक अंगों के सौन्दर्य को अनेक मौलिक अप्रस्तुतों द्वारा स्पष्ट किया है। उसके नख मानो क्षितितल के तारागण हैं। चरण-तल से वह मानो विद्रुम-रस की नदी को प्रवर्तित करती है।जहाँ महाश्वेता के चित्रण में अप्रस्तुतों की योजना इस प्रकार की गयी है, वहाँ सदैव एक पवित्र भावना की सृष्टि होती है। जहाँ कादम्बरी के चित्रण में प्रत्येक अंग के लिए इस प्रकार के अप्रस्तुत चुने गये हैं जो कामोद्दीपक हैं, वहाँ ऐसा प्रतीत होता है, मानो कादम्बरी के सम्पूर्ण अंगों में कामदेव विराजमान हैं।

'कादम्बरी' शृंगार-रस-प्रधान प्रेमाख्यान है। यह विशिष्ट रचना है। इसमें बाण ने युगलों के उदात्त एवं उत्कृष्ट प्रेम का वर्णन किया है। प्रणय की ज्योति से कादम्बरी की कथा का कोना-कोना आलोकित है, किन्तु प्रेम का चित्रण मर्यादा का उल्लंघन नहीं कर पाता है। बाण ने पुण्डरीक के माध्यम से असंयत प्रेम का दुष्परिणाम भी चित्रित किया है। सच्चा प्रणय ही स्थायी होता है, जिसे काल की कराल छाया भी आक्रान्त नहीं कर सकती। 'कादम्बरी' की रस-पेशलता की प्रशंसा में भूषण भट्ट ने लिखा है-**"कादम्बरी रसभरेण समस्त एव, मत्तो न किंचिदपि चैतयते जनोऽयम्।।"**

अलंकृत भाषा-शैली की अभिव्यक्ति-बाण की गद्य-शैली को भारतीय सहृदय समीक्षकों ने आदर्श शैली माना है। वह परवर्ती गद्य-काव्यकारों के लिए आदर्श रही है। बाण की शैली विषयानुसारिणी है। कहीं समास-बहुल अलंकारों की लड़ीपूर्ण (अटवी तथा सन्ध्या) वर्णन में, कहीं लघु कलेवर प्रसादपूर्ण वाक्यावलि से मण्डित (विरह वर्णन में) है और कहीं समास एवं दीर्घ वाक्यों से रहित सरल एवं चित्रोपम शैली प्रयुक्त है, जिसमें मानवीय भावों का सूक्ष्मता से चित्रण किया गया है। अर्थ की नवीनता, स्वभावोक्ति की शोभा, श्लेष की स्पष्टता, रस कीस्फुटता, अक्षरों की विकट बन्धता का एकत्र दुर्लभ सन्निवेश 'कादम्बरी' को मंजुल और रस- पेशल बनाये हुए है। उनके श्लेष प्रयोग तो जुही की माला में पिरोये गये चम्पक पुष्पों के समान मनमोहक होने हैं-**"निरन्तर श्लेषधनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पक कुड्मलैरिव।"**

बाण की शैली में शब्द और अर्थ, भाषा और भाव के रुचिर सामंजस्य की समीक्षकों द्वारा भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी है। उनकी शैली में अलंकारों का समुचित प्रयोग अपूर्व रमणीयता का संचार करता है। उनके लम्बे-लम्बे समास यदि गिरि-नदी के उद्दाम प्रवाह की भाँति हैं तो उनकी श्लिष्ट उपमाएँ इन्द्रधनुष की छाया की भाँति उसे रंगीन बना देती हैं। उनके अनुप्रास भाषा के विलक्षण स्वर-माधुर्य का संचार करते हैं।

'कादम्बरी' में महाकवि बाण ने श्लेष, उपमा, रूपक परिसंख्या, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का दुरूह शैली में वर्णन किया है। कल्पनाओं का विकट शब्दावली में भावावेशपूर्ण वर्णन किया हैं। महाश्वेतादि का तो कहीं-कहीं इतना क्लिष्ट चित्रण किया है कि साधारण बुद्धि वाले पाठकोंको वह अगम्य हो जाता है। पाश्चात्य विद्वानों को भी यह अगम्य हो गया है।

कल्पनाभिव्यक्ति-कादम्बरी के सौन्दर्य का वर्णन कवि की कल्पना की उड़ान के चमत्कार से युक्त है- **"अभिनव यौवनपवन क्षोभितस्य रामसागरस्यतरंगाभ्यामिवोद् गताभ्यां विद्रुमलता लोहिताभ्याम् मधुराभ्याम् रक्तावदातस्वच्छकान्तिना च मदिरारसपूर्णमाणिक्य शुक्ति- संपुटच्छविना कपोल युगलेन।।"**इसी प्रकार महाश्वेता की अवदात देहछवि का वर्णन है और संचारिणी- इन्द्रनीलमणि की पुतली की भाँति चाण्डाल कन्या का रूप भी कम मनोहारी नहीं है।इसी प्रकार पात्रों की सजीवता, वर्णन-शैली की विशदता, स्फुटता तथा सरसता, मानव और प्रकृति का यथार्थ चित्रण अलंकृत शैली में हुआ है। इन समस्त

विशेषताओं से बाण का गद्य-काव्य अनुपमेय बन गया है। बाण को रस-सम्राट् ही कहा जा सकता है। इन्होंने अभिनव उद्भावनाओं का सागर ही उड़ेलकर प्रस्तुत कर दिया है।

बाण के गद्य-काव्य के काठिन्य को लक्षित करके विद्वानों ने उनकी आलोचना की है। पाश्चात्य आलोचकों ने बाण की शैली की दुरूहता का पर्याप्त बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया है। पीटर्सन ने बाण की 'कादम्बरी' का सम्पादन करते हुए उसकी भूमिका में लिखा है कि बाण कागद्य भारतीय अरण्य की भाँति है, जिसमें यात्रा करने वाले की गति को रोकने के लिए बहुत से साधन विद्यमान है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

    1. 'वाणी बाणो बभूव' यह उक्ति किसने कही है?
    2. 'बाणस्तु पंचानन:' यह उक्ति किसने कही है?
    3. वाणी .... परामृष्ट-वीणा-निक्वाणहारिणीम्।
    4. 'न परिचयं रक्षति' किसके लिए कहा गया है?

4.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में महाकवि बाणभट्ट से सम्बन्धित प्रमुख उक्तियों की व्याख्या की गई है।

4.5 कठिन शब्दावली

1.उच्छिष्ट- जूठन,**2.पंचानन**-पाँच मुखों वाला **3.क्रियन्ते-**किया जाता है,**4.प्रागल्भ्यम्-**निर्भीक,**5. कृत्रिमता-**बनावटी,**6. विर्दीण-**फाड़ना, खोला हुआ।

4.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. गोवर्धनाचार्य 2. चन्द्रदेव 3. पाणि 4. लक्ष्मी

4.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

4.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. बाणोच्छिष्ट जगतसर्वम् उक्ति की समीक्षा कीजिए।

2. बाणस्तुपंचानन: उक्ति की समीक्षा कीजिए।

इकाई-5

कादम्बरी कथामुख

संरचना

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 कादम्बरी कथामुख

5.3.1 कथामुख से सम्बन्धित पद्य-भाग

- स्वयं आकलन प्रश्न

5.4 सारांश

5.5 कठिन शब्दावली

5.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

5.7 सहायक ग्रन्थ

5.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में कादम्बरी के कथामुख का अध्ययन विस्तार से किया जा रहा है। कादम्बरी कथामुख में प्रारम्भ में 20 पद्य है जिनका यहाँ पर व्याख्या सहित वर्णन किया गया है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जानने में सक्षम होंगे-

- बाणभट्ट के वंश-वृक्ष का ज्ञान होगा।
- बाणभट्ट के वंश के पाण्डित्य का बोध होगा।
- बाणभट्ट के गुरु भत्सु का ज्ञान होगा।

5.3कादम्बरी कथामुख

5.3.1 कथामुख से सम्बन्धित पद्य-भाग

रजोजुषे जन्मनि सत्त्ववृत्तये स्थितौ प्रजानां प्रलये तमः स्पृशे।
अजाय सर्गस्थितिनाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः।। 1।।

शब्दार्थ-प्रजानाम्= सृष्टि की। **जन्मनि**= रचना (जन्मकाल)। **रजोजुषे**=रजोगुण- सम्पन्न ब्रह्माजी। स्थितौ= पालन-काल में। सत्त्ववृत्तये सत्त्वगुणसम्पन्न विष्णु। **प्रलये**= विनाशकाल में। **तमःस्पृशे**= तमोगुणसम्पन्न शिवजी। **सर्गस्थितिनाशहेतवे**= सृष्टि के जन्म, पालन तथा नाश के कारण। **त्रयीमयाय**= ब्रह्मा, विष्णु, महेश अथवा ऋक्, यजुः, सामवेद- त्रयी। **त्रिगुणात्मने**= सतोगुण, रजोगुण तथा तमोगुणसम्पन्न (माया का अधिष्ठान)। **अजाय**= अजन्मा (निर्विकार परमब्रह्म) के लिए। **नमः**= नमस्कार है।

प्रसंग- प्रस्तुत श्लोक बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से उद्धृत किया गया है। इसमें कवि ने अपने ग्रन्थ की निर्विघ्न समाप्ति हेतु मंगलाचरण किया है। सर्वप्रथम निर्गुण ब्रह्म का ब्रह्मा, विष्णु, शंकर- इन तीन साकार रूपों में भव्य चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- सृष्टि के प्रारम्भ में रजोगुणसम्पन्न ब्रह्मा, पालन समय में सत्त्वगुण-सम्पन्न विष्णु तथा विनाश-काल में तमोगुणसम्पन्न शिव के रूप में अवतरित होने वाले इस प्रकार सृष्टि के जन्मदाता पालन तथा विनाश के एकमात्र कारण उस अजन्मा परमेश्वर को प्रणाम है। जो इस रूपत्रयी (ब्रह्मा, विष्णु, महेश अथवा वेद भगवान् के स्वरूप वेदत्रयी (ऋक्, यजुः,साम) की मूर्ति अर्थात् तीनों के समूह से युक्त गुणत्रयी सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण से सम्पन्न माया के अधिष्ठान हैं। भाव यह है कि त्रिगुणात्मिका माया के भी जो स्वामी हैं।

विशेष-(1) प्रस्तुत श्लोक में कवि ने जगत्स्रष्टा प्रजापति ब्रह्मा की ही स्तुति की है। इस श्लोक में **वंशस्थ** छन्द है, जिसका लक्षण - **"जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ"** है।

(2) **रजोजुषे** आदि में **अनुप्रास** एवं **परिकर** तथा सर्गस्थितिनाशहेतवे में **यथासंख्यअलंकार** है।। नमः के योग में **'नमः स्वस्ति स्वाहा स्वधालंवषड्योगाच्च'**इस सूत्र से चतुर्थी **विभक्ति** का प्रयोग हुआ है।

जयन्ति बाणासुरमौलिलालिता दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः।
सुरासुराधीशशिखान्तशायिनो भवच्छिदस्त्र्यम्बकपादपांसवः।। 2।।

शब्दार्थ- बाणासुरमौलिलालिताः= बाण नाम के असुर के मस्तक पर धारण किये हुए मुकुट से युक्त अर्थात् मुकुट से ग्रहण की हुई। **दशास्यचूडामणिचक्रम्बिनः**= दशमुख रावण की चूडामणियों के समूह का चुम्बन करती हुई। **सुरासुराधीशशिखान्तशायिनः**= देव-दावनों के स्वामियों की चोटियों के अग्रभाग पर विराजमान रहने वाली। **भवच्छिदः**= सांसारिक बन्धनों का छेदन करने वाली (काटने वाली) **त्र्यम्बकपादपांसवः**= तीन नेत्र वाले भगवान् शंकर की चरण धूलियों की। **जयन्ति**= जय हो।

प्रसंग- यह श्लोक बाणभट्ट कृत 'कादम्बरी' से लिया गया है। इसमें महाकवि ने भगवान् शिव की चरणरज की सर्वोत्कृष्ट महत्ता प्रदर्शित की है।

हिंन्दी अनुवाद - (प्रणाम करते समय) बाण नामक असुर के मस्तक पर स्थित मुकुट पर धारण की गयी, दशमुख रावण की चूडामणियों के समूह का चुम्बन करती, देव-दानवों के स्वामियों की शिखाओं के अग्रभाग पर स्थित रहने वाली, भवबन्धन की छेदनहारी, त्रिनेत्र शिव की चरण-धूलियों की जय हो।

विशेष-(1) इस श्लोक में कवि ने समग्र देवताओं में शिव की उत्कृष्टता का वर्णन किया है। भगवान शंकर देव-दानवों दोनों के ही पूजनीय हैं। इसमें **'त्र्यम्बकपादपांसव'**के अन्य सभी पद विशेषण हैं। त्र्यम्बक में **बहुव्रीहि समास** है। त्रीणि अम्बकानि (नेत्राणि) यस्य सः भवच्छिदः भवानां छिदः **षष्ठी तत्पुरुष**, सांसारिक दुःख़ों का विनाश करने वाली,**पादपांसव**-पादानां पांसवः **षष्ठी तत्पुरुष।**

(2) इस श्लोक में **वंशस्थ छन्द** तथा समुच्चयालंकार है, क्योंकि चरणरज का वैशिष्ट्य सिद्ध करने के लिए बाणासुरेत्यादि अनेक हेतु बताये गये हैं। सभी पदों में **अनुप्रास अलंकार** का भी सौन्दर्य है।

जयत्युपेन्द्रः स चकार दूरतो विभित्सया यः क्षणलब्धलक्ष्यया।
दृशैव कोपारुणया रिपोरुर: स्वयं भयाद्भिन्नमिवास्रपाटलम्।। 3।।

शब्दार्थ सः= वह। **उपेन्द्रः**= इन्द्र का छोटा भाई वामन, विष्णु का अवतार। **जयति**= दूर से = जय हो। **यः**= जिसने। **विभित्सया**= विदीर्ण करने की कामना से। **दूरतः**= दूर से। **क्षणलब्धलक्ष्य** = क्षणभर लक्ष्य पर ठहरती हुई के द्वारा। **कोपारुणया**= क्रोध के कारण लाल हुई। **दृशा**= दृष्टि से। **एव**= ही। **रिपोः**= शत्रु का (हिरण्यकशिपु का)। **उरः** = वक्षस्थल। **भयात्**= भय से। **अस्रपाटलम्**= रुधिर से लाल। **अकरोत्**= कर दिया।

प्रसंग- यह श्लोक बाणभट्ट कृत 'कादम्बरी' से उद्धृत है। इसमें कवि ने भगवान् विष्णु के नृसिंहावतार की सर्वोपरि श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हुए जय-ध्वनि का उद्घोष किया है।

हिन्दी अनुवाद- जिसने (विष्णु के नृसिंहावतार ने) विदीर्ण करने की इच्छा से क्षणमात्र के लिए लक्ष्य को प्राप्त कर लेने वाली तथा क्रोध के कारण लाल हुई (अपनी) दृष्टिमात्र से, मानो डर के कारण अपने आप विदीर्ण हुए (भिन्न हुए, फटे हुए) से शत्रु (हिरण्यकशिपु) के वक्षस्थल को दूर से ही रक्त-सा लाल बना दिया उस (नृसिंह रूपधारी) विष्णु की जय हो।

विशेष-(1)प्रस्तुत श्लोक में कवि ने विष्णु के नृसिंहावतार रूप का वर्णन किया है। नृसिंह भगवान् की क्रोधपूर्ण दृष्टि पड़ने से ही भयभीत उनके शत्रु हिरण्यकशिपु का वक्षःस्थल विदीर्ण हो गया।

(2) इस श्लोक में **वंशस्थ छन्द** तथा **क्रियोत्प्रेक्षा** एवं **लुप्तोपमा अलंकार** है।

नमामि भर्त्सोश्चरणाम्बुजद्वयम् सशेखरैमौखरिभिः कृतार्चनम्।
समस्तसामन्तकिरीटवेदिकाविटङ्कपीठोल्लुठितारुणाङ्गलि।। 4।।

शब्दार्थ-सशेखरैः= मुकुट धारण करने वाले। **मौखरिभिः**= मौखरी क्षत्री राजाओं के द्वारा। **कृतार्चनम्**= पूजा किया हुआ। **समस्तसामन्तकिरीटवेदिका**= सम्पूर्णसामन्तों के मुकुटरूपी वेदी के मध्य में। **विटङ्कपीठोल्लुठितारुणाङ्गलि**= ऊँची उठी हुई रक्तपीठिका पर घर्षण होने के कारण अत्यधिक लालिमा

को प्राप्त हुई अँगुलियाँ (चरणों की) जिनकी। **भत्सो:** = ऐसे गुरु के। **चरणाम्बुजद्वयं**= दोनों चरण-कमलों को। **नमामि**= नमस्कार करता हूँ।

प्रसंग- प्रस्तुत श्लोक महाकवि बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से उद्‌धृत किया गया है। इस श्लोक में कवि ने भत्सु नामक अपने कुलगुरु की वन्दना की है।

हिन्दी अनुवाद- मैं मौखरी राजाओं के मुकुटों से सदैव पूजित भगवान् भत्सु के उन चरणों की वन्दना करता हूँ, जिनकी अँगुलियाँ समस्त सामन्तों की मुकुट-वेदिका की ऊँची रत्न- पीठिका पर संलग्न होने के कारण और भी लाल हो जाती हैं।

विशेष- (1) प्रस्तुत श्लोक में कवि ने बाण के गुरु का नाम भत्सु या भर्व बताया है, जो विभिन्न राजकुलों के पूज्य थे। विटङ्क शब्द का आशय है जो मध्य भाग में ऊँचा हो। कबूतरों आदि पालतू पक्षियों के लिए छत के ऊपर बाँस आदि गाड़कर जो स्थान बनाया जाता है, उसको भी विटङ्क कहते हैं।

(2) कृतार्चनम् = कृतं अर्चन - यस्य तत् चरणाम्बुजद्वयं का विशेषण होने के कारण **कर्मधारय समास** है। पृथक् रूप से मानने पर **बहुव्रीहि** भी है। पीठं उल्लुठिताः अतएव अरुणांगुलिय यस्य तत् यह भी चरणाम्बुजद्वयम् का विशेषण है। अतः **कर्मधारय समास** है। पुनः अलग से **बहुव्रीहि** भी है। **वंशस्थ छन्द** तथा **रूपक अलंकार** है।

अकारणाविष्कृतवैरदारुणादसज्जनात्कस्य भयं न जायते।
विषम् महाहेरिव यस्य दुर्वचः सुदुःसहं सन्निहितं सदा मुखे।। 5।।

शब्दार्थ- अकारणाविष्कृतवैरदारुणात्= बिना किसी कारण के शत्रुता के जन्मदाता।**असज्जनात्**= दुष्ट मनुष्यों से। **कस्य** = किसको। **भयम्** = डर। **न** = नहीं। **जायते**=उत्पन्न होता है। **यस्य**= जिसके। **मुखे**= मुख में। **सुदुःसहं**= न सहन करने योग्य। **दुर्वचः**= बुरे वचन। **महाहेः** = महान् सर्प के। **सन्निहितम्**= परिपूर्ण।

प्रसंग= यह श्लोक बाणभट्ट कृत 'कादम्बरी' से उद्‌धृत किया गया है। कवि ने इसमें दुष्ट मनुष्यों की निन्दा करते हुए भर्त्सना की है तथा उनके वचनों की सर्प के विष से तुलना की है।

हिन्दी अनुवाद-बिना कारण ही वैर करने में भयंकर दुर्जन से किसे भय नहीं लगता ? जिस (दुर्जन) के मुख में दुःसह दुर्वचन उसी प्रकार सदा स्थित रहता है, जिस प्रकार महान् सर्प के मुख में विष।

विशेष- (1) इस श्लोक का भाव यह है कि दुष्ट लोग बिना किसी कारण ही सज्जनों की निन्दा आदि करके उनके प्रति वैर प्रकट करते हैं।

असज्जनात्- भीत्रार्थानां भयहेतु में **पञ्चमी विभक्ति**। महाहे: महान् चासौ हिः तस्य में **कर्मधारय समास**।

(2) दुष्ट मनुष्यों की उपमा सर्पों से दी गई है।

(3) इस श्लोक में **वंशस्थ छन्द** तथा **विषम महाहेरिव** में **उपमा अलंकार** है।

कटु क्वणन्तो मलदायकाः खलास्तुदन्त्यलं बन्धनशृंखला इव।
मनस्तु साधुध्वनिभिः पदे-पदे हरन्ति सन्तो मणिनूपुरा इव।। 6।।

शब्दार्थ- बंधनशृंखला= लोहे की जंजीरें। **इव**= समान। **खलाः**= दुष्ट पुरुष। **कटु**= कड़वे। **क्वणन्तः**= ध्वनि करती हुई, बोलती हुई। **मलदायकाः**= दोष या कलंक देने वाले, मलीन करने वाले। **अलम्**= पर्याप्त। **तुदन्ति**= पीड़ित करते हैं। **सन्तः**= सज्जन पुरुष। **तु**= तव। **मणिनूपुरा**= मणिजटित नूपुरों। **पदे-पदे**= पग-पग पर। **साधुध्वनिभिः** = मनोहर, वाणियों से। **मनः** = मन को। हरन्ति आकर्षण करते हैं।

प्रसंग- प्रस्तुत श्लोक बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से उद्धृत किया गया है। इसमें महाकवि ने दुर्जनों की निन्दा तथा सज्जनों की प्रशंसा की है।

हिन्दी अनुवाद- बन्धन श्रृंखला (जंजीर) के समान दुष्ट लोग कटु वचन बोलते हुए (बन्धन श्रृंखला के पक्ष में श्रुतिकटु खट-खट शब्द करती हुई) दूसरों पर कलंक (मिथ्यारोप) लगाते हुए (बन्धनशृंखला के पक्ष में - संसर्ग मात्र से ही कालिमा लगाती हुई) सत्पुरुषों को पीड़ित करते हैं। किन्तु सज्जन मणिजटित नूपुर के समान प्रत्येक शब्द से (नूपुर-पक्ष में प्रत्येक पग पर) श्रेष्ठ वचनों के द्वारा (नूपुर-पक्ष में श्रुतिप्रिय ध्वनि के द्वारा) दूसरों के मन को हरण करते हैं।

विशेष- (1) इस श्लोक के पूर्वार्द्ध में खलनिन्दा और उत्तरार्द्ध में सज्जन-प्रशंसा है। पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दोनों में ही पूर्णोपमालंकार तथा वंशस्थ छन्द है।

सुभाषितं हारि विशत्यधोगलान्न दुर्जनस्यार्करिपोरिवामृतम्।
तदेव धत्ते हृदयेन सज्जनो हरिर्महारत्नमिवातिनिर्मलम्।। 7।।

शब्दार्थ-हारि= हरण करने वाला, मन को आकर्षित करने वाला। **सुभाषितम्** = सूक्ति, सुन्दर काव्य। **अमृतम्** = सुधा। के। **गलात्** = गले से। **अर्करिपोः**= राहु। **इव**= समान। **दुर्जनस्य** = दुष्ट पुरूष के। **अधः** = नीचे। **न** = नहीं। **विशति** = प्रवेश करता है, उतरता है। **तदेव** = उसी प्रकार। **सज्जनः** = श्रेष्ठ पुरुष। **अतिनिर्मलं** = पूर्ण स्वच्छ। **महारत्नम्** = महामणि कौस्तुभ-मणि। **हरिः**= विष्णु। **इव** = समान। **हृदयेन**= हृदय से। **धत्ते**= धारण कर लेता है।

प्रसंग- यह श्लोक बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से लिया गया है। इसमें कवि ने दुर्जनों की निन्दा तथा सज्जनों की प्रशंसा की है।

हिन्दी अनुवाद - मनोहर काव्यादि (सूक्ति) भी दुष्टों के गले से उसी प्रकार नीचे उतरता है जिस प्रकार सूर्य के शत्रु (राहु) के गले से अमृत (नीचे नहीं उतरा)। किन्तु सज्जन उस (सुभाषित) को भी उसी प्रकार हृदय में धारण कर जिस प्रकार विष्णु ने कौस्तुभ मणि को धारण किया था।

विशेष-(1)इस श्लोक में **वंशस्थ छन्द** तथा **उपमा अलंकार** है।

स्फुरत्कलालापविलासकोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम्।
रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवावधूरिव।। 8।।

शब्दार्थ- स्फुरत् = स्पष्ट होता हुआ। कलालाप= मधुर वर्णन। स्वयं = स्वतः हो, अपने आप। शय्याम् = शब्द-गुम्फन (कलापक्षे), पर्यङ्क (वधूपक्षे)। अभ्युपागता = प्राप्त होती हुई (वधू-पक्ष में स्वयं पलंग पर आई हुई)। अभिनवावधूः= नवीन पत्नी। इव = समान। कथा = गद्य-काव्य का भेद। रसेन काव्य-रस से (वधू-पक्ष में- प्रेम तथा आनन्द से)। कौतुकाधिकम् = अत्यधिक कौतूहलपूर्ण या विस्मय से युक्त।

प्रसंग- महाकवि बाण ने अपनी नवीन कथा की उपमा नवीन वधू से दी है। अतः दोनों की तुलना विभिन्न भावों के द्वारा की गई है।

हिन्दी अनुवाद- जैसे उत्साहपूर्ण मधुर वचनों तथा भावभंगियों से रमणीय नवोढा अपने आप शय्या पर आकर मधुर रस से नायक के हृदय में उत्कट रति-भावना जगा देती है, उसी प्रकार कथोपकथनों की वक्रता से अत्यन्त रमणीय शब्दों की लड़ियों में उतरी हुई नवीन कथा भी अपने रस की मधुरता से लोगों के हृदय में उत्साहपूर्ण आसक्ति उत्पन्न कर देती है।

विशेष- (1) इस श्लोक में **पूर्णोपमाअलंकार** तथा **वंशस्थ छन्द** है।

हरिन्त कं नोज्ज्वलदीपकोपमैर्नवैः पदार्थैरुपपादिता कथाः।
निरन्तरश्लेषघनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव।। 9।।

शब्दार्थ- उज्ज्वलदीपकोपमैः=प्रकाशमान दीपकों की शोभातुल्य। **चम्पककुड्मलैः**= चम्पा की कलियों से। **उपपादिता**= भली प्रकार गूँथी हुई। **निरन्तरश्लेपघनाः**= निरन्तर श्लेष अलंकारादि से युक्त। **सुजातयः=** उत्तम स्वरूप से सम्पन्न। **महास्रजः**= विशाल मालाओं के। **इव**= समान। **नवैः** = नूतन, नवीन। **पदार्थैः** = पदों के अर्थ से। **कथाः**= कहानियाँ, एक प्रकार के गद्यकाव्य। **कं**= किसको। **हरन्ति**= मन्त्रमुग्ध करती है।

प्रसंग - प्रस्तुत श्लोक महाकवि बाणभट्ट की रचना 'कादम्बरी' से लिया गया है। इसमें कवि ने अपनी कथा की उपमा पुष्पों से गुंथी हुई माला से दी है।

हिन्दी अनुवाद- उज्ज्वल दीपकों जैसी चम्पा की कलियों से अत्यन्त सघन रूप से गुँथी हुई एवम् उत्तम स्वरूप वाली बड़ी मालाओं-जैसी कथाएँ, जो स्पष्ट प्रतीत होने वाले दीपक तथा उपमा अलंकारों से तथा श्लेष अलंकार के निरन्तर प्रयोग से युक्त होती हैं और जो उत्तम स्वरूप वाली हैं-शब्दों के नवीन अर्थों द्वारा भला किस (सहृदय) को आकर्षित नहीं कर लेती हैं।

विशेष- (1) प्रस्तुत श्लोक में कथा उपमेय है और महामाला उपमान है। अतः स्पष्ट रूप से दीपक तथा उपमा अलंकारों से युक्त शब्दार्थों के द्वारा **पूर्णोपमालंकार अर्थापत्तिअलंकार** एवं **वंशस्थ** छन्द है।

बभूव वात्स्यायनवंशसम्भवो द्विजो जगद्गीतगुणोऽग्रणीः सताम्।
अनेकगुप्तार्चितपादपंकजः, कुबेरनामांश इव स्वयम्भुवः।। 10।।

शब्दार्थ- वात्स्यायनवंशसंभव= वात्स्यायन वंश में में प्रादुर्भूत कुबेर। **जगद्गीतगुणः**= संसार जिनका गुणगान करता था। **सताम्**= सज्जनों के। **अग्रणीः**= नेता, नायक। **अनेकगुप्तार्चितपादपंकजः** = अनेक

गुप्तवंशी सम्राटों के द्वारा पूजित चरणकमल वाले। **कुबेरनामा**= कुबेर नाम वाले। **द्विजः**= ब्राह्मण। **बभूव**= उत्पन्न हुए।

प्रसंग- प्रस्तुत श्लोक बाणभट्ट कृत कादम्बरी से उद्धृत किया गया है। इसमें महाकवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी महत्ता का प्रतिपादन किया है।

हिन्दी अनुवाद- वात्स्यायन के कुल में उत्पन्न संसार में जिनके दयादाक्षिण्यादि गुण गाये जाते थे और अनेक श्रेष्ठियों अथवा गुप्त-नरेशों के द्वारा जिनके चरण-कमलों की पूजा हुआ करती थी, ऐसा सज्जनों में अग्रगण्य, मानो विधाता का अंशावतार कुबेर नामक ब्राह्मण हुआ।

विशेष-(1)इस श्लोक में **उत्प्रेक्षा अलंकार** तथा **वंशस्थ छन्द** है।

उवास यस्य श्रुतिशान्तकल्मषे सदा पुरोडाशपवित्रताधरे।
सरस्वती सोमकषायितोदरे समस्तशास्त्रस्मृतिबन्धुरे मुखे।। 11।।

शब्दार्थ -श्रुतिशान्तकल्मषे= वेदों के अध्ययन से नष्ट पाप वाले। **पुरोडा रापवित्रताधरे**= यज्ञ के हविष्यान्त भक्षण से पवित्र। **सोमकषायितोदरे**= सोमरस के पान से जिसका उदर कषैले स्वाद वाला बन गया है। **समस्तशास्त्रस्मृतिवन्धुरे**= सम्पूर्ण शास्त्र और स्मृतियों के ज्ञान से सुन्दर। **यस्य**= जिसके। **मुखे**= मुख में। **सरस्वती**= विद्या की अधिष्ठात् देवी। **सदा**= निरन्तर या हमेशा। **उवास**=रहती थी।

प्रसंग- यह श्लोक महाकवि बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से लिया गया है। इसमें कवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी महत्ता का चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- निरन्तर वेद-पाठ से निष्कलुष, यज्ञ के हविष्यान्न भक्षण से पवित्र, अन्तर भाग में सोमपान से कषैले तथा समस्त शास्त्रों और स्मृतियों से सुशोभित, उसके मुख में भगवती सरस्वती सदैव निवास करती थीं।

विशेष-(1)इस श्लोक में **अनुप्रास अलंकार** तथा वंशस्थ छन्द है।

जगुगृहेऽभ्यस्तसमस्तवाङ्मयैः ससारिकैः पञ्जरवर्तिभिः शुकैः।
निगृह्यमाणा वटवः पदे-पदे यजूंषि सामानि च यस्य शङ्किताः।। 12।।

शब्दार्थ- यस्य = जिस कुबेर के। **गृहे=** घर में। **अभ्यस्त समस्तवाङ्मयैः**= समस्त शास्त्रों का अभ्यास करने वाले। **पञ्जरवर्तिभिः=** पिंजड़ों में बैठे हुए। **ससारिकैः**= सारिकाओं के सहित। **शुकैः**= तोतों के द्वारा। **पदे-पदे=** प्रत्येक पद पर। **निगृह्यमाणाः**= टोके गये। **सामानि**= सामवेद का। **च=** और। **जगुः=** गान करते थे या पाठ करते थे।

प्रसंग - यह श्लोक बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से उद्धृत किया गया है। इसमें महाकवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी महत्ता का वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जिस (कुबेर) के घर में (निरन्तर शास्त्रादि की चर्चा सुनते-सुनते) जिन्होंने समस्त (सम्पूर्ण) शास्त्रों का अभ्यास कर लिया था, पिंजरों में बैठे हुए सारिकाओं के सहित शुकों के द्वारा प्रत्येक पद पर टोके गये (इसीलिए) शंकालु ब्रह्मचारी (गण) यजुर्वेद और सामवेद का गान करते थे (पाठ करते थे)।

विशेष- (1)प्रस्तुत श्लोक में **पाञ्चाली रीति, प्रसाद गुण, अतिशयोक्ति अलंकार** तथा **वंशस्थ** छन्द है।

हिरण्यगर्भो भुवनाण्डकादिव क्षपाकरः क्षीरमहार्णवादिव।
अभूत् सुपर्णो विनतोदरादिव द्विजन्मनामर्थपतिः पतिस्ततः।। 13।।

शब्दार्थ- भुवनाण्डकात्= ब्रह्माण्ड से, चतुर्दश-लोक से। **द्विजन्मनामर्थपतिः** = ब्राह्मणों के स्वामी ब्रह्मा। **हिरण्यगर्भः=** प्रजापति ब्रह्मा। **इव=** सभान। **क्षीरमहार्णवात्** = क्षीर महासागर से। **क्षपाकर=** द्विजराज चन्द्रमा। **ततः=** उसी प्रकार। **सुपर्ण इव** = गरुड तुल्य। **ततः=** कुबेर से। **अर्थपति** = अर्थपति नाम के ब्राह्मण। **अभुत्**= उत्पन्न हुए।

प्रसंग= प्रस्तुत श्लोक बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से लिया गया है। इसमें कवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी महत्ता का प्रतिपादन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जिस प्रकार ब्रह्माण्ड से (ब्रह्मवादियों में श्रेष्ठ ब्रह्माजी क्षीर सागर से (द्विजपति) चन्द्रमा, विनता के गर्भ से (पक्षियों में श्रेष्ठ) गरुड उत्पन्न हुए। उसी प्रकार उस (कुबेर नामक ब्राह्मण) से ब्राह्मण श्रेष्ठ अर्थपति उत्पन्न हुए।

विशेष- (1) प्रस्तुत श्लोक में कवि ने भुवनाण्डकात्, क्षीरमहार्णनात् और विनतोदरात् इन तीनों पदों में 'भुवः प्रभवः सूत्र से भू-धातु के कर्ता का उत्पत्ति-स्थान होने के कारण अपादान होने से पञ्चमी है, क्योंकि अभूत क्रिया के तीनों ही कर्ताओं के उत्पत्ति-स्थान तीनों ही पद हैं। (2) इस श्लोक में मालोपमा अलंकार तथा वंशस्थ छन्द है।

विवृण्वतो यस्य विसारि वाङ्मयं दिने-दिने शिष्यगणा नवा-नवाः।
उषः सुलग्ना श्रवणेऽधिकां श्रियं प्रचक्रिरे चन्दनपल्लवा इव।। 14।।

शब्दार्थ- दिने-दिने = प्रतिदिन। **उषः सु=** प्रातःकाल में। **नवाः नवाः=** नये-नये अर्थात् उत्तरोत्तर वृद्धिशाली होने वाले। **शिष्यगणाः=** शिष्यों का समूह। **चन्दनपल्लवाः** = चन्दन वृक्ष की नवीन कोपलें। **इव** = समान। **श्रवणे** = कान में। **लग्नाः** = लगे हुए। **विसारि** = फैलने वाले। **श्रियं=** शोभा को। **प्रचक्रि**रे= करते थे या बढ़ाते थे।

प्रसंग- यह श्लोक महाकवि बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से उद्धृत है। इसमें कवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी महत्ता को प्रदर्शित किया है।

हिन्दी अनुवाद- प्रतिदिन उषा-काल में विस्तृत वाङ्मय की व्याख्या करते हुए जिस (अर्थपति) के नये-नये शिष्यगण (उसका व्याख्यान) सुनने में तत्पर होकर उसी प्रकार अधिक शोभा को बढ़ाते थे, जिस प्रकार (किसी सुन्दरी के) कानों में धारण किये गये नूतन चन्दन- पल्लव अधिक शोभा की वृद्धि करते हैं।

विशेष-(1) इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा वंशस्थ छन्द है।

विधानसम्पादितदानशोभितैः स्फुरन्महावीरसनाथ मूर्तिभिः।
मखैरसंख्यैरजयत्सुरालयम् सुखेन यो यूपकरैर्गजैरिव।। 15।।

शब्दार्थ-यः = जो। **विधानसम्पादितदानशोभितैः**= विधिपूर्वक दिये गये दानों से सुशोभित। **स्फुरन्महावीरसनाथ मूर्तिभिः**= युद्ध के लिए उत्सुक बड़े-बड़े वीरों से युक्त। **यूपकरैः**= यज्ञ में पशुओं के बाँधने का स्तम्भ, स्तम्भ के समान सूँड़। **गजैः**= हाथियों के द्वारा। **सुखेन**= सुखपूर्वक। सुरालयम् स्वर्ग को। **अजयत्** = जीत लिया।

प्रसंग- यह श्लोक बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से लिया गया है। इसमें महाकवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जिस प्रकार राजा, मद बहा देने वाले पदार्थों के भक्षण द्वारा उत्पन्न मद जल से सुशोभित, युद्धोत्साही महावीरों से अधिष्ठित तथा यज्ञ-स्तम्भ के समान सूँड़ों वाले असंख्य बलिष्ठ युद्ध के हाथियों द्वारा इन्द्र जैसे पराक्रमी राजा का भी देश सरलता से जीत लेता है। वैसे ही अर्थपति ने विधि-विधान से दिये गये दान से सुशोभित, प्रज्वलित होमाग्नि से सम्पन्न तथा यज्ञ-स्तम्भों से प्रतिष्ठित असंख्य यज्ञों द्वारा स्वर्ग को भी अपने अधीन अर्थात् अवश्यम्भावी बना लिया था।

विशेष- (1) इस श्लोक में **गौडी रीति**, **प्रसाद गुण** तथा **वंशस्थछन्द** है।

सा-चित्रभानुं तनयं महात्मनां सुतोत्तमानां श्रुतिशास्त्रशालिनाम्।
अवाप मध्ये स्फटिकोपलोपमं क्रमेण कैलासमिव क्षमाभृताम्।। 16।।

शब्दार्थ-सः= उसने। **क्रमेण**= क्रमशः। **क्षमाभृतां**= पर्वतों के राजा लोग। **स्फटिकोपलोपमं**= स्वच्छ स्फटिक मणि के समान। **कैलासम्** = कैलास पर्वत। **इव** = क्षमाशील। **महात्मनाम्** = महानुभाव। **श्रुतिशास्त्रशालिनाम्** = समान। क्षमाभृताम् = वेदशास्त्रों में पारङ्गत। **सुतोत्तमानां**= पुत्रों में श्रेष्ठ। **तनयं**= पुत्र को। अवाप प्राप्त किया।

प्रसंग- यह श्लोक महाकवि बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से उद्धृत किया गया है। इसमें कवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी महत्ता को प्रतिपादित किया है।

हिन्दी अनुवाद- उस (अर्थपति) ने वंशक्रम से पर्वतों में स्फटिक मणि सदृश (निष्कलंक) कैलाश (पर्वत) जैसे क्षमाशील महानुभाव तथा वेदशास्त्रों के ज्ञाता श्रेष्ठ पुत्रों के मध्य चित्रभानु को प्राप्त किया।

विशेष-इस श्लोक में **उपमालंकार,वंशस्थ छन्द प्रसाद गुण** तथा **पाञ्चाली रीति** है।

महात्मनो यस्य सुदूरनिर्गताः कलंकमुक्तेन्दुकलामलत्विषः।
द्विषन्मनः प्राविविशुः कृतान्तरा गुणा नृसिंहस्य नखांकुरा इव।। 17।।

शब्दार्थ यस्य= जिसके। **महात्मनः** = महात्मा के। **सुदूरनिर्गताः**= बहुत दूर तक फैले हुए, नखों के पक्ष अधिक लम्बे। **कलंकमुक्तेन्दुकलामलत्विषः** = निष्कलंक चन्द्रमा की कला के समान निर्मल। गुणाः गुणों का समूह। **कृतान्तराः**= अन्तर प्रवेश के लिए मार्ग बनाते हुए। **द्विषन्मनः**= शत्रुओं के मन में। अपि भी। **प्राविविशुः**= प्रवेश कर गये।

प्रसंग- प्रस्तुत श्लोक महाकवि बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से लिया गया है। इस पद्य में कवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी श्रेष्ठता का वर्णन प्रतिपादित किया है।

हिन्दी अनुवाद- मृगलांछन से रहित चन्द्रकला की निर्मल कान्ति के समान कान्ति धारण करने वाले दूर तक निकले नृसिंह भगवान् के नखों के अग्रभाग जिस प्रकार शत्रु हिरण्य- कश्यप की छाती फाड़कर घुस गये थे, उसी प्रकार उस मत्तात्मा के दूर-दूर तक विख्यात कालिमाहीन चन्द्रकला की भाँति निष्कलंक गुण अपने प्रभाव से अवकाश बनाकर शत्रुओं के हृदय में भी प्रविष्ट हो गये थे।

विशेष- (2) इस श्लोक में पूर्णोपमालंकार तथा वंशस्थ छन्द है।

दिशामलीकालकभङ्गताम् गतस्त्रयीवधूकर्णतमालपल्लवः।
चकार यस्याध्वरधूमसञ्चयो मलीमसः शुक्लतरं निजं यशः।। 18।।

शब्दार्थ दिशां= दिशाओं के या दिशाओंरूपी सुन्दरियों के। **अलीकालकभङ्गतां** = ललाट प्रदेश पर स्थित घुँघराले केश। **गतः**= प्राप्त किये। **त्रयीवधूकर्णतमालपल्लवः**= वेदत्रयीरूपी वधू के कानों में पड़े हुए तमाल किसलय। मलीमसः मलिन, कृष्णवर्ण। **यशः** = कोर्ति। **वशः** = अधीन, अधिक। **शुक्लतरं**= अधिक श्वेत। **चकार**= बना दिया।

प्रसंग- यह श्लोक महाकवि बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से उद्धृत किया गया है। इसमें कवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी महत्ता का प्रतिपादन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जैसे कामिनियों के ललाट पर रची हुई घुँघराली केश-रचना तथा नवोढ़ा नाधिकाओं के कान में लगी हुई तमाल पल्लवों की रेखा स्वभावतः साँवली होती हुई भी शोभा में अत्यन्त निखर उठती है। उसी प्रकार दिशाओं के छोरों पर इधर-उधर बिखरी हुई एवं आकाश में लगी हुई यज्ञ के धुओं की टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओं ने स्वभावतः काली होकर भी अपनी शोभा को अत्यन्त उज्ज्वल बना दिया था।

विशेष -(1) इस श्लोक में रूपक, विरोधाभास एवं विषम अलंकार तथा वंशस्थ छन्द **है।**

सरस्वतीपाणिसरोजसम्पुटप्रमृष्टहोमश्रमशीकराम्भसः।
यशोऽशुशुक्लीकृतसप्तविष्टपात्ततः सुतो बाण इति व्यजायत।। 19।।

शब्दार्थ-सरस्वतीपाणिसरोजसम्पुटप्रमृष्टहोमश्रमशीकराम्भसः= सरस्वती देवी के हस्त-पद्मयुगल से पोंछी गयी यज्ञ के परिश्रम से उत्पन्न पसीने की बूँदों वाले। **यशोऽशुशुक्लीकृतसप्तविष्टपात्** = यश की

किरणों से सात लोकों को श्वेत बना देने वाले। **ततः=** उस चित्रभानु के। **बाणः=** बाण नाम का। **इति=** ऐसा। **सुतः=** पुत्र।

प्रसंग- यह श्लोक बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से लिया गया है। इसमें महाकवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी महत्वपूर्णता को प्रदर्शित किया है।

हिन्दी अनुवाद- सरस्वती के कर कमलों के सम्पुट से पोंछे जाते हैं यज्ञ के (कारण) श्रम-बिन्दु जल जिसके (जिनके) एवं (अपने) यश की किरणों से (जिन्होंने) सप्त भुवनों को उज्ज्वल कर दिया है जिसने (ऐसे) उस (उन) चित्रभानु से बाण (नाम का) पुत्र उत्पन्न हुआ।

द्विजेन तेनाक्षतकण्ठकौण्ठय्या महामनोमोहमलीमसान्धया।

अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा।। 20।।

शब्दार्थ- तेन उस। **द्विजेन=** ब्राह्मण से (ने)। **अक्षतकण्ठकोण्ठय्यां=** कण्ठ वी कुण्ठता नष्ट नहीं हो गई है। **महामनोमोहमलीमसान्ध्या=** अत्यभिक चित्त की विकलता के कारण मलिन। **अलव्धवैदग्धयविलासमुग्धया=** विलास-लीला की अप्राप्ति के कारण। **धिया=** बुद्धि से। **इयम्** = यह (गुणाढ्य की 'वृहत्कथा' तथा सुवन्धु की 'वासवदत्ता) कथाओं से। **अतिद्वयी=** अद्वितीय, उत्कृष्ट कथा। **निबंद्धा=** रची है।

प्रसंग- यह श्लोक महाकवि बाणभट्ट-कृत 'कादम्बरी' से उद्धृत है। इसमें कवि ने अपनी वंश-परम्परा तथा उसकी महत्ता का प्रतिपादन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जिसके कंठ की तुतलाहट अभी तक नहीं मिट पायी है अर्थात् जिसका कंठ-स्वर अभी भी वर्षों के स्पष्ट उच्चारण में मँज नहीं पाया है, जिसका हृदय अज्ञानरूपी अंधकार से अभी तक ढका हुआ है तथा जिसकी बुद्धि अभी भी विद्वानों की वचनवक्रता न सीख पाने के कारण अत्यन्त मूढ़ है अर्थात् जिसकी बुद्धि का अभी तक पूर्ण विकास नहीं हो पाया है, उसी बाण ने अपने से पूर्व रची गयी दो कथाओं (वृहत्कथा तथा वासवदत्ता) के अतिरिक्त अथवा तुच्छता में अद्वितीय या उन दोनों से अत्यन्त उत्कृष्ट इस कथा की रचना की है।

विशेष-(1) इस श्लोक में अनुप्रास अलंकार, प्रसाद गुण तथा पाञ्चाली रीति है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

  1. कादम्बरी की भूमिका को क्या कहा जाता है?
  2. कादम्बरी में कितने श्लोक है?
  3. बाणभट्ट के गुरु का क्या नाम था?
  4. मंगलाचरण में किसकी स्तुति की गई है?
  5. बाणभट्ट के पिता का क्या नाम था?

5.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में कथामुख में वर्णित 20 श्लोकों में कवि ने मंगलाचरण, गुरु भत्सु का वर्णन, दुष्ट की निंदा, सज्जन की प्रशंसा, कथा के गुणों एवं अपने वंश का संक्षेप में वर्णन किया है।

5.5 कठिन शब्दावली

1. अधिष्ठान – आधार **2. जटित** – जड़ा हुआ **3.उत्कट** – तीव्र **4.सघन** – घना

5.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. कथामुख 2. बीस 3. भत्सु 4. निर्विकार परब्रह्म 5. चित्रभानु

5.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बम्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

5.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. कादम्बरी के पद्य भाग की कथा लिखिए।
2. बाणभट्ट के वंश का वर्णन कीजिए।
3. सज्जन प्रशंसा एवं दुर्जन निन्दा का वर्णन कीजिए।

इकाई-6

राजा शूद्रक वर्णन

संरचना

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 राजा शूद्रक वर्णन

6.3.1 प्रतिहारी वर्णन

6.3.2 शुक सहित चाण्डाल कन्या का आगमन

- स्वयं आकलन प्रश्न

6.4 सारांश

6.5 कठिन शब्दावली

6.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

6.7 सहायक ग्रन्थ

6.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में राजा शूद्रक का चरित्र-चित्रण, प्रतिहारी का वर्णन, शुक को लेकर चाण्डाल कन्या के प्रवेश का वर्णन किया गया है।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

- राजा शूद्रक के गुणों का ज्ञान होगा।
- प्रतिहारी के विषयमें जानेंगे।
- चाण्डाल कन्या के द्वारा शूद्रक के वर्णन से अवगत होंगे।

6.3राजा शूद्रक वर्णन

आसीदशेषनरपतिशिरः समभ्यर्चितशासनः पाकशासन इवापरः, चतुरुदधिमालामेखलाया भुवो भर्त्ता, प्रतापानु-रागावनत समस्तसामन्तचक्रः, चक्रवर्तिलक्षणोपेतः, चक्रधर इव

करकमलोपलक्ष्यमाणशङ्खचक्रलाञ्छन, हर इव जित-मन्मथः, गुह इवाप्रतिहतशक्तिः कमलयोनिरिव विमानीकृतराजहंसमण्डलः, जलधिरिव लक्ष्मीप्रसूतिः, गङ्गाप्रवाह इव भगीरथपथप्रवृत्तः, रविरिवप्रतिदिवसोप जायमानोदयः, मेरुरिव सकलोपजीव्यमानादच्छायः, दिग्गज इवानवरतप्रवृत्त-दानार्द्रीकृतकरः, कर्ता महाश्वर्याणाम् आहर्ता क्रतूनाम् आदर्शः सर्वशास्त्राणाम् उत्पत्तिः कलानाम्, कुलभवनम् गुणानाम्, आगमः काव्यामृतरसानाम्, उदयशैलो मित्रमण्डलस्य, उत्पातकेतुरहितजनस्य, पवर्तयिता गोष्ठीबन्धानाम्, आश्रयो रपि-कानाम्, प्रत्यादेशो धनुष्मताम्, धौरेयः साहसिकानाम् अग्रणीर्विदग्धानाम् वैनतेय इव विनतानन्दजननः वैन्य इव चाप-कोटिसमुत्सारितारातिकुलाचलो राजा शूद्रको नाम।

शब्दार्थ- अशेषनरपति= सम्पूर्ण राजा। **शिरः=** शिरों से। **समभ्यर्चितशासनः=** पूजित शासन वाला, शिरोधार्य आज्ञा वाला। **पाकशासइन्द्र=** इन्द्र। **इव=** समान। **अपरः**= दूसरे। **चतुरुदधिमालामेखलाया=** चारों सागरों की मालारूपी मेखला वाली। **भुवः**= पृथ्वी का। **भर्त्ता=** स्वामी, पालक। **प्रतापानुरागावनत्=** अधिक प्रताप एवं प्रेम से। **समस्तसामन्तचक्रः=** सभी सामन्त राजाओं को वशीभूत कर लेने वाला। **चक्रवर्तिलक्षणोपेतः**= जो सार्वभौम राजा के लक्षणों से युक्त है। **चक्राधर इव**= विष्णु के समान। **करकमलोपलक्ष्यमाणशङ्खचक्रलाञ्छन=** कमलरूपी हाथों में कर-कमल दिखाई देते हुए, शंख तथा चक्र के चिह्नों से युक्त हाथ-पैर वाला। **हर इव=** भगवान शंकर की तरह। **जितमन्मथः**= जिसने कामदेव को जीता था। **गुह इव=** स्वामी कार्तिकेय की भाँति। **अप्रतिहतशक्तिः=** अप्रतिहत बल वाला। **कमलयोनिरिव**= ब्रह्मा के समान। **विमानीकृत=** अपमानित। **जलधिरिव=** समुद्र के समान। **लक्ष्मीप्रसूतिः**= लक्ष्मी (देवी का) उत्पत्ति-स्थान। **प्रवृत्तः=** संलग्न। **गङ्गाप्रवाह इव=** गंगा की धारा के समान। **रविरिव=** सूर्य के समान। **प्रतिदिवसोपजायमानोदयः**= उदित होने वाला, प्रतिदिन धनादि की उन्नति करने वाला। **मेरुरिव=** सुमेरु पर्वत की भाँति। **सकलोपजीव्यमानादच्छायः**= समग्र लोकों से उपजीव्यमान उपत्यकाओं की छाया वाला, समस्त लोकों का आश्रयस्वरूप। **अनवरत=** लगातार। **प्रवृत्तदानार्द्रीकृतकरः**= बहने वाले मदजल से गीली सूँड वाले, दान में प्रवृत्त होने के कारण संकल्प के जल से गीले हाथ वाले। **कर्तामहाश्चर्याणाम्**= विस्मयजनक कार्यों को करने वाला। **आहर्ता=** अनुष्ठान। **क्रतूनाम**= यज्ञों को करने वाला। **आदर्श शास्त्राणाम्=** शास्त्रों की छाया प्रतिभाषित होती थी। **सर्व**= सभी। **उत्पत्तिः कालानाम्**= नृत्यगीतादि कलाओं की उत्पत्ति का स्थान। **कुलभवनम्=** वंशपरम्परागत आश्रय-स्थान। **गुणानाम्=** परोपकार आदि गुणों का। **काव्यामृतरसानाम्=** काव्यों के अमृत-तुल्य शृङ्गारादि रस। **उदयशैलो=** उदयाचल, उदय-स्थान। **मित्रमण्डलस्य=** अपना मित्र-समूहगण। **उत्पातकेतुः=** विनाशः सूचक धूमकेतु। **अहितजनस्य**= अपने शत्रुजनों के लिए विनाशकारी। **गोष्ठीबन्धनाम्**= सभायोजनाओं का। **आश्रयो**= सहारा। **रसिकानाम्**= काव्य-रस के मर्मज्ञ जनों का। **प्रत्यादेशो**= अपवाद। **धौरेयः**= प्रमुख। **साहसिकानाम्=** साहसिक जनों के मध्य। **अग्रणीर्विदग्धानाम्=** सहृदय विद्वानों के बीच में प्रमुख। **वैनतेय इव**= गरुड़ के समान। **वैन्य=** वेनु का पुत्र पृथु। **इव चापकोटिसमुत्सारितारातिकुलाचलः=** धनुष के अग्रभाग से जिसने कुल-पर्वतों के समान सभी शत्रुओं का विनाश कर दिया।

प्रसंग- प्रस्तुतगद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित गद्यकाव्य-शिरोमणि ग्रन्थ 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। इसमें कवि ने अपनी उद्भट काव्य कल्पना से तथा प्रकाण्ड पाण्डित्य द्वारा राजा शूद्रक का विभिन्न उपमानों से प्रभावोत्पादक चित्रण किया है, जो अत्यन्त सजीव एवं मनोग्राही है।

हिन्दी अनुवाद - शूद्रक नाम का राजा था। वह पृथ्वी पर दूसरे इन्द्र के समान था। सब राजा शीश झुकाकर उसकी आज्ञा (आदेश) मानते थे। वह चतुरंत समुद्ररूपी मेखला से युक्त पृथ्वी का स्वामी था। उसके प्रताप या भक्ति के वशीभूत हो, सभी सामन्त-मण्डल उसके अधीन हो गया था। चक्रवर्ती राजा के शरीर में जो महापुरुष के लक्षण होते हैं, उन सभी लक्षणों से वह युक्त था। उसके हाथ में शंख और चक्र के चिह्न सुशोभित थे, जैसे कि विष्णु के हाथ शंख-चक्र से युक्त रहते हैं। वह शिव की भाँति कामदेव को जीतने वाला था। कार्तिकेय के समान अप्रतिम शक्ति वाले उसने ब्रह्मा के समान सम्पूर्ण राज-रूपी हंसों के समूह को अपने अधीन अर्थात् मानरहित कर लिया था। समुद्र की भाँति लक्ष्मी का वह जन्म स्थान था। गंगा का प्रवाह जैसे भगीरथ के पथ पर चला, ऐसे ही वह भी महान पथ का अनुगामी था। सूर्य की तरह वह दिन-प्रतिदिन नया अभ्युदय प्राप्त करता था। सुमेरु पर्वत के समान उसके चरणों की छाया में समस्त लोक अपनी जीवन-यात्रा प्राप्त करते थे। दिग्गज के गण्डस्थल की भाँति उसके कर दान से सदा गीले रहते थे। वह आश्चर्ययुक्त कर्मों का कर्ता, बड़े-बड़े सोम-यज्ञों का विधाता, सभी शास्त्रों का दर्पण तथा कलाओं का जन्म-स्थान था। सब गुणों के एकत्र निवास के लिए वह राजप्रासाद के समान था। काव्यों के रसों का मानो उसी से उद्गम होता था। वह मित्र-मण्डलों के लिए उदयाचल पर वैरियों के लिए धूमकेतु था। वह नाना प्रकार की गोष्ठियों का आयोजन करता था। काव्य-कलाओं के रसिक मर्मज्ञ उसके यहाँ आश्रय पाते थे। वह धुनर्धरों का मान-भंग करने वाला, साहस के अद्भुत काम करने वालों का अगुआ और विदग्ध पंडितों में प्रधान था। विनता को जैसे गरुड़ ने सुखी किया था, ऐसे ही वह विनीत पुरुषों का आनन्द-दाता था। आदिराज पृथु के समान उसने अपने धनुष की कोर से सभी शत्रुरूपी कुल-पर्वतों को एक ओर हटाकर भूमि को समतल कर दिया था।

विशेष-(1)प्रस्तुत गद्यावतरण में महाकवि ने राजा शूद्रक की उपमा इन्द्र, महादेव, विष्णु, कार्तिकेय आदि दे से की है। ब्रह्मा ने राजहंसों को अपना विमान बनाया, उसी प्रकार शूद्रक ने सभी राजाओं को मानरहित कर दिया था। भगवान शंकर ने कामदेव को जीत लिया था, उसी प्रकार उसने भी कामवासनाओं को नष्ट कर दिया था। समुद्र से लक्ष्मी उत्पन्न होती है, इसी प्रकार वह भी लक्ष्मी-वैभव से सम्पन्न था। सूर्य प्रतिदिन उदय होता है, उसी तरह वह भी प्रतिदिन अभ्युदय को प्राप्त था। सुमेरु पर्वत की तलहटी सबको आनन्दित करने वाली है, ऐसे ही वह भी सम्पूर्ण प्रजा को आनन्द देने वाला था। भगीरथ द्वारा प्रतिपादित नीति-मार्ग का गंगा के समान अनुसरण करने वाला था। धूमकेतु अनिष्टकारी होता है, वह भी शत्रुओं का नाश करने वाला था। धनुष धारण करने वालों में एवं विद्वानों में वह अग्रगण्य था।

(2) इस गद्यांश में **पूर्णोपमा,श्लेष, रूपक, यमक** तथा **समासोक्ति अलंकारों** कासमावेश है।

नाम्नैव योनिभिन्नारातिहृदयो विरचितनरसिंहरूपाडम्बरम्, एकविक्रमाक्रान्तः सकलभुवनतलो विक्रमत्रयायासित-भुवनत्रयम् च जहासेव वासुदेवम्। अतिचिर काललग्नमतिक्रान्तकुनृपतिसहस्त्रसंपर्ककलङ्कमिव क्षालयन्ती तस्य विमले कृपाण धाराजले चिरमुवास राजलक्ष्मीः।

शब्दार्थ-नाम्नैव= नाममात्र से ही अर्थात् नाम से। **निर्जिन्नारातिहृदयो**= शत्रुओं के हृदय को विदीर्ण करने वाला। **नरसिंहरूपाडम्बरम्**= नृसिंह के रूप का आडम्बर करने वाला। **विक्रमाक्रान्तसकलभुवनतलो**= वामनावतार में तीन पैरों से पृथ्वी को नापने वाला। **विक्रमत्रयायासितभुवनत्रयम्**= तीनों भुवनों या लोकों को आक्रान्त करने वाला। **जहासेव=** हँसी करते हुए। **वासुदेवम्=** विष्णु भगवान का। **अतिचिरकाललग्नम्=** अति प्राचीन काल से लगे हुए। **अतिसहस्रसंपर्ककलङ्कमिव**= मानो नीच राजाओं के सम्पर्क से कलंकित। **क्षालयन्ती**= धोती हुई। **यस्य विमले**= जिस (शूद्रक) के स्वच्छ। **कृपाणधाराजले=** खड्गधाररूपी जल में। **चिरम्**= चिरकाल में। **उवास**= रहती थी।

प्रसंग- गद्य-काव्य-शिरोमणि बाणभट्ट के 'कादम्बरी' से प्रस्तुत गद्यावतरण उद्धृत है। कवि ने अपनी उद्भट काव्य-कल्पना से तथा प्रकाण्ड-पाण्डित्य द्वारा राजा शूद्रक का विभिन्न उपमानों से प्रभावोत्पादक चित्रण किया है, जो अत्यन्त सजीव तथा मनोग्राही है।

हिन्दी अनुवाद- जिसके नाममात्र से ही शत्रुओं के हृदय विदीर्ण होने के कारण नृसिह के रूप का आडम्बर धारण करने वाला और स्वपराक्रम-मात्र से सम्पूर्ण धरती मण्डल को आक्रान्त करने वाला होने से तीन विक्रमों- तीन चरण न्यासों से तीनों भुवन नापकर थके हुए विष्णु का उपहास-सा करता था। बहुत समय से अतीतकालीन सहस्त्रों दुष्ट राजाओं के सम्पर्क में रहने से लगे कलंक को, मानो जिसकी विमल खड्ग-धारा में स्वयं को धोती हुई लक्ष्मी चिरकाल से निवास करती थी।

विशेष (1)इस गद्यांश में कवि का तात्पर्य यह है कि राजा ने अपने खड्ग में समस्त राजाओं को जीतकर राजलक्ष्मी को अपने पास स्थिर कर लिया था।

(2) इस गद्यांश में जहास इव में **क्रियोत्प्रेक्षा**, कलंक क्षालयन्तीव में **उत्प्रेक्षा** तथा कृपाणधाराजले में **रूपक अलंकार** है।

यश्च मनसि धर्मेण, कोपे यमेन, प्रसादे धनदेन, प्रतापे वह्निना, भुजे भुवा, दृशि श्रिया, वाचि सरस्वत्या, मुखे शशिना, बले मरूता, प्रज्ञायां सुरगुरुणा, रूपे मनसिजेन्, तेजसि सवित्रा च वसता सर्वदेवमयस्य प्रकटितविश्वरूपा-कृतेरनुकरोति भगवतो नारायणस्य।

शब्दार्थ- मनसि= मन में। **धर्मेण=** धर्म से। **कोपे**=क्रोध में। **प्रसादे=** प्रसन्नता में। **भुवा=** पृथ्वी। **दृशि=** दृष्टि में। **वाचि=** वाणी में। **मुखे=** मुख से। **शशिना=** चन्द्रमा। **बले=** शक्ति में। **मारुता=** वायु में। **प्रज्ञायां=** बुद्धि में। **तेजसि=** तेज में। **सवित्रा=** सूर्य में। **वसता=** रहते हुए। **प्रकटितविश्वरूपाकृतेरनुकरोति=** विश्वरूप आकार को प्रकट करने वाले का अनुकरण करता था। **भगवतोनारायणस्य=** भगवान विष्णु (नारायण)।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यावतरण गद्यकाव्य-शिरोमणि बाणभट्ट रचित 'कादम्बरी' से उद्धृत है। इसमें कवि ने अपनी उद्भट काव्य-कल्पना से तथा प्रकाण्ड-पाण्डित्य द्वारा राजा शूद्रक का विभिन्न उपमानों से प्रभावोत्पादक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- तथा जो (राजा शूद्रक अपने) मन में धर्म, क्रोध में यमराज, प्रसन्नता में कुबेर, प्रताप में अग्नि, भुजा में पृथ्वी, दृष्टि में लक्ष्मी, वाणी में सरस्वती, मुख में चन्द्रमा, बल में वायु, बुद्धि में देवताओं के गुरु (बृहस्पति), सौन्दर्य में कामदेव तथा तेज में सूर्य का निवास होने के कारण सर्वदेवमय तथा विश्व-रूप आकार को प्रकट करने वाले भगवान विष्णु का अनुकरण करता था।

विशेष- विष्णु पुराण में कहा गया है कि राजा के शरीर में विष्णु का वास रहता है। उस समय राज्यलक्ष्मी राजा का स्वयं वरण करती थी। **स्कन्दगुप्त** का गिरनार में लेख है- **''लक्ष्मीः स्वयं च वरयाञ्चकार।''**

यस्य च मदकलकरिकुम्भपीठपाटनम् विदधतो लग्नस्थूलमुक्ताफलेन दृढमुष्टिनिष्पीडनान्निष्ठ्यूतधारा जलबिन्दु-दन्तुरेणेव कृपाणेनाकृष्यमाणा, सुभटोरः कपाटविघटितकवचसहस्रान्धकारमध्यवर्तिनी करिकरटगलितमदजलासारदुर्दिना स्वाभसारिकेव समरनिशासु समीपं सकृदगाद्रालक्ष्मीः। यस्य च हृदिस्थितानपिभर्तृन्दिधक्षुरिव प्रतापानलो वियोगिनीनामपि रिपुसुन्दरीणामन्तर्जनितदाघो दिवानिशं जज्वाल।

शब्दार्थ-यस्य च= और जिस राजा (शूद्रक) के। **मदकलकरिकुम्भपीठपाटनं विदधत=** मदजल द्वारा मनोरम हाथियों के कुम्भ-स्थलों को विदीर्ण करने से। **लग्नस्थूलमुक्ताफलेन=** लगे हुए बड़े-बड़े मोती। **दृढमुष्टिनिष्पीडनात्=** मजबूत मुट्ठी के दबाने से। **निष्ठ्युतधाराजलबिन्दुदन्तुरेणेव=** तलवार की धार से निकलते हुए जल-बिन्दु के समान। **सुभटोर कपाटविघटित=** सुभटों की छातीरूपी किवाड़ों से दूर करते हुए। **कवचसहस्रान्धकारमध्यवर्तिनी=** हजारों कवचरूपी अन्धकार के बीच रहने वाली। **करिकरटगलितमदजलासारदुर्दिनास्वभिसारिकेव=** हाथियों के गण्डस्थलों से झरने वाले मद-जल की धारा से उत्पन्न बरसात की युद्धरूपी रातों में अभिसारिका के समान। असकृत= बार-बार। **हृदिस्थितानापिभर्तृन्=** हृदय में वर्तमान पतियों को। **दिधक्षुरिव=** जलाने का इच्छुक-सा। **प्रतापानलो=** प्रतापरूपी अग्नि (अनल)। **वियोगिनीनाम्=** पति के वियोग से युक्त। **रिपुसुन्दरीणाम्=** शत्रुओं की सुन्दरियों के। **अन्तर्जनितदाहः=** हृदय में जलन पैदा करने वाला। **जज्वाल=** जलती रहती थी।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश गद्य-काव्य-शिरोमणि बाणभट्ट रचित 'कादम्बरी' से लिया गया है। इसमें कवि ने अपनी उद्भट काव्य-कल्पना द्वारा राजा शूद्रक का विभिन्न उपमानों से प्रभावशाली वर्णन किया है, जो अत्यधिक रमणीय है।

हिन्दी अनुवाद- और जिस राजा शूद्रक के मदजल से सुन्दर हाथियों के कुम्भ-स्थलों को फाड़ने के कारण उसमें उत्पन्न स्थूल मुक्ताफलों से युक्त (लगने से) मानो, दृढ़ता से मुट्ठी के द्वारा दबाये जाने से निकले हुए धाररूपी जल-बिन्दुओं से दाँतेदार, कृपाण के द्वारा खींची जाती हुई, वीर योद्धाओं के वक्षस्थलरूपी कपाट से (छिन्न-भिन्न होकर) गिरे हुए सहस्रों (लौहनिर्मित अतएव कृष्णवर्ण) कवचों के अंधकार के बीच रहने वाली, हाथियों के गण्डस्थल से बहने वाले मद-जल की धारा समाप्त होने के कारण दुर्दिन-युक्त युद्धरूपी रात्रियों में अभिसारिका के समान अनेक बार राजलक्ष्मी समीप आ चुकी थी (आती थी) एवं

जिसकी प्रतापाग्नि, वियोगिनी शत्रु-सुन्दरियों के हृदयों में (पति के वियोग से सम्बद्ध) दाह उत्पन्न करके मानो हृदय स्थित पतियों को भी जलाने की इच्छा करने वाली होकर दिन-रात जलती रहती थी।

विशेष-(1)प्रस्तुत गद्यांश में कवि ने राजा शूद्रक के अत्यधिक प्रताप का वर्णन किया है। यहाँ शत्रु राजाओं की तुलना हाथियों से की गयी है तथा राजा शूद्रक की उपमा सिंह से दी गयी है। शत्रुओं की स्त्रियाँ अपने स्वामियों की युद्ध-स्थल में मृत्यु की आशंका करती हुई मानो उस वियोग के दाह में अभिसारिका के समान निरन्तर जलती रहती हैं।

(2) इस गद्यांश में **रूपक, क्रियोत्प्रेक्षा** एवं **उपमा अलंकार** तथा **ओज गुण** और **पाञ्चाली**रीति है।

यस्मिंश्च राजनि जितजगति पालयति महीं चित्रकर्मसु वर्णसंकराः, रतेषु केशग्रहाः काव्येषु दृढबन्धाः शास्त्रेषु चिन्ता, स्वप्नेषु विप्रलम्भाः, छत्रेषु कनकदण्डाः, ध्वजेषु प्रकम्पाः, गीतेषु रागविलसितानि, करिषु मदविकाराः, चापेषु गुणच्छेदाः, गवाक्षेषु जालमार्गाः, शशिकृपाणकवचेषु कलङ्काः, रतिकलहेषु दूतप्रेषणानि, सार्यक्षेषु शून्यगृहाः न प्रजा-नामासन्। यस्य च परलोकाद्भयम् अन्तःपुरिकाकुन्तलेषु भङ्गः पुरेषु मुखरता, विवाहेषु करग्रहणम् अनवरत मखाग्नि-धूमेनाश्रुपातः तुरङ्गेषुकषाभिघातः मकरध्वजे चापध्वनिरभूत्।

शब्दार्थ- यस्मिंश्च राजनि**=** राजा शूद्रक के। **जितजगति=** संसार को जीतने वाले। **पालयति महीं**= पृथ्वी का पालन करने पर। **वर्णसंकराः**= रंगों का मिश्रण प्रजाओं में वर्णसंकर नहीं था। **रतेषु केशग्रहाः=** मैथुनकाल में केशों का पकड़ना। **काव्येषु=** काव्यों में। **दृढबन्धाः=** शब्दों में रचना, कठोर बन्धन। **शास्त्रेषु=** शास्त्रीय विषयों पर। **चिन्ता=** मनन। **स्वप्नेषु**= स्वप्न में। **विप्रलम्भाः**= वियोग (बिछुड़ना)। **छत्रेषु=** छत्रों में। **कनकदण्डाः**= सोने के दण्ड (छड़ी) छातों में होते थे। **ध्वजेषु=** पताकाओं में। **प्रकम्पाः=** कम्पन होता था। **गीतेषु=** गीतों में। **रागविलसितानि=** विभिन्न रागों का विलास, प्रजा में विलास नहीं। **करिषु मदविकाराः=** हाथियों में मदजल के कारण विकार। **चापेषु गुणच्छेदाः**= धनुषों में (प्रत्यञ्चा) डोरी काटी जाती थी। **गवाक्षेषु=** खिड़कियों में। **जालमार्गाः=** जालियों के मार्ग। **रतिकलहेषु=** काम-क्रीड़ा सम्बन्धी कलह में। **दूतप्रेषणानि**= दूत भेजे जाते थे। **सार्यक्षेषु=** गोट और पासों का खेल, चौपड़ आदि। **शून्यगृहाः न**= खाली घर। **प्रजानामासन्**= प्रजा में थे। **परलोकाद्भयम्**= परलोक से भय (डर)। **कुन्तलेषु=** बाल। **मुखरता=** मुख। **विवाहेषु-करग्रहणम्=** विवाह में पाणिग्रहण होता था। **अनवरतनखाग्निधूमेनाश्रुपातः**= निरन्तर यज्ञ की अग्नि के धुएँ से आँसू गिरते थे। तुर**ङ्गेषुकषाभिघातः**= घोड़ों पर कोड़ों का प्रहार। **मकरध्वजे**= कामदेव पर। **चापध्वनिरभूत्=** धनुष की ध्वनि होती थी।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यावतरण गद्यकाव्य-शिरोमणि बाणभट्ट विरचित 'कादम्बरी' से उद्धृत है। कवि ने अपनी उद्भट काव्य-कल्पना से तथा प्रकाण्ड-पाण्डित्य द्वारा राजा शूद्रक का विभिन्न उपमानों से प्रभावोत्पादक वर्णन किया है, जो अत्यन्त सजीव एवं मनोग्राही है।

हिन्दी अनुवाद- जगत् को जीतने वाले जिस राजा के पृथ्वी का पालन करने परवर्ण-संकर (रंग मिश्रण) केवल चित्र रचनाओं में था (ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्षों में संकर अर्थात् अन्तर्जातीय विवाह आदि नहीं थे)। केश-ग्रहण केवल काम-क्रीड़ा में था (लड़ाई-झगड़ों में बाल नहीं पकड़े जाते थे), दृढ़-बन्ध (शब्दों की दृढ़ रचना) समास आदि केवल काव्यों में था (कारागार में दृढ़ बन्धन नहीं थे), चिन्ता (चिन्तन) केवल शास्त्रों में था (मनुष्यों के हृदय में चिन्ता नहीं थी), वियोग केवल स्वप्न में था (वास्तविक जीवन में वियोग नहीं था), स्वर्णदण्ड (सोने के डंडे) केवल छत्रों में थे (किसी पर सोने का जुर्माना नहीं होता था), कम्पन केवल ध्वजाओं में था (किसी में भय से कम्पन नहीं होता था), रागों का विलास केवल गीतों में था (प्रजा में क्रोध आदि राग अर्थात् मनोविकार नहीं थे), मद का विकार केवल हाथियों में था (प्रजाजनों में अहंकाररूपी मनोविकार नहीं था), गुणों (डोरियों) का टूटना या कटना केवल धनुषों में था (प्रजा में गुणों का नाश नहीं होता था), जालमार्ग (जालियों के मार्ग) केवल खिड़कियों में थे (प्रजा में जालमार्ग अर्थात् कपट नहीं था), कलंक (कालिमा) केवल चन्द्रमा तथा लौह-कवचों में थी (कुलों में कलंक नहीं था), दूत-प्रेषण केवल प्रेम-कलह में था (युद्ध के लिए दूत नहीं भेजा पाता था), खाली गृह (खाने) केवल गोट और पासों के खेल में थे (पुत्र न होने या गृह-त्याग के कारण प्रजाओं में रिक्त घर नहीं थे)। जिसको परलोक अर्थात् दूसरे जन्म के लोक से ही भय था (परलोक अर्थात् शत्रु लोगों से नहीं था), जिसके राज्य में अन्तःपुर की स्त्रियों के बालों में (ही) भंग (टेढ़ापन या घुँघरालापन) था, युद्ध में भंग अर्थात् पराजय नहीं थी, नूपुरों में ही मुखरता झंकार थी (प्रजा में वाचालता नहीं थी), विवाहों में ही कर (हाथ) का ग्रहण होता था (प्रजा से कर, अर्थात् टैक्स नहीं लिया जाता था), निरन्तर (उठते) यज्ञ के धुएँ में ही अश्रु-पात होता था (शोक आदि के कारण नहीं), चाबुक की चोट घोड़ों की पीठ पर ही होती थी (पापियों पर नहीं, क्योंकि पापियों का अभाव था), धनुष टंकार कामदेव की ही होती थी (राजा या सेना की नहीं, क्योंकि किसी का भय न होने से धनुष टंकार की आवश्यकता ही नहींहोती थी)।

विशेष- महाकवि बाण ने प्रस्तुत गद्यांश में श्लेष से परिपुष्ट परिसंख्या अलंकार के द्वारा राजा शूद्रक के प्रतापातिशय का प्रभावोत्पादक वर्णन किया है। राजा शूद्रक के राज्य में किसी भी प्रकार की अनियमितता नहीं थी। परलोकाद् भयम् में **'भीत्रार्थनां भय हेतु'**से भय के योग में पंचमी विभक्ति का प्रयोग हुआ है। **कषाभिघातः=** कशायाः अभिघातः तत्पुरुष। **अनवरतमखाग्निधूमेन=** अनवरतं प्रज्वलितः मखग्निः तस्याः धूमेन, **गुणच्छेदाः=** धनुष की डोरी का काटना, विभिन्न गुणों का खण्डन होना। **वर्णसङ्कराः=** रंगों का मिश्रण, अथवा ब्राह्मण, क्षेत्री, वैश्य, शूद्र जातियों के मिश्रण से वर्णसंकर सन्तति का होना, **शास्त्रेषुचिन्ता=** शास्त्रों के अध्ययन की ही चिन्ता थी, अन्य किसी बात की चिन्ता नहीं थी। **कनकदण्डा=** सोने की छड़ियाँ होती थीं,किन्तु किसी को दण्ड नहीं दिया जाता था।

तस्य च राज्ञः कलिकालभयपुञ्जीभूतकृतयुगानुकारिणी त्रिभुवनप्रसवभूमिरिव विस्तीर्णा मज्जन्मालव-विलासिनीकुचतटास्फालनजर्जरीकृतोर्मिमालयाजलावगाहना गतजयकुञ्जरकुम्भ सिन्दूरसन्ध्यायमानसलिलयोन्मद-कलहंसकुलकोलाहलमुखरीकृत कूलया वेत्रवत्या परिगता विदिशाभिधाना नगरी राजधान्यासीत्।

शब्दार्थ तस्य च राज्ञः= और उस राजा की। **कलिकालभयपुञ्जीभूतकृतयुगानुकारिणी**= कलियुग के भय से एकत्र हुए सतयुग का अनुकरण करने वाली। **त्रिभुवनप्रसवभूमिरिव**= तीनों लोकों के उत्पत्ति स्थान के समान। **विस्तीर्णा=** विस्तृत। **मञ्जन=** स्नान। **विलासिनी**= वेश्या। **स्फालन**= टकराना। **उर्मिमालया=** लहरों के समूह से। **कुञ्जर=** हाथी। **कुम्भ=** गण्डस्थल। **सिन्दूरसन्ध्यायमान**= सिन्दूर के कारण सन्ध्या के समाना। **मानसलिलयोन्मदकल=** जैसे (लाल) जलवाली मदमत्त। **मुखरीकृत=** शब्दायमान। **कूलया=** किनारे वाली। **वेत्रवत्या=** वेतवा नदी से। **परिगता=** घिरी हुई। **विदिशाभिधाना=** विदिशा नाम की।

प्रसंग- यह गद्यावतरण गद्यकाव्य-शिरोमणि बाणभट्ट विरचित 'कादम्बरी' से उद्‌धृत है। कवि ने अपनी उद्भट काव्य-कल्पना से तथा प्रकाण्ड-पाण्डित्य द्वारा राजा शूद्रक का विभिन्न उपमानों से प्रभावोत्पादक वर्णन किया है जो अत्यन्त सजीव एवं मनोग्राही है।

हिन्दी अनुवाद= कलिकाल में भय से सिमटे सतयुग का अनुकरण करने वाली, तीनों भुवनों की जन्मभूमि के समान विस्तृत, स्नान करती हुई मालविनी-विलासिनियों के कुचतटों से टकराकर जिसकी लहरें चूर-चूर हो जाती थीं, स्नान को उतरे जयहस्तियों के मस्तकों पर लगे सिन्दूर से जिसका जल मानो सायंकालीन लालिमा को ग्रहण कर लेता था और मदमाते कलहंसो के कोलाहल से जिसके तट मुखरित होते रहते थे, ऐसी वेत्रवती नदी से परिवेष्टित विदिशा नाम की नगरी उसकी राजधानी थी।

विशेष-''कलिकालः कलियुगः तस्मात् यद्भयं, कलिकालभयं, त्रिभुवनप्रसवभूमिरिव त्रयाणां भुवनानां समाहरिस्त्रभुवनं तस्य प्रसवभूमिरुपत्तिस्थानमिव उन्मदा ये कलहंसा स्तोषां कुलानि तेषां यः कोलाहलस्तेन मुखरीकृत कुलं यस्यास्तया वेत्रवत्था।'' यहाँ विदिशा नगरी की धर्मप्रधानता व्यक्त है- यहाँ **उत्प्रेक्षा, आर्थी उपमा,**अतिशयोक्ति अलंकारों की संसृष्टि है तथा इस गद्यांश में मुख्य वाक्य है-**तस्य च राज्ञः विदिशाभिधाना नगरी राजधान्यासीत्-** उस तथा इसे विदिशानाम्नी नाम की नगरी राजधानी थी। प्रथमा एकवचनान्त स्त्रीलिंग पद यहां 'राजधानी' के विशेषण है। 'मञ्जन कूलया' ये तीनों तृतीयान्त स्त्रीलिंग पद 'वेत्रवत्या' के विशेषणरूप में प्रयुक्त हुए हैं।

स तस्यामवजिताशेषभुवनमण्डलतया विगतराज्यचिन्ताभारनिर्वृतः द्वीपान्त रागतानेकभूमिपालमौलिमालालित चरणयुगलो वलयमिव लीलया भुजेन भुवनभारमुद्वहन् अमरगुरुमपि प्रज्ञयोपहसद्भिरनेककुलक्रमागतैरसकृदालोचित नीतिशास्त्र निर्मलमनोभिरलुब्धैः स्निग्धैः प्रबुद्धैश्चामात्यैः परिवृतः। समानवयोविद्यालङ्कारैरनेकमूर्धाभिषिक्तपाथवकुलोद्भतैर- खिलकलाकलापालोचन कठोर मतिभिरतिप्रगल्भैः कालविद्भिः प्रभावानुरक्तहृदयैरग्राम्योपहासकुशलैरिङ्गत्ताकारवेदिभिः काव्यनाटकाख्यानकाख्यायिकालेख्यव्याख्या नादिक्रियानिपुणे, अतिकठिनपीवरस्कन्धोरु

बाहुभिरसकृदवदलितस मद-रिपुगजघटापीठबन्धै, केसरि किशोरकरिव विक्रमैकरसैरपि विनयव्यवहारिभिरात्मनः प्रतिबिम्बवैरिव राजपुत्रैः सह रममाणः प्रथमे वयसि सुखमतिचिरमुवास।

शब्दार्थ- स तस्याम् च= और वह राजा (शूद्रक)। **अवजिताशेषभुवनमण्डलतया**= सम्पूर्ण भुवनों के जीतने के कारण। **विगतराज्यचिन्ताभार=** राज्य की चिन्ता के बोझ के समाप्त हो जाने से। **निर्वृतः=** निश्चिन्त होकर। **द्वीपान्तर=** विभिन्न दीपों से। **मौलि=** मुकुट अथवा शिर। **लालित=** पूजनीय। **चरणयुगलो=** चरण युगल वाला। **वलयमिव=** कंगन के समान। **लीलया=** सरलता से। **भुजेन=** भुजा पर। **भुवनभारम्=** भुवन (लोक) के बोझ को। **उद्वहन्=** धारण किया। **अमरगुरुमपि=** बृहस्पति। **प्रज्ञया=** अपने विवेक से। **उपहसद्भिः=** हँसते हुए। **कुलक्रमागतैः=** वंश परम्परागत। **असकृदालोचिता=** बार-बार चिन्तन मनन करने से। **निर्मलमनोभिः=** स्वच्छ मन वाले। **अलुब्धैः=** लोभरहित। **प्रबुद्ध=** ज्ञानी। **परिवृतः=** घिरे हुए। **समानवयोविद्यालङ्कारैः=** समान अवस्था से युक्त विद्यारूपी आभूषण से सम्पन्न। **मूर्धाभिषिक्त्=** मस्तक पर अभिषेक किये हुए। **पार्थिवकुलोद्भूतैः=** राजवंशों में उत्पन्न। **अखिलकलाकलापा=** सम्पूर्ण कलाओं का समूह। **लोचनकठोरमतिभिरतिप्रगल्भैः=** अनुशीलन करने से परिपक्व बुद्धि वाले। **कालविद्भिः=** समय को पहचानने वाले। **प्रभावानुरक्त्हृदयैर=** राजप्रभाव से अनुरक्त हृदय वाले। **ग्राम्योपहासकुशलैः**= शिष्ट उपहास में कुशल। **इङ्गताकारवेदिभिः=** संकेत जानने में योग्य। **व्याख्यानादिक्रियानिपुणैः=** व्याख्यान आदि कार्यों में चतुर। **पीवर=** विशाल। **उरु=** जंघा। **बाहुभिः=** भुजाओं वाले। **असकृत=** कुचले हुए। **गजघटापीठबन्धैः** गज समूह के गण्डस्थलों को। **विक्रमैकरसैरपि=** पराक्रम में ही रस लेने वाले। **विनयव्यवहारिभिः=** करने वाले। सहरममाणः क्रीड़ा करता हुआ। **प्रथमे वयसि** किशोरावस्था में। **सुखमतिचिरमुवास=** अत्यधिक समय तक सुखपूर्वक निवास करता रहा।

प्रसंग- यह गद्यावतरण गद्य-काव्य-शिरोमणि बाणभट्ट रचित 'कादम्बरी' से उद्धृत हुआ है। यहाँ कवि ने अपनी उद्भट काव्य-कल्पना से तथा प्रकाण्ड-पाण्डित्य द्वारा राजा शूद्रक का विभिन्न उपमानों से प्रभावोत्पादक चित्रण किया है, जो अत्यन्त ही सजीव एवं मनोग्राही है। इसमें शूद्रक की किशोरावस्था का तथा उसके समवयस्क मित्रों का वर्णन किया गया है।

हिन्दी अनुवाद- वह अपनी युवावस्था में बहुत दिनों तक सुक के साथ उस नगरी में निवास करता रहा। उसने सम्पूर्ण पृथ्वी को जीत लिया था, इसलिए वह राज्य-भार की चिन्ता से मुक्त होकर निश्चिन्त हो गया था। अनेक द्वीपों से आये हुए राजा अपनी मुकुट-मालाओं से उसके चरणों की पूजा किया करते थे। वह अनेक मन्त्रियों से घिरा रहता था। जो अपनी प्रतिभा से बृहस्पति की भी खिल्ली-सी उड़ाने वाले, वंश-परम्परा से अपने पदों पर आसीन और निरन्तर नीतिशास्त्र का मनन-चिन्तन करने से निर्मल हृदय, निर्लोभी, हितचिन्तक तथा जागरूक थे। वह अनेक राजपुत्रों के साथ आमोद-प्रमोद में लगा रहता था, जो अवस्था, विद्या तथा आभूषणों में उसी के समान थे। विभिन्न श्रेष्ठ राजाओं के वंशों से उत्पन्न थे, अनेक कलाओं के मनन से परिपक्व तथा अत्यन्त प्रखर बुद्धि वाले थे। वे व्यावहारिक शूद्रक के प्रति आसक्त, शिष्ट परिहास करने में कुशल, संकेत और आंगिक चेष्टाओं के ज्ञाता तथा काव्य, नाटक, कथा, कहानी, चित्र-लेखन और व्याख्यान आदि क्रियाओं में निपुण थे। उनके कंधे, छाती तथा भुजाएँ अत्यन्त पुष्ट, स्थूल एवं बलिष्ट

थीं। वे अनेक बार सिंहों के बच्चों के समान शत्रुओं के मतवाले हाथियों की पीठ पर अपना आसन जमा चुके थे और अद्वितीय पराक्रमी होते हुए भी अत्यन्त विनम्र स्वभाव वाले तथा उसकी ही प्रतिमूर्ति-जैसे प्रतीत होते थे तथा किशोरावस्था में राजपुत्रों के साथ क्रीड़ा करते हुए दीर्घकाल व्यतीत किया।

विशेष- इस गद्यांश में उपमा, रूपक, संसृष्टि अलंकार है। 'राजपुत्रैः सह' शब्द के योग में तृतीया विभक्ति हुई है।

तस्य चातिविजिगीषुतया महासत्त्वतया च तृणमिव लघुवृत्ति स्त्रैणमाकलयतः, प्रथमे वयसि वर्तमानस्यापि रूपवतोऽपि सन्तानार्थिभिरमात्यैरपेक्षितस्यापि सुरतसुखस्योपरि द्वेष इवासीत् सत्यपि रूपविलासोपहसित रातिविभ्रमे लावण्यवति विनयत्यन्वयवति हृदयहारिणि चावरोधजने। स कदाचिदनवरतदोलायमा नरत्नवलयो घर्घरिकारस्फालन-प्रकम्पझणायमानमणिकर्णपूरः, स्वयमारब्धमृदङ्गवाद्यः संगीतकप्रसंगेन, कदाचिदविरलविमुक्तरासारशून्यीकृतकाननोमृगया-व्यापारेण कदाचिदाबद्धविदग्धमण्डलः काव्यप्रबन्धरचनेन, कदाचिच्छास्त्रालापेन, कदाचिदाख्यानकाख्यायिकेतिहास-पुराणाकर्णनेन, कदाचिदालेख्यविनोदेन, कदाचिद्वीणयां, कदाचिद्दर्शनागतमुनिजनचरणसुश्रूषया, कदाचिदक्षरच्युतक-मात्राच्युतकबिन्दुमतीगूढचतुर्थपादप्रहेलिका प्रदानादिभिर्वनितासम्भोगसुखपराङ्मुखः सुहृत्परिवृतो दिवसमनैषीत्। यथैव च दिवसमेवमारब्धविविधक्रीडापरिहासतुरैः सुहृद्भिरुपेतो निशामानैषीत्।

शब्दार्थ-तस्य च= और उस राजा की। **अतिविजिगीषुतया=** जीतने की प्रवल इच्छा से। **महासत्त्वतया=** विशाल पराक्रम के कारण। **तृणमिव=** तिनके की भाँति। **लघुवृत्ति=** तुच्छ व्यवहार वाला। **स्त्रैणम्=** स्त्री समूह को। **आकलयत्=** गणना करते हुए। **प्रथमेवयसि=** किशोरावस्था में। **रूपवतोऽपि=** सौन्दर्य सम्पन्न होने पर भी। **सन्तानार्थिभिरमात्यैः=** सन्तान की इच्छा रखने वाले मंत्रीगण। **सुरतसुखस्योपरि=** सम्भोग सुख के प्रति। **द्वेष इवासीत्=** मानो शत्रुता थी। **सत्यपि=** विद्यमान होने पर भी। **रूपविलासोपहसितरति=** सौन्दर्याधिक्य के कारण, कामदेव की पत्नी का हास्य करने वाली। **विभ्रमे=** विलास-क्रीड़ा में। **लावण्यवति=** सौन्दर्यशालिनी। **विनयवति=** विनय वाली। **हृदयहारिणि=** चित्त को आकृष्ट करने वाली। **अन्वयवति=** कुलीन। **अवरोधजने=** अन्तःपुर की रानियों के। **अनवरत=** निरन्तर। दोलायमान हिलते हुए। **रत्नवलयः=** मणियों से जटित कंगन। **घर्घरिका=** झन-झन करने वाला बाजा। **स्फालन=** कम्पित, बजाने से। **मणिकर्णपूरः=** रत्नजटित कर्णफूलों वाला। **आरब्धमृदङ्गवाद्यः=** मृदङ्क नामक बाजे को। **संगीतकप्रसंगेन=** संगीतक के माध्यम से। **अविरल=** निरन्तर। **विमुक्त=** छोड़े गये। **शर=** बाणों की। **आसार=** वर्षा से। **शून्यीकृत=** शून्य करता हुआ। **मृगयाव्यापारेण=** शिकार के कर्म से। **कदाचित्=** कभी। **आबद्ध=** एकत्रित कर। **विदग्धमण्डलः=** विद्वानों का समूह। **काव्यप्रवन्यरचनेन=** काव्य एवं कथा-ग्रन्थों की रचना के द्वारा। **कदाचित्=** कभी। **शास्त्रालापेन=** शास्त्रों के वार्तालाप से। **आख्यायिका**= ऐतिहासिक। **आकर्णनेन=** श्रवण करने के द्वारा। **आलेख्यविनोदेन=** चित्रों के मनोरंजन से। **कदाचिद्वीणया=** बजाने के द्वारा। **दर्शनागत=** दर्शन के लिए आये हुए, दर्शनार्थी। **मुनिजनचरणसुश्रूषया=** मुनिजनों के चरणों की सेवा से। **कदाचिदक्षरच्युतकमात्राच्युतकबिन्दुमतीगूढ़-चतुर्थपादप्रहेलिकाप्रदानादिभिः=** कभी अक्षरच्युत, बिन्दुमती

गूढ़चतुर्थपाद और कभी पहेलियों के प्रदान आदि के द्वारा। **वनितासम्भोगसुखपराङ्मुखः=** स्त्रीके सहवासरूपी आनन्द से विरत होकर। **सुहृत्परिवृतः=** मित्रमण्डली से घिरा हुआ। **दिवसमअनैषीत्=** दिन को बिता देता था।

प्रसंग- यह गद्यांश गद्य-काव्य-शिरोमणि बाणभट्ट द्वारा रचित 'कादम्बरी' से लिया गया है। यहाँ कवि ने अपनी उद्भट काव्य-कल्पना से राजा शूद्रक का वह रात-दिन किस प्रकारव्यतीत करता है। विभिन्न उपमानों के द्वारा प्रभावशाली वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद-और विजय की अत्यधिक इच्छा के कारण एवं महान् शक्ति के कारण, स्त्री-जाति को तृण के समान (नगण्य एवं हेय) तुच्छ समझने वाले, उस (राजा) को, प्रथमा (युवा) अवस्था में रहने पर भी, रूपवान होने पर भी, सन्तान के इच्छुक अमात्यों के द्वारा अपेक्षित होने पर (जोर दिये जाने पर) भी, सम्भोग (जन्य) सुख के ऊपर (कुछ) द्वेष-सा था और (अपने) रूप एवं विलास से रति (कामदेव-पत्नी) के विभ्रम का उपहास करने वाली, (रूप विलास ..... हृदय हारिणी' तक रानियों का विशेषण है) लावण्यवती, विनयवती, शुद्धवंश वाली, हृदय-हरण करने वाली अन्तःपुर की स्त्रियों के होने पर भी, वह (शूद्रक) कभी निरन्तर हिलते हुए (झूलते हुए) रत्नमय कंकणों से युक्त घर्घरिका (वाद्य विशेष) के बजाने से कम्पित और झनझनाते हुए मणिमय कर्णपूरों (कर्णाभरणों) से युक्त (होता हुआ) स्वयं मृदंग (नामक) वाद्य को प्रारम्भ (बजाकर) करके, संगीत के प्रसंग से, (तो) कभी निरन्तर बाण-वर्षा करके जंगलों को (हिंस्र पशुओं से) शून्य करता हुआ शिकार के व्यापार से, (तो) कभी पण्डितों की मण्डली बाँधकर काव्य-प्रबन्ध की रचना से, कभी शास्त्रों के वार्तालाप से, (तो) कभी आख्यानक, आख्यानिका,इतिहास एवं पुराणों के श्रवण से, कभी चित्र विनोद से, कभी वीणा से, कभी दर्शन (देने) के लिए आए हुए मुनि-जनों की चरण-सेवा से कभी अक्षरच्च्युतक, मात्राच्च्युतक, बिन्दुमती, गूढ़चतुर्थपाद और प्रहेलिकाओं के प्रदान आदि सेकभी वनिताओं के सम्भोग के सुख से विमुख होकर मित्रों से घिरा हुआ दिन (को) बिताता था। उसी प्रकार विविध क्रीड़ा और परिहास को आरम्भ करने वाले मित्रों से युक्त (होकर) रात्रि (को) बिताता था।

विशेष (1)-इस गद्यावतरण में कवि का भाव वैसा नहीं है, जैसा कि साहित्यदर्पणकार **विश्वनाथ** ने कथा और आख्यायिका में भेद किया है। **दण्डी** के अनुसार भी कथा-आख्यायिका में महत्वपूर्ण भेद नहीं है। इतिहास इति + ह + आस। कवि ने भावानुसार जिसमें प्राचीन वृत्त हो तथा पुरुषार्थ-चतुष्टय के उपदेश से समन्वित हो, पुराणम्-पुराने की भाँति प्राचीन होते हुए भी नवीन मालूम पड़े इसके पाँच लक्षण हैं- **'अक्षरच्च्युतक'** - एक अक्षर के हटने से अर्थ मैं विभिन्नता, **'मात्राच्च्युतक'-** मात्रा के हटाने से अर्थ बदले, **'बिन्दुमती'**अक्षरों के स्थान पर बिन्दु रखने से उनकी पूर्ति हो, **'गूढ़चतुर्थपाद'-**इसके तीन चरणों में एक चरण छिपा रहता है। **'प्रहेलिका'-** शाब्दी और आर्थी भेद से यह दो प्रकार की कही गयी है।

(2) इस गद्यांश में **विशेषोक्ति** और **सन्देह अलंकारों** का समावेश है तथा **कर्मधारय,तत्पुरुष तथा बहुब्रीहि समास** हैं।

6.3.1 प्रतिहारी वर्णन

एकदा तु नातिदूरोदिते नवनलिनदलसंपुटभिदिकिचिन्मुक्तपाटलिम्नि भगवति सहस्त्रमरीचिमालिनि राजानमा-स्थानमण्डपगतमङ्गना जनविरुद्धेन वामपार्श्वव लम्बिना कौक्षेयकेण संनिहितविषधरेवचन्दनलतेव भीषणरमणीयाकृतिः अविरलमलयजानुलेपनधवलितस्तनटोन्मज्जदैरावतकुम्भमण्डलेव मन्दाकिनी, चूडामणि प्रतिबिम्बच्छलेन राजाज्ञेव मूर्तिमती राजभिः शिरोभिरुह्यमाना, शरदिव कलहंसधवलाम्बरा, जामदग्न्यपरशुधारेव वशीकृतसकलराजमण्डला विन्ध्यवनभूमिरिव वेत्रलतावती, राज्याधिदेवतेव विग्रहिणी प्रतीहारी समुपसृत्य क्षितितलनिहित जानुकरकमला सविनयमब्रवीत्-

शब्दार्थ- एकदा= एक बार। **नातिदूरोदिते=** थोड़ी देर उदित होने पर। **पाटलिम्नि =** लालिमा के। **भगवति=** भगवान के। **सहस्त्रमरीचिमालिनि=** सहस्त्ररश्मि, सूर्य के **आस्थानमण्डपगतम्=** सभामण्डप में स्थित। **विरुद्धेन=** प्रतिकूल, विरोध में। **वामपार्श्वावलम्बिना=** बायीं ओर लटकने वाले। **कौक्षेयकेण=** तलवार से। **संनिहितविषधरेव=** लटकते हुए सर्पों वाली के समान। **चन्दनलतेव=** चन्दनलता के समान। **भीषणरमणीयाकृति=** भयंकर एवं सुन्दर आकृति वाली। **अविरल=** निरन्तर। **मलयजालेपन=** सफेद चन्दन के लेप से। **चूडामणि=** मस्तक के आभूषणरूपी मणि। **प्रतिबिम्बच्छलेन**= प्रतिबिम्ब के बहाने। **मूर्तिमती=** शरीरधारिणी। **राजभिः=** राजाओं के द्वारा। **शिरोभिरुह्यमाना=** शिरों के द्वारा धारण की जाती हुई। **शरद्-इव**= शरद् ऋतु के समान। **धवलाम्बरा**= श्वेत वस्त्र वाली। **वशीकृत=** अधिकार में करते हुए। **सकलराजमण्डला=** समस्त नृप-समूह को। **वेत्रलतावती=** बेंत की लता वाली। **राज्याधिदेवतेव=** राज्य की अधिष्ठात्री देवी के समान। **विग्रहिणी=** शरीरधारिणी। **समुपसृत्य**= समीप जाकर। **क्षितितलनिहितजानुकरकमला=** घुटनों तथा कमलरूपी हाथों को धरती पर टेककर। **सविनयमब्रवीत्=** विनयपूर्वक बोली।

प्रसंग- यह गद्यावतरण गद्यकाव्य-शिरोमणि बाणभट्ट विरचित 'कादम्बरी' से उद्धृत है। कवि ने अपनी उद्भट काव्य-कल्पना से तथा प्रकाण्ड पाण्डित्य द्वारा राजा शूद्रक का विभिन्न उपमानों से प्रभावोत्पादक चित्रण किया है, जो अत्यन्त सजीव एवं मनोग्राही है।

हिन्दी अनुवाद- एक समय नवीन कमल-पंखुड़ियों के सम्पुट को विकसित करने वाले तथा (अपनी) लालिमा का थोड़ा परित्याग किए हुए भगवान सहस्त्ररश्मि (सूर्य) जब तक अधिक ऊँचे उदित नहीं हुए थे, (तभी) एक प्रतिहारी जो स्त्रीजनों के (स्वभाव) के विपरीत वायें ओर बगल में लटकटी हुई तलवार के कारण निकट स्थित सर्पों वाली चन्दन-लता के समान भयंकर एवं सुन्दर आकृति वाली थी, जो चन्दन का सघन लेप करने से श्वेत वर्ण के स्तनप्रान्त वाली (अतएव) मानो स्नान करते हुए ऐरावत (हाथी) के कुम्भस्थल के समान, आकाशगंगा के समान थी, जो मानो शरीरधारिणी राजाज्ञा थी, जिसे मस्तक की मणियों में (पड़े हुए) प्रतिबिम्ब के बहाने से (अधीन राजाओं द्वारा) मानो शिरोधार्य किया जा रहा था, जो सुन्दर हंसों से स्वच्छ आकाश वाली शरद (ऋतु) के समान, सुन्दर हंसों के समान शुभ्र वस्त्रों वाली थी। सम्पूर्ण (क्षत्रिय)

राज-समुदाय को वश में कर लेने वाली परशुराम के फरसे की धार के समान थी तथा जिसने (अपने आकर्षक व्यक्तित्व के कारण) समस्त (सभास्थिता) नृप-समूह को वश में कर लिया था। बेंत की लता वाली विन्ध्य-वन की भूमि की भाँति वह बेंत की छड़ी रखने वाली थी, वह मानो राज्य की देहधारिणी अधिष्ठात्री देवी थी। वह पृथ्वी तल पर (अपने) घुटने तथा कमलरूपी हाथों को टेककर सभा-मण्डल में स्थित राजा से विनयपूर्वक बोली।

विशेष (1)महाकवि बाण ने विभिन्न उपमानों के द्वारा प्रतिहारी का बड़ा सजीव एवं चमत्कारपूर्ण वर्णन किया है। उनकी शैली में ओज गुण एवं पाञ्चाली रीति सदैव परिलक्षित होती है। उपमा, उत्प्रेक्षा तथा श्लेष अलंकारों की संसृष्टि के कारण यह वर्णन प्रभावोत्पादक एवं रमणीयता से युक्त है। प्रतिहारी का वह अनुप्राणित चित्रण है, जो नेत्रों के समक्ष सहसा चित्र उपस्थित कर देता है। परशुराम ने जिस प्रकार क्षत्रियों को कई बार फरसे से मार गिराया अथवा पराजित किया, उसी प्रकार उसने सम्पूर्ण राजमण्डल को अपने वश में कर लिया था।

(2) कौक्षेयक कुक्षि + ढकञ् पाटलिमा पाटल इमनिच्। प्रतिहारी का प्रतिविम्ब मणिजटित राजा के मुकुटों में पड़ रहा था। इससे ऐसा प्रतीत होता था, मानो राजा की आज्ञा ने ही शरीर धारण कर लिया हो।

6.3.2 शुक सहित चाण्डाल कन्या का आगमन

"देव, द्वारस्थिता सुरलोकमारोहतस्त्रिशङ्कयोरिव कुपितशतमखहुङ्कारनिपातिता राजलक्ष्मीर्दक्षिणापथादागता चाण्डालकन्यका पञ्जरस्थं शुकमादाय देव विज्ञापयति- "सकलभुवनतल रत्नानामुदधिरिवैकभाजमं देवः। विहङ्गमश्चाय- माश्चर्यभूतो निखिलभुवनतलरत्नमिति कृत्वा देवपादमूलमादायागताहमिच्छामि देवदर्शनसुखमनुभवितुम्" इति। एतदाकर्ण्य 'देवः प्रमाणम्' इत्युक्त्वा विरराम। उपजातकुतूहलस्तु राजा समीपवर्तिनां राज्ञामालोक्य मुखानि को दोषः 'प्रवेश्यताम्' इत्यादिदेश।

शब्दार्थ- देव= हे नाथ। **द्वारस्थिता=** दरवाजे पर खड़ी। **सुरलोकम्=** स्वर्गलोक को। **आरोहतः=** चढ़ते हुए। **कुपित=** क्रुद्ध। **शतमुख=** इन्द्र। **निपातिता=** नीचे गिरायी हुई। **राजलक्ष्मीः इव=** राज्यश्री की भाँति। **दक्षिणापथात्=** दक्षिण दिशा से। **आगता=** आयी हुई। **चाण्डालकन्यकाः=** मातङ्गकुमारी। **पञ्जरस्थं=** पिंजड़े में स्थित। **शुकमादाय=** शुक (तोते) को लेकर। **विज्ञापयति=** सूचित करता है। **सकलभुवनतल=** समस्त पृथ्वी-तल के। **रत्नानाम्**= रत्नों के। **उदधिरिवैकभाजमं=** समुद्र के समान एकमात्र पात्र। **आश्चर्यभूतो**= आश्चर्यस्वरूप। **निखिल=** सम्पूर्ण। **कृत्वा=** मानकर। **देवपादमूलम्=** आपके चरणों में। **आदाय=** लेकर। **अगता=** आयी हुई। **इच्छामि=** इच्छा प्रकट करती हुई। **अनुभावितुम्=** अनुभव करने के लिए। **एतदाकर्ण्य=** इसको सुनकर। **प्रमाणम्=** साथी। **इति=** इतना। उक्त्भव कहकर। विरराम शान्त हो गयी। उपजातः पैदा या उत्पन्न। **कुतूहलस्तु**= अत्यन्त उत्सुकता। **समीपवर्तिनाम्=** पास में बैठे हुए। **राज्ञामालोक्य=** राजाओं को देखकर। **को दोष=** क्या हर्ज है। **प्रवेश्यताम्=** प्रवेश कराओ। **इत्यादिदेश=** इस प्रकार आज्ञा (आदेश) दी।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ कवि ने राजा शूद्रक की सभा में शुक (तोते) के बच्चे को लेकर चाण्डाल कन्या (मातंगकुमारी) के प्रवेश होने का भव्य वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद देवि। देवलोक को आरोहण करते हुए त्रिशंकु की क्रुद्ध इन्द्र की हुंकार से गिरी हुई सजल स्त्री के समान दक्षिण दिशा से आयी हुई (एक) चाण्डाल कन्या पिंजड़े में स्थित शुक (एक तोते) को लेकर, द्वार पर खड़ी हुई निवेदन करती है कि महाराज (आप) सारे भुवन-तल के रत्नों के, उसी प्रकार एकमात्र सत्पात्र है, जिस प्रकार समुद्र है और यह पक्षी आश्चर्यजनक (और) सारे भुवन-तल का रत्न है, ऐसा समझकर, देव के चरण-मूल में (इसे) लाकर मैं देव-दर्शन का सुख अनुभव करने के लिए आयी हूँ। यह सुनकर "देव प्रमाण हैं (जो चाहें करें)" ऐसा कहकर रुक गयी। राजा ने जिसे कुतूहल उत्पन्न हो गया था, पास बैठे हुए राजाओं के मुखों को देखकर क्या हर्ज है, प्रवेश करायी जाये, ऐसा आदेश दिया।

विशेष- इस गद्यांश में कवि का भाव है कि यदि किसी को इसमें दोष प्रतीत होगा तो अवश्य कहेगा। **त्रिशंकु** (त्रयः शंकवः यस्य सः) जिसके तीन अपराध हैं- पिता का क्रोध, गुरु की गाय का वध तथा अपवित्र वस्तुओं का संयोग। इसी कारण शूद्रक ने अन्य राजाओं को देखा।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. कादम्बरी में वर्णित शूद्रक की तुलना किससे की गई है?
2. शूद्रक पूर्व जन्म में क्या था?
3. कादम्बरी के कथामुख के प्रारम्भ में किस राजा का वर्णन है?
4. शूद्रक की सभा में उपहार के रूप में शुक कौन देता है?
5. सभाभवन में राजा शूद्रक के पास संदेश लेकर कौन आता है?
6. चाण्डाल कन्या पिंजरे में क्या लेकर आई थी?

6.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में विदिशा नगरी के राजा शूद्रक का वर्णन किया गया है जिसे दूसरे इन्द्र, चक्रवर्ती सम्राट के लक्षणों से युक्त, अद्वितीय विक्रम एवं भगवान नारायण का अनुकरण करने वाला वर्णित किया गया है। प्रतीहारी का चरित्र चित्रण तथा चाण्डाल कन्या का शुक लेकर दरबार में आना वर्णित है।

6.5 कठिन शब्दावली

1.आसीत् – था **2.प्रतिह्यर्ा** – द्वारपालिका**3.कर** – हाथ **4. उद्भट** – बहुत बड़ा,**5.परिपक्व** – पूर्णतया कुशल

6.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. इन्द्र 2. चन्द्रपीड़ 3. शूद्रक 4. चाण्डाल कन्या 5. प्रतीहारी 6. शुक

6.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

6.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. राजा शूद्रक का चरित्र चित्रण लिखिए।
2. प्रतीहारी का वर्णन कीजिए।
3. विदिशा नगरी की सामाजिक व्यवस्था का वर्णन कीजिए।
4. निम्नलिखित गद्यांश की व्याख्या कीजिए-

    (1) आसीदशेषनरपतिशिरः .... शूद्रको नाम।

    (2) यश्च मनसि .... दिवानिशं जज्वाल।

    (3) देव द्वारस्थिता .... इत्यादिदेश।

इकाई-7

चाण्डाल कन्या वर्णन

संरचना

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 चाण्डाल कन्या वर्णन

7.3.1 मातंग कुमारी द्वारा शूद्रक दर्शन

7.3.2 राजा शूद्रक द्वारा मातंग कुमारी का वर्णन

- स्वयं आकलन प्रश्न

7.4 सारांश

7.5 कठिन शब्दावली

7.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

7.7 सहायक ग्रन्थ

7.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में मातंग कुमारी के द्वारा राजा शूद्रक का दर्शन एवं उनका वर्णन तथा राजा शूद्रक के द्वारा मातंग कुमारी का वर्णन वर्णित है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

- चाण्डाल कन्या के गुणों के विषय में ज्ञान होगा।
- चाण्डाल कन्या के अदभुत सौन्दर्य का ज्ञान होगा।

7.3चाण्डाल कन्या वर्णन

7.3.1 मातंग कुमारी द्वारा शूद्रक दर्शन

अथ प्रतीहारी रमुत्थाय तां मातङ्गकुमारीम् प्रावेशयत्। प्रविश्य च सा नरपतिसहस्त्रमध्यवर्तिनमशनिभयपुञ्जित कुलशैलमध्यगतमिव कनकशिखरिणम् अनेकरत्लाभरणकिरणजालकान्तरितावयवमिन्द्रायुधसहस्रसंछादिताष्टदिग्वभिागमिव जलधरदिवसम् अवलम्बितस्थूलमुक्ताकलापस्य कनकश्रृंखलानियमितमीणदण्डिकाचतुष्टयस्य, गगनसिन्धुफेनपटल-पाण्डुरस्य नातिमहतो दुकूलवितास्याधस्तादिन्दुकान्तपर्य्यङ्किकानिषण्णम्।

शब्दार्थ- अथ प्रतीहारी= इसके बाद प्रतिहारी (नियुक्त सेविका)। **नरपतिकथ-नान्तरमुत्त्थाय=** राजा के कहने के पश्चात्। **मातङ्गकुमारीम्=** चाण्डालकन्या (मातंगकुमारी) को। **प्रावेशयत्=** प्रवेश कराया। **प्रविश्व च सा=** प्रवेश करके। **नरपतिसहस्रमध्यवर्तिन- शनिभयपुञ्जित=** राजा को देखा, जो हजारों राजाओं के बीच में स्थित था, मानो वज्र के भय से एकत्र हुए। **कुलशैलमध्यगतमिव=** कुल-पर्वतों के मध्य में। **कनकशिखरिणम्=** सुमेरु पर्वत। **अनेकरत्लाभरणकिरणजालकान्तरितावयवम्=**अनेक रत्नाभूषणों आदि के किरण-जाल से छिपे हुए अवयव वाले। **इन्द्रायुध=** इन्द्रधनुष। **सहस्त्रसंच्छादिताष्टदिग्विभागमिव=** ढकी हुई आठों दिशाओं वाले। **जलधरदिवसम्=** वर्षा ऋतु के समान। **अवलम्बितस्थूल- मुक्ताकलापस्य**= मोतियों के समूह वाले। **नातिमहतो=** फेन-समूह। **दुकूलवितानस्याधस्ता-दिन्दुकान्तपर्य्यङ्किका**= रेशमी चँदोवे के नीचे चन्द्रकान्त मणि। **निषण्णम्=** रखे हुए।

प्रसंग- इस गद्यांश में महाकवि बाण राजा शूद्रक के दरबार में उपस्थित होने वाली चाण्डालकन्या का अत्यन्त ही प्रभावोत्पादक एवं सजीव चित्रण प्रस्तुत करते हुए कहते हैं जैसे ही चाण्डालकन्या ने राजा के दरबार में प्रवेश किया उसको देखते ही राजा शूद्रक सहित सब आश्चर्य से चकित हो गये।

हिन्दी अनुवाद- इसके बाद प्रतिहारी ने राजा के (को दोषः प्रवेश्यताम्) कथन के अनन्तर ही उठकर उस चाण्डालकन्या को (राजसभा में) प्रविष्ट कराया और प्रवेश करके उस (चाण्डाल- कन्या) ने (नरपति सहस्त्र सकलभुवनतलं तक राजा शूद्रक के विशेषण है, अन्तिम क्रिया 'अद्राक्षीत्' के ये सभी विशेषण है) सहस्त्रों नरपतियों के बीच में स्थित (अतएव) इन्द्र के वज्रपात के भय से एकत्रित कुलपर्वतों के मध्य में स्थित सुमेरु पर्वत के समान, अनेक रत्न, (मय) आभूषणों की किरणों के जाल में छिपे हुए (होने के कारण) सहस्रों इन्द्रधनुषों से आच्छादित अष्ट दिशाओं के भाग वाले वर्षाकालीन दिवस के समान (अवलम्बित नातिमहतः रेशमी वितान का विशेषण है) लटकते हुए स्थूल मुक्ता-समूह वाले सुवर्ण कीशृंखलाओं (जंजीरों) से बँधे हुए चार मणिदण्डों वाले, आकाशगंगा के फेन-पुञ्ज के समान श्वेत तथा उचित परिमाण वाले (अर्थात् न अधिक बड़े और न अधिक छोटे- उचित) रेशमी वितान चंदोवे के नीचे चन्द्रकान्त (मणियों) की चौकी पर विराजमान (राजा को देखा)।

विशेष (1)- प्राचीन काल मेंराजाओं के बैठने के लिए विशेष मण्डप होता था। विशेष बहुमूल्य चौकी पर सिंहासन बनाया जाता था। उसके ऊपर चंदोवा होता था। अजन्ता में इस प्रकार के चित्र मिलते हैं।

(2) प्रावेशयत् - प्रविश् णिजन्त लङ्, प्रथम पुरुष एकवचन। कहा जाता है कि पहले पर्वतों के पंख थे। पर्वत उड़कर जहाँ बैठते थे, वहाँ बड़ी हिंसा होती थी। अतः इन्द्र ने उनके पंख काट दिये, तब पर्वत मानो भय के कारण एकत्र हो गये।

उद्धूयमानसुवर्णदण्डचामरकलापम्, उन्मयूखमुखकान्तिविजयपराभव प्रणते शशिनीव स्फटिकपादपीठे विन्यस्तवामपादम्, इन्द्रनीलमणिकुट्टिमप्रभासम्पर्कश्यामायमानैः प्रणतरिपुनिःश्वासमलिनीकृतैरिव चरणनखम-यूखजालैरुपशोभमानम आसनोल्लसित पद्मरागकिरणपाटलीकृतेनाचिरमृदितमधुकैटभरुधिरारुणेन हरि मिवोरुयुगलेन विराजमानम् अमृतफेनधवले गोरोचनालिखितहंसमिथुनसनाथपर्यन्ते चारुचामरवायुप्रनर्तितान्तदेशे दुकूले वसानम्।

शब्दार्थ -उद्धूयमान्= हिलते हुए। **सुवर्णदण्डचामरकलापम्=** सुवर्ण दण्ड वाले चँवरों के समूह को। **उन्मयूखमुखकान्तिविजय**= ऊपर को फैलती हुई किरणों वाल मुखकान्ति की विजय के कारण। **पराभवप्रणते=** तिरस्कार से झुके हुए। **शशिनीव=** चन्द्रमा के समान। **इन्द्रनीलमणिकुट्टिमप्रभासम्पर्कश्यामायमानैः=** इन्द्रनील-मणियों के फर्श की प्रभा के सम्पर्क के कारण श्याम हुए। **प्रणतरिपुनिःश्वासमलिनीकृतैरिव**= विनत शत्रुओं के निःश्वास से मलिन किये हुए। **चरणनखमयूखजालैरुपशोभमानम्**= पैरों के नखों के किरण समूह से सुशोभित। **हरिमिवोरुयुगलेनविराजमानम्=** दोनों जंघाओं वाले विष्णु भगवान के समान। **अमृतफेनधवले**= सुधाफेन श्वेतवर्णे। **गोरोचनालिखितहंसमिथुनसनाथपर्यन्ते=** गोरोचना से अंकित हंस के जोड़ों से युक्त सिरों वाले पर। **चारुचामरवायुप्रनर्तितान्तदेशे=** सुन्दर चंवर की वायु से हिलते हुए छोर वाले। **दुकुले वसानम्=** दो रेशमी वस्त्रों को धारण किये हुए।

प्रसंग- इस गद्यांश में महाकवि बाण ने राजा शूद्रक के दरबार में उपस्थित होने वाली चाण्डालकन्या का प्रभावोत्पादक एवं सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है कि जैसे ही चाण्डालकन्या ने राजा के दरबार में प्रवेश किया, उसको देखकर सब आश्चर्यकित हो गये।

हिन्दी अनुवाद- सुवर्ण के दण्ड वाले चंवर-समूह से डुलाये हुए, ऊपर निकलती हुई किरणों वाली मुख की कान्ति की विजय से पराजित एवं प्रणत चन्द्रमा के समान स्फटिक पादपीठ (पायन्दाज या पायदान) पर बाँया पैर रखे हुए, इन्द्रनील मणियों के फर्श की कान्ति के सम्पर्क के कारण श्याम वर्ण वाले होते हुए (प्रताप के भय से) प्रणत शत्रुओं के निःश्वासों से मलिन किये (जाते हुए से) चरणों के नखों के किरण जाल से शोभित, सिंहासन से निकली हुई (लाल) पद्मराग (मणियों) की किरणों से श्वेत-रक्त (गुलाबी), शीघ्र ही मारे गये मधु एवं कैटभ राक्षसों के रक्त से लाल जंघा-द्वय से (सुशोभित) हरि (विष्णु) के समान विराजमान, अमृत के फेन के समान श्वेत गोरोचन से लिखे (बनाये) हुए हंसों के जोड़े से सनाथ प्रान्त वाले चामरों की वायु से हिलते हुए छोर वाले दो रेशमी वस्त्रों (अधोवस्त्र एवं ऊर्ध्ववस्त्र) को पहने हुए राजा देखा।

विशेष (1)-प्राचीन काल में राजाओं के बैठने के लिए विशेष मण्डप होता था तथा विशेष बहुमूल्य चौकी पर सिंहासन बनाया जाता था। उसके ऊपर चंदोवा होता था। अजन्ता में इस प्रकार के चित्र उत्कीर्ण हैं।

अतिसुरभिचन्दनान्लेपनधवलितोरः स्थलम् उपरिविन्यस्तकुंकुमस्थासकम् अन्तरान्तरानिपतितबालातपच्छेदमिव कैलासशिखरिणम्, अपरशशिङ्कया नक्षत्रमालयेव हारलतया कृतमुखपरिवेषम्, अतिचपल राज्यलक्ष्मीबन्धनिगडकट कण-ङ्कामुपजनयतेन्द्र मणिकेयूरयुग्मेन

मलयजरसगन्धलुब्धेन भुजङ्गद्वयेनेव वेष्टितबाहुयुगलम् ईषदालम्बिकर्णोत्पलम्, उन्नतघोणम् उत्फुल्लपुण्डरीकनेत्रम्।

शब्दार्थ - **अतिसुरभि=** अत्यन्त सुगन्ध वाले। **चन्दनअनुलेपन=** चन्दन के इनके लेप से। **धवलितोरःस्थलम्=** श्वेतीकृत वक्षःस्थल वाले। **उपरि=** ऊपर। **विन्यस्त=** लगाये हुए। **अन्तरान्तरानिपतितबालातपच्छेदमिव=** बीच-बीच में पड़ी हुई प्रातःकालीन धूप वाले। **कैलासशिखरिणम्=** कैलास पर्वत की भाँति। **अपरशशिङ्कया=** दूसरे चन्द्रमा की शंका से। **नक्षत्रमालया इव**= नक्षत्रों की मालाओं के समान। **राज्यलक्ष्मीबन्धनिगडकटक=** राज्यलक्ष्मी को बाँधने के कड़े की। **परिवेषम्=** घेरे हुए। **शङ्काम्=** शंका से। **उपजनयता**= उत्पन्न करते हुए। **इन्द्रमणि=** नीलकान्तमणि से। **केयूरयुग्मम्=** बाजूबन्द का जोड़ा। **मलयजरसगन्धलुब्धेन=** चन्दन के रस की सुरभि से युक्त। **भुजङ्गद्वयेन=** सर्प का जोड़ा। **वेष्टितबाहुयुगलम्=** लिपटी हुई भुजाओं वाला। **ईषदालम्बि=** कुछ-कुछ लटकने वाले। **कर्णोत्पलम्=** कर्णफूल। **उन्नतघोणम्=** ऊँची नासिका (नाक) वाला। **उत्फुल्लपुण्डरीकनेत्रम्=** विकसित कमल (पुण्डरीक) के समान नेत्र वाले।

प्रसंग- यह गद्यावतरण बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ चाण्डाल कन्या के राजा शूद्रक के दरबार में उपस्थित होकर विभिन्न उपमानों के द्वारा उसके प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व का वर्णन किया गया है, जिससे कथानक में चमत्कार परिलक्षित होता है।

हिन्दी अनुवाद- उसका वक्षस्थल अति सुगन्धित चन्दन के लेप से अत्यन्त उज्वल हो उठा था, जिस पर बीच-बीच में कुंकुम के छापे भी मारे गये थे, जिससे वह कहीं-कहीं प्रातःकालीन सूर्य की धूप से सुशोभित कैलास की चोटी के समान प्रतीत हो रहा था। उसके कंठ में मोतियों की माला ऐसी प्रतीत हो रही थी, मानो तारों ने उसके मुख को दूसरा चन्द्रमा समझकर उसके चारों ओर मण्डल बाँध लिया हो। वह मानो चन्दन की सुगन्ध के लोभ से आए हुए दो सर्पों के समान अपनी दोनों भुजाओं पर इन्द्रनीलमणियों के दो केयूर (बाजूबन्द) पहिने था, जो मतवाली राज्यलक्ष्मी को बाँधने की दो आलानों का भ्रम उत्पन्न कर रहे थे। उसके कानों के कमल कुछ-कुछ लटके हुए थे, नाक ऊँची थी तथा आँखें विकसित श्वेत कमलों के समान खिली हुई थीं।

विशेष (1)- प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाण ने राजा शूद्रक द्वारा धारण किये गये बाजूबन्द के विषय में दो कल्पनाएँ की हैं-प्रथम, ये दोनों बाजूबन्द मानो लक्ष्मी को बाँधने की जंजीर हैं; द्वितीय, ये दोनों सर्प हैं, जो चन्दन की सुगन्ध से आकृष्ट होकर राजा की भुजाओं से लिपट गये हैं।

(2) कैलासशिखरिणमिव में **पूर्णोपमा** निगडशंकामुपजनयता में **भ्रान्तिमान** तथा भुजंगंद्वयनेव में **उत्प्रेक्षा अलंकारों** का परस्पर अङ्गाङ्गीभाव-संकर है। घोणानासा च नासिका में **बहुव्रीहि समास** है।

अमलकलधौतपट्टायतमष्टमीचन्द्रशकलाकारमशेषभुवन राज्याभिषेक पूतमूर्णासनाथं ललाटदेशमुद्वहन्तम् आमोदिमालतीकुसुमशेखरमुषसि शिखरपर्यस्ततारापुञ्जमिव पश्चिमाचलम्, आभारणप्रभापिशङ्गित्ताङ्गतया लग्नहरहुताशमिव मकरध्वजम् आसन्नवर्तिनीभिः सर्वतः

सेवार्थमागताभिरिव दिग्वधूभिर्वारविलासिनीभिः परिवृतम् अमलमणिकुट्टिमसंक्रान्त-सकलदेहप्रतिबिम्बतया पतिप्रेम्णा वसुन्धरया हृदयेनेवोह्यमानम् अशेषजनभोग्यतामुपनीतयाप्यसाधारणया राज-लक्ष्यालिङ्गित्तदेहम्।

शब्दार्थ-अमलकलधौतपट्टायतम्= स्वच्छ सुवर्ण पट के समान विस्तृत। **ललाटदेशमुद्वहन्तम्=** मस्तक को धारण करने वाला। **आमोदिमालतीकुसुमशेखरमुपसि=** सुगन्धित मालती-पुष्पों के शिरोभूषण वाला। **शिखरपर्यस्ततारापुञ्जमिव पश्चिमाचलम्=** प्रातःकाल शिखर (पर्वत) पर फैलने वाला तारों का समूह, अस्ताचल। **आभारणप्रभापिशङ्गिताङ्ग तया लग्नहरहुताशमिव**= आभूषणों की कान्ति से पीले रंग का होने के कारण, शिव की अग्नि के समान। **मकरध्वजम्=** कामदेव को। **आसन्नवर्तिनीभिः=** निकट स्थित वेश्याओं से। **सर्वतः=** सब तरफ से। **सेवार्थमागताभिरिव=** सेवा के लिए आयी हुई। **दिग्वधूभिर्वारविलासिनीभिः परिवृतम्**= दिशारूपी वधुओं से घिरा हुआ। **पतिप्रेम्णा=** पति के प्रेम से। **वसुन्धरया**= पृथ्वी से। **हृदयेनेवोह्यमानम्=** हृदय में धारण किये हुए को। **अशेषजनभोग्यतामुपनीतयापि=** सर्वसामान्य के उपभोग को प्राप्त होती हुई भी। **असाधारणयाराजलक्ष्म्या=** असामान्य राज्यलक्ष्मी के द्वारा। **आलिङ्गत्तदेहम्=** शरीर का आलिंगन किया।

प्रसंग- इस गद्यांश में बाणभट्ट द्वारा चाण्डालकन्या के राजा शूद्रक के दरबार में उपस्थित होने का विभिन्न उपमानों के द्वारा उसके व्यक्तित्व का प्रभावपूर्ण वर्णन किया गया है। भाषा अत्यन्त प्रवाहपूर्ण एवं ओज-गुण-सम्पन्न है, जिससे कथानक में चमत्कार परिलक्षित होता है।

हिन्दी अनुवाद- निर्मल सोने के पट्ट के समान चौड़े, अष्टमी के अर्धचन्द्र के समान आकृति वाले एवं सभी लोकों के राज्याभिषेक-जल से पवित्र ललाट पर भौंहों के बीच बालों की भँवरी से सुशोभित हो रही थी। उसके सिर के बीच जूड़े में लगे हुए सुगन्धित चमेली से फूलों की माला लिपटी हुई थी, मानो प्रातःकाल चोटी पर फैले हुए तारों वाला अस्ताचल हो। आभूषणों की झलक से निखरे तामड़े (मँजे हुए ताँबे जैसे रंग वाले) अंगों के कारण वह शंकरजी की नेत्रज्वाला में जलते हुए कामदेव के समान प्रतीत हो रहा था। उसके चारों ओर वारांगनाओं (वेश्याओं) की मण्डली स्थित थी, मानो सेवा करने के लिए स्वयं दिग्वधुएँ उसके पास चली आयी हों। शुभ्र मणियों द्वारा जड़ित फर्श में उसके पूरे शरीर की छाया उगी हुई थी, मानो पृथ्वीरूपी वधू ने पति-प्रेम के कारण उसे अपने हृदय में रख लिया हो।

विशेष- प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाण ने राजा शूद्रक द्वारा धारण किये गये बाजूबन्दों के विषय में दो कल्पनाएँ की हैं- प्रथम, ये दोनों बाजूबन्द मानो लक्ष्मी को बाँधने की जंजीरें हैं अथवा द्वितीय, ये दोनों सर्प हैं जो चन्दन की सुगन्ध से आकृष्ट होकर राजा की भुजाओं से लिपट गये हैं। राजा के सिर पर मालती के पुष्प हैं, उनको धारण करके वह ऐसा प्रतीत होता है मानो अस्ताचल पर चारों ओर तारे फैल गये हो। आभूषणों की चमक से पीले शरीर वाले राजा को शिव के तृतीय नेत्र से दग्ध कामदेव के समान बताया गया है।

अपरिमितपरिवारजनमप्यद्वितीयम्, अनन्तगजतुरगसाधनमपि खड्गमात्रसहायम् एकदेशस्थितमपि व्याप्तभुवन-मण्डलम् आसने स्थितमपि धनुषिनिषण्णम् उत्सादितद्विषदिन्धनमपि ज्वलतप्रतापानलम् आयतलोचनमपि सूक्ष्मदर्शनम् महादोषमपि सकलगुणाधिष्ठानम् कुपतिमपि कलत्रवल्लभम् अविरतप्रवृत्तदानमप्यमदम, अत्यन्तशुद्धस्वभावमपि कृष्ण-चरितम् अकरमपि हस्तस्थित भुवनतलं राजानमद्राक्षीत्।

शब्दार्थ- अपरिमितपरिवारजनमपि= अगणित सदस्यों वाले बृहत् परिवार वाले को। **अद्वितीयम्=** जिसकी किसी से तुलना न की जा सके, इस सर्वश्रेष्ठ को। **अनन्तगजतुरगसाधनमपि=** अनेक हाथी-घोड़ों से साधनसम्पत्र को। **एकदेशस्थितमपि**= एक स्थान पर स्थित को भी। **व्याप्तधुवनमण्डलम्=** समस्त भुवन मण्डल में व्याप्त को। **आसनेस्थितमपि**= आसन पर बैठे हुए को भी। **धनुषिनिषण्णम्=** विजय के लिए धनुष पर आश्रित को। **उत्सादितद्विषदिन्धनमपि**= शत्रुरूपी ईंधन को नष्ट करने वाले। **ज्वलतप्रतापानलम्**= प्रतापरूपी अग्नि ज्वलित वाले को। **आयतलोचनमपि=** विशाल नेत्रों वाले को भी। **सूक्ष्मदर्शनम्=** सूक्ष्मदर्शी को। **महादोषमपि=** बड़े दोषों (भुजाओं) वाले को भी। **सकलगुणाधिष्ठानम्=** समस्त गुणों के आश्रय को। **कुपतिमपि=** दुष्ट पति होने पर भी। **कलत्रवल्लभम्=** स्त्रियों के प्रिय को। **अविरतप्रवृत्तदानमप्यमदम्=** निरन्तर दान में संलग्न, किन्तु मदरहित को भी। **अत्यन्तशुद्धस्वभावमपि=** अत्यन्त शुद्ध स्वभाव वाला होने पर भी काले चरित्र वाले को। **अकरमपि हस्तस्थित=** बिना हाथ वाले को भी। **भुवनतलं=** भुवनमण्डल वाले को। **राजानमद्राक्षीत=** राजा को देखा।

प्रसंग- यह गद्यांश बाणभट्ट-रचित 'कादम्बरी' से उद्धृत है। इस गद्यांश में राजा शूद्रक के चाण्डालकन्या को देखने का बाणभट्ट ने अनेक प्रकार के उपमानों द्वारा चमत्कारपूर्ण वर्णन किया है। भाषा में इस प्रकार की भावप्रवणता है जो पाठक को चमत्कारिक वातावरण में ले जाती हुई उसे बार-बार अपनी ओर आकृष्ट करती है।

हिन्दी अनुवाद- सर्वसामान्य द्वारा भोग्या होने पर भी असाधारण राजलक्ष्मी द्वारा आलिंगित, अगणित परिवारयुक्त होने पर भी केवल खड्ग की सहायता लेने वाले, एक स्थान पर बैठे होने पर भी समस्त भुवन-मण्डल में व्याप्त, आसन पर बैठे होकर भी धनुष पर निर्भर, समस्त शत्रुरूपी ईंधन के समाप्त हो जाने पर भी जिसका प्रतापानल जल रहा है, विशाल नेत्र होकर भी सूक्ष्म दृष्टियुक्त महादोष (भुजा, अवगुण नहीं) युक्त होकर भी सब गुणों के आश्रय स्थान, कुपति (धरती का स्वामी, बुरा पति नहीं) होकर भी पत्नियों को प्रिय, निरंतर दानशील (दानमद नहीं) होने पर भी मद-अभिमान (मदजल नहीं) से रहित, अत्यन्त शुद्ध स्वभाव होने पर भी कृष्ण (भगवान) के समान चरित वाले, कर (राजकर) न लेने वाला होकर भी सम्पूर्ण भुवनतल के अधिकारी राजा को देखा।

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में श्लिष्ट पदावली के आधार पर विरोधाभास अलंकार की योजना है। 'विरुद्धमिव भासेत विरोधोऽसौ' में सर्वत्र विरोध प्रविष्टि-श्लेष के द्वारा विरोध का परिहार हो जाता है।

आलोक्य च सा दूरस्थितैव प्रचलितरत्नवलयेन रक्त्कुवलयदलकोमलेन पाणिना जर्जरितमुखभागां वेणुलता-मादाय नरपति प्रतिबोधनार्थं सकृत्सभाकुट्टिममाजघान, येन सकलमेव तद्राजकमेकपदे वनकरियूथमिव तालशब्देन युगपदावलितवदनमवनिपालमुखादाकृष्य चक्षुस्तदभिमुखमासीत्।

शब्दार्थ-आलोक्य= देखकर। **च सा दूरस्थितैव**= दूर खड़ी हुई ही। **प्रचलितरत्नवलयेन**= हिलते हुए रत्नजड़ित कंगन से। **रक्तकुवलयदलकोमलेन**= रक्त्- कमल की पंखुड़ी के समान कोमल से। **सकृत्सभाकुट्टिममाजघान=** एक बार सभा के आँगन पर मारा। **राजकम्=** राजाओं का समूह। **युगपत=** एक साथ। **अवनिपालमुखात्=** राजा के मुख से। **आकृष्य=** हटाकर। **ताल=** वाद्यविशेष अथवा ताड़वृक्ष।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश बाणभट्ट विरचित 'कादम्बरी' से उद्धृत है। चाण्डालकन्या ने राजा को देखकर दूर से ही सबका ध्यान आकृष्ट करने के लिए फटे बाँस से सभा के आँगन के मध्य में ताड़न किया।

हिन्दी अनुवाद- दूरी पर ही खड़ी हुई उस (चाण्डालकन्या) ने राजा को देखकर हिलते रत्न (जटित) कंगन वाले तथा कमल की पंखुड़ियों-जैसे हाथ से बाँस की छड़ी को, जिसका आगे का भाग फटा हुआ था, लेकर राजा को सावधान करने के लिए एक बार (सभा-भवन) के फर्श पर मारा, जिससे एक साथ ही सब राजाओं का समूह राजा (शूद्रक) के मुख से आँखें हटाकर (उस चाण्डालकन्या) की ओर अभिमुख हो गया जैसे ताल (वाद्य) के शब्द को सुनते ही जंगली हाथियों का झुण्ड (उस ओर) देखने लगता है।

विशेष- कवि ने यहाँ बड़ी स्वाभाविक उपमा प्रस्तुत की है। आजघान-आङ + हन् लिट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन। **राजकम्=** राज्ञां समूहो राजकम् (राजन् + वुञ्=अक्)। तत्पुरुष समास। प्रचलित रत्नवलयेन**=** प्रचलितं रत्नवलयं यस्य, तेन (बहुव्रीहिः)।

7.3.2 राजा शूद्रक द्वारा मातंग कुमारी का वर्णन

अवनिपतिस्तु 'दूरादालोकय' इत्यभिधाय प्रतीहार्या निर्दिश्यमानां तां वयः परिणामशुभ्रशिरसा रक्त्राजीवनेत्रोपांगे नानवरतकृतव्यायामत्तया यौवनापगमेप्यशिथिलशरीरसन्धिना सत्यपि मातङ्गत्वे नातिनृशंसाकृतिनानुगृहीतार्यवेषेण शुभ्रवाससा पुरुषेणाधिष्ठितपुरोभागाम्, आकुलाकुलकाकपक्षधारिणा कनकशलाकानिर्मितमप्यन्तर्गतशुकप्रभाश्यामाय-मानम् मरकतमयमिव पञ्जरमुद्वहता चाण्डालदारकेणानुगम्यमानाम्।

शब्दार्थ- दूरात= दूर से। **आलोक्य**= दिखाओ। **इति=** इस प्रकार। **अभिधाय=** कहकर। **प्रतीहार्या=** प्रतिहारी के द्वारा। **निर्दिश्यमानां=** बताये गये। **वयः=** वृद्धावस्था। **परिणामशुभ्रशिरसा=** परिणाम के कारण सफेद शिर वाला। **रक्त्राजीवनेत्रपाङ्गन=** निरन्तर। **कृतव्यायामत्तया=** परिश्रमपूर्ण कार्य। **यौवनापगमेप्यशिथिलशरीरसन्धिना=** युवावस्था न होते हुए भी शरीर के बन्धन शिथिल नहीं हुए हैं। **मातङ्गत्वे=** चाण्डाल होने पर भी। **नृशंसाकृतिना=** क्रूर आकृति न होते हुए। **अनुगृहीत=** धारण किए हुए। **शुभ्रवाससा=** श्वेत वस्त्रधारी। **पुरोभागम्=** आगे। **आकुलाकुलकाकपक्षधारिणा=** उलझे हुए केशपाश में काक-पंख धारण किये हुए। **कनकशलाका=** सोने की सलाई। **अन्तर्गतशुकप्रभा=** अन्दर विद्यमान तोते की कान्ति

से। **श्यामायमानम्=** श्याम वर्ण की। **मरकतमयमिव=** मरकत मणि के समान। **पञ्जरम्=** पिंजड़े को। **उद्वहता=** धारण किये हुए। **दारकेण=**बच्चा। **अनुगम्यमानाम्=** अनुगमन करना।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। इसमें राजा ने उस वृद्ध चाण्डाल-पुरुष की विशेषता का वर्णन कर विभिन्न उपमानों द्वारा चाण्डाल कन्या के अद्वितीय लावण्य का मनमोहक भाषा-शैली में वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- दूर ही से देखो इस प्रकार उस चाण्डालकन्या को सभा-मण्डप में और आगे बढ़ने से रोकती हुई प्रतिहारी ने वहीं से उसे राजा को दिखाया। राजा भी अति नवयुवती सर्वसुन्दरी कन्या को एकटक निहारने लगे। उसके आगे आर्यों (शिष्टजनों) के समान श्वेत वस्त्र पहिने हुए पकी उमर का एक चाण्डाल था, जिसके सिर के बाल उजले हो गये थे, आँखों की कोरें लाल-लाल थीं, नियमित व्यायाम और परिश्रम के कारण बुढ़ापे में भी शरीर की जोड़ें अभी तक कसी हुई थीं तथा चाण्डाल होते हुए भी उसकी आकृति में उतनी कठोरता नहीं थी। उसके पीछे एक चाण्डाल-बालक था, जिसके उलझे हुए बालों में कहीं-कहीं कौवे के पंख लगे हुए थे। वह अपने हाथों में सोने की तीलियों से बना हुआ एक पिंजरा लिए हुए था, जो उसके भीतर स्थित गहरे हरे रंग के सुग्गे (तोते) की झलक से मरकत मणि से बना हुआ प्रतीत हो रहा था।

विशेष (1)इस गद्यावतरण में महाकवि बाण ने वृद्ध चाण्डाल-पुरुष की विशेषता का वर्णन बड़े ही सौन्दर्यमय ढंग से किया है। भाषा में इस प्रकार की भावप्रवणता है जो पाठक को चमत्कारिक वातावरण में ले जाती हुई बरबस अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है।

(2) रक्ताराजीवनेत्रापांगेन में **लुप्तोपमा** तथा मरकतमयमिव में **क्रियोत्प्रेक्षा अलंकार** है। वयः परिणाम शुभ्रशिरसा में **कर्मधारय समास** है।

असुरगृहीतामृतापहरणकृतकपटपटुविलासिनी वेषस्य श्यामतया भगवतीम् हरेरिवानुकुर्वतीम् संचारिणी-मिवेन्द्रनीलमणिपुत्रिकाम्, गुल्फावलम्बिनीलकञ्चुकेनावच्छन्नशरीराम्, उपरिरक्तांशुकरचितावगुण्ठनाम्, नीलोत्पलस्थलीमिव निपतितसन्ध्यातपाम् एककर्णावसक्तदन्तपत्रप्रभाधवलितकपोलमण्डलाम्, उद्यदिन्दुकिरणच्छुरितमुखीमिव विभावरीम्।

शब्दार्थ- असुरगृहीतामृतापहरणकृतकपटपटुविलासिनी वेषस्य = राक्षसों के द्वारा ग्रहण किये गये अमृत का अपहरण करने के लिए कपट से मोहिनी वेष धारण करने वाले का। **भगवतीम् हरेरिवानुकुर्वतीम्=** भगवान विष्णु का अनुकरण कर रही थी। **गुल्फ=** टखने। **अवलम्बिनी**= लटकती हुई। **नीलकञ्चुकेनावच्छन्नशरीराम्**= नीले कंचुक से ढके हुए शरीर वाली को। **उपरिरक्तांशुकरचितावगुण्ठनाम्=** लाल रेशमी वस्त्र का घूँघट निकाले हुई को। **नीलोत्पलस्थलीमिव=** नील-कमलों की स्थली जैसी को। **सन्ध्यातपाम्=** सन्ध्याकालीन धूप को। **एककर्णावसक्तदन्तपत्रप्रभाधवलितकपोलमण्डला=** एक कान में हाथीदाँत के बने हुए कर्णफूल की शोभा से श्वेत कपोलमण्डल वाली को। **उद्यदिन्दु किरणच्छरितमुखीमिव विभावरीम्=** चन्द्रमा की किरणों से प्रकाशित प्रथम भाग वाली रात्रि।

प्रसंग- प्रस्तुत पंक्तियाँ बाणभट्ट विरचित 'कादम्बरी' से ली गई हैं। राजा शूद्रक ने दूर से ही चाण्डालकन्या को देखा, जो पिंजड़े में तोते को लिये हुए एक वृद्ध पुरुष के साथ थी। बाणभट्ट ने विभिन्न उपमानों के द्वारा चाण्डालकन्या के अद्वितीय लावण्य का वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- उस चाण्डालकन्या का साँवला स्वरूप भगवान विष्णु के उस मायावी मोहिनीरूप से मिलता-जुलता-सा प्रतीत हो रहा है, जिसे उन्होंने असुरों के हाथ में पड़े हुए अमृत के घड़े को लौटाने के लिए धारण किया था। वह कन्या क्या थी नीलम की चलती-फिरती पुतली थी। उसका शरीर पैर की गाँठों तक नीले कंचुक से और सिर रेशमी ओढ़नी के घूँघट से ढका हुआ था, जिससे वह ऐसी प्रतीत हो रही थी, मानो नीले कमलों की भूमि पर डूबते हुए धूप लोट रही हो। उसके कान में लगा हुआ हाथीदाँत का आभूषण उसके साँवले मुख के दाहिने कपोल-मण्डल को अपनी श्वेत आभा से चमका रहा था, जिससे वह पूर्व भाग में निकलते हुए चन्द्रमण्डल को धारण करने वाली चाँदनी रात के समान प्रतीत हो रही थी।

विशेष- यहाँ असुरों द्वारा समुद्रगर्भनिष्कासित अमृत ले जाने पर भगवान विष्णु द्वारा सुन्दर मोहिनीरूप धारण करके असुरों से अमृत छीन लेने तथा सुरों को पिला देने की कथा की ओर संकेत किया गया है।

आकपिलगोरोचनारचिततिलकतृतीयलोचनामीशानरचितानुरचितकिरातवेशामित भवानीम् उरःस्थलनिवास-संक्रान्तनारायणदेहप्रभाश्यामलितामिव श्रियम् कुपितहरहुताशनदह्यमानमदनधूममलिनीकृतामिव रतिम्, उन्मदहलिहला-कर्षणभयपलायितामिव कालिन्दीम् अतिबहलपिण्डालक्तकरसरागपल्लवितपादपङ्कजामचिर मृदितमहिषासुररुधिर-रक्त्तचरणामिव कात्यायनीम्।

शब्दार्थ-आकपिल= पीली। **गोरोचना=** गोपित नामक। **रचित=** लगाया। **तिलक=** टीकारूपी। **तृतीयलोचनाम्=** तीसरे नेत्र की शोभा। **ईशानरचिताम्=** शिव द्वारा बनाये गये। **किरातवेशामित=** किरात-वेशधारी शंकर। **भवानीम्=** भगवती पार्वती। **नारायण=** विष्णु के। देह शरीर की। **प्रभाश्यामलिताम्=** कान्ति से श्याम वर्ण बनी हुई। **श्रियम् इव=** लक्ष्मी की भाँति। **कुपित=** क्रुद्ध।। **मदन=** कामदेव। **रतिम् इव=** रति के समान। **हर=** महादेव। **हलिहलाकर्षण=** बलराम के हल से खींची गई। **कालिन्दीम् इव=** यमुना की भाँति लगने वाली। **अतिबहलपिण्डालक्तक=** अत्यन्त घने पिण्ड बने महावर रस से। **पल्लवित=** कोंपल के समान। **अचिरमृदित=** शीघ्र ही मारे हुए। **रक्तचरणाम्=** लाल पैरों वाली। **कात्यायनीम इव=** भगवती दुर्गा की भाँति।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। इसमें कवि ने विभिन्न उपमानों के द्वारा चाण्डालकन्या के अद्वितीय सौन्दर्य का अत्यन्त मनोमोहक चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- उसके ललाट पर गोरोचना का पीला टीका तीसरे नेत्र की शोभा दे रहा था, जिससे वह ऐसी प्रतीत हो रही थी मानो भगवान शंकर के किरात-वेश धारण करने के समय किराती का वेश

धारण करने वाली भगवती पार्वती हों अथवा अपने हृदय में भगवान नारायण के शरीर की श्यामली झलक से साँवारी बनी हुई भगवती लक्ष्मी हों या क्रुद्ध शंकर की नेत्र ज्वाला में जलते हुए कामदेव के धुएँ से काली पड़ी हुई सुन्दरी रति हो अथवा नशे में चूर भगवान बलराम के हल से खींचे जाने के भय से भागी हुई कृष्णप्रिया कालिन्दी (यमुना) हो। या अत्यन्त घने पिण्ड बने अलक्तक रस की लालिमा से (मानो) पल्लवित चरण-कमल वाली (अतः मानो) कुछ समय पूर्व ही मर्दन किये गये महिषासुर के रुधिर से लाल चरण वाली दुर्गा हो।

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में कवि ने समासालंकृत शैली के द्वारा चाण्डालकन्या का मनोमुग्धकारी रूप प्रस्तुत किया है।

(2) पल्लवितपादपङ्कजम् में **लुप्तोपमा,**कात्यायनीमिव में **उपमा अलंकार** है तथा रुधिररक्त्चरणौ पद में रुधिर और रक्त पदों में आपततः पुनरुक्ति प्रतीत होती है, इसलिए यहाँ **पुनरुक्तवदाभास अलंकार** होगा।

आलोहितांगुलिप्रभापाटलितनखमयूखाम्, अतिकठिनमणिकुट्टिमस्पर्शमसहमानाम् क्षितितले पल्लवभङ्गानिव निधाय संचरन्तीम्, आपिञ्जरेणोत्सर्पिणा नूपुरमणीनां प्रभाजालेन रञ्जितशरीरतया पावकेनेव भगवता रूप एव पक्षपातिना प्रजापतिमप्रमाणी कुर्वता जातिसंशोधनार्थमालिङ्गित्तदेहाम् अनङ्गवारणशिरोनक्षत्रमालावायमानेन रोमराजिलतालवालकेन रशनादाम्ना परिगतजघनाम् अतिस्थूलमुक्ताफलघटितेन शुचिना हारेण गङ्गास्रोतसेव कालिन्दीशंकयाकृतकण्ठग्रहाम्।

शब्दार्थ-आलोहितांगुलि= लाल अँगुलियाँ। **प्रभापाटलितनखमयूखाम्**= अँगुलियों की कान्ति से नाखून गुलाबी प्रतीत होते थे। **अतिकठिन=** अत्यन्त दृढ़। **मणिकुट्टिम**= मणियों का बना फर्श। **स्पर्शम् असहमानाम्=** स्पर्श को सहन न करने वाली। **क्षितितले=** पृथ्वी पर। **पल्लवभङ्गानिव=** कोपलों के टुकड़ों को मानो। **निधाय=** बिछाकर। **संचरन्तीम्=** चलती हुई। **आपिञ्जरेणोत्सर्पिणा=** पीली तथा ऊपर उठी हुई कान्ति से। **नूपुरमणीनां=** नूपुरों में जड़ी हुई मणि। **प्रभाजालेन=** किरण-समूह। **रञ्जितशरीरतया=** रँगे शरीर वाली। **पावकेनेव=** मानो अग्निदेव ने। **प्रजापतिमप्रमाणीकुर्वता=** प्रजापति (ब्रह्मा) को अप्रमाणिक बनाते हुए। **जातिसंशोधनार्थ=** जाति को पवित्र करने के लिए। **आलिङ्गत्तदेहाम्**= आश्लिष्ट शरीर वाली। **अनङ्गवारणशिरोनक्षत्रमालावायमानेन**= कामदेवरूपी हाथी के मस्तक की नक्षत्र- माला। **रोमराजि=** रोमों का समूह। **लतावालकेन=** लता के आलवाल जैसी। **रशनादाम्ना**= करधनी की लड़ियाँ। **परिगतजघनाम्=** घिरे हुए नितम्ब वाली। **अतिस्थूल=** अत्यन्त मोटे। **मुक्ताफल=** मोतियों द्वारा। **घटितेन=** बने हुए। **शुचिना=** श्वेत वर्ण के। **गङ्गास्रोतसा**= गंगा के प्रवाह से। **कालिन्दीशाया=** यमुना नदी के भ्रम से। **कृतकण्ठग्रहाम्=** गले से मिलती हुई।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ महाकवि बाण ने विभिन्न उपमानों के द्वारा राजा शूद्रक के मुख से उस चाण्डालकन्या के शारीरिक सौन्दर्य का सजीव चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद-जिसकी लाल अँगुलियों की प्रभा से नखों की किरणें गुलाबी हो गयी थी, जो (मानो) अत्यन्त कठोर मणियों के फर्श को नहीं सह पा रही थीं (अतः पाँवों में बने अलक्तक के पल्लवों के प्रतिबिम्ब के बहाने) मानो पृथ्वी-तल पर पल्लवों के टुकड़ों को बिछाकर चल रही थी, जो कुछ-कुछ पीले ऊपर उठते हुए, नूपुर-मणियों के कान्ति-समूह से शरीर के रंग जाने के कारण मानो रूप का ही पक्षपात करने वाले भगवान अग्निदेव द्वारा प्रजापति (ब्रह्मा) को अप्रमाण बनाते हुए (चाण्डालकन्या को) जाति के संशोधन के लिए आलिंगित शरीर वाली थी, कामदेवरूपी हाथी के सिर की नक्षत्रमाला बनी हुई (और) रोम-पंक्तिरूपी लता के लिए आलवाल-स्वरूप तगड़ी की लड़ी से जिसके जघन घिरे हुए थे, अत्यन्त मोटे मोतियों से बने हुए स्वच्छ हार द्वारा मानो यमुना की आशंका से गंगा की धारा द्वारा, जिसके कण्ठ का ग्रहण किया गया था।

विशेष (1)- प्रस्तुत गद्यावतरण में राजा शूद्रक चाण्डालकन्या के अपूर्व लावण्य को देखकर आश्चर्यचकित हो गया है। यहाँ महाकवि बाण ने समासालंकृत शैली के द्वारा चाण्डालकन्या का प्रभावकारी वर्णन किया है, जिसका भाव यह है कि ब्रह्मा ने उस लड़की को चाण्डाल कुल में उत्पन्न करकें अस्पृश्य बनाया था, लेकिन अग्निदेव ने ब्रह्मा के अस्पृश्यत्व रूप-विधान को अस्वीकृत कर दिया।

(2) इस गद्यांश में **उपमा, उत्प्रेक्षा, आन्तिमानअलंकार** है।

शरदमिव विकसितपुण्डरीकलोचनाम्, प्रावृषमिव घनकेशजालाम् मलयमेखलामिव चन्दनपल्लवावतंसाम्, नक्षत्रमालामिव चित्रश्रवणाभरणभूषिताम्, श्रियमिव हस्तस्थित-कमलशोभाम्मूर्च्छामिव मनोहारिणीम्, अरण्यभूमिमिव रूपसंपन्नाम्, दिव्ययौषित, मिवाकुलीनाम्, निद्रामिव लोचनग्राहिणोम्, अरण्यकमलिनीमिव मातङ्गकुलदूषिताम्, अमूर्तामिव स्पर्शवर्जिताम् आलेखितामिव दर्शनमात्रफलाम् मधुमासकुसुमसमृद्धिमिवाजातिम्, अनङ्गकुसुमचापलेखामिव मुष्टिग्राह्यमध्याम्, यक्षाधिपलक्ष्मीमिवालकोद्भासिनीम् अचिरोपारूढयौवनाम् अतिशयरूपाकृतिमनिमिषलोचनो ददर्श।

शब्दार्थ-शरदमिव= शरद् ऋतु के समान को। **विकसितपुण्डरीकलोचनाम्=** कमलरूपी नेत्रों वाली को। **प्रावृषमिव=** वर्षा ऋतु के समान। **घनकेशजालाम्=** मेघरूपी केश समूह वाली को। **मलयमेखलामिव=** मलयगिरि के मध्य भाग के समान। **चन्दनपल्लवावतंसाम**= चन्दन के कोमल पत्तोंरूपी आभूषण वाली को। **नक्षत्रमालामिव**= नक्षत्र माला के समान। **मूर्च्छामिव=** मूर्च्छा के समान। **मनोहारिणीम्**= मन को हरने वाली को। **अरण्यभूमिमिव=** वन-भूमि के समान। **रूपसंपन्नाम्=** रूप से सम्पन्न को। **दिव्ययोषितमिवाकुलीनाम्**= देवाङ्गना के समान, पृथ्वी पर न रहने वाली को। **निद्रामिव=** निद्रा के समान को। **लोचनग्राहिणीम्=** नेत्रों को पकड़ने वाली को, आकृष्ट करने वाली को। **अरण्यकमलिनीमिव**= वन-कमलिनी के समान को। **मातङ्गकुलदूषिताम्**= चाण्डाल कुल में उत्पन्न होने से दूषित को। **अमूर्तामिव=** अमूर्त (वस्तु) के समान। **स्पर्शवर्जिताम्=** स्पर्श से रहित को। **आलेख्यगतामिव=** चित्रलिखित की भाँति को। **दर्शनमात्रफलागम्=**

दर्शनमात्र फल वाली को। **जातिम् =**चमेली के पुष्प को। **अनङ्गकुसुमचापलेखामिव=** कामदेव की पुष्प-धनुष डोरी के समान। **मुष्टिग्राह्यमध्याम्=** मध्यभाग में मुठ्ठी में पकड़े वाले मध्यभाग वाली को। **यक्षाधिपलक्ष्मीमिवालकोद्भासिनीम्=** कुबेर की लक्ष्मी के समान, अलका नगरी से युक्त केशपाशों से उद्भासित। **उपरूढ=** प्राप्त हुआ। **अतिशयरूपाकृतिम्=** अत्यन्त सुन्दर आकृति वाली को। **अनिमिष=** निर्निमेष।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाण-रचित 'कादम्बरी' से उद्धृत है। राजा शूद्रक चाण्डालकन्या के अपूर्व लावण्य को देखकर आश्चर्यचकित हो गया। महाकवि बाण ने विभिन्न उपमानों के द्वारा राजा के मुख से उस मातंगकन्या के शारीरिक सौन्दर्य का सजीव चित्रण किया है। ऐसा प्रतीत होता है मानो चाण्डालकन्या नेत्रों के समक्ष उपस्थित हो।

हिन्दी अनुवाद- वह चाण्डालकन्या शरद् ऋतु के खिले हुए सफेद कमल के समान नेत्रों वाली थी। वह बादलरूपी केश-समूह वाली थी, वर्षा के समान घने केशों वाली थी, चन्दन के पत्तोंरूपी भूषणों वाले मलयाचल के मध्यभाग के समान चन्दन के पत्तों के कर्णाभूषणों से युक्त थी, चित्रा और श्रवण (नक्षत्र) रूपी आभूषणों से सुशोभित नक्षत्रमाला के समान रंग-बिरंगे कानों के आभूषणों से भूषित थी, लक्ष्मी के समान जिसके हाथों में कमल की शोभा स्थित थी, मूर्च्छा के समान जो मन को हरने वाली थी, अरण्य भूमि जिस प्रकार रूपों (पशुओं) से सम्पन्न रहती है, उसी प्रकार जो रूप (सौन्दर्य) में सम्पन्न थी। देवाङ्गनाएँ जिस प्रकार अकुलीन (जो पृथ्वी पर स्थित न हो) होती हैं, उसी प्रकार जो अकुलीन (नीचे कुल में उत्पन्न) थी, जिस प्रकार निद्रा नेत्रों को ग्रहण कर लेती है अर्थात् बन्द कर देती है, उसी प्रकार जो नेत्रों को ग्रहण (आकर्षित) कर लेती थी, वन कमलिनी जिस प्रकार मातङ्गकुल (हाथियों के समूह) से दूषित (कुचली हुई) रहती है, उसी प्रकार जो मातङ्गकुल (चाण्डाल वंश) में जन्म के कारण से दूषित थी, जिस प्रकार अमूर्त स्पर्श वर्जित (स्पर्श रहित) होता है, उसी प्रकार जो स्पर्श वर्जित (अछूत) थी (अतः) जो चित्रित की भाँति केवल दर्शन मात्र फल वाली थी, वसंत मास की पुष्प-समृद्धि जिस प्रकार अजाति (चमेली रहित) होती है, उसी प्रकार जो अजाति (ब्राह्मणत्व) आदि से रहित हीन जाति की भी, कामदेव के पुष्प-धनुष की डोरी के समान जिसकी कटि को मुठ्ठी से पकड़ा जा सकता था।जिस प्रकार यक्षों के राजा कुबेरकी लक्ष्मी अलकोद्भासिनी (कुबेर की नगरी अलका द्वारा प्रकट होने वाली) थी, उसी प्रकार जो अलकोद्भासिनी (केशों से सुशोभित होने वाली) थी, कुछ समय पूर्व ही जिसने यौवन को प्राप्त किया था। (और) जो अत्यधिक सुन्दर आकृति वाली थी। इस प्रकार राजा ने उसको अपलक दृष्टि से देखा।

विशेष- रूपैः= रूप से युक्त, पशुओं से युक्त, यथा ग्रन्थावृतौ पशोः शब्दे नाटकादि स्वभावयोः। रूपमाकारसौन्दर्येनाणकश्लोकयोरपि घनानां केशानां जालं यस्यास्ताम् **बहुव्रीहि समासः।**

समुपजातविस्मयस्याभून्मनसि महीपतेः- अहो विधातुरस्थाने सौन्दर्यनिष्पादनप्रयत्नः। तथाहि-यदि नामेयमात्म-रुपोपहसिताशेषरूपसंपदुत्पादिता, किमर्थमपगतस्पर्शसंभोगसुखे कृतं कुले जन्म। मन्ये च मातङ्गजातिस्पर्श-दोषभयादस्पृश्यतेयमुत्पादिता प्रजापतिना, अन्यथा कथमियमक्लिष्टता लावण्यस्य। नहि करतलस्पर्शक्ले-शितानामवयवानामीदृशी भवति कान्तिः। सर्वथा धिग्धिग्विधातारमसदृशसंयोगकारिणम् मनोहराकृतिरपि क्रूरजातितया येनेयमसुरश्रीरिव। सततनिन्दितसुरता रमणीयाप्युद्वेजयति इति।

शब्दार्थ-समुपजातविस्मयस्याभून्मनसि महीपतेः= उत्पन्न आश्चर्य वाले राजा के मन में विचार हुआ। **अहो विधातुरस्थाने=** आश्चर्य है ब्रह्मा का अनुचित स्थान में। **सौन्दर्यनिष्पादनप्रयत्नः**= सुन्दरता का प्रयत्न करना। **किमर्थमपगतस्पर्शसंभोगसुखे=** किस प्रयोजन से स्पर्श तथा संभोग सुख से रहित। **कृतंकुले जन्म=** कुल में जन्म किया। **मन्ये=** मानता हूँ। **मातङ्गजातिस्पर्शदोषभयादस्पृश्यतेयमुत्पादिता=** चाण्डाल जाति को छूने के दोष से डरकर बिना छुए इसे बनाया है। **प्रजापतिना=** ब्रह्मा ने। **करतलस्पर्शक्लेशित=** हथेली के स्पर्श से दूषित। **क्लेशितानामवयवानाम्=** मुरझाये हुए अंगों की। **कान्ति=** शोभा। **मनोहराकृतरपि=** सुन्दर आकृति वाली भी। **क्रूरजातितया=** चाण्डाल जाति की होने के कारण। **असुरश्रीरिव=** असुर लक्ष्मी के समान। **सुरता=** देवत्व। **उद्वेजयति=** उद्विग्न कर रही है।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाण-रचित 'कादम्बरी' से लिया गया है। राजा शूद्रक चाण्डालकन्या के विचित्र एवं मनोहारी सौन्दर्य का विवेचन करता है और उसकी समानता विभिन्न उपमानों से करता हुआ विधाता को धिक्कारता है। उसके मन को अत्यन्त उद्विग्नता होती है।

हिन्दी अनुवाद- राजा के मन में विचार उत्पन्न हुआ-अहो। विधाता का अनुचित स्थान में सौन्दर्य उत्पन्न करने का प्रयत्न। यदि (ब्रह्मा ने) इसको अपने रूप से सम्पूर्ण रूप-सम्पत्ति पर हँसने वाली उत्पन्न किया है तो स्पर्श व संभोग सुख से रहित कुल में उत्पन्न क्यों किया और (मै) समझता हूँ कि चाण्डाल जाति के स्पर्श दोष के भय से इसका स्पर्श न करते हुए ब्रह्मा ने इसे उत्पन्न किया है, अन्यथा लावण्य की यह दोष-रहितता कैसे हो सकती थी ? क्योंकि हथेली के स्पर्श से दूषित अंगों में ऐसी कान्ति नहीं होती। (इस प्रकार के) असदृश संयोग को करने वाले विधाता को सर्वथा धिक्कार है, जिस असदृश संयोग के कारण यह अतीव सुन्दर कन्या चाण्डाल जाति की होने से निरन्तर निन्दित सम्भोगजन्य ऐसी होती हुई भी मन में खेद उत्पन्न करती है।

विशेष (1)महाकवि बाण ने श्लेष से परिपुष्ट अलंकार के द्वारा प्रसाद-गुणपूर्ण शैली में चाण्डालकन्या का अत्यन्त मनोहारी चित्र प्रस्तुत किया है। विभिन्न उपमानों के द्वारा वर्णन में अतीव प्रभावोत्पादकता आ गयी है।

एवमादि चिन्तयन्तमेव राजानमीषदवगलितकर्णपल्लवावतंसा प्रगल्भवनितेव कन्यका प्रणनाम। कृतप्रणामायां च तस्या, मणिकुट्टिमोपविष्टायां स पुरुषस्तं विहङ्गम शुकमादाय पञ्जरपगतमेव किंचिदुपसृत्य राज्ञे न्यवेदयत्। अब्रवीच्च-

शब्दार्थ- एवमादि= इस प्रकार। **चिन्तयन्तेव=** विचार करते हुए। **ईषदवगलित=** कुछ-कुछ हटे हुए। **कर्णपल्लवावतंसा=** कर्णपल्लव का आभूषण। **प्रगल्भवनिता इव=** अनुभवी अथवा धृष्ट स्त्री के समान। **प्रणनाम=** नमस्कार किया। **कृतप्रणामायां=** प्रणाम करने के बाद। **च** और। **तस्यां=** उसके। **उपविष्टायाम्=** बैठे हुए। **स पुरुषस्तं=** उस (वृद्ध) पुरुष ने। **पञ्जरगतम् एव**= पिंजड़े में विद्यमान था। **राज्ञे=** शूद्रक के लिए। **न्यवेदयत्=** निवेदन किया। **अब्रवीच्च**= और कहा।

प्रसंग- इस गद्यावतरण को महाकवि बाणभट्ट द्वारा रचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ उस वृद्ध पुरुष ने पक्षी को लेकर पिंजड़े सहित राजा के समक्ष रखकर निवेदन किया है। इसी का कवि ने यहाँ वर्णन किया है। भाषा में सरलता तथा सुबोधता है।

हिन्दी अनुवाद- इस प्रकार सोचते हुए राजा को, कुछ (थोड़ा-सा) खिसके (झुके हुए) कोमल पत्तों के कर्णाभूषण वाली। उस कन्या ने अनुभवी वनिता की भाँति, प्रणाम किया। उसके प्रणाम कर लेने पर और मणिमय कुट्टिम (फर्श) पर बैठ जाने पर उसे पुरुष (वृद्ध चाण्डाल) ने उस पिंजरे में बैठे हुए पक्षी (तोते) को लेकर कुछ समीप आकर राजा को निवेदित किया और कहा।

विशेष (1)प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाण ने चाण्डालकन्या का बड़ा ही सौन्दर्य- मण्डित वर्णन किया है जो मनोमुग्धकारी है।

(2) ईषदवगलितकर्णपल्लवावतंसा- ईषत् अवगतलितौ प्रसृतौ कर्णयोः पल्लवस्य पत्रस्य अवंतसौ कर्णभूषणे यस्याः सा-वाक्य में **बहुव्रीहि समास** है। **'राजा भट्टारको देवः'इति कोषः।**

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

    1. कालिन्दी नदी किसे कहते हैं?

    2. कात्यायनी किसे कहते है?

    3. चाण्डाल कन्या किस ऋतु के खिले हुए सफेद कमल के समान नेत्रों वाली थी?

7.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में चाण्डाल कन्या के अद्भुत सौन्दर्य मण्डित वर्णन वर्णित है जो मनोमुग्धकारी है।

7.5 कठिन शब्दावली

1.कुट्टिम – फर्श **2.शुक** – तोता **3.उपसृत्य** – पास जाकर **4.विहङ्ग** – अनूठा, अनोखा

7.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. यमुना 2. दुर्गा 3. शरद ऋतु

7.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

7.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. चाण्डाल कन्या का चरित्र-चित्रण लिखिए।
2. निम्नलिखित गद्यांश की प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए-
   (1) समुपजातविस्मयस्याभून्मनसि .... इति।
   (2) अवनिपतिस्तु .... विभावरीम्।

इकाई-8

शुक परिचय एवं शूद्रक दिनचर्या वर्णन

संरचना

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 शुक परिचय

8.3.1 शूद्रक सभा विसर्जन

8.3.2 शूद्रक स्नान वर्णन

- स्वयं आकलन प्रश्न

8.4 सारांश

8.5 कठिन शब्दावली

8.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

8.7 सहायक ग्रन्थ

8.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में चाण्डाल कन्या के द्वारा लाए गए शुक जो विभिन्न शास्त्रों का एवं सम्पूर्ण कलाओं का वेता है का वर्णन किया गया है। इसी इकाई में शूद्रक की दिनचर्या का भी वर्णन किया गया है।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

- शुक के गुणों से अवगत होंगे।
- राजा शूद्रक के स्नान के विषय में जानेंगे।
- शूद्रक की सभा के विषय में जानेंगे।

8.3शुक परिचय

देव, विदितसकलशास्त्रार्थः, राजनीतिप्रयोगकुशलः पुराणेतिहासकथालापनिपुणः, वेदिता गीतश्रुतीनाम् काव्य-नाटकाख्यायिकाख्यानकप्रभृतीनामपरिमितानां सुभाषितानामध्येता स्वयं च कर्ता, परिहासाऽलापपेशलः, वीणावेणु-मुरजादीनामसमः श्रोता, नृत्यप्रयोगदर्शननिपुणः चित्रकर्मणि प्रवीणः द्यूतव्यापारे प्रगल्भः प्रणयकलहकुपित-कामिनीप्रसादनोपायचतुरः, गजतुरगपुरुषस्त्रीलक्षणाभिज्ञः,

सकलभूतलरत्नभूतोऽयं वैशम्पायनो नाम शुकः सर्वरत्नाना-मुदधिरिव देवोभाजनमितिकृत्वैनमादायास्मत्स्वामिदुहिता देवपादमूलमायाता। तदयमात्मीयः क्रियताम् इत्युक्त्वा नरपतेः पुरोनिधाय पञ्जरम सावपससार।

शब्दार्थ देव= हे स्वामी। **विदितसकलशास्त्रार्थः=**सम्पूर्ण शास्त्रों के अर्थ को जानने वाला। **राजनीतिप्रयोगकुशल: =** राजनीति के प्रयोग में चतुर। **पुराणेतिहासकथालापनिपुणः=** पुराण-इतिहास की कथा कहने में कुशल। **वेदिता** जानने वाला। **गीतश्रुतीनाम्=** गीत की श्रुतियों का। **वीणावेणुमुरजादीनामसमः=** वीणा, बाँसुरी, मुरज आदि का अद्वितीय। **श्रोता=** सुनने वाला। **नृत्यप्रयोगदर्शननिपुणः=** नृत्य को देखने में कुशल। **चित्रकर्मणिप्रवीणः=** चित्रकला में कुशल। **द्यूतव्यापारे=** जुआ खेलने में। **प्रगल्भः=** योग्य। **प्रणयकलहकुपितकामिनी**= प्रेम-कलह में रूठी हुई स्त्री। **लक्षणाभिज्ञः=** लक्षणों का जानने वाला। **सकलभूतलरत्नभूतोऽयं**= सम्पूर्ण पृथ्वी का रत्नस्वरूप। **सर्वरत्नानाम्=** सम्पूर्ण रत्नों का। **भाजनम्=** पात्र। **एनम्=** इसको। **अस्मत्**= हमारे। **स्वामिदुहिता=** स्वामी की पुत्री। **देवपादमूलम्=** श्रीचरणों के समीप। **आयाता=** आई है। **आत्मीयः=** अपना। **इति=** ऐसा। **पुरो=** सामने। **निधाय=** रखकर। **अपससार=** हट गया।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाण द्वारा रचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। राजा शूद्रक के समक्ष तोते को रखकर उस वृद्ध पुरुष ने तोते की विभिन्न योग्यताओं का वर्णन किया। उसी का वर्णन महाकवि बाणभट्ट ने इस गद्यांश में किया है।

हिन्दी अनुवाद- देव ! सम्पूर्ण शास्त्रों के अर्थों को जानने वाला, राजनीति के प्रयोग (व्यवहार) में कुशल, पुराण, इतिहास एवं कथाओं के आलाप (कहने) में निपुण, संगीत श्रुतियों का ज्ञाता, काव्य, नाटक, आख्यायिका, आख्यानक आदि अपरिमित सुभाषितों का अध्येता (पढ़ने वाला पढ़ा हुआ) और स्वयं रचयिता, परिहास के कथनों में चतुर, वीणा, वेणु, मुरज आदि का अद्वितीय श्रोता, नृत्य के प्रयोग तथा दर्शन के निपुण, चित्रकर्म (चित्रकला) में कुशल जुए की कला (द्यूतव्यापार) में चतुर, मान के कारण क्रुद्ध स्त्रियों की प्रसन्नता (करने) के उपायों में चतुर गज, अश्व, नर एवं नारी के लक्षणों का ज्ञाता सम्पूर्ण पृथ्वी का रत्नभूत वैशम्पायन नाम का (यह तोता है) और सभी रत्नों के एकमात्र पात्र समुद्र के समान आप (सभी रत्नों के पात्र है) यह सोचकर इस तोते को लेकर हमारे स्वामी (मालिक) की पुत्री आपकी चरण-शरण (चरणों के मूल) में आई है। अतः इस तोते को अपना बनाइये (स्वीकार) कीजिए, ऐसा कहकर राजा के सामने पिञ्जड़े को रखकर वह पुरुष हट गया।

विशेष (1)सारगर्भित एवं प्रभावपूर्ण भाषा-शैली में वृद्ध चाण्डाल पुरुष ने राजा शूद्रक से शुक के अगाध ज्ञान की प्रशंसा की है। भाषा में सर्वत्र प्रवाह है।

अपसृते तस्मिन् स विहङ्गराजो राजाभिनुखो भूत्वोन्नमय्य दक्षिणचरणमति-स्पष्टवर्णस्वरसंस्कारयागिरा कृतजयशब्दो राजानमुद्दिश्यार्यामिमां। पपाठ-

"स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः।

चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीवाम्।।"

राजातु तामार्याम् श्रुत्वा संज्ञातविस्मयः सहर्षमासन्नवर्तिनम् अतिमहार्घहेमासनोपविष्टम्, अमरगुरु-मिवाशेषनीतिशास्त्रपरागम् अतिवयसम्, अग्रजन्मनम् अखिलेमन्त्रिमण्डलेप्रधानममात्यम् कुमारपालितनामानब्रवीत्

शब्दार्थ-अपसृते= हटने पर। **विहङ्गराजः**= पक्षिराज (शुक) ने। **अभिमुखो**= सामने। **समुन्नमय्य=** ऊपर उठाकर। **दक्षिणम् चरणम्**= दाहिना पाँव। **अतिस्पष्टवर्णस्वर**= अत्यधिक स्पष्ट वर्णों एवं स्वरों से शुद्ध। सं**स्कारयागिरा**= संस्कृत वाणी। **उद्दिश्य=** लक्ष्य करके। **स्तनयुगम्=** दोनों स्तन। **अनुस्नातम्**= आँसुओं द्वारा नहाये हुए। **समीपतरवर्ति=** सामने रहने वाली। **चरति**= आचरण करती है। **विमुक्ताहारम्=** भोजन छोड़कर, हार का परित्याग कर। **व्रतम् इव**= मानो साधना। **सञ्जातविस्मयः**=आश्चर्य से युक्त। **सहर्षम्=** प्रसन्न होकर। **आसन्नवर्तिनम्=** सामने बैठे हुए। **अतिमहार्घहमासनोपविष्टम्=** अत्यन्त बहुमूल्य सोने के आसन पर स्थित। **अशेषनीतिशास्त्रपारगम्=** सम्पूर्ण नीतिशास्त्रों में पारङ्गत। **अमरगुरुमिव=** गुरु बृहस्पति के समान। **अतिवय**= अत्यन्त वृद्ध। **समग्रजन्मानम्=** ब्राह्मण (वंश में पैदा)। **अखिलेमन्त्रिमण्डलेप्रधानममाप्यिम्=** समस्त मन्त्रिगणें में मुख्य। **अब्रवीत्**= कहा।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ कवि ने वर्णन किया है कि शुक ने उस राजा को देखकर दाहिना पैर उठाकर प्रणाम किया तथा एक आर्या के द्वारा उसके शौर्य की प्रशंसा की।

हिन्दी अनुवाद- उस (पुरुष) के दूर हट जाने पर उस पक्षिराज ने राजा की ओर मुँह करके दायाँ पैर उठाकर अत्यन्त स्पष्ट वर्णों एवं स्वरों की शुद्ध वाणी द्वारा 'जय' शब्द कहा और राजा को लक्ष्य करके इस आर्या को पढ़ा-आपके शत्रुओं की स्त्रियों का स्तनयुगल, जो कि आँसुओं से नहाया हुआ है, हृदय-स्थित शोकाग्नि के समीप रह रहा है, जिसने (शोक के कारण) सब ओर से हारों का परित्याग कर दिया है (व्रतधारी पक्ष में जिसने खाना छोड़ दिगा है) मानो व्रत कर रहा है। राजा तो उस आर्या को सुनकर आश्चर्यचकित होकर प्रसन्नतापूर्वक समीप में स्थित, अत्यन्त बहुमूल्य सोने के आसन पर बैठे हुए, देवताओं के गुरु (बृहस्पति) के समान समस्त नीतिशास्त्रों में पारङ्गत्त अत्यधिक आयु वाले ब्राह्मण, सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल में प्रधान कुमारपालित नामक मन्त्रि से बोला-

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाणभट्ट ने प्रसाद-गुण-सम्पन्न शैली के द्वारा राजा शूद्रक के आश्चर्य का सुन्दर वर्णन किया है। भाषा अत्यन्त सजीव, सरल एवं स्पष्ट है।

(2) संज्ञाता विस्मयो यस्य सः में **बहुव्रीहि समास** तथा सम्पूर्ण गद्य में **रूपक, क्रियोत्प्रेक्षा** तथा **संसृष्टि अलंकार** है। चार्याचात्र छन्द है।

श्रुता भवद्भिरस्य विहङ्गमस्य स्पष्टता वर्णोच्चारणे, स्वरे च मधुरता। प्रथमं तावदिदमेव महदाश्चर्यम्, यदयम संकीर्णवर्णप्रविभागामभिव्यक्तमात्रानुस्वारसंस्कारयोगां विशेषसंयुक्तां गिरमुदीरयति।

तत्र पुनरपरमभिमत्तविषये तिरश्चोऽपि मनुजस्येव संस्कारवतो बुद्धिपूर्वा प्रवृत्तिः। तथा हि-अनेन समुत्क्षिप्तदक्षिणचरणेनोच्चार्य जयशब्दमियमार्या मामुद्दिश्य परिस्फुटाक्षरं गीता।

शब्दार्थ- **श्रुता=** सुना। **अस्य विहङ्गमस्य=** इस पक्षी की। **वर्णोच्चारणे**=वर्णों के उच्चारण में। **स्पष्टता स्वरे च**= और स्पष्ट शब्दों में। **मधुरता=** मिठास। **प्रथमं**=पहला। **इदमेव=** यह। **महदाश्चर्यम्=** महान् आश्चर्य। **यदयमसंकीर्णवर्णप्रविभागामभिव्यक्त**= स्पष्ट वर्ण-भेद वाली अभिव्यक्ति। **संस्कार**= व्याकरण शुद्धि से युक्त। **विशेषसंयमताम**= विशेष श्लेषादि अलंकारों द्वारा युक्त। **मनुजस्य इव**= पुरुष के समान। **प्रवृत्ति=** रूचि। **समुत्क्षिप्तदक्षणिचरणे** = दाहिने पैर को उठाकर। **उच्चार्य**= कहकर। **माम्=** मुझको। **उद्दिश्य**= लक्ष्य करके। **परिस्फुटाक्षरम्**= स्पष्ट अक्षरों वाली। **गीता=** गायी गयी।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ पर राजा द्वारा कुमारपालित मन्त्री से शुक की शुद्ध संस्कारित वाणी के विषय में आश्चर्य प्रकट किया गया है। भाषा सारगर्भित एवं प्रभावपूर्ण है।

हिन्दी अनुवाद- आपने इस पक्षी के वर्णोच्चारण में स्पष्टता और स्वर में मधुरता सुनी, पहले तो यही बहुत बड़ा आश्चर्य है कि यह पृथक् पृथक् वर्ण-विभाग में (जिसमें एक-एक अक्षर स्पष्टतया अलग-अलग सुना जा सकता है) मात्रा, अनुस्वार और संस्कार के योग वाली (एवं अन्य काव्य की) विशेषताओं से संयुक्त वाणी को बोलता है। इसमें भी दूसरा (आश्चर्य यह है कि) अभीष्ट (अभिमत) विषय में पक्षी की भी (पक्षी होने पर भी) मनुष्य के समान ही संस्कार वाली वृद्धि पूर्वक प्रवृत्ति है। (संस्कारवतः पाठ होने पर 'संस्कारयुक्त मनुष्य के समान अर्थ होगा) जैसे कि इसने दायाँ पैर उठाते हुए 'जय' शब्द का उच्चारण करके मुझे उद्देश्य (लक्ष्य) करके परिस्फुट अक्षर में यह आर्या (स्तनयुगमश्रु आदि) गायी है।

विशेष (1)-इस गद्यांश में राजा मन्त्री से कहता है कि यह शुक विभिन्न शास्त्रों का एवं सम्पूर्ण कलाओं का वेत्ता है तथा बुद्धिमान पुरुष के समान समझ-सोचकर किसी भी कार्य में प्रवृत्त होता है, क्योंकि इसने दाहिना चरण उठाकर 'जय' शब्द का उच्चारण किया है। अतः यह महान् आश्चर्य है। भाषा सरल एवं सुबोध है। सर्वगुणसम्पन्न महाकवि बाणभट्ट ने अपनी कल्पना-शक्ति का पूर्ण परिचय दिया है।

(2) विशेषयुक्ताम् - विशेषाः **श्लेषाद्यलङ्काराः**। परिस्फुटाक्षरम् में **क्रियाविशेषण** है।

प्रायेण हि पक्षिणः पशवश्च भयाहारमैथुननिद्रा संज्ञामात्रवेदिनो भवन्ति। इदं तु महच्चित्रम्। इत्युक्तवति भूभुजि कुमारपालितः किंचित्स्मितवदनोऽवादीत्। देव किमत्र चित्रम्? एते ही शुकसारिकाप्रभृतयो विहङ्गविशेषा यथाश्रुतां वाचमुच्चारयन्तीत्यधिगतमेव देवेन। तत्राप्यन्यजन्मोपात्तसंस्कारानुबन्धेन पुरुषप्रयत्नेन वा संस्कारातिशय उपजायत इति नातिचित्रम्। अन्यदेतेषामपि पुरा पुरुषाणामिवातिपरिस्फुटाभिधाना वागासीत्। अग्निशापात्त्वस्फुटालापता शुकानामुपजाता, करिणां च जिह्वापरिवृत्तिः इति।

शब्दार्थ-प्रायेण= लगभग। **संज्ञामात्रवेदिनो भवन्ति**= संकेत मात्रों को जानने वाले होते हैं। **इदं तु महच्चित्रम्**= यह तो बड़ा आश्चर्य है। **इत्युक्तवति भूभुजि**= राजा के ऐसा कहने पर। **किंचित्स्मितवदनोऽवादीत्**= कुछ हँसते हुए मुख वाला बोला। **किमत्र चित्रम्=** इसमें आश्चर्य ही क्या है। **अन्य**= दूसरे। **जन्मोपात्त**= जन्म में ग्रहण किये हुए। **संस्कारबन्धेन=** संस्कार के सम्बन्ध के कारण। **पुरुषप्रयत्नेन**= पुरुषों के प्रयत्न के कारण। **संस्कारातिशयः**= अधिक संस्कार। **उपजायते**= उत्पन्न हो जाता है। **एतेषामपि=** इन पक्षियों की। **पुरा=** पहले । **करिणाम्=** हाथियों की। **जिह्वापरिवृत्तिः** उलट गई जीभ।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाण-रचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। इसमें राजा कुमारपालित मन्त्रि से शुक की प्रशंसा करते हुए शुक की शुद्ध संस्कारित वाणी के विषय में आश्चर्य प्रकट किया गया है। मन्त्री इसी का उत्तर देता है।

हिन्दी अनुवाद- प्रायः पशु और पक्षी केवल भय, आहार मैथुन (सम्भोग) निद्रा एवं संकेतों को जानने वाले ही होते हैं। यह तो महान् आश्चर्य है। राजा के ऐसा कहने पर कुमारपालित कुछ हँसकर राजा से बोला- देव। इसमें अचरज क्या है? आप जानते ही हैं। ये तोता-मैना आदि पक्षी सुनी-सुनायी बातें बोल देते हैं, अन्य जन्म में ग्रहण किये संस्कारों के अनुबंध अथवा पालन करने वाले पुरुषों के प्रयत्न से संस्कार और भी प्रबल हो जाता है, तो विशेष आश्चर्य नहीं है और पहले ये (शुक) भी मनुष्यों की भाँति अत्यन्त स्पष्ट अक्षरों में बोला करते थे, अग्नि के शाप से तोतों के बोल अस्पष्ट हो गये और हाथियों की जीभ उलट गयी।

विशेष- बाणभट्ट की कादम्बरी में यत्र-तत्र पौराणिक संदर्भ प्राप्त होता है जो इनकी बहुज्ञता का परिचय देता है।

8.3.1 शूद्रक सभा विसर्जन

एवमुच्चारयत्येव तस्मिन्नशिशिरकिरणमम्बरतलस्य मध्यमध्यारूढमावेदयन्नाडिकोच्छेदप्रहतपटुपटहनादानुसारी मध्याह्नशङ्खध्वनिरुदतिष्ठत् तमाकर्ण्य च समासन्नस्नानसमयो विसर्जितराजलोकः क्षितिपतिरास्थानमण्डपादुत्तस्थौ।

शब्दार्थ-इत्येवम्= इस प्रकार से। **उच्चवारयति**= कहने पर। **अशिशिरकिरणम्**= सूर्य। **अम्बरतलस्य=** आकाशमण्डल के। **मध्यम**=बीच में। **आरूढम्**= चढ़े हुए। **आवेदयन्=** कहते हुए। **नाडिकोच्छेद**= घड़ी की समाप्ति पर। **पटु**=बड़े। **पटह**=नगाड़े। **नाद=** शब्द। **उदतिष्ठत्**= उठी। **तमाकर्ण्य**=ध्वनि को सुनकर। **समासन**= समीप। **विसर्जित**=विदा किया। **राजलोकः**=सम्पूर्ण राजसमुदाय। **आस्थानमण्डपात्**= राज्य-सभामण्डप से।

प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। राजा शूद्रक की सभा के विसर्जन का वर्णन कवि ने चमत्कारपूर्ण शैली में किया है। उस समय की सभामण्डप की दशा का यथातथ्य चित्रण अत्यन्त ही प्रभावशाली है।

हिन्दी अनुवाद- उस (मन्त्री कुमारपालित) के इस (पूर्वोक्त) प्रकार से कहते ही 'सूर्य' का आकाशमण्डल के मध्य में आरूढ़ होना निवेदन करते हुए घड़ी की समाप्ति पर बजाये गये बड़े नगाड़े के शब्द

का अनुसरण करने वाली (मध्याह्न की सूचना देने वाली) शंख ध्वनि उत्पन्न हुई और उस (शंख-ध्वनि) को सुनकर राजा जिसका कि स्नान का समय समीप आ गया था- राजसमुदाय को विसर्जित करके सभामण्डल से उठ खड़ा हुआ।

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाण ने राजा शूद्रक के सभामण्डप का समासालंकृत शैली में अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया है।

(2) 'समासन्न स्नानसमयः यस्य सः' तथा 'उत्पन्नो बभूव' तथा बहुव्रीहि समास है।

अथ चलति महीपतावन्योन्यमतिरभससंचलनचालिताङ्गदपत्रभङ्गमकरकोटिपाटितांशुकपटानाम् आक्षेपदोलाय-मानकण्ठदाम्नाम्, अंसस्थलोल्लासितकुंडकुमपटवासधूलिपटलपिञ्जरीकृततिशाम्, आलोलमालतीपुष्पशेखरोत्पतदलिकदम्ब-नाम्, अर्घावलम्बिभिः कर्णोत्पलश्चुम्ब्यमानगण्डस्थलानाम्, गमनप्रणामलालसानामहमहमिकया वक्षःस्थल प्रेङ्खोलितहार-लतानाम् उत्तिष्ठतामासीत्संभ्रमो महीपतीनाम्।

शब्दार्थ- अथ= तदनन्तर। **महीपतौ**= राजा के। **अतिरभस**= अत्यन्त शीघ्रता से। **पाटित=** फटे हुए। **अनेकपटानाम्=** अनेक रेशमी वस्त्रों के। **आक्षेप**= धक्का-मुक्की। **कण्ठदाम्नाम्**= गले की मालाओं के। **अंसस्थ=** कंधे पर स्थित। **उल्लसित=** उड़ी हुई। **कुंकुम=** केसर। **पटवास**= सुगन्धित चूर्ण। **पटल=** समूह। **पिञ्जरीकृत=** पीला करते हुए। **आलोल**= चंचल। **शेखरोत्पत=** शेखरों पर उड़ते हुए। **कदम्बकानाम्=** झुण्डों वाले। **अर्थावलम्विभिः**= आधे लटकने वाले। **चुम्ब्यमानगण्डस्थलानाम्**= चुम्बित कपोल-स्थलों वाले। **अहमहमिकया=** मैं पहिले, मैं पहिले। **प्रेङ्खोलित=** हिलती हुई। **हारलतानाम्=** मुक्तमालाएँ। **उत्तिष्ठताम्=** उठ खड़े हुए। **सभ्रमः=** खलबली। **महीपतीनाम=** सामन्त राजाओं की।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। इसमें कवि ने राजा शूद्रक की सभा के विसर्जन का अत्यन्त प्रभावशाली वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- उसके बाद राजा (शूद्रक) के चलते ही, (अन्योनम् उतिष्ठतां' राजाओं के विशेषण है) परस्पर अत्यन्त वेग से चलने के कारण चञ्चल (स्थानभ्रष्ट हुए) अंगद (आभूषण) पत्रभंग से (तथा) मकरकोटि से फटे हुए रेशमी वस्त्रों वाले, धक्कामुक्की (आक्षेप) के कारण हिलती हुई कण्ठमालाओं वाले स्कन्ध प्रान्त से उठी हुई केसर एवं सुगन्धित द्रव्य (चूर्ण विशेष) की धूलि के समूह से दिशाओं को पीला करने वाले, चंचल मालती कुसुम (निर्मित) शेखरों पर उड़ते (मँडराते) हुए भ्रमरपुञ्ज वाले, आधे लटकते हुए कर्णोत्पलों से चुम्बित कपोलस्थल (गण्डस्थल, कनपटी) वाले, गमन (काल के) प्रणाम के लिए 'पहले मैं, पहले मैं' इस भावना से) इस लालसा वाले, वक्षःस्थल पर हिलती हुई हारलताओं वाले, उठने वाले राजाओं में खलबली-सी हो गयी।

विशेष (1)- इस अवतरण में महाकवि बाण ने ओज-गुण-सम्पन्न शैली के द्वारा राजा शूद्रक के प्रभावातिशय का सुन्दर चित्रण उपस्थित किया है तथा विभिन्न राजाओं की मनोदशाओं का भी अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रदर्शन कराया है। 'महीपतौ' में सप्तमी विभक्ति का एकवचन है।

(2) इस गद्यांश में अनुप्रास एवं उत्प्रेक्षा अलंकार तथा बहुव्रीहि समास है।

इतश्चेतश्च निःपतन्तीनां स्कन्धावसक्तचामराणां चामरग्राहिणीनां कमलमधुपानमत्तजरत्कलहंसनादजर्जरितेन पदे-पदे रणितमणीनां मणिनूपुराणां निनादेन, वारविलासिनीजनस्य संचरतो जघनस्थलास्फालनरसितरत्नमालिकानां मणिमेखलानां मनोहारिणा झङ्कारेण, नूपुररवाकृष्टानां च धवलितास्थानमण्डपसोपानफलकानां भवनदीर्घिकाकलहंसकानां कोलाहलेन, रसनारसितोत्सुकितानां च तारतरविराविणामुल्लिख्यमानकांस्यक्रेङ्कारदीर्घेण गृहसारसानां कूजितेन, सरभस-प्रचलितसामन्तशतचरणतलाभिहतस्य चास्थानमण्डपस्य निर्घोषगम्भीरेण कम्पयतेव वसुमतीं ध्वनिना।

शब्दार्थ- इतश्चेतश्च= इधर-उधर। **निष्पतन्तीनां**= उड़ती हुई। **स्कन्धावसक्त=** कन्धों पर रखी हुई। **कमलमधुपान**= पद्मरस के। **जर्जरितेन**= बजती हुई, पूर्ण होती हुई। **वारविलासिनी=** वेश्याओं के। **संचरतो=** संचरण करती हुई। **आस्फालन=** टकराना। **रत्नमालिकानां**= मन को आकर्षित करना। **मणिमेखलानां=** करधनियों की।। **नूपुररवाकृष्टानां च=** घुँघुरुओं की ध्वनि से आकृष्ट होना। **धवलित**= श्वेत वर्ण। **आस्थानमण्डप=** सभा-मण्डप। **सोपान**= सीढ़ी। **फलकानां**= स्तर। **भवनदीर्घिका**= भवन की वापियों। **रसनारसितोत्सुकितानाम्**= करधनी की ध्वनि से। **तारतरविराविणाम्=** ऊँचे स्वर में बोलते हुए। **उल्लिख्यमान्=** खुदे हुए। **कूजितेन**= शब्द से। **सरभस**= शीघ्रता। **अभिहतस्य=** ताडित। **वसुमतीं=**पृथ्वी को। **कम्पयतेव=** मानो कँपा देने वाली। **ध्वनिना=** आवाज से।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। इसमें राजा शूद्रक की सभा के विसर्जन का चित्रण कवि ने चमत्कारपूर्ण शैली में किया है, जो अत्यन्त ही प्रभावशाली है।

हिन्दी अनुवाद- इधर-उधर से कन्धों पर चंवर रखे निकलती चामरधारिणी स्त्रियों की कमल-मधु का पान करने से मदमाते बूढ़े कलहंसों के शब्द के समान पृथक् पृथक् सुन पड़तीं, मणिजड़ित नूपुरों की बजती मणियों के पग-पग पर होते निनाद से, चलती हुई वारविलासिनियों की जघनस्थली से टकराने के कारण झंकृत होती रत्नजटित मेखलाओं की मनोहर झनकार से, नूपुरों की ध्वनि से आकृष्ट, अपनी धवलिमा के सभा-मण्डप की सीढ़ियों को धवल कर देने वाले भवन-वापियों के कलहंसों के कोलाहल से, किंकिणी की ध्वनि से उत्कंठित ऊँचे स्वर में बोलते गृह (घर) के सारसों के घिसे जाते कांसे के क्रेंकार शब्द के समान दीर्घ कूजन से वेगपूर्वक चलते सैकड़ों सामन्तों के चरण-तलों से ताड़ित सभामण्डप के वज्र-गर्जन के समान मानो वसुन्धरा को कम्पित (कंपा देने वाली) ध्वनि से।

विशेष (1)- महाकवि बाणभट्ट का संस्कृत गद्य-साहित्य में उत्कृष्ट स्थान है। उनका काव्य ओज रस से सम्पन्न तथा पाञ्चाली रीति में लिखा हुआ है। इनकी भाषा-शैली अलंकृत एवं चमत्कारपूर्ण वर्णनों से ओत-प्रोत है। इस गद्यांश में राजा शूद्रक की प्रभावपूर्ण प्रभुता का वर्णन किया गया है।

(2) निर्घोष गम्भीरेण में **लुप्तोपमा** एवं 'कम्पयता इव' में क्रिया की सम्भावना होने से **क्रियोत्प्रेक्षा अलंकार** है। जघनस्थला रत्नमालिकानाम् में **बहुव्रीहि समास** है।

प्रतीहारिणां च पुरः ससंभ्रमसमुत्सारितजनानां दण्डिनां सभारब्धहेलमुच्चैरुच्चरतामालोकयन्त्विति तारतरदीर्घेण भवनप्रासादकुञ्जेषुच्चरितप्रतिच्छन्दतया दीर्घतामुपगतेनालोकशब्देन, राज्ञां च ससंभ्रमावर्जितमौलिलोलचूडामणीनां प्रणम-ताममलमणिशलाकादन्तुराभिः किरीटकोटिभिरुल्लिख्यमानस्य मणिकुट्टिमस्य निःस्वनेन, प्रणामपर्यस्तानामतिकठिन-मणिकुट्टिमनिपतितरणायितानां च मणिकर्णपूराणां निनादेन।

शब्दार्थ-ससम्भ्रमम्= वेगपूर्वक। **उत्सारितजनानाम्=** मनुष्यों के हटाने के कारण। **दण्डिनाम्=** दण्डधारी। **हेलम्=** अवहेलना। **उच्चारयताम्=** ऊँचे स्वर में बोलते हुए। **तारतरदीर्घेण=** और अत्यधिक उच्च। **दीर्घतरताम्=** अधिकता। **ससंभ्रमावर्जित**= भय से संक्षुब्ध होते हुए। **मौलिलोल=** मौलिशिर पर। **किरीटकोटिभिः=** मुकुटों के किनारे से। **उल्लिराज्यमानस्य**= घिसे जाने वाले। **निःस्वनेन**= शब्द से। **प्रणामपर्यस्तानाम्** = नमस्कार करने से बिखर गये। **अतिकठिन**= अत्यन्त दृढ़। **मणिकुट्टिमनिपतितरणायितानां=** मणियों के फर्श पर गिरने के कारण झनझनाने वाले। **मणिकर्णपूराणां=** मणियों के कमलरूपी कर्णफूल। **निनादेन=** शब्द से।

प्रसंग - प्रस्तुत गद्यांश बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ महाकवि ने राजा शूद्रक की सभा के विसर्जन का वर्णन चमत्कारपूर्ण शैली में किया है। उस समय की सभा-मण्डप की दशा का यथातथ्य चित्रण अत्यन्त ही मनोमुग्धकारी है।

हिन्दी अनुवाद- सम्मुख पड़ गये मनुष्यों को वेगपूर्वक हटाने के कारण अवहेलना करते दण्डधारी, प्रतिहारी और द्वारपालों के उच्चतम स्वर में कहे जाते 'देखो देखो' तथा भवन के देव-गृहों के कुंजों में उत्पन्न प्रतिध्वनि के कारण अति विस्तार को प्राप्त 'जय' शब्द से, सहसा प्रणाम करते राजाओं के मस्तकों की चंचल हुई चूडामणियों और स्वच्छ मणि-शलाकाओं से विषम हुई मुकुटों की कोरों से घिसी जाती मणि-वेदी की ध्वनि से प्रणाम करते समय गिरे और अत्यन्त कठोर मणिवेदी पर गिर जाने के कारण झनझनाते मणिमय कर्णपूरों के निनाद (शब्द) से।

विशेष (1)इस अवतरण में राजा शूद्रक की प्रभावपूर्ण प्रभुता का वर्णन है। राजा के सभा विसर्जन करने के पश्चात् उसके सभा-मण्डप की विक्षुब्धता का वर्णन बड़ा ही सजीव एवं मार्मिक है। महाकवि बाण का संस्कृत गद्य-साहित्य में उत्कृष्ट स्थान है। उनका काव्य ओज रस सम्पन्न पाञ्चाली रीति में लिखा हुआ है। इनकी भाषा-शैली अलंकृत एवं चमत्कारपूर्ण वर्णनों से ओत-प्रोत है।

(2) इस गद्यांश में 'पुर ससंभ्रमसमुत्सारितजनानां' में **बहुव्रीहि समास तथा अनुप्रासअलंकार** है।

मङ्गलपाठकानां च पुरोयायिनां जयजीवेति मधुरवचनानुयातेन पठतां दिगन्तव्यापिना कलकलेन, प्रचलितजन-चरणशतसंक्षोभाद्विहाय कुसुमप्रकरमुत्पततां च मधुलिहाम् हुँकृतेन, संक्षोभादतित्वरितपदप्रवृत्तैरवनिपतिभिः केयूरकोटि-ताडितानां क्वणितमुखररत्नदाम्नां च मणिस्तम्भानां रणितेन सर्वतः क्षुभितमिव तदास्थानभवनमभवत्।

शब्दार्थ- जयजीवेति= जय हो। **पुरोयायिनाम्=** आगे आने वाले। **मधुरवचनानुयातेन=** मधुर वचनों से अनुगमन किया। **दिगन्तव्यापिना=** दिशाओं को व्याप्त कर देना। **कलकलेन=** आवाज से। **प्रचलितजनचरणशतसंक्षोभाद्विहाय=** आने-जाने वाले अनगिनत लोगों के पैरों से कुचले जाने के डर से। **कुसुम**= फूलों का। **प्रकरम्=** ढेर। **उत्पतताम्=** उड़ने वाले। **मधुलिहाम्=** भ्रमरों के। **अतित्वरितपदप्रवृत्तः=** अत्यधिक जल्दी-जल्दी चरण रखने वाले। **क्वणित्**= शब्द करते हुए। **मुखर**= ध्वनि। **रत्नदाम्नाम्=** रत्नमालाओं वाली। **मणिस्तम्भानाम्=** मणि के खम्भे। **सर्वतः**= चारों ओर। **क्षुभितमिव=** अशान्त-सा। **आस्थानभवन**= सभा भवन। **अभवत्**= हो गया।

प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। राजा शूद्रक की सभा के विसर्जन का कवि ने अद्वितीय सौन्दर्यमय चित्रण किया है, जो अत्यन्त ही प्रभावशाली है।

हिन्दी अनुवाद-आगे चलते, 'जय-हो, चिरजीवी-हो' का उच्चारण करते मंगल-पाठ करने वालों के मधुर वचन मिश्रित शब्द सब ओर से आते हुए मनुष्यों के सैकड़ों चरणों से दब जाने के डर (भय) से संक्षुब्ध हो फूलों के समूह को छोड़कर उड़ जाते मधुपों की हुंकारों से और संक्षुब्ध हुए अत्यन्त वेग से कदम बढ़ाने में प्रवृत्त राजाओं के मुकुटों की कोरों से ताड़ित होने के कारण शब्द करती हुई रत्न शृंखलाओं से युक्त मणि-स्तम्भों के झनझनाने से वह सभी-मण्डप सब ओर से जैसे क्षुब्ध हो उठा।

विशेष – प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाण से राजाओं की समृद्धि तथा उनकी विलासिता के सौन्दर्य का वर्णन किया है। गद्य में स्वाभाविक रमणीयता एवं शब्दों में माधुर्यहै। इस गद्यांश अनुप्रास अलंकार है।

अथ विसर्जितराजलोको 'विश्रम्यताम्' इति स्वयमेवाधिधाय तां चाण्डालकयकाम्, वैशम्पायनः 'प्रवेश्यताम-भयन्तरम्' इत ताम्बूलकरकवाहिनी मादिश्य, कतिपयाप्तराजपुत्रपरिवृतोनरपतिरभ्यन्तरं प्राविशत्। अपनीताभरणश्च दिवसकर इव विगलितकिरणजाल: चन्द्रतारकासमूहशन्य इव गमनाभोगसमुपाहृतसमुचितव्यायामोपकरणां व्यायाम-भूमिमयासीत्।

शब्दार्थ- अथ= तदन्तर। विसर्जित= भंग करते हुए। **विश्रम्यताम=** विश्राम करो। **राजलोक**= राजसमूह। **अभिधायताम्=** कहते हुए। **प्रवेश्यताम्=** प्रवेश कराइए। **वाहिनीम=** ले जाने वाली को। **कतिपय**= कुछ। **आप्त=** विश्वासपात्र। **परिवृतो=** घिरा हुआ। **अपनीत=** हटाते हुए। **आभरण=** आभूषण। **दिवसकर इव=**

सूर्य के समान। विगलित= विलुप्त। **गमनाभोग=** आकाशमण्डल। **समुपाहृत=** लाये गये हैं। **व्यायामभूमिम्=** व्यायाम का अखाड़ा। **अयासीत्=** पहुंच गया।

विशेष (1)प्रस्तुत अवतरण की भाषा-शैली सरल एवं सौम्य है। यहाँ राजा शूद्रक ने सभा-विसर्जन के बाद वैशम्पायन को अन्तःपुर भेजने का आदेश दिया है।

(2) इस गद्यांश में उपमा अलंकार तथा बहुव्रीहि समास है।

8.3.2 शूद्रक स्नान वर्णन

स तस्यां च समानवयोभिः सह राजपुत्रैः कृतमधुरव्यायामः, श्रमवशादुन्मिषन्तीभिः कपोलयोरीषदबदलित-सिन्दुवारकुसुममञ्जरीविभ्रमाभिरुरसिनिर्दयश्रमच्छिन्नहारविगलितमुक्ताफलप्रकरानुकारिणीभिर्ललाटपट्टकेऽष्टमीचन्द्रशकलतलोल्लसदमृतबिन्दुविडम्बिनीभिः स्वेदजलकणिकासंततिभिरलंक्रियमाणमूर्तिः इतस्ततः स्नानोपकरणसंपादनसत्वरेण पुरः-प्रधावता परिजनेन तत्कालं विरजलनेऽपि राजकुले समुत्सारणाधिकारमुचितम् समाजरद्भिर्दण्डिभिरुपदिश्यमानमार्गः, विततसितवितानाम् अनेकचारणगणनिबध्यमानमण्डलाम्, गन्धोदकपूर्णकनकमयजलद्रोणी सनाथमध्याम्, उपस्थापित-स्फाटिकस्नानपीठाम्, एकान्तनिहितैः अतिसुरभिगन्धसलिलपूर्णैः परिमलावकृष्टमधुरकुलान्धकारितमुखैः आतपभयान्नी- कर्पटावगुण्ठितमुखैरिव स्नानकलशैरुपशोभितां स्नानभूमिगच्छत्।

शब्दार्थ=तस्याम्= उसमें। **वयोभि=** अवस्था वाले। **सह=** साथ। **मधुर=** सरल। **श्रमवशात्=** व्यायाम के परिश्रम के कारण। **उन्मषिन्तीभि=** प्रकट होती हुई। **अवदलित=** मर्दन की हुई। **भ्रम=** उत्पन्न करती हुई। **उरसि=** वक्ष-स्थल। **निर्दय=** कठोर। **श्रमच्छिन्न=** श्रम से टूटे हुए। **प्रकारानुकारिणीभिः=** समूह का अनुकरण करने वाली। **ललाटपट्टके=** मस्तक-पटल पर। **शकल=** टुकड़ा। **विडम्बिनीभिः=** विडम्बना करती हुई। **स्वेदजल=** पसीने की बूँदें। **अलंक्रियमाणमूर्ति=** विभूषित किया जाने वाला शरीर। **इतस्ततः=** इधर-उधर। **स्नानानोपकरण=** स्नानागारों के साधन। **सत्वरेण=** शीघ्र। पुरः सामने। **प्रधावता=** दौड़ते हुए। **परिजनेन=** सेवकों के। **तत्कालम्=** उसी समय। **समुत्सारणाधिकारम्=** हटाने का आदेश। **उचितम्=** अच्छी तरह। **दण्डिभिः=** दण्डधारी सेवक। **विततसितवितानाम्=** खड़े हुए सफेद तम्बू। **अनेकचारणागणनिबध्यमानमण्डलाम्=** अनगिनत बन्दीजनों के समूह द्वारा बनाये हुए घरे वाली। **कनकमय=** स्वर्णरचित। सनाथमध्याम् स्नानगृह के बीच। **उपस्थापितस्फाटिक- स्नानपीठाम्=** स्थित सफेद स्फटिकमणि की बनी स्नान-चौकी। **एकान्तनिहितैः=** एकान्त में रखे हुए। **अतिसुरभिगन्धसलिलपूर्णः=** अत्यधिक सुगन्धित जल से सम्पूर्ण। **आतपभयात्=** तप्त (गर्म) हो जाने के भय से। **नीलकर्पटावगुण्ठितमुखैरिव=** मानो नीले वस्त्रों से ढके हुए मुख वाले। **उपशोभिताम्=** सुशोभित होने वाली। **स्नानभूमिम्=** स्नानगृह। **अगच्छ=** गया।

प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ कवि ने अत्यन्त प्रभावपूर्ण एवं अलंकृत भाषा-शैली में राजा के स्नान का अत्यधिक सजीव चित्रण किया है।

हिन्दीअनुवाद- वहाँ पर समान आयु वाले राज-पुत्रों के साथ हलका (या रुचिकर) व्यायाम करके, श्रम के कारण प्रकट होती हुई, कपोलों पर कुछ-कुछ खिले हुए (या मर्दन किये हुए) सिन्धुवार पुष्पों की मंजरी की शोभा या (भ्रान्ति) वाली, वक्ष स्थल पर कठोर श्रम से टूटे हुए हार से गिरे हुए मोतियों के समूह का अनुकरण करने वाली मस्तक पर अष्टमी के चन्द्रमा की कला के तल पर प्रकट होते हुए अमृत विन्दुओं का अनुकरण या (तिरस्कार) करने वाली पसीने के जल-बिन्दुओं की परम्परा से अलंकृत मूर्ति (शरीर) वाला होता हुआ, इधर-उधर स्नान के उपकरणों का सम्पादन करने में शीघ्रता करने वाले सामने दौड़ते हुए सेवकों द्वारा (और) उस समय राजकुल में थोड़े मनुष्यों के रह जाने पर भी अभ्यासानुसार मनुष्यों को हटाने के कार्य का आचरण करते हुए दण्डधारियों द्वारा मार्ग-प्रदर्शन किया जाता वह (राजा) स्नानभूमि को गया जो (स्नानभूमि) फैले हुए सफेद वितानों वाली थी, जिसमें अनेक चारणगण (बन्दीजन समूह) मण्डल बनाये बैठे थे, जिसका मध्य भाग सुगन्धित जल से पूर्ण सोने से बनी (एक) जल-कुण्डिका से युक्त था, जिसमें स्फटिकमणि से निर्मित स्नान की चौकी रखी हुई थी, (और) जो एक कोने में रखे हुए अत्यन्त सुगन्धित गंध वाले जल से पूर्ण, सुगन्ध से आकृष्ट भौरों केसमूह से काले मुख वाले, (अतः) मानो गर्मी के भय से नीले कपड़ों से ढके हुए मुख वाले स्नान-कलशों से सुशोभित थी।

विशेष (1)- प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाणभट्ट ने राजा शूद्रक के स्नान का वर्णन अत्यन्त ही अलंकृत एवं चमत्कारपूर्ण शैली में किया है। इस सम्पूर्ण अंश में कवि की कल्पना- शक्ति का अतिसुन्दर परिचय है।

(2) इस गद्यांश में उपमा, लुप्तोपमा, श्लेष, उत्प्रेक्षादि अलंकार हैं तथा तत्पुरुष, बहुव्रीहि समास का भी प्रयोग हुआ है।

अवतीर्णस्य जलद्रोणीम् वारविलासिनीकरमृदितसुगन्धामलकलिप्तशिरसो राज्ञः परित समुपतस्थुरंशु-कनिविडनिबद्धस्तनपरिकराः दूरसमुत्सारितवलयबाहुलताः समुत्क्षिप्तकर्णाभरणाः कर्णोत्सङ्गोत्सा रितालकाः गृहीतजल-कलशाः स्नानार्थमभिषेकदेवता इव वारयोषितः। ताभिश्च समुन्नतकुचकुम्भमण्डलाभिर्वारिमध्यप्रविष्टः कारिणीभिरिव वन-करी परिवृतस्तत्क्षणं रराज राजा। द्रोणीसलिलादुत्त्याय च स्नानपीठममलस्फटिकधवलं वरुण इव राजहंसमारुरोह।

शब्दार्थ- अवतीर्णस्य= उतरे हुए का। **जलद्रोणीम्**= जलकुण्ड में। **वारविलासिनी. करमृदितसुगन्यामलकलिप्त**= वेश्याओं के हाथों से मले गये सुगन्धित आँवले से लिप्त। **कर्णोत्सङ्गोत्सारितालकाः=** कानों के पास से केशों की लटों को हटाये हुए। **गृहीतजलकलशाः**= जल के कलश लिए हुए। **ताभिश्च**= और उनके द्वारा। **वारिमध्यप्रविष्टः=** जल के भीतर प्रविष्ट हुआ। **वनकरी=** जंगली हाथी के समान। **परिवृत**= घिरा हुआ। **रराज=** सुशोभित हुआ। **द्रोणी=** कुण्ड। **उत्थाय**= उठकर। **स्नानपीठममलमस्फटिकधवलं=** धवल स्नान करने की चौकी पर। वरुण इव राजहंसमारुरोह वरुण के समान राजहंस पर आरूढ हो गया।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश बाणभट्ट द्वारा-प्रणीत 'कादम्बरी' से उद्धृत है। कवि ने अत्यन्त प्रभावपूर्ण एवं अलंकृत भाषा-शैली में राजा के स्नान का अत्यन्त सजीव चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- जलकुंड में उतर जाने पर वारविलासिनियों के हाथों से जिसके सिर पर पिसे सुगन्धित आमलों का लेप कर दिया है, ऐसे राजा के चारों ओर अपने आँचल से कुचों को दृढ़तापूर्वक कसे, भुजलताओं से कंकणों को दूर उतारे, कर्णाभूषणों को ऊपर की ओर किये, कानों के पास हटाकर बालों को ऊपर करके बाँधे हाथों में जल के लिए हुए। उन्नत स्तनरूपी कुम्भमण्डल वाली उन (वेश्याओं) से घिरा हुआ और जल को भीतर प्रविष्ट हुआ राजा उस क्षण हथिनियों से घिरे हुए जंगली हाथी के समान सुशोभित हुआ और (वह) कुण्डिका के जल में से उठकर स्नान करने की निर्मल स्फटिक (मणि) के समान धवल चौकी पर उसी प्रकार चढ़ गया, जैसे वरुण राजहंस पर आरूढ़ हो गया हो।

विशेष (1)- राजा के स्नान का कामसूत्र के अनुसार वर्णन है।

(2)वेश्याओं का वर्णन आकर्षक एवं चित्रोपम है।

ततस्ताः काश्चिन्मरकतकलशप्रभाश्यामायमाना नलिन्य इव मूर्तिमत्यः पत्रपुटैः काश्चिद्रजतकलशहस्ता रजन्य इव पूर्णचन्द्रमण्डलविनिर्गतेन ज्योत्स्नाप्रवाहेण, काश्चित्कलशोत्क्षेपश्रमस्वेदार्द्रशरीरा जलदेवता इव स्फाटिकैः कलशैस्तीर्थजलेन काश्चिन्मलयसरित इव चन्दनरसमिश्रेण सलिलेन, काश्चिदुत्क्षिप्तकलशपार्श्वविन्यस्तहस्तपल्लवाः प्रकीर्यमाणनखमयूख- जालकाः प्रत्यङ्गलिविवरविनिर्गतजलधाराः सलिलयन्त्रदेवता इव, काश्चिज्जाड्यमपनेतुमाक्षिप्तबालातपेनेव दिवसश्रिय इव कनककलशहस्ताः कुङ्कुमजलेन वाराङ्गना यथायथं राजानमभिषिषिचुः।

शब्दार्थ-ततस्ताः= इसके बाद वे। **काश्चित्=** कोई। **कलश प्रभा=** कलश की कान्ति। **श्यामांयमाना=** कालिमा से युक्त। **नलिन्य इव**= कमलिनी के समान। **पत्रपुटै=** पत्तों के पुटों से। **काश्चिद्रजतकलशहस्ता**= कुछ चाँदी के कलश हाथ में धारण करने वाली। **रजन्य इव=** रात्रियों के समान। **पूर्णचन्द्रमण्डलविनिर्गतेन**= पूर्ण चन्द्रमण्डल से निकले हुए के द्वारा। **ज्योत्स्नाप्रवाहेण**= चाँदनी के प्रवाह से। **कलशोत्क्षेपेण**= कलश के उठाने से। **स्वेदार्द्रशरीरा=** पसीनों की बूँदों से भीगे शरीर वाली। जलदेवता इव जलदेवताओं के समान। **स्फाटिकैः=** स्फटिक मणियों। **कलशैस्तीर्थजलेन** =कलशों के द्वारा तीर्थों के जल से। **मलयसरित इव=** चन्दन की नदी के समान। **सलिलयन्त्रदेवता इव**= जल के फव्वारे की देवी के समान। **आक्षिप्तम्=** गिराये हुए को। **कनक कलशहस्ताः**= सोने के कलश हाथ में लिए हुए। **वारङ्गनाय=** वेश्याएँ। **राजानमभिषिषिचुः**= राजा को स्नान कराया।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश बाणभट्ट द्वारा प्रणीत 'कादम्बरी' से उद्धृत है। कवि ने अत्यन्त प्रवाहपूर्ण एवं अलंकृत भाषा-शैली में राजा के स्नान का अत्यन्त सजीव चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- इसके पश्चात् उनमें से अनेक मरकतमणि के बने कलशों से राजा को स्नान कराने लगीं। उस समय उन घड़ों की नीली-नीली झाईं से साँवली-सी दिखाई पड़ने वाली वे वनितायें उसे नहलाती

हुई ऐसी लग रही थीं, मानो नीली-नीली कमलिनियाँ अपने पत्तों के पुटों से राजा को नहला रही हों। कोई-कोई चाँदी के घड़े से जल को ढालती हुए राजा को नहलाती हुई ऐसी प्रतीत हो रही थीं, मानो पूर्णिमा की रातें चन्द्रमण्डल से बहती हुई चाँदनी की धाराओं से स्नान करा रही हों। कोई-कोई घड़े को उठाने के परिश्रम से पसीने में लथ-पथ होकर बिल्लौरी कलशों से उसे स्नान कराती हुई ऐसी प्रतीत होती थीं मानो तीर्थ जल से भरे हुए कलशों द्वारा जल-देवियाँ स्नान करा रही हों। कोई-कोई चन्दन के रस से सुगन्धित जल-धाराओं से उसे स्नान कराती हुईं ऐसी लगती थीं, मानो मलयाचल से निकली हुई तथा चन्दन के रस से भरी हुई नदियाँ अपनी धाराओं से स्नान करा रही हों। कोई-कोई कलशों के दोनों ओर पल्लवों जैसी हथेलियाँ लगाये उन्हें सिर पर रखे हुए खड़ी थीं। उनके नखों की किरणें चारों ओर फैल रही थीं और उनकी उँगलियों के बीच से जल की धाराएँ बह रही थीं, जिससे वे ऐसी प्रतीत हो रही थीं, मानो सिर पर घड़ा उठाये फौवारों में बनी पुतलियाँ हों। कोई शीतलता दूर करने के लिए सोने के कलशों से कुंकुम मिला हुआ जल छिड़कती हुई ऐसी प्रतीत हो रही थीं, मानो दिन की शोभा प्रातःकालीन मधुर धूप में बिखर रही हो। इस प्रकार क्रम-क्रम से उन वार-वनिताओं ने राजा को स्नान कराया।

विशेष- श्यामायमानाम् श्याम + क्यङ। शानच्। स्फाटिकै- स्फटिक + अण् तृतीया बहुवचन। अभिषिषिचुः-अभि + सिञ्च + लिट् प्रथम पुरूष, एकवचन, उत्प्रेक्षा एवं अनुप्रास अलंकार। भाषा शैली अत्यन्त ही संजीव, प्रभावोत्पादक तथा सर्वत्र प्रवाह से पूर्ण है।

अनन्तरमुदपादि च स्फोटयन्निव श्रुतिपथमनेकप्रहतपटु पटहझल्लरीमृदङ्गवेणुवीणागीतनिनादानुगम्यमानो वन्दि-वृन्दकोलाहलाकलो भुवनविवरव्यापी स्नानशङ्खानामापूर्यमाणानामतिमुखरो ध्वनिः।

शब्दार्थ -अनन्तरम्= उसके बाद। **उदपादि=** उत्पन्न हुआ। **स्फोटयन्निव=** फोड़ती हुई। **श्रुतिपथम्=** कर्णों की झिल्ली। **प्रहत=** बजाये गये। **पटु=** बड़े। **पटह=** नगाड़े। **आकुलः=** व्यय। **विवरव्यापी=** अन्तराल में व्याप्त। **स्नानशङ्खानाम्=** नहाने के बाद सूचक शंखों की। **आपूर्यमाणानाम्=** परिपूर्ण करने वाली। **अतिमुखरो=** अत्यन्त तीव्र। **ध्वनिः=** आवाज।

प्रसंग- यह गद्यांश बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। कवि ने यहाँ अत्यन्त प्रभावपूर्ण एवं अलंकृत भाषा-शैली में राजा के स्नान का अत्यन्त सजीव चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- तदनन्तर बजाये गये अनेक श्रेष्ठ दुन्दुभि, झाँझर, मृदंग, वंशी, वीणा आदि बाजों और गीतों के निनादों से मिश्रित, स्तुति करने वालों के कोलाहल से भरी भुवनों के अन्तराल में व्याप्त होती स्नान-शंखों की जैसे कानों को फोड़ती हुई ध्वनि होने लगी।

विशेष (1)-भाव यह है कि इस गद्यांश में महाकवि बाण ने अपनी चमत्कारपूर्ण भाषा-शैली का प्रयोग करके राजा के स्नान का बड़ा ही सौन्दर्यपूर्ण वर्णन किया है।

(2) इसमें **अतिशयोक्ति, उत्प्रेक्षा तथा संसृष्टि अलंकार** है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. शुक का क्या नाम था?
2. किस छन्द में शुक ने राजा की स्तुति की?
3. राज शूद्रक का प्रधान अमात्य कौन था?
4. राजा शूद्रक को किसने स्नान करवाया?
5. शुक ने कौन सा पैर उठाकर राजा का अभिवादन किया?
6. शुक ने राजा की स्तुति में कौन सा शब्द कहा?

8.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में सर्वगुण सम्पन्न शुक का वर्णन वर्णित है। इसमें राजा शूद्रक के सभामण्डप का समासालंकृत शैली में अत्यन्त सुन्दर वर्णन तथा राजा के स्नान का वर्णन वर्णित है।

8.5 कठिन शब्दावली

1.अवनिपति – राजा **2.क्षितिपति –** राजा**3.जघनस्थल –** नितंब **4.वसुमती –** पृथ्वी,**5.कोटि –** किनारा

8.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. वैशम्पायन 2. आर्या छन्द 3. कुमारपालित 4. वैश्याओं ने 5. दायाँ पैर 6. जय

8.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

8.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. कथामुख के आधार पर शुक का वर्णन कीजिए।
2. राजा शूद्रक की सभा मण्डप का वर्णन करो।
3. राजा शूद्रक की दिनचर्या को वर्णित करें।

इकाई-9

शूद्रक नित्य-कृत्य वर्णन

संरचना

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 शूद्रक नित्य-कृत्य वर्णन

9.3.1 शूद्रक सभा मण्डप गमन

9.3.2 शुकागमन

- स्वयं आकलन प्रश्न

9.4 सारांश

9.5 कठिन शब्दावली

9.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

9.7 सहायक ग्रन्थ

9.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में शूद्रक के नित्य-कृत्य कर्म, सभामण्डप में जाने का वर्णन तथा शुक के आगमन इत्यादि का वर्णन किया गया है।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझ सकेंगे -

- राजा के नित्य कर्मों अर्थात् पितरों को जल देना, सूर्य प्रणाम, मन्दिर जाना, भोजन करना, विश्राम करना आदि के विषय में जानने में सक्षम होंगे।
- राजा के सभामण्डप गमन के विषय में जानेंगे।

9.3शूद्रक नित्य कृत्य वर्णन

एवं च क्रमेण निर्वर्तिताभिषैको विषधरनिर्मोक परिलघुनी धवले परिधायधौतवाससी शरदम्बरैकदेश इव जलक्षालननिर्मलतनुः, अतिधवलजलधरच्छेदशुचिना दुकूलपट्टपल्लवेन तुहिनगिरिरिव

गगनसरित्स्रोतसा कृतशिरोवेष्टनः, संपादितपितृजलक्रियो मन्त्रपूततोयाञ्जलिना दिवसकरमभिप्रणम्य देवगृहमगमत्।

शब्दार्थ-एवं च= और इस प्रकार। **क्रमेण=** क्रमानुसार। **निर्वर्तिताभिषेकः=** स्नान समाप्त करते हुए। **विषधरनिर्मोकपरि=** सर्प की केंचुली की भाँति। **लघुनी=** हल्के।' **परिधाय=** धारण करके। **धौतवाससी=** धुले हुए वस्त्र। **शरदम्बरैकदेश इव=** शरद् ऋतु के आकाश के समान। **जलक्षालननिर्मलतनुः=** पानी से धुला हुआ स्वच्छ शरीर। **अतिधवल=** अधिक उजला। **शुचिना=** पवित्र। **दुकूलपट्टपल्लवेन=** रेशमी वस्त्र के पल्ले से। **तुहिनगिरिरिव=** हिमालय के समान। **गगनसरित्स्रोतसा=** आकाश गंगा की धारा से। **शिरोवेष्टनः=** पगड़ी से। **पितृजलक्रियो=** तर्पणादि। **मन्त्रपूततोयाञ्जलिना=** मन्त्रों द्वारा पवित्र हुए जल की अञ्जलि से। **अभिप्रणम्य=** प्रणाम करके। **देवगृहम्=**मन्दिर।

प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ कवि ने स्नान करने के पश्चात् राजा शूद्रक के अनेक प्रकार के दैनिक क्रिया-कलापों का चित्रण अलंकारमयी भाषा-शैली में किया है।

हिन्दी अनुवाद- इस प्रकार क्रम से स्नान समाप्त कर, सर्प की काँचली के समान हलके एवं धुले हुए श्वेत (दो) कपड़े (उत्तरीय एवं अधोवस्त्र) पहनकर (धारण कर) शरद् ऋतु के आकाश के एक देश (भाग) के समान जल से धुलने के कारण स्वच्छ शरीर वाली, अत्यन्त धवल मेघखण्ड के समान स्वच्छ रेशमी वस्त्र के पल्ले से, आकाशगंगा से हिमालय के समान, शिरोवेष्टन (पगड़ी) किये हुए (हिमालय के शिखर पर जैसे आकाश गंगा शिरोवेष्टन हो, उसी प्रकार स्वच्छ वस्त्र से शिरोवेष्टन किया हुआ), सम्पन्न पितरों के जल की क्रिया (तर्पणादि) वाला, (तर्पणादि समाप्त करके) मन्त्रों से पवित्र जलाञ्जलि से सूर्य को प्रणाम कर (वह) राजा देवालय (मन्दिर) में गया।

विशेष (1)- प्रस्तुत गद्य में महाकवि बाण ने अलंकृत भाषा-शैली द्वारा अद्वितीय सौन्दर्य-वर्णन किया है।

(2) **अतिधवल शिरोवेष्टन** राजा ने अत्यन्त स्वच्छ श्वेत वस्त्र से अपने सिर को बाँध रखा था। इससे वह ऐसा प्रतीत होता था मानो हिमालय हो, जो आकाशगंगा के प्रवाह को अपनी चोटियों पर लपेटे हो। यहाँ **उपमा अलंकार** का सौन्दर्य दर्शनीय है। **पूर्णोपमा** तथा **लुप्तोपमा अलंकार** भी है।

उपरचितपशुपतिपूजश्च निष्क्रम्य देवगृहान्निवर्तिताग्निकार्यो विलेपनभूमौ झङ्कारिभिरलिकदम्बकैरनुबंध्यमानपरिमलेन मृगमदकर्पूरकुङ्कमवाससुरभिणा चन्दनेनानुलिप्तसर्वाङ्गो विरचितामोदिमालतीकुसुमशेखरः कृतवस्त्रपरिवर्तेरत्नकर्णपूरमात्राभरणः समुचितभोजनैः सह भूपतिभिराहारमभिमतरसास्वादजातप्रीतिरवनिपो निर्वर्तयामास।

शब्दार्थ-उपरचित= पूजा करके। **निष्क्रम्य=** निकलकर। **देवगृहात्=** देव-मन्दिर से। **निर्वर्तिताग्निकार्यो=** हवनादि से निवृत होकर। **विलेपनभूमौ=** प्रसाधन कक्ष। **झङ्कारिभिरलिकदम्वकैरनुबंध्यमान=** झंकार करते हुए भ्रमरों के समूह से युक्त। **मृगमद=** कस्तूरी।

कुङ्कुमवाससुरभिणा= केशर की सुगन्ध से महका हुआ। **चन्दनेनानुलिप्त=** चन्दन से लेप किये गये। **कृतवस्त्रपरिवर्तः=** वस्त्र बदलकर। **रत्नकर्णपूरमात्राभरणः=** रत्नों से जटित कर्णफूल पहने हुए। **समुचितभोजनैः=** उचित भोजन वाले। **भूपतिभिः सह**= सामन्त राजाओं के साथ। **रसास्वाद=** रसों का आस्वाद। **अवनिपो=** राजा। **निर्वर्तयामास=** निश्चिन्त हुआ।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। इसमें कवि ने स्नान के बाद राजा शूद्रक के विभिन्न प्रकार के दैनिक क्रिया-कलापों का चित्रण अलंकारमयी भाषा-शैली में किया है।

हिन्दी अनुवाद- शिव की पूजा करके, देव-मन्दिर से निकलकर, अग्नि-कार्य (यज्ञादि) से निवृत होकर, विलेपन-भूमि (प्रसाधन-कक्ष) में गुंजन करते हुए भौरों के झुण्डों के द्वारा सेवन किये जाते हुए सुगन्ध वाले, कस्तूरी, कपूर तथा केसर की सुगन्ध से सुगन्धित, चन्दन से लेप किये गये सब अंगों वाले (राजा) ने सुगन्धित मालती पुष्पों से शिरोभूषण बनाकर, वस्त्र बदलकर, केवल रत्न (जटित) कर्णफूल के ही आभूषण वाला होकर, इष्ट रस के आस्वादन से सन्तुष्ट होकर (एक साथ बैठकर) भोजन करने योग्य राजाओं के साथ भोजन किया।

विशेष (1)इस गद्यांश में महाकवि बाण ने तत्कालीन राजाओं की दिनचर्या पर प्रकाश डाला है, प्रातःकाल सूर्याभिमुख होकर राजा '**ॐ ब्रह्मरूपिणे सूर्याय नमः**'मन्त्र द्वारा अर्घ्य देते थे।

(2) यहाँ **बहुव्रीहि समास**, उपमा अलंकार तथा **पाञ्चाली रीति** तथा **प्रसाद गुण** है।

9.3.1 शूद्रक सभा-मण्डप गमन

परिपीतधूमवर्तिरूपस्पृश्य च गृहीतताम्बूलस्तस्मात्पृष्ट प्रमणिकुट्टिमप्रदेशादुत्थाय नातिदूरवर्तिन्या ससंभ्रम-प्रधावितया प्रतीहार्या प्रसारितबाहुमवलम्ब्य वेत्रलताग्रहणप्रसङ्गादतिजरठकिसलयानुकारिकरतलकरेण अभ्यन्तरसंचार-समुचितेन परिजनेनानुगम्यमानो धवलांशुक परिगतपर्यन्ततया स्फटिकमणिमयभित्ति निबद्धमिवोपलक्ष्यमाणम्।

शब्दार्थ- परिपीत= पीने के बाद। **धूमवर्ति=** धुएँ की बत्ती (सिगरेट आदि)। **उपस्पृश्य=** आचमन करके। **गृहीतताम्बूलः=** पान ग्रहण किये हुए। **अमृष्ट=** साफ किये हुए। **कुट्टिमप्रदेशात्=** फर्श स्थल से। **ससम्भ्रम=** घबराकर। **प्रसारितं=** फैलायी हुई। **अवलम्ब्य=** आश्रय लेकर। **वेत्रलताग्रहण=** बेंत की छड़ी धारण किये हुए। **अतिजरठ=** अत्यन्त कठोर। **अनुकारि=** अनुकरण करने वाली। **अभ्यन्तरसंचारसमुचितेन**= अन्दर संचरण करने योग्य। **परिजनेन=** सेवकों द्वारा। **अनुगम्यमानः=** अनुगमन किया। **धवलांशुक=** श्वेत रेशमी वस्त्र। **परिगतपर्यन्ततया=** घिरे हुए किनारों वाला। **निबद्धमिव=** घिरा हुआ-सा। **उपलक्ष्यमाणम्=** प्रतीत होने वाला।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। कवि ने राजा शूद्रक के दैनिक कार्यों के वर्णन के बाद उसके सभा-मण्डप का चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- भोजन करके धूमवर्तिकापान करके आचमन करके पान ग्रहण करके, उस साफ किये गये मणियों के फर्श के प्रदेश से उठकर, समीप में स्थित घबराकर दौड़ी हुई प्रतिहारी द्वारा फैलायी बाहु का जो (बाहु) बेंत की छड़ी के ग्रहण के प्रसंग से अति कठोर, किसलय का अनुकरण करने वाले करतल से युक्त थी, हाथ से सहारा लेकर, अन्दर संचरण करने योग्य सेवकों द्वारा अनुगमन किया जाता हुआ, सभा-मण्डप में गया जो (सभामण्डार सफेद रेशमी वस्त्र से घिरे हुए किनारों वाला होने अकारण स्फटिकमणि-रचित दीवारों से विग हुआ प्रतीत होता था।

विशेष- प्रस्तुत गद्य में महाकवि बाण ने चमत्कृत अलंकारमयी शैली के द्वारा विभिन्न उपमानों का समीचीन प्रयोग करते हुए राजा शूद्रक के स्नानादि नित्य कार्यों से निवृत होकर सभामण्डप में जाने का मनोरम चित्र उपस्थित किया है।

अतिसुरभिणा मृगनाभिपरिगतेनामोदिना चन्दनवारिणा सिक्तिशशिरमणिभूमिम्, अविरलविप्रकीर्णेन विमलमणिकुट्टिमगगनतलतारागणेनेव कुसुमोपहारेण निरन्तरनिचितम्, उत्कीर्णशालभञ्जिकानिवहेन संनिहितगृहदेवतेनेव गन्धसलिलक्षालितेन कलधौतमयेन स्तम्भसंचयेन विराजमानम्, अतिबहलागरुधूपपरिभलम्, अखिलविगलितजलनिवहधवलजलधरशकलानुकारिणा कुसुमामोदवासितप्रच्छदपटेन पट्टोपधानाध्यासितशिरोभागेन मणिमयप्रतिपादुकाप्रतिष्ठितपादेन पार्श्वस्थरत्नपादपीठेन तुहिनशिलातलसदृशेन शयनेन सनाथीकृतवेदिकं भुक्त्वास्थान- मण्डपमयासीत्।

शब्दार्थ- अतिसुरभिणा= अत्यन्त सुगन्धित से। **मृगनाभिपरिमलेन**= कस्तूरी की गंध से। **आमोदिना=** सुगन्धित से। **चन्दनवारिणासिक्त**=चन्दन जल से सींचे हुए। **शिशिरमणिभूमिम्=** शीतल-मणि भूमि को। **अविरलविप्रकीर्णेन**= घने बिखेरे गये के द्वारा। **विमलमणिकुट्टिमगगनतलतारागणेनेव=** स्वच्छ मणि फर्शरूपी आकाशमण्डप पर तारागणों के द्वारा। **निरन्तरनिचितम्**= अनवरत सिञ्चित किये हुए को। **उत्कीर्ण=** खुदी हुई। **शालभञ्जिका=** पुतलियों के। **निवहेन=** समूह से। **संनिहितगृहदेवतेनेव=** एकत्रित गृहदेवियों से युक्त। **गन्धसलिलक्षालितेन=** सुगन्धित जल से धोये हुए के द्वारा। **कलधौतमयेन=** स्वर्णमय के द्वारा।**अतिबहल**= बहुत घनी। **अगरु**= धूप। **अखिलविगलितजलनिवह धवलजलधरशकलानकारिणा**= जल समूह के कारण धवल, मेघ खण्ड का अनुकरण करने वाले। **कुसुमामोदवासितप्रच्छदपटेन**= पुष्पों की सुगन्ध बसाई गई चादर से। **पट्टोपधानाध्यासित शिरोभागेन=** रेशमी तकिये से युक्त सिराहाने से। **मणिमयप्रतिपादुकाप्रतिष्ठितपादेन=** मणिमय प्रतिपादुकाओं पर रखे गये पायों वाले। **पार्श्वस्थ=** समीप में स्थित। **तुहिनगिरि**= हिमालय पर्वत। **सदृशेन=** समान। **शयनेन सनाथीकृतवेदिकं**= पलंग से युक्त वेदिका वाला। **अयासीत्=** गया।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। राजा शूद्रक के दैनिक कार्यों का वर्णन करने के बाद कविवर बाणभट्ट ने उसके सभा-मण्डप का चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद-जो अत्यन्त सुगन्धित कस्तूरी से युक्त सुवासित चन्दन के जल से सींची गई (अतः) शीतल मणि-भूमि वाला था, जो सघन रूप से बिखरे हुए स्वच्छ मणिमय फर्शरूपी आकाश-तल पर तागगण

के समान, पुष्पों के उपहार से निरन्तर व्याप्त था; जो खुदी हुई पुतलियों के समूह वाले (अतः) मानो गृहदेवियों से युक्त, सुगन्धित जल से धोए हुए, स्वर्णरचित स्तम्भों के समुदाय से शोभायमान था, जो बहुत घनी अगरबत्ती की धूप से सुगन्धित था और जो सम्पूर्ण जल के समूह के बरस जाने के कारण धवल (हुए) बादल के टुकड़े का अनुकरण करने वाले, पुष्पों की सुगन्ध से सुगन्धित चादर वाले, तकिये से युक्त सिरहाने वाले, मणिमय प्रतिपादुकाओं पर प्रतिष्ठित पायों वाले, पास में स्थित रत्नमय पायदान वाले, हिमशिलातलसदृश पलंग से सनाथ किये गये चबूतरे से युक्त था।

विशेष (1)-महाकवि बाणभट्ट ने चमत्कृत अलंकारमयी शैली के द्वारा विभिन्न उपमानों का समीचीन प्रयोग करते हुए राजा शूद्रक के स्नानादि नित्य कामों से निवृत्त होकर सभामण्डप में जाने का मनोरम चित्र उपस्थित किया है।

तत्र च शयने निषण्णः क्षितितलोपविष्टया शनैः शनैरुत्सङ्गनिहितासिलतया खड्गवाहिन्या नवनलिनदकोमलेन करसंपुटेन संवाह्यमानचरणस्तत्कालोचितदर्शनैरवनिपतिभिरमात्यैमित्रैश्च सह तास्ताः कथाः मुहूर्तमिवासांचक्रे। ततो नातिदूरवर्तिनीम् 'अन्तःपुराद्वैशम्पायनमादायागच्छ' इति समुपजाततवृत्तान्त प्रश्न-प्रश्नकुतूहलो राजा प्रतीहारीमादिदेश।

शब्दार्थतत्र= वहाँ। **शयने=** पलंग पर। **निषण्णः=** बैठा। **क्षितितलोपविष्टया=** पृथ्वी तल पर बैठी हुई। **उत्सङ्ग=** युक्त् युक्त गोद में। **निहित** युक्त रखी हुई। **असिलतया=** तलवार रूपी लता से। **खड्गवाहिन्या=** तलवार धारण करने वाली। **नवनलिनदकोमलेन=** नये कमल के पत्ते की भाँति मुलायम। **करसंपुटेन** युक्त दोनों हाथों के द्वारा। **संवाह्यमान** दबाती हुई। **अवनिपतिभिः**= राजाओं से। **अमात्यैमित्रैश्च सह=** मन्त्रियों और मित्रों के साथ। **तास्ताः=** अनेक प्रकार की। **कथाः=** बातचीत। **मुहूर्तमिवासांचक्रे** युक्त् क्षण भर विश्राम किया। **नातिदूरवर्तिनीम्**= अत्यन्त समीप वाली। अन्तःपुरात् अन्तःपुर से। **आदाय=** लेकर। **समुपजात=** उत्पन्न हो गयी। **कुतूहलो=** उमंग (उत्सुकता)। **प्रतीहारीम्=** सेविका को। **आदिदेश** युक्त आज्ञा दी या आदेश दिया।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। कवि ने यहाँ राजा शूद्रक के पलंग पर विराजमान होने के पश्चात् प्रतिहारी के द्वारा वैशम्पायन नामक शुक को लाने का वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- राजा वहाँ पहुँचकर पलंग पर बैठ गया। उसकी तलवार लेकर साथ-साथ चलने वाली सेविका भी तलवार को गोद में रखकर फर्श पर बैठ गयी और नये कमल की पंखुड़ियों के समान कोमल हथेलियों से धीरे-धीरे राजा के पैर दबाने लगी। वहाँ मिलने के लिए आने योग्य (विशिष्ट जिनकी पहुँच दरबार-खास तक थी) राजाओं, मन्त्रियों और मित्रों के साथ तरह-तरह की बातें करते हुए राजा ने कुछ देर विश्राम किया। फिर निश्चिन्त होकर उस सुग्गे का जीवन-वृत्तान्त पूछने की उत्सुकता से उसने समीप में ही खड़ी प्रतिहारी को आदेश दिया कि अन्त:पुर से वैशम्पायन को ले लाओ।

विशेष (1) इस गद्यांश में लुप्तोपमा अलंकार है।

9.3.2 शुकागमन

सा क्षितितलनिहितजानुकरतला 'यथाज्ञापयति देवः' इति शिरसि कृत्वाज्ञां यथादिष्टमकरोत्। अथ मुहूर्तादिव वैशम्पायनः प्रतिहार्या गृहीतपञ्जरः कनकवेत्रलतावलम्बिना किंचिदवनतपूर्वकायेन सितकञ्चुकावच्छन्नवपुषा जराधवलि तमौलिना गद्गदस्वरेण मन्दमन्दसंचारिणा विहङ्गजातिप्रीत्या जरत्कलहंसेनेव कञ्चुकिनानुगम्यमानो राजान्तिकमाजगाम्।

शब्दार्थ- सा= वह। **क्षितितल=** पृथ्वी-तल। **निहित=** रखी हुई। **जानु=** जंघा। **करतला=** हथेली। **यथाज्ञापयति=** जैसी आज्ञा हो। **शिरसि=** शिर (माथे) पर। **कृत्वा=** करके। **यथादिष्टम्=** जैसी आज्ञा। **अथ=** इसके। **मुहूर्तादिव=** क्षण-भर ही में। **कनक=** सोने के। **वेत्रलतावलम्बिना=** बेंत का सहारा लेकर। **अवनतपूर्वकायेन=** झुके हुए शरीर के पूर्वभाग वाले। **सित=** श्वेत। **कञ्चुकावच्छन्न=** चोंगे से आच्छादित। **जरा=** बुढ़ापा। **धवलितमौलिना=** सफेद केशों वाले। **गद्गद=** अस्पष्ट। **सञ्चारिणा=** चलने वाले। **विहङ्ग=** पक्षी। **जातिप्रीत्या=** जाति के प्रति। **जरत्कलहंसेनेव** बूढ़े हंसों के समान। **अनुगम्यमानः=** अनुसरण किया गया। **अन्तिकम्=** समीप। **आजगाम्=** पहुँचाया गया।

प्रसंग= प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम् से अवतरित है। प्रतिहारी के साथ कञ्चुकी शुक को लेकर प्रवेश करती है। इसी का कवि ने यहाँ चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- उस (प्रतिहारी) ने पृथ्वी-तल पर घुटने और हथेली टिकाकर, जैसी स्वामी की 'आज्ञा' इस प्रकार (राजा की) आज्ञा को शिरोधार्य करके, जैसा आदेश मिला था, वैसा किया। इसके पश्चात् थोड़ी ही देर में वैशम्पायन राजा के समीप आया जिसके पिंजरे को प्रतिहारी ग्रहण किये हुई थी तथा जो (वैशम्पायन) सोने की बेंत की छड़ी सँभाले, कुछ झुके हुए शरीर के पूर्व भाग वाले, श्वेत कञ्चुक (चोंगे) से ढके हुए शरीर वाले, बुढ़ापे के कारण श्वेत हुए सिर वाले, गद्गद (अस्पष्ट) स्वर वाले (बुढ़ापे के कारण), धीरे-धीरे चलने वाले (बूढ़े) कञ्चुकी के द्वारा मानो (शुक को) पक्षी जाति से प्रेमवश (आए हुए) बूढ़े कलहंस के द्वारा अनुगमन किया जा रहा था।

विशेष (1)जरत्कलहंसेनेव में उपमा अलंकार का प्रयोग हुआ है। निःसन्देह बाण की अलौकिक प्रतिभा ने प्रत्येक वर्णन को सजीव एवं हृदयग्राही बना दिया है तथा उसमें एक लोकोत्तर नवीनता ला दी है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. भोजन के उपरान्त राजा शूद्रक ने क्या पिया?
2. राजा ने परिचारिका को तोते को कहाँ ले जाने को कहा?
3. व्यायामशाला में राजा ने किसके साथ हल्के व्यायाम किए?
4. राजा शूद्रक ने किसके सम्मुख प्रश्नों की जड़ी-सी लगा दी?
5. प्रतिहारी के साथ कौन शुक को लेकर प्रवेश करती है?

9.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में शूद्रक ने नित्य कर्मों एवं सभा मण्डप में जाना तथा शुक से उसके जन्म के विषय में प्रश्नों का वर्णन वर्णित है।

9.5 कठिन शब्दावली

1.प्रवाह – तेज बहाव **2.दर्शनीय** – देखने योग्य **3. पृष्ट:** – पूछना

9.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. धूम्रवर्तिका 2. अन्त:पुर 3. समवयस्क राजकुमारों के साथ 4. शुक5. कञ्चुकी

9.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

9.8अभ्यास के लिए प्रश्न

1. शूद्रक की दिनचर्या का वर्णन कीजिए।
2. निम्नलिखित गद्य भाग की प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए-
   (1) स प्रत्युवाच .... इति।
   (2) तत्र च शयने निषण्ण: .... प्रतीहारीमादिदेश।
   (3) एवं च क्रमेण .... देवगृहमगमत्।

इकाई-10

विन्ध्याटवी एवं अगस्त्य आश्रम वर्णन

संरचना

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 विन्ध्याटवी वर्णन

10.3.1अगस्त्य आश्रम वर्णन

- स्वयं आकलन प्रश्न

10.4 सारांश

10.5 कठिन शब्दावली

10.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

10.7 सहायक ग्रन्थ

10.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में विन्ध्याटवी एवं अगस्त्य आश्रम का वर्णन किया गया है।

10.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से आप जानने में सक्षम होंगे-

- विन्ध्याटवी के सौन्दर्य के विषय में जानने में सक्षम होंगे।
- अगस्त्य ऋषि के मनोहारी आश्रम से अवगत होंगे।

10.3विन्ध्याटवी वर्णन

अस्ति पूर्वापरजलनिधिवेलावनलग्ना मध्यदेशालङ्कारभूता मेखलेव भुवः वनकरिकुलमदजलसेकसंवर्धितै-रतिविकचधवलकुसुमनिकरमत्युन्नतया तारकागणमिव शिखरप्रदेशलग्नमुद्वहद्भिः पादपैरुपशोभिता, मदकल कुररकुल दश्यमान मरिचपल्लवा करिकलभ करमृदिततमालकिसलयामोदिनी, मधुमदोपरक्तकेरली कपोलच्छविना संचरद्वनदेवता चरणालक्तक रसरञ्जितेनेव पल्लवचयेन संच्छादिता।

शब्दार्थ-पूर्वापरजलनिधिवेलावनलग्ना= पूर्वी और पश्चिमी समुद्रों के तटों से लगी हुई। **मध्यदेशालंकारभूता=** मध्यदेश की अलंकाररूप। **मेखलेव भुवः=** पृथ्वी की करधनी के समान। **कुसुमनिकरम्=** पुष्पों के समूह को। **अत्युच्चतया=** अत्यन्त ऊँचे होने के कारण। **तारकागणमिव**= तारों के समूह के समान। **पादपैरुपशोभिता=** वृक्षों से सुशोभित। **कुररकुल=** कुरर पक्षियों का समूह। **दश्यमानम्=** कतरे जाते हुए का। **मरिचपल्लवा=** मिर्चों के पत्ते। करिकलभ हाथी का बच्चा। **तमालकिसलयामोदिनी=** तमाल पल्लवों से सुगन्धयुक्त। **मधुमदोपरक्तकेरली कपोलच्छविना**= मदिरा के मद से लाल हुए कपोल वाली केरल देश की स्त्री। **सञ्चरत्**= संचरण करते हुए। **चरणालक्तक=** चरणों में लगाने का महावर। **रञ्जितेनेव=** रंगे हुए के समान। **पल्लवचयेन**= पत्तों के समूह से। **संच्छादिता=** ढकी हुई है।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ पर कवि ने अपनी अपूर्व प्रतिभा द्वारा विभिन्न अलंकारों के प्रयोग से विन्ध्याटवी का सुन्दर चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- विन्ध्य नाम की एक अटवी अर्थात् वन है जो पूर्वी और पश्चिमी समुद्रों के तटवर्ती वन से लगी हुई अर्थात् मिली हुई है तथा मध्यदेश की अलंकार रूप है, मानो पृथ्वीरूपी नायिका की करधनी हो। जंगली हाथियों के मद-जल के सिंचन से बढ़े हुए ऐसे वृक्षों से सुशोभित है, जो वृक्ष अत्यन्त ऊँचे होने के कारण अपनी चोटियों से संलग्न तारागण को धारण करते हैं। जहाँ मद के कारण सुन्दर कुरर पक्षियों के झुण्डों के द्वारा मिर्च के कोमल पत्ते कुतरे जाते हैं। जो (विन्ध्याटवी) हाथी के बच्चों की सूँड़ द्वारा मसले गये तमाल-पल्लवों से सुगन्धयुक्त है। जो मदिरा के मद से लाल हुए केरल देश की स्त्री के कपोल जैसी छवि वाली तथा विचरण करती हुई वन-देवियों के पैरों की महावर के रस से रंगे हुए जैसे पल्लव समूह से आच्छादित है।

विशेष- महाकवि वाण ने अपनी नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा के द्वारा विन्ध्याटवी का अत्यन्त चित्ताकर्षक वर्णन किया है। विन्ध्याटवी का दृश्य मानो नेत्रों के समक्ष उपस्थित हो जाता है। समासबहुला अलंकृत शैली द्वारा उसमें एक विशेष चमत्कार उत्पन्न हो गया है।

शुककुलदलितदाडिमीफलद्रवार्द्रीकृततलैरतिचपलक पिकम्पितकवकोलच्युतपल्लवफल शबलैरनरतनिपतित-कुसुमरेणुपांसुलैः पथिकजनरचितलवङ्गयल्लवसंस्तरैरतिकठोरना लिकेरकतकीकरीर बकुलपरिगतप्रान्तैस्ताम्बूलीलता-वनद्धपूगखण्डमण्डितर्वनलक्ष्मीवासभवनैरिव विराजिता लतामण्डपैः, उन्मदमातङ्गकपोलस्थलगलितसलिलसिक्तेतेवा नव-रतमेलालतावनेन मदगन्धिनान्धकारिता, नखमुखलग्नेभकुम्भमुक्ताफललुब्धैः शबरसेनापतिभिरभिहन्यमानकेसपिशता।

शब्दार्थ- शुककुलदलित= शुक-समूह के द्वारा कुतरे हुए। **द्रवार्द्रीकृत=** गीले किये गये। **अतिचपलक=** अत्यन्त चंचल। **कम्पिलच्युत** ककोल वृक्ष से गिरे हुए। **पल्लवफल=** पत्ते और फल। **पांशुलैः**= धूलि, पराग। **रचितलवङ्ग**= निर्मित लवङ्ग के। **संस्तरै=** विस्तर। **अतिकठोरना=** अत्यन्त दृढ़। **करीर**= सूखे हुए। **बकुलपरिगत=** मौलश्री के वृक्ष। **प्रान्तैः**= किनारे। **ताम्बूलीलता**=नागवल्ली की लताओं से घिरे हुए। **अनवद्ध=** लिपटे हुए। **पूग=** सुपाड़ी। **खण्ड** समूह। **वनलक्ष्मीवासभवनैरिव=** वनलक्ष्मी के रहने वाले घरों की भाँति। **विराजिता**= सुशोभित। **उन्मद**=मदमस्त। **मातङ्ग=** हाथी। **गलित**= बहते हुए। **सिक्तेतेव**= सिंचे हुए।

मदगन्धिना=मदजल की खुशबू से सुगन्धित। **अन्धकारिता=** श्यामवर्ण। **नखमुख=** नखों के पूर्वभाग। **इभकुम्भ=** कुम्भस्थल। **अभिहन्यमानकेसपिशता**= जहाँ अनगिनत सिंह मारे जा रहे थे।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ पर कवि ने अपनी अपूर्व प्रतिभा द्वारा विभिन्न उपमानों के प्रयोग से विन्ध्याटवी का सुन्दर चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- तोतों के समूह द्वारा कुतरे गये अनार के फलों के रस से गीले किये गये तल वाले, चञ्चल बन्दरों द्वारा हिलाये गये कंकोल (वृक्ष) से गिरे हुए पत्तों तथा फलों से चितकबरे किये हुए, निरन्तर गिरी हुई पुष्प-रज से धूलि-युक्त हुए, पथिक जनों द्वारा बनाये लोंग के कोमल पत्तों के बिछौनों वाले, अत्यन्त कठोर नारियल, केतकी, करीर और बकुल (मौलश्री) से घिरे हुए किनारों वाले तथा ताम्बूल लताओं से लिपटे हुए सुपारी के वृक्षों के समूह से सुशोभित लता-मण्डपों से मानो वनश्री निवास-भवनों से अलंकृत है, जो मानो मदमस्त हाथी के कपोल-स्थल से गिरे हुए मदजल से सींचे गये (अतएव) मद की गन्ध वाले इलायची की लताओं के सघन वन से अन्धकारयुक्त हैं, नख के अग्रभाग में लगे हुए हाथी के कुम्भ-स्थल के मोतियों के लोभी भील सेनापतियों द्वारा जहाँ सैकड़ों सिंह मारे जाते हैं।

विशेष (1)-इस गद्यांश में उत्प्रेक्षा तथा संसृष्टि अलंकार का प्रयोग हुआ है।

प्रेताधिपनगरीव सदासन्निहितमृत्युभीषणा महिषाधिष्ठिता च, समरोद्यतपताकिनीव बाणासनारोपितशिलीमुखा विमुक्तिसंहनादा च, कात्यायनीव प्रचलितखड्गभीषणा रक्तचन्दनालंकृता च, कर्णीसुतकथेव सन्निहित विपुलाचला शशोपगता च, कल्पान्तप्रदोषसन्ध्येव प्रनृत्तनीलकण्ठा पल्लवारुणा च, अमृतमथनवेलेव श्रीद्रुमोपशोभिता वारुणी परिगता च, प्रावृडिव घनश्यामलानेक शतहृदालंकृता च।

शब्दार्थ-प्रेताधिपनगरीव सदासन्निहितमृत्युभीषणा= सदा निकट उपस्थित मृत्यु के कारण भयंकर यमपुरी के समान। **समरोद्यतपताकिनीव**= युद्ध के लिए तत्पर सेना के समान। **शिलीमुखाः=** बाण। **विमुक्तसिंहनादा च कात्यायनीव**= सिंहों के नाद वाली। **प्रचलितखड्गभीषणा=** चलती हुई तलवार के कारण भयानक। **रक्तचन्दनालंकृता=** लाल चन्दन से सुशोभित। **कल्पान्त प्रदोषसन्ध्येव**= प्रलयकालीन सायं-सन्ध्या के समान। **प्रनृत्तनीलकण्ठा=** नाचते हुए शिव से युक्त। **पल्लवारुणा=** लाल-लाल पत्तों **वाली। श्रीद्रुम=** पारिजात। **वारुणी=** मदिरा। **प्रावृडिव=** वर्षा ऋतु के समान श्यामल (बहुत से)। **शतहृदालंकृता च=** छोटे-छोटे तालाब-तरलियों (तल्लैयों) से अलंकृत।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ कवि ने अपनी अपूर्व प्रतिभा द्वारा विभिन्न अलंकारों के प्रयोग से विन्ध्याटवी का सुन्दर चिंत्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- सदा निकट उपस्थित मृत्यु अर्थात् यमराज के कारण भयंकर तथा (यमराज के वाहन) भैसे से युक्त यमपुरी के समान थी। कहीं भौरों से ढकी हुई बाण और असना के वृक्षों की पंक्तियाँ थीं,

जिनमें सिंहों की दहाड़ होती रहती थी, जिससे वह वनभूमि धनुष पर बाण चढ़ाकर युद्ध के लिए तैयार गरजती हुई सेना के समान प्रतीत होती थी। कहीं लाल चन्दन के वृक्षों में इधर-उधर गेंडे घूमा करते थे, जिससे वह रक्त चंदन और तलवार धारण करने वाली भगवती दुर्गा के समान प्रतीत होती थी। कहीं कनेरों से भरी विस्तृत पहाड़ों की श्रेणियों में खरहे स्वच्छन्दता से विचरण किया करते थे। कहीं कनेरों से पूर्ण पहाड़ों के फैले हुए अंचलों में लोघ के अनेक वृक्ष झूमा करते थे, जिससे वह विपुल और अचल नाम के मित्रों तथा शश नाम के प्रधानमंत्री से युक्त कर्णीसुत (चौर्यशास्त्र के प्रणेता) की कथा के समान प्रतीत होती थी। कहीं लाल पल्लवों के झुरमुटों में मोर थिरकते रहते थे, जिससे वह भगवान शंकर के ताण्डव नृत्य से युक्त लीला से भरी हुई प्रलयकालीन सन्ध्या के समान प्रतीत होतो थी। कहीं इधर-उधर बेल और वारुणी नामक वृक्ष घिरे थे, जिससे वह लक्ष्मी, पारिजात और मदिरा से सुशोभित अमृत-मंथन की वेला के समान प्रतीत होती थी। कहीं अत्यन्त घने वृक्षों की नीलिमा के बीच-बीच निर्मल जल से भरी अनेक लहरियाँ सुशोभित थीं, जिससे वह बिजलियों से युक्त काले बादलों की घटा के समान प्रतीत होती थीं। कहीं रीछों का आवागमन होता रहता था और कहीं हरिण चौकड़ियाँ भरा करते थे, जिससे वह नक्षत्रों से घिरी ऐसी प्रतीत होती थीं। मानो सैकड़ों तालाबों से सुशोभित हों।

विशेष- महाकवि बाण ने विन्ध्याटवी का चित्रण ऐसा विशद, भयावह तथा आकर्षक किया है कि पाठक के समक्ष उसका चित्र-सा उपस्थित हो जाता है। विभिन्न पौराणिक तथा अन्य उपमानों के द्वारा विन्ध्याटवी का यथातथ्य वर्णन प्रस्तुत है। भाषा-शैली में सर्वत्र ओज का समावेश है जो विभिन्न अलंकारों के प्रयोग से अधिक सजीव हो उठी है। अलंकार-प्रधान होने के कारण भावों में क्लिष्टता आ गई है, अतः साधारण बुद्धि के लिए दुरूह बन गई है। इसमें समासों का भी बाहुल्य है।

चन्द्रमूर्तिरिव सततमृक्षसार्थानुगता हरिणाध्यासिता च, राज्यस्थितिरिव चमरमृगबालव्यजनोपशोभिता समदगज-घटापरिपालिता च, गिरितनयेव स्थाणुसंगता मृगपतिसेविता च, जानकीव प्रसूतकुशलवा निशाचरपरिगृहीता च कामिनीव चन्दनमृगमदपरिमखवाहिनी रुचिरागुरुतिलकभूषिता च, सोत्कण्ठेव विविधपल्लवानिलवीजिता समदना च, बालग्रीवेव व्याघ्रनखपंक्तिमण्डिता गण्डकाभरणा च, पानभूमिरिव प्रकटितमधुकोशशताप्रकीर्णविविधकुसुमा च।

शब्दार्थ-चन्द्रमूर्तिरिव= चन्द्रमास्वरूप शरीर की भाँति। **सततम्=** निरन्तर। **अनुगता=**घिरी हुई। **ऋक्षसार्थ**= नक्षत्रों से। **हरिणाध्यासिता च**= मृगलाञ्छन से आश्रित। **राज्यस्थितिरिव=** राज्य की मर्यादा की भाँति। **समदा=** मदयुक्त। **गिरितनयेव**= हिमालयपुत्री पार्वती की तरह। **स्थाणुसंगता**= ठूंठ वृक्षों से युक्त, भगवान शंकर से युक्त। **जानकीव=** सीता के समान। **निशाचर**= राक्षस। **प्रसूतकुशलवा=** लवकुश पुत्रों को पैदा करने वाली। **कामनीव=** रतिप्रिया की भाँति। **चन्दनमृगमदपरिमखवाहिनी=** चन्दन, कस्तूरी की सुगन्धि से युक्त। **रुचिर=** सुन्दर। **अगुरुतिलकभूषिता=** अगरु के टीका से सुशोभित। **सोत्कण्ठेव=** उत्कण्ठा के समान। **विविधपल्लवानिलवीजिता=** नाना प्रकार के पत्तों की हवा द्वारा। **समदना च=** कामदेव के वृक्ष, कामपीड़ा से

युक्त। **बालग्रीवेव=** बच्चे की गरदन के समान। **गण्डकाभरणा च=** और गेंडा नामक पशुओं से अलंकृत। **मधुकोशकशता=** शहद से भरी हुई सैकड़ों जालियाँ। **प्रकीर्णविविधकुसुमा च=** जिसमें विभिन्न तरह के फूल (पुष्प) फैले हुए हैं।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया है। यहाँ कवि ने अपनी अपूर्व प्रतिभा द्वारा विभिन्न अलंकारों के प्रयोग से विन्ध्याटवी का सुन्दर चित्रण उपस्थित किया है।

हिन्दी अनुवाद- निरन्तर नक्षत्रों से घिरे हुए मृग के चिह्नों से सुशोभित चन्द्रमा की मूर्ति के समान प्रतीत होती थी, कहीं पूँछ डुलाती हुई चँवरी मृगियाँ घूमती रहती थी और कहीं मतवाले हाथियों की कतारें खड़ी रहती थीं जिससे वह ऐसी प्रतीत होती थी मानो चँवरों से सुशोभित और हाथियों से रक्षित राज्य की मर्यादा हो, कहीं ठूंठे वृक्षों के बीच सिंह घूमते रहते थे, जिससे वह भगवान शंकर के साथ-साथ घूमने वाली सिंहवाहिनी भगवती पार्वती के समान सुशोभित होती थीं, कहीं भूमि कुशों के अंकुरों से ढकी हुई थी जिनमें उल्लुओं ने अपना बसेरा बना रखा था जिससे वह कुश-लव को जन्म देने वाली रावण के फन्दे में पड़ी देवी जानकी के समान प्रतीत होती थी, कहीं चन्दन और कस्तूरी की गन्ध उठती रहती थी और कहीं अगरु और तिलक के अनेक वृक्ष उगे थे जिससे वह ऐसी लगती थी मानो चन्दन और कस्तूरी का लेप किये हुए अगरु का तिलक लगाने वाली कोई सुन्द्री हो, कहीं मन्द-मन्द वायु में पल्लव हिलोरें लेते रहते थे और कहीं मदन के अनेक वृक्ष लगे थे जिससे वहाँ अत्यन्त शीतलता छायी रहती थी, इसलिए वह ऐसी प्रतीत होती थी मानो किसी कामातुरा उत्कण्ठिता नायिका पर पल्लवों का पंखा झलकर शीतोपचार किया जा रहा हो, कहीं बागें के इधर-उधर घूमने से उनके नखों के चिह्न उमड़े थे, कहीं गेंडे इधर-उधर आते-जाते थे जिससे वह बघनखों और गेंडों से सुशोभित बालकों के गले के समान प्रतीत होती थी, कहीं मधु के छत्ते पड़े थे जिनमें सैकड़ों मधु से भरी जालियाँ ऐसी प्रतीत होती थीं, मानो मदिरा से भरे सैकड़ों सकोरे हों और कहीं इधर-उधर तरह-तरह के फूल (पुष्प) बिखरे थे मानो मदिरा की बूंदें टपकी हों जिससे वह भूमि मदिरा पीने की जगह के समान प्रतीत होती थीं।

विशेष (1)-इस गद्यांश में उपमा अलंकार का प्रयोग हुआ है।

क्वचित्प्रलयवेलेव महावराहदंष्ट्रासमुत्खातधरणिमण्डला, क्वचिद्दशमुखनगरीव चटुलवानरवृन्दभज्यमानतुङ्ग-शालाकुला, क्वचिदचिरनिर्वृत्तविवाहभूमिरिवहरितकुशसमित्कुसुमशमीपलाशशोभिता, क्वचिदुद्धृत्तमृगपतिनादभीतेव कण्टकिता क्वचिन्मत्तेव कोकिलकुलप्रलापिनी, क्वचिदुन्मत्तेव वायुवेगकृततालशब्दा, क्वचिद्विधवेवोन्मुक्तालपत्रा, क्वचि-त्समरभूमिरिव शरशतनिचिता।

शब्दार्थ- क्वचित्प्रलयवेलेव= कहीं प्रलय की वेला के समान। **महावराहदंष्ट्रा-समुत्खातधरणिमण्डलाम्=** महावराह द्वारा दाढ़ से खोदे गये पृथ्वीमण्डल वाली। **क्वचित्**= कहीं। **कुल**= समूह। **प्रलापिनी=** प्रलाप करने वाली। **वायुवेगकृततालशब्दा=** वायु के वेग से खड़खड़ाते शब्द करते हुए ताल के वृक्ष। **विधवेव**= विधवा के समान। **उन्मुक्ततालपत्रा**= गिरे हुए ताल के पत्ते, आभूषणों से रहित। **क्वचित्समरभूमिरिव**= युद्ध-भूमि के समान। **शरशतनिचिता**= सैकड़ों बाणों से भरी हुई, सरकंडों से युक्त।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी-कथामुख' से उद्‌धृत है। यहाँ कवि ने अपनी अपूर्व प्रतिभा द्वारा विभिन्न अलंकारों के प्रयोग से विन्ध्याटवी का सुन्दर वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जो विन्ध्याटवी कहीं महावराह (वराहावतारधारी भगवान विष्णु) की दाढ़ द्वारा उखाड़े गये पृथिवीमण्डल वाली, कहीं प्रलय की वेला के समान बड़े-बड़े सूअरों द्वारा दाढ़ से खोदे गये पृथिवीमण्डल वाली है, तो कहीं चपल वानर-समूह के द्वारा तोड़े जाते हुए ऊँचे भवनों से व्यापक रावण की नगरी (लंकापुरी) के समान तथा कहीं चपल बन्दरों के झुण्डों के द्वारा तोड़े जाते हुए ऊँचे शाल (के वृक्षों) से व्याप्त है। हरी कुशा, समिधा, पुष्प, शमी तथा पलाश से शोभित, थोड़ी देर पहले ही समाप्त हुए विवाह की भूमि के समान हरे काँस, समिधाओं, पुष्पों तथा शमी और पलाश (के वृक्षों) से शोभित है, जो कहीं उद्‌धृत सिंह से डरी हुई के समान कण्टकित (1. काँटों से युक्त, 2. रोमाञ्चित) है, कहीं कोकिल-समूह के समान प्रलाप करने वाली मत्त (स्त्री) के समान कोकिलकुल के शब्द वाली है, कहीं वात (रोग) के वेग के कारण ताली बजाती हुई उन्मत्त (स्त्री) की भाँति वायु के वेग के कारण ताल के वृक्षों का शब्द करने वाली है, कहीं ताल-पत्रों (कर्णफूलों) का परित्याग करने वाली विधवा के समान (टूटकर) गिरे हुए ताड़ के पत्तों वाली है, कहीं सैकड़ों बाणों से व्याप्त युद्ध-भूमि के समान सैकड़ों शरपत्रों (सरकण्डों) से भरी हुई है।

विशेष- क्वचित् मण्डला- यहाँ विष्णु के वराहावतार का उल्लेख है। प्रलयकाल में जल में डूबी हुई पृथ्वी को वराहावतारी विष्णु ने जल से ऊपर उठाया था। विन्ध्याटवी में बड़े-बड़े जंगली सूअरों ने अपने दाँतों से भूमि खोद रखी थी।

क्वचिदमरपति तनुरिव नेत्रसहस्त्रसंकुला, संकुचिन्नारायणमूर्त्तिरिव तमालनीला, क्वचित्पार्थरथपताकेव कप्याक्रान्ता, क्वचिदवनिपतिद्वारभूमिरिव वेत्रलताशतदुः प्रवेशा, क्वचिद्विराटनगरीवकीचकशताकुला क्वचिदम्बरश्रीरिव व्याधानुगम्यमानतरलतारकमृगा, क्वचिद्गृहीतव्रतेव दर्भचीरजटावल्कलधारिणी, अपरिमित बहलपत्र संचयापि सप्तपर्णोपशोभिता, क्रूरसत्त्वापि मुनिजनसेविता, पुष्पवत्यपि पवित्रा विन्ध्याटवी नाम।

शब्दार्थ-नेत्रसहस्त्रसंकुला= हजारों नेत्रोंयुक्त अथवा हजारों नेत्र नाम के वृक्षों से परिपूर्ण। **नारायणमूर्तिरिव=** विष्णु की देह के समान। **तमालनीला**= नीलवर्ण वाली, तमाल वृक्षों के कारण नीली। **क्वचित् पार्थरथपताकेव कप्याक्रान्ता=** कहीं अर्जुन के रथ की पताका के समान वानर (हनुमान) से व्याप्त।

अवनिपतिद्वारभूमिरिव= राजा के द्वार की भूमि के समान। **वेत्रलताशतदुः प्रवेशा=** बेंतों की घनी झाड़ियों के कारण कठिनता से प्रवेश करने योग्य। **कीचकशतावृता=** सैकड़ों बाँसों से भरी हुई, कीचकादि राजा विराट के सौ सालों से युक्त। **अपरिमितबहलपत्रसंचयापि=** असंख्य सघन पत्तों के ढेर वाली भी। **सप्तपणां पशोभिता=** सहपर्ण नाम के वृक्षों से सुशोभित। **क्रूरसत्त्वापि=** क्रूर मन वाली। **पुनिहर सेविता=** मुनिजनों से सेवित। **पुष्पवत्यपि पवित्रा=** जो पुष्पवती, अर्थात् रजस्वला होकर भी पवित्र है।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी' से उद्‌धृत है। यहां कवि ने अपनी अप्रतिम काव्य-प्रतिभा से अलंकारमयी शैली में विन्ध्याटवी का वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- कहीं नेत्र नाम के सैकड़ों वृक्षों से पूर्ण होने के कारण हजार नेत्रों वाली सुरों के राजा इन्द्र के शरीर जैसी प्रतीत होती है। कहीं तमाल वृक्षों के कारण तमाल की भाँति नीली नारायण की मूर्ति जैसी लगती है। कहीं बन्दरों से परिपूर्ण होने के कारण हनुमान की मूर्ति से अर्जुन के रथ की ध्वजा जैसी प्रतीत होती है, कहीं बेंत की घनी झाड़ियों के कारण दुष्प्रवेश्य बनी हाथ में बेंत की छड़ी लिए द्वारपालों के कारण दुष्यवेश्य राजा के द्वार की भूमि की भाँति लगती है। कहीं सैकड़ों बाँसों से भरी होने के कारण सैकड़ों कीचकों (विराट राजा के सालों) से युक्त विराट राजा की नगरी बनी हुई है, कहीं चंचल पुतलियों वाले मृगों से युक्त होने के कारण, जिसमें पीछे आने वाले व्याधरूपधारी महादेव के भय से ब्रह्मारूपी मृगशिरा नक्षत्र चंचल है, ऐसे आकाश की शोभा जैसी लगती है। कहीं कुश, तिनके, जड़ और वल्कल से युक्त होने के कारण कुश, चीर, जटा और वल्कल वस्त्र धारण करने वाली व्रतग्रहण किये तपस्विनी के समान प्रतीत होती है, कहीं अगणित पत्तों के ढेर से भरी होने पर भी सप्तपर्ण नामक वृक्षों से विभूषित हिंस्र प्राणी होने पर भी मुनिजनों से सेवित, पुष्पवती (फूलों से युक्त, रजस्वला नहीं) होने पर भी पवित्र विन्ध्याटवी नामक वनी है।

विशेष (1)-क्वचित् धारिणी चीर-एक तरह की घास, फटे पुराने वस्त्र। अपरिमित पवित्र-यहाँ तीनों वाक्यांशों में विरोधाभास का चमत्कार प्रदर्शित किया गया है।

10.3.1 अगस्त्य आश्रम वर्णन

तस्यां च दण्डकारण्यान्तः पाति सकलभुवनविख्यानम्, उत्पत्तिक्षेत्रमिव भगवतो धर्मस्य सुरपतिप्रार्थना-पीतसकलसागरजलस्य। मेरुमत्सराद्‌गगनतलप्रसारितविकटशिरः सहस्त्रेण, दिवसकररथगमनपनेतुमभ्युद्यतेनावगणित-सकलसुखचसा विन्ध्यगिरणाप्यनुलङ्घित्ताज्ञस्य, जठरानलजीर्णवातापिदानवस्य, सुरासुरमुकुटमकरपत्र कोटिचुम्बितचरण-रजसो दक्षिणामुखविशेषकस्य, सुरलोकोदेकहुँकारनि पातितनहुषप्रकटप्रभावस्य भगवतो महामुनेरगस्त्यस्य भार्यया लोपामुद्रया स्वममुपरचितालबालकः करपुटसलिलसेकसंवर्धितैः सुतनिर्विशेषैरुपषोभितं पादतैः, तत्पुत्रेण च गृहीत-व्रतेनाषाढिना पवित्रभस्मविरचितत्रिपुण्डकाभरणेन कुशचीवर वासमामौञ्जमेखलाकलितमध्येन

गृहीतहरितपर्णपुटेन प्रत्युटजमटता भिक्षां दृढदस्युनाम्ना पवित्रीकृतम्, अतिप्रभूतेध्माहरणाच्च यस्येध्मवाह इति पिता द्वितीयं नाम चकार, दिशिदिशि, शुकहरितैश्च कदलीवनैः श्यामलीकृतपरिसरम्, सरिता च कलशयोनिपरिपीतसागरमार्गानुगतयेव बद्धवेणिकया गोदावर्या परिगतमाश्रमपदमासीत्।

शब्दार्थ- तस्याम्= उसमें। **अन्तःपाति=** समीप। **सकलभुवनविख्यानम्=** समस्त लोकों में प्रसिद्ध। **उत्पत्तिक्षेत्रमिव=** उत्पत्ति-स्थान के समान। **सकलसागरजलस्य=** सम्पूर्ण समुद्रों का जल पीने वाला। **मेरुमत्सराद्गगनतल**= मेरु पर्वत की ईर्ष्या के कारण आकाश तल में। **प्रसारित=** फैलायी गयी। **शिरः**= चोटी। **सहस्रेण**= सैकड़ों या हजारों। **पथम्=** मार्ग। **अपनेतुम=** रोकने के लिए। **अभ्युद्यतेन**= तत्पर रहने वाले। **अवगणित**= अपमानित। **अनुल्लघिताज्ञस्य=** आज्ञा का उल्लंघन न करना। **जीर्ण**= पवा डाला। **वातापिदानवस्य**= वातापि नाम के दानवों को। **चुम्बित=** स्पर्श करती हुई। **विशेषकस्य**= पत्र रचना। **सुरलोकोदेकहुँकारनि**= देवलोक से एक हुंकार (गरज) द्वारा। **पातितनहुष**= नहुष को गिराने से। **भार्यया=** पत्नी द्वारा। **स्वममुपरचिताबालकः=** स्वयं बनाये गये थाँवलों वाले। **करपुटसलिलसेकसंवर्धितैः=** हाथों की अंजलि के द्वारा जलसिंचन बढ़े हुए। **सुतनिर्विशेषैरुपशोभितं**= पुत्र की भाँति वृक्षों से सुशोभित। **आषाढिना=** पलाश-दण्डधारी। **पवित्रभस्मविरचित**= पवित्र भस्म से निर्मित किया गया। **चीवर**= वस्त्र। **प्रत्युटजममता भिक्षां**= हरेक झोंपड़ी पर भिक्षा के लिए जाते हुए। **अतिप्रभूतेध्माहरणाच्च**= अत्यधिक ईंधन ले आने के कारण। **दिशिदिशि**= प्रत्येक दिशा में। **कदलीवनैः=** केलों का वन। **मार्गानुगतयेव**= मार्ग का अनुसरण करने वाली। **बद्धवेणिकया=** चोटी बाँधे हुए। **परिगतं**= घिरा हुआ। **आश्रमपदमासीत्**= आश्रम था।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यावतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। कवि ने यहाँ पर अगस्त्य मुनि के आश्रम का अलंकार-प्रधान शैली में प्रभावोत्पादक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- उस विन्ध्याटवी में दंडक वन के बीच सभी लोकों में प्रसिद्ध भगवान धर्मराज की भूमि के समान महर्षि अगस्त्य का पवित्र आश्रम था, जिन्होंने भगवान इन्द्र को प्रार्थना पर समुद्र का सभी जल ही पी लिया था। समस्त देवताओं की प्रार्थना अनसुनी करके मेरु पर्वत की ईर्ष्या के कारण अपनी हजारों चोटियों को आकाश में फैलाकर सूर्य का मार्ग रोक देने वाला विन्ध्याचल भी, जिनकी आज्ञा टालने का साहस न कर सका और पैरों पर झुका ही रह गया, जिन्होंने अपने पेट की आग में वातापि दानव को पचा डाला, देवता और राक्षस दोनों ही अपने मुकुटों में बने हुए मत्स्याभूषणों को पत्रलताओं से जिनके चरणों की धूल झाड़ा करते थे, जो दक्षिण दिशारूपी वधू के मुख के तिलक थे तथा जिन्होंने एक ही हुंकार में नहुष को स्वर्ग से पटककर अपना प्रभाव प्रकट कर दिया था। वह आश्रम अनेक वृक्षों से सुशोभित था। भगवान अगस्त्य की पत्नी लोपामुद्रा ने स्वयं अपने हाथों से उसमें थाँवले बनाकर अपनी अञ्जलियों के जल से उन्हें सींचा और पाल-पोषकर बढ़ाया था। उन्हें वह पुत्र के समान ही प्यार देती थीं। उनके पुत्र ब्रह्मचारी दृढदस्यु की तपश्चर्या से वह आश्रम और भी पवित्र हो गया था। वह हाथों में पलाश-दण्ड लिए, मस्तक पर भस्म का टीका (तिलक) लगाये कटि में कुश की लंगोटी तथा मूँज की करधनी पहिने तथा हाथों में हरे पत्तों का दोना लिए हुए एक झोंपड़ी से दूसरी झोंपड़ी तक घूम-घूमकर भीख (भिक्षा) माँग रहे थे। वह जंगल से पिता के अग्निहोत्र के लिए समिधाओं (हवन की लकड़ियो) का गट्ठर बाँधकर लाया करते थे कि पिता ने

उनका दूसरा नाम ही इध्मवाह (हवन की लकड़ियों ढोने वाला) रख दिया था। उस आश्रम के चारों ओर सुग्गों के समान हरे-हरे केलों के वृक्षों की बाड़ लगी हुई थी, जिसको घनी हरियाली से वहाँ कुछ-कुछ अन्धकार-सा छाया रहता था। उस आश्रम से सटी हुई एक ही प्रखर-धारा में बहती हुई गोदावरी नदी ऐसी प्रतीत होती थी मानो एक चोटी वाली समुद्र की विधवा पत्नी अपने पति के पीछे-पीछे उसका समस्त जीवन पी लेने वाले अगस्त्य के आश्रम में चली आयी हो।

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाण ने अलंकृत भाषा-शैली के द्वारा अगस्त्य मुनि के आश्रम का अद्वितीय रमणीय वर्णन किया है।

(2) इस गद्यांश में **उत्प्रेक्षा, रूपक तथा लुप्तोपमा अलंकार** का प्रयोग हुआ है।

यत्र च दशरथवचनमनुपायन्नुत्सृष्टराज्यो दशवदनलक्ष्मीविभ्रमविरामो रामो महामुनिमगस्त्यमनुचरन्सह सीतया लक्ष्मणोपरचितरुचिरपर्णशालः पञ्चवट्यां कंचित्कालं सुखमुवास। चिरशून्येऽद्यापि यत्र शाखानिलीननिभृतपाण्डुकपोत-पङ्क्तयोऽमललग्नतापसाग्निहोत्रधूमराजय इव लक्ष्यन्ते तरवः। बलिकर्मकुसुमान्युद्धरन्त्याः सीतायाः करतलादिव संक्रान्तो यत्र रागः स्फुरति लताकिसलयेषु। यत्र च पीतोद्गीर्णजलनिधिजलमिव मुनिना निखिलमाश्रमोपान्तवर्तिषु विभक्तं महाह्रदेषु। यत्र च दशरथसुतनिशितशरनिकरनिपातनिहतरजनीचरदलबहलरुधिरसिक्तमूलमद्यापि तद्रागाविद्ध निर्गतपलाशमिवाभाति नवकिसलयमरण्यम्।

शब्दार्थ-यत्र च= और जहाँ पर। **दशरथवचनमनुपायन्नुत्सृष्टराज्यो=** दशरथ के वचन का पालन करते हुए, राज्य का परित्याग कर देने वाले। **दशवटनलक्ष्मीविभ्रमविरामो=** रावण के लक्ष्मीविलास के अवसानरूप राम ने। **महामुनिमगस्त्यमनुचरन्=** महर्षि अगस्त्य का अनुसरण करते हुए। **चिरशून्ये=** अधिक काल से शून्य होने पर। **अद्यापि=** आज भी। **यत्र=** जहाँ। **निलीन=** छिपे हुए। **निभृत=** चुप। **पाण्डु=** धूसरित। **लग्न=** लगे हुए। **तापसाग्निहोत्र**= तपस्वियों द्वारा किये गये अग्निहोत्र। **तरवः=** वृक्ष। **उद्धरन्त्याः**= चुनती हुई। **करतलादिव**= हथेली से गई हुई लाली। **सक्रान्ता=** लगी हुई। **स्फुरति=** चमकता है। **लताकिसलयेषु=** लता पल्लवों में। **पीतोद्गीर्ण**= पीकर वमन किया हुआ। **जलनिधिजलमिव**= सागर के जल के समान। **यत्र च दशरथ सुतनिशितशरनिकरनिपातनिहतरजनीचरबल**= जहाँ आज भी दशरथ-पुत्र के बाण-समूह के प्रहार से मारी गई राक्षसों की सेना। **बहलरुधिरसिक्त मूलमद्यापि=** प्रचुर रक्त से सींची गई जड़ों वाला। **निर्गतपलाशमिवाभाति नवकिसलयमरण्यम्=** नये पल्लवों वाला वन उस लाली से युक्त, निकले हुए पलाश के समान लग रहा है।

प्रसंग- यह गद्यांश 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। महाकवि बाण ने अगस्त्य मुनि के आश्रम का अलंकार-प्रधान शैली में प्रभावोत्पादक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जहाँ पिता दशरथ के वचनों का पालन करते हुए राज्य का परित्याग करके दशानन रावण की लक्ष्मी के विलासों का अन्त करने वाले रामसीता के साथ महामुनि अगस्त्य की सुश्रूषा करते हुए पंचवटी में लक्ष्मण द्वारा उपरचित पर्णकुटी में कुछ समय तक सुखपूर्वक रहे थे। बहुत समय से सूना होने पर भी जहाँ आज भी शाखाओं में बैठे निःशब्द धूसर रंग के कबूतरों के कारण वृक्ष ऐसे लगते हैं, जैसे उन पर

तापसों द्वारा किये गये अग्निहोत्रों के धुएँ की पाँतें लिपट गयी हों। बलि-कर्म के निमित्त फूल चुनती सीता की हथेली की लाली जैसे लताओं के पत्तों पर जहाँ आभासित होती है और जहाँ लगता है कि अगस्त्य मुनि द्वारा पीकर वमन किया हुआ समुद्र जल समग्र आश्रम के निकटवर्ती बड़े-बड़े तालाबों में विभक्त है और जहाँ-जहाँ नये-नये किसलयों से युक्त वन ऐसा दिखता है, जैसे दशरथ के पुत्र राम की तीक्ष्ण बाणावली के प्रहार से मरे निशाचरों की सेना के प्रचुर रक्त से जड़ सींची जाने के कारण वे पलाश उसी रक्त से संसक्त होकर निकले हों।

विशेष- चकार कृ + लिट् प्रथम पुरुष एकवचन। उल्लसन्ती-उत् + लस् + शतृ = प्रसन्न होती हुई, अशेष- सम्पूर्ण, योजनबाहु-एक योजन लम्बी भुजा। चक्रतुः कृ + लिट् प्रथम पुरुष, एकवचन। चापकोषस्य में षष्ठी विभक्ति का प्रयोग हुआ है।

अधुनापि यत्र जलधरसमये गम्भीरमभिनव जलधरनिवहनिनादमाकर्ण्य भगवतो रामस्य त्रिभुवनविव-रव्यापिनश्चापघोषस्य स्मरन्तो न गृह्णन्ति शष्पकवलमजस्त्रमश्रुजललुलितदृष्टयो वीक्ष्य शून्या दशो जराजर्जरित-विषाणकोटयो जानकीसंवर्धिताजीर्णमृगाः। यस्मिन्ननवरममृगयानिहतशषवनहरिणौप्रोत्साहित इव कृतसीताविप्रलम्भः कनकमृगो राघवमतिदूरं जहार। यत्र च मैथिलीवियोगदुःख दुःखितौरावणविनाशसूचकौ चन्द्रसूर्याविव कबन्धग्रस्तौ समं रामलक्ष्मणौ त्रिभुवनभयं महच्चक्रतुः। अत्यायतश्च यस्मिन्द शरथसुतबाणनिपातितो योजनबाहोर्बाहुरग-स्त्प्रसादनागतनाहुषाजगरकायशङ्कामकरोद्धषिजनस्य। जनकतनया च भर्त्रा विरहविनोदनार्थमुटजाभ्यन्तरलिखिता यत्र रामनिवास दर्शनोत्सुका पुनरिव धरणीतलादुल्लसन्ती वनचररद्याच्यालोक्यते।

शब्दार्थ-**यत्र**= जहाँ। **जलधरसमये**= वर्षाकाल में। **निवह**= समूह। **निनादम्=** शब्द। **आकर्ण्य**= सुनकर। **विवर**= छिद्र। **चापघोषस्य**= धनुष के घोष का। **स्मरन्तो**= स्मरण (ध्यान) करके। **अजस्त्रम्**= लगातार। **अश्रुजललुलिता**= वियोग के आँसुओं से। **जरार्जरित**= बुढ़ापे के कारण। **विषाण**= सींग। **कोटयः=** नोंक वाले। **जीर्णमृगाः**= बूढ़े हिरण। **अनवरममृगयानिहत**= निरन्तर शिकार में मारे गये हिरण। **विप्रलम्भः**= वंचित करने। **कनकमृगः**= सोने का हिरण मारीच। **जहार**=ले गया। **मैथिलीवियोगदुःखदः**= सीता के वियोग में दुःखी। **विनाशसूचकौ**= विनाश के सूचक। **चन्द्रसूर्याविव**= चन्द्र तथा सूर्य की भाँति। **कबन्धग्रस्तौ=** राहु से ग्रस्त। **महच्चक्रतुः**= महान् किया। **अत्यायतः**= अत्यधिक लम्बी। **अगस्त्यप्रसादनागतनहुषाजगरकायशङ्काम्**= अगस्त्य मुनि को प्रसन्न करने के लिए आये हुए अजगररूपी नहुष। **विरहविनोदनार्थमुटजाभ्यन्तरलिखिता=** दुःख को कम करने के लिए पर्णशाला के अन्दर चित्रित की गयी। **दर्शनोत्सुका=** दर्शनों के लिए उत्सुक। **उल्लसन्तीव**= ऊपर निकलती हुई-सी।

प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। कवि ने अगस्त्य मुनि के आश्रम का अलंकार-प्रधान शैली में प्रभावोत्पादक चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद जहाँ अब भी वर्षाकाल में नये बादलों के गम्भीर गर्जन को सुनकर भगवान राम के त्रिभुवन के अन्तराल में व्याप्त होने वाले धनुर्घोष का स्मरण करते हुए दशों दिशाओं को सूनी देखकर निरन्तर अश्रुजल से परिपूर्ण दीन-दृष्टि वाले बुढ़ापे के कारण जिनके सींगों की नोंकें झड़ गयी हैं, ऐसे जानकी

द्वारा परिपालित बूढ़े मृग घास का कौर नहीं ग्रहण करते। जिसमें निरन्तर होने वाले आखेट में मारे जाने से बचे वन के हरिणों द्वारा मानो उकसाया गया, सीता को वंचित करने वाला स्वर्णमृग रामचन्द्र को बहुत दूर ले गया था। जहाँ मैथिली के वियोग-दुःख से दुःखी दशानन (रावण) के विनाशसूचक, ग्रसे चन्द्र-सूरज के समान कबंध राक्षस द्वारा एक साथ ग्रसे राम-लक्ष्मण ने त्रिभुवन के भय को बढ़ा दिया था, जिसमें दशरथ-पुत्र के बाण से मरे योजनबाहु (कबंध) की भुजा ने ऋषियों में अगस्त्य मुनि को प्रसन्न करने आये नहुष के अजगर-शरीर का भ्रम उत्पन्न का दिया था और जहाँ स्वामी के द्वारा विरह-व्यथा को कम करने के लिए कुटी के भीतर चित्रित सीता जैसे राम का निवास-स्थल देखने को उत्सुक होकर फिर से भूगर्भ से ऊपर उठती हुई आज भी वनचरों द्वारा देखी जाती हैं।

विशेष (1)-इस गद्य में महाकवि बाणभट्ट ने अगस्त्य मुनि के आश्रम का अत्यन्त स्वाभाविक एवं मनोयाही चित्र उपस्थित किया है। उनकी अलंकृत भाषा-शैली में वर्ण्य-विषय को प्रकट करने की अद्वितीय क्षमता है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

    1. किस प्रदेश के अलंकार के समान विन्ध्यावटी वनों की पंक्ति है?
    2. महावराह की दाढ़ द्वारा उखाड़े गए पृथ्वी मण्डल वाली किसे कहा गया है?
    3. विन्ध्याटवी किस प्रदेश की कामिनी के कपोलों के समान है?
    4. महर्षि अगस्त्य का आश्रम कहाँ था?
    5. लक्ष्मण के द्वारा कुटी कहाँ बनाई थी?
    6. समस्त समुद्र का जल किसने पिया था?

10.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में विन्ध्याटवी वन का उत्कृष्ट एवं मनोहारी वर्णन वर्णित है जिसमें अगस्त्य ऋषि का आश्रम था। अगस्त्य ऋषि के गुणों का वर्णन वर्णित है।

10.5 कठिन शब्दावली

1.अटवी – वन **2.करधनी** – कमर में पहनने वाली माला **3.महावर** – पैरों को रंगने वाला रंग **4.नीलकण्ठ** – शिव **5.उन्मत** – मदमस्त

10.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. मध्य प्रदेश 2. विन्ध्याटवी 3. केरल 4. दण्डक वन में 5. पंचवटी 6. अगस्त्य

10.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

10.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. कथामुख के आधार पर विन्ध्याटवी का वर्णन कीजिए।
2. प्रस्तुत गद्य भाग की व्याख्या कीजिए-
   (1) अस्ति .... संच्छादिता।
   (2) क्वाचित प्रलयवेलेव .... शरशतनिचिता।
   (3) अधुनापि .... वनचररद्याच्यालोक्यते।

इकाई-11

पम्पा सरोवर एवं शाल्मलीतरु वर्णन

संरचना

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 पम्पा सरोवर

11.3.1 शाल्मली तरु

- स्वयं आकलन प्रश्न

11.4 सारांश

11.5 कठिन शब्दावली

11.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

11.7 सहायक ग्रन्थ

11.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में पम्पा सरोवर का अत्यन्त स्वाभाविक एवं मनोग्राही वर्णन किया गया है तथा पम्पा सरोवर के किनारे पर स्थित शाल्मली वृक्ष का अत्यन्त ही प्रभावपूर्ण एवं अलंकृत शैली में चित्रण किया गया है।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

- पम्पा सरोवर के कमलों के सौन्दर्य के विषय में ज्ञान होगा।
- शाल्मली वृक्ष के अत्यन्त भव्य एवं उदात्त वर्णन के विषय में जानेंगे।

11.3पम्पा सरोवर

तस्य च संप्रत्यपि प्रकटोपलक्ष्यमाणपूमृवृत्तान्तस्यागस्त्याश्रमस्य नातिदूरे जलनिधिपानप्रकुपितवरुणप्रोत्सा-हितेनागस्त्यमत्सरात्तश्रमसमीपवर्त्यपर इव वेधसा जलनिधिरुत्पादितः, प्रलयकालविघट्टिताष्टदिग्विभागसधिवन्धं गगन-तलमिव भुवि निपतितम् आदिवराहसमुद्धृतधरामण्डलस्थानमिव जलपूरितम् अनवरतमज्ज दुन्मदशबरक मिनीकुचकलश-लुलितजलम् उत्फुल्लमुदकुवलयकह्लरम् उन्निद्रारविन्दमधुबिन्दुनिष्यन्दबद्धचन्द्रकम्

अलिकुलपटलान्धकारित सौगन्धिकम्, सारसितसमदसारसम्, अम्बुरुहमधुपानमत्तकलसकामिहंनीकृतकोलाहलम्, अनेक-जलचरपतङ्गशतसचलन-चलितवाचालवीचिमालम्, अनिलोल्लासितकल्लोलशिखरसीकरारब्धदुर्दिनम् अंशकितावतीर्णाभि-रम्भः क्रीडारागिणीभिः स्नानसमये वनदेवताभिः केशपाशकुसुमैः सुरभीकृतम् एकदेशावतीर्णमुनिजनापूर्यमाणकमण्डलु, कलजलध्वनिमनोहरम् उन्मिषदुत्पलवनमध्चारिभिः सवर्णतया रसितानुमेयः कादम्बैरासेवितम् अभिषेकावतीर्णपुलिन्दराजशबरीकुच-चन्दनधूलिधवलिततरम् उपान्तकेतकीरजः पटलबद्धकूलपुलिनम् आसन्नाश्रमागततापसक्षालितार्द्रवल्कलकषाय-पाटलतटजलम् उपतटवृक्षपल्लवानिलवीजितम्।।

शब्दार्थ- तस्य= उसके। **सम्प्रत्यापि**= इस समय। **प्रकटोपलक्ष्यमाण**= स्पष्ट सी दिखाई देती हुई। **पूर्ववृत्तान्तस्य**= पहले की घटनाओं का वृत्तान्त। **नातिदूरे**= समीप। **कुपित=** क्रुद्ध। **उत्साहितेन**= उकसाये गये। **अपरा इव**= दूसरे के समान। **वेधसा=** विधाता ने। **उत्पादितः**= पैदा किया हुआ। **विघटिताष्ट**= आठों दिशाओं के जोड़े। **भुवि**= पृथ्वी पर। **समुद्धृत**= उठाये हुए। **सलिलपूरितम्**= जल से पूर्ण। **अनवरत=** निरन्तर। **उन्मद्**= उन्मत्त। **लुलित=** चंचल। **उत्फुल्लम्**= खिले हुए। **कह्लार=** श्वेत कमल। **उन्निद्र=** फले हुए। **बद्धचन्द्रकम्=** रचित चन्द्राकृति वाला। **पटल=** समूह। **अलिकुल=** भ्रमरवृन्द। **सारसित**= कें-कें ध्वनि। **समदसारसम्**= मतवाले सारस पक्षी। **अम्बुरुह=** कमल। **कोलाहलम्=** शब्द या ध्वनि। **पतङ्गशत=** सैकड़ों जल-पक्षी। **वीचिमालम्=** लहरों का समूह। **उल्लसित**= उछलती हुई। **कल्लोल**= लहरें। **दुर्दिनम्=** वर्षा ऋतु। **अंशकितावतीर्णाभिरम्भः=** निर्भय स्नान करते समय। **अनुमेयै=** अनुमान करने योग्य। **अभिषेके**= स्नान। **अवतीर्ण=** उतरना। **पुलिन्दराज=** भीलों के राजा। **कुच=** स्तन। **धवलित=** स्वच्छ। **उपान्त=** समीप। **रजः**= पराग। **पटल=** समूह। **आसन्न=** पास में। **क्षालिताद्र=** धोने के कारण गीले। **वल्कल=** जंगली वस्त्र। **पाटल**= गुलाब। **तटजलम्**= किनारा। **उपतट=** उपान्त भूमि। **अनिल**= वायु। **वीजितम्=** पंखा करना।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। कवि ने अपनी अपूर्व कल्पना-शक्ति एवं प्रतिभा के द्वारा प्रत्येक स्थल का सजीव तथा मनोरम चित्र उपस्थित किया है। यहाँ पम्पा सरोवर का अत्यन्त स्वाभाविक एवं मनोग्राही वर्णन है।

हिन्दी अनुवाद- जहाँ पहले की घटनाएँ आज भी स्पष्ट-सी दिखाई पड़ती हैं, उस अगस्त्य के आश्रम से थोड़ी ही दूर पर अथाह, अत्यन्त विस्तृत, अद्वितीय और जल का समुद्र सा पम्पा नाम वाला कमलों से भरा हुआ एक सरोवर था। वह ऐसा प्रतीत होता था मानो समुद्र का समस्त जल पी लेने वाले अगस्त्य को जलाने के लिए क्रुद्ध वरुणदेव से उकसाये गये मानो ब्रह्मा ने उनके आश्रम के समीप एक दूसरा महान् सागर ही उत्पन्न कर दिया है, अथवा मानो प्रलय-काल में आठों दिशाओं की जोड़ें खुल जाने के कारण आकाश-तल ही पृथ्वी पर गिर पड़ा हो या समुद्र के भीतर से आदिवराह द्वारा उठाये गये पृथ्वीमण्डल का उसके जल से भरा हुआ स्थान हो। उसका जल निरन्तर स्नान के समय खेलने वाली मतवाली भीलनियों के कुचकलशों (घड़े के समान गोल-मटोल बड़े-बड़े स्तनों से) टकरा-टकराकर चञ्चल होता रहता था। उसमें कहीं समुद्र (कोई), कहीं कुवलय (नील कमल) और कहीं कह्लार (श्वेत कमल) खिले थे, कहीं फूलों से कमलों द्वारा

टपकी हुई मधु की बूँदें (पुष्प-रस) जल पर फैलकर मोरचन्द्रिकाओं के समान लगती थीं, कहीं भौरों के झुण्डों से ढके श्वेत कमल काले दिखायी पड़ते थे, कहीं मतवाले सारस के-के किया करते थे, कहीं कमलों का रस पी-पीकर मदमाती हंसियाँ कोलाहल किया करती थीं, कहीं सैकड़ों की संख्या में अनेक जलपक्षियों के साथ-साथ तैरने से चञ्चल लहरों में कल-कल हुआ करती थी, कहीं वायु से उठती हुई बड़ी-बड़ी लहरें उछलती हुई ठण्डी-ठण्डी बूँदों की झड़ी लगाये रहती थीं, कहीं निर्भय होकर सरोवर में उतरी हुई जल-क्रीड़ा की प्रेमी वनदेवियाँ स्नान करते समय बालों में गुँथे हुए फूलों से जल को सुगन्धित बना देती थीं, कहीं जल में उतरे हुए मुनियों के कमण्डलु भरने से कुल-कुल की मनोहर ध्वनि सुनाई पड़ती थी, कहीं खिले हुए श्वेत कमलों के बीच समान रंग होने के कारण केवल मधुर ध्वनि से ही पहचान में आने वाले हंसों के झुण्ड तैरा करते थे, कहीं जल में उतरकर स्नान करने वाली पुलिन्दराज (भीलों के स्वामी) की सुन्दरियों के स्तनों पर लगी हुई चन्दन की धूल लहरों को उजली बना देती थीं, कहीं किनारों की रेतियाँ समीप में ही उगे हुए केवड़ों की धूल से पटी रहती थीं, कहीं समीप के आश्रमों से आये हुए मुनि लोग गीली-गीली छालें (तत्काल की उतारी गई वृक्षों की छाल) धो-धोकर किनारे के जल को कसैला और गुलाबी बना देते थे और कहीं किनारों के वृक्ष पंखों के समान हिलते हुए पल्लवों की मन्द-मन्द वायु से जल में कोमल-कोमल लहरियाँ उठाया करते थे। उसके चारों किनारे वन-पंक्तियों से घिरे थे।

विशेष (1)-इस गद्यांश में उत्प्रेक्षा, अनुप्रास, अतिशयोक्ति तथा सन्देह अलंकार का प्रयोग हुआ है।

अविरलतमालवीथ्यन्धकारिताभिर्बालिनिर्वासितेन संचरता प्रतिदिनमृष्यमूकवासिना सुग्रीवेणावलुप्तफललघुल-ताभिरुदवासितापसानां देवतार्चनोपयुक्तकुसुमाभिरुत्पतज्जलचरपक्षपुटविगलित जलबिन्दुसेकसुकुमारकिसलयाभिर्ल-तामण्डपपल्लव शिखण्डिमण्डलारब्धताण्डवाभिरनेक कुसुमपरिमलवाहिनीभिर्वनदेवताभिः स्वश्वासवासिताभिरिव वन-राजिभिरुपरुद्धतीरम् अपरसागरशङ्किभिः सलिलमादातुमवतीर्णैर्जलधरैरिवबहलपंकरलिनैर्वनकरिभिरनवरतमापीयमान-सलिलम् अगाधमनन्तप्रतिममपां निधानं पम्पाभिधानं पद्म सरः।

शब्दार्थ- अविरलतमालवी थ्यन्धकारिताभिः= निरन्तर सघन तमाल-पंक्तियों से अन्धकार युक्त। **बालिनिर्वासितेन=** बालि द्वारा निर्वासित से। **संचरता-प्रतिदिनमृष्यमूकवासिना=** ऋष्यमूक (पर्वत) पर रहने वाले तथा प्रतिदिन घूमने वाले से। **जलबिन्दुसेकसुकुमारकिसलयाभिर्लता- मण्डपपल्लव=** जल की बूँदों से सींचने के कारण सुकोमल पल्लवों से युक्त लतामण्डप के पल्लव। **शिखण्डि=** मयूर। **ताण्डव=** नृत्य। **परिमल=** सुगन्ध। **वाहिनीभिर्वनदेवताभिः=** वहन करने वाली वनदेवताओं के। **वासिताभिरिव=** मानो सुगन्धित के द्वारा। **वनराजिनिरुपरुद्धतीरम्=** पंक्तियों से जिसके तट घिरे थे। **अवतीर्णैः=** उतरे हुओं के द्वारा। **अगाध=** गहरा। **अनन्तम्=** असीम। **अपाम्=** जल का। **निधानं=** खजाना।

प्रसंग- प्रस्तुत प्रसंग महाकवि बाणभट्ट द्वारा रचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। महाकवि ने अपनी अपूर्व कल्पना-शक्ति एवं प्रतिभा के द्वारा प्रत्येक स्थल का सजीव एवं मनोरम चित्र उपस्थित किया

है। उनकी शैली में वर्ण्य विषय को प्रकट करने की अद्वितीय क्षमता है। यहाँ पर पम्पा सरोवर का अत्यन्त स्वाभाविक एवं मनोग्राही चित्र उपस्थित किया गया है।

हिन्दी अनुवाद- जिनमें कहीं घने तमाल वृक्षों के झुरमुट अन्धकार से ढके रहते थे; कहीं फलों से रहित हल्की-फुल्की लताएँ ऐसी प्रतीत होती थीं, मानो बालि द्वारा निकाले गये ऋष्यमूक पर्वत पर घूमने वाले सुग्रीव ने उनके फलों को निर्मूल कर दिया हो, कहीं जल में खड़े होकर तपस्या करने वाले मुनि उनके फूलों को तोड़-तोड़कर देवताओं को चढ़ाया करते थे; कहीं उड़ते हुए जलपक्षियों के पंखों से झरी हुई बूँदों के कारण उनकी भीगी हुई कोपलें और भी लुचलुची हो उठती थीं और कहीं इन लताओं के झुरमुटों में मोर मण्डल बाँधकर नाचा करते थे। तरह-तरह के फूलों की सुगन्ध से वन-पंक्तियाँ इस प्रकार महमहा उठती थीं मानो वन-देवियों ने उन्हें अपनी सांसों से सुवासित कर दिया हो।

विशेष- इस गद्यांश में प्रथमा एकवचनान्त नपुंसकलिङ्ग पद 'सरः' के विशेषण हैं तथा तृतीया बहुवचनान्त पदों के द्वारा 'वनराजिभिः' की विशेषता प्रकट की है।

यत्र च विकचकुवलयप्रभाश्यामायमानपक्षपुटान्यद्यापि मूर्तिमद्रामशापग्रस्तानीव मध्यचारिणामालोक्यन्ते चक्रवाकनाम्नां मिथुनानि।

शब्दार्थ-यत्र= जहाँ। **विकत्व**= खिले हुए। **कुवलय=** नीलकमल। **मध्यचारिणाम्=** बीच-बीच में घूमते हुए। **आलोक्यन्ते=** दिखाई देते हैं। **चक्रवाकनाम्नाम्=** चकवा-चकवी नाम के। **पक्षिणाम्=** पक्षियों के।**मिथुनानि=** जोड़े।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उधृत किया गया है। यहाँ कवि ने पम्पा सरोवर का अत्यधिक स्वाभाविक एवं मनोग्राही वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- वहाँ फूले हुए नीले कमलों की झलक से सांवले पंखों वाले चकवों के जोड़े बीच-बीच में घूमते हुए ऐसे लगते थे मानो वे राम के मूर्तिमान शाप से ग्रस्त हों।

विशेष (1)-इस गद्यांश में कवि ने प्रभावोत्पादक एवं प्रवाहपूर्ण शैली के द्वारा पम्पा सरोवर का अत्यन्त ही सजीव एवं मनोरम वर्णन किया है।

(2) इस गद्यांश में **क्रियोत्प्रेक्षा अलंकार** है।

11.3.1 शाल्मली तरु

तस्यैव विधस्य सरसः पश्चिमे तीरे राघवशरप्रहारजर्जरितजीर्णतालतरुषण्डस्य च समीपे दिग्गजकरदाण्डानुकारिणा जरदजगरेण सततमावेष्टितमूलतया बद्धमहालवाल इव, तुङ्गस्कन्धावलम्बिभिरनिलवेल्लितैरहिनिर्मोकैधृतोतरीय इव, दिक्चक्रवालपरिमाणमिव गृह्णता भुवनान्तरालविप्रकीर्णेन शाखा संचयेन प्रलयकालताण्डवप्रसारितभुजसहस्त्रमुडुपति-शेखरमिव विडम्बयितुमुघतः, पुराणतया पतनभयादिव गगनस्कन्धलग्नः निखिलशरीर व्यापिनोभिरतिदूरोन्नताभिर्जीर्णतया शिराभिरिवपरिगतो व्रततिभिः, जरातिलकबिन्दुभिरिव

कण्टकराचिततनुः, इतस्ततः परिपीतसागरसलिलैर्गगनागतैः पत्ररथैरिव शाखान्तरेषु निलीयमानैः क्षणमम्बुभारालसैराद्रीकृतपल्लवैर्जलधरपटलैरप्यदृष्टशिखरः, उत्तुङ्गत्तयनन्दनवन-श्रियमिवावलोकयितुमभ्युद्यतः।

शब्दार्थ- सरसः= सरोवर। **तीरे**= किनारे पर। **जर्जरित**= विदारित। **जीर्ण=** पुराने। **तालतरुषण्डस्य**= ताड़ वृक्षों का समुदाय। **दिग्गजकरदाण्डानुकारिणा=** दिग्गजों की सूँड़ की समता करने वाले। **जरदजगरेण**= वृद्ध अजगर सर्प। **सततम्**= निरन्तर। **आवेष्टित=** लिपटी हुई। **बद्धमहालवाल इव**= जिसके चारों ओर बड़े आलवाल बने हुए हैं। **वेल्लितः**= कम्पायमान। **अहि**= सर्प। **निर्मोकैः**= सर्पों की केंचुली। **चक्रवाल**= मण्डल। **गृह्णता=** ग्रहण किया। **भुवनान्तराल**= संसार के अन्तरिक्ष में। **प्रसारित=** फैलायी हुई। **भुजसहस्त्रम्=** हजारों भुजाएँ। **उड्डुपति**= चन्द्रमा। **पुराणतया=** प्राचीन। **वायुस्कन्धलग्नः=** आकाशमण्डल से लगा हुआ। **विडम्बयितुम्=** तुलना की विडम्बना करते हुए। **निखिलशरीरव्यापिनोभिः**= समस्त शरीर को व्याप्त कर लेने वाली। **अतिदूरोन्नताभिः=** अत्यधिक उभरी हुई। **परिगतो=** गिरा हुआ। **व्रततिभिः**= लताओं के द्वारा। **जरातिलक=** काले तिल के समान। **आचिततनुः=** व्याप्त शरीर वाला। **पत्ररथैरिव**= पक्षियों के समान। **अन्तरेषु=** भीतर। **निलीयमानैः**= छिपे हुए। **अम्बुभारालसैः=** जल के भार से मन्थर गति वाले। **आद्रीकृत=** भीगे हुए। **पटलैः**= समूह।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी-कथामुखम्' से लिया गया है। कवि ने पम्पा सरोवर के किनारे पर स्थित शाल्मली वृक्ष का अत्यन्त ही प्रभावपूर्ण एवं अलंकृत शैली में चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- उसी पद्मसर के पश्चिमी तट पर राम के बाण-प्रहार से जर्जर पुराने ताड़-वृक्ष समूह के निकट दिग्गज की सूँड़ का अनुकरण करने वाला बूढ़ा अजगर जिसके मूल-भाग में लिपटा हुआ बड़े थाले जैसा प्रतीत होता था, ऊँचे तने में लटकी, हवा में लहराती लतायें सांपों की केंचुली जैसे जिसके उत्तरीय थे, जो दिङ्मण्डल को नापते जैसे जगत-भर में फैले शाखा-समूह के कारण प्रलय बेला में ताण्डवार्थ सहस्रों भुजाएँ फैलाये चन्द्रशेखर शिव का मानो अनुकरण करने को उद्यत प्रतीत होता था, जो पुराना होने के कारण मानो आकाश मे लगा टिका था, सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त बहुत दूर तक उठी बुढ़ापे में उभर आयी शिराआ जैसी लताओं से जो घिरा था, जिसका तना बुढ़ापे में सारी देह में उत्पन्न हो जाने वाले तिलों से तुलना करते तिलों से व्याप्त था, जिसकी चोटियाँ समुद्र का जल पीकर इधर-उधर से गमन- मार्ग से आये, शाखाओं में छिपे, क्षण-भर जल-भार से अलसाये पल्लवों को गीला कर देने वाले पक्षियों से समानता करने वाले बादल भी नहीं देख पाते थे, जो ऊँचा होने से नन्दन कानन की शोभा को देखने को जैसे उद्यत लगता था।

विशेष (1)-इस गद्यांश में कवि ने अपनी अलंकार प्रधान एवं समासबहुला शैली के द्वारा शाल्मली वृक्ष का अत्यन्त भव्य एवं उदात्त वर्णन किया है।

(2) इस गद्यांश में **लुप्तोपमा, क्रियोत्प्रेक्षा, समासोक्ति, अतिशयोक्ति तथा सङ्कर अलंकार** का प्रयोग हुआ है।

स्वसमीपवर्त्तिनामुपरि संचरता गगनतलगमनखेदायासितानां रविरथतुरंगमाणां सृक्कपरिस्रुतैः फेनपटलैः संदेहित-तूलराशिभिर्धवलीवनगजकपोलकण्डूयनलग्नमदनिलीनमत्तमधुकरमालेन लौहश्रृंखलाबन्धननिश्चलेनेव कल्पस्थायिना मूलेन समुपेतः, कोटराभ्यन्तरनिविष्टैः स्फुरद्भिः सजीव इव मधुकरपटलै, दुर्योधन इवोपलक्षितशकुनिपक्षपातः नलिननाभ इव वनमालोपगूढः, नवजलधरव्यूह इव नभसि दर्शितोन्नतिः अखिलभुवनतलावलोकनप्रासाद इव वनदेवतानाम् अधिपतिरिव दण्डकारण्यस्य, नायक इव सर्व वनस्पतीनाम् सखेव विन्ध्यस्य शाखाबाहुभिरुपगुह्योव विन्ध्याटवी स्थतो महान् जीर्णः शाल्मलीवृक्षः।

शब्दार्थ-स्वसमीपवर्त्तिनामुपरि संचरता= अपने समीप वर्तियों के ऊपर चलते हुए। **गगनतलगमन=** आकाश में गमन करने से। **खेदायासितानां=** परिश्रम के खेद से थके हुए। **रविरथ=** सूर्य के रथ के। **स्त्रकपरिश्रुतैः=** ओठों से गिरे हुए। **फेनपटलैः=** फेनों के समूहों से। **लौहश्रृंखलाबन्धन=** लोहे की जंजीर के बन्धन से। **निश्चलेनेव=** अचल हुए-से के द्वारा। **कल्पस्थायिना मूलेन=** कल्प तक स्थायी रहने वाली जड से। **समुपेतः=** युक्त हुआ। **निविष्टैः=** बैठे हुओं के द्वारा। **स्फुराद्धिः=** फुदकते हुए।। **सजीव इव=** प्राणवान् के समान। **उपलक्षित=** दिखाई देता हुआ। **शकुनिपक्षपातः=** पक्षियों के पंखों का गिरना। **नलिननाभ इव=** नाभि में कमल धारण किये हुए विष्णु समान। **उपगूढ=** आलिंगित। **व्यूह इव=** समूह के समान। **दर्शितोन्नतिः=** ऊँचाई दिखाने पाला। **अखिलभुवनतलावलोकनप्रासाद इव वनदेवतानाम्=** सम्पूर्ण पृथ्वीतल को देखने के लिए वन-देवताओं के महल के समान। **अधिपतिरिव दण्डकारण्यस्य=** मानो दण्डकवन का अधिपति हो। **वनस्पतीनाम्=** वनस्पतियों का। **सखेव=** मित्र के समान। **विन्ध्यस्य=** विन्ध्याचल के। **शाखाबाहुभिरुपगुह्योव=** अपनी शाखारूपी भुजाओं से आलिङ्गन करते हुए के समान। **विन्ध्याटवी=** विन्ध्याचल का वन। **स्थितो महान् जीर्णः शाल्मलीवृक्षः=** बहुत पुराना शाल्मली वृक्ष स्थित था।

प्रसंग- इस गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। कवि ने पम्पा सरोवर के किनारे पर स्थित शाल्मली वृक्ष का अत्यन्त प्रभावपूर्ण एवं अलंकृत शैली में वर्णन किया है। वस्तुतः इसका वर्णन पाठक को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। यहाँ उसी वृक्ष का विविध उपमानों के द्वारा चित्रण किया गया है।

हिन्दी अनुवाद - निकट होकर ऊपर संचरण करते, आकाश-मार्ग में चलने के परिश्रम से खिन्न सूर्य के रथ के अश्वों के मुख से निकलकर गिरे फेन जिसकी चोटी की शाखाओं को सफेद करके जैसे रुई का भ्रम उत्पन्न करा देते थे, वनहस्तियों द्वारा कपोलों को खुजाने से लगे मद पर बैठे मदमाते मधुकरों की माला के कारण जिसका मूल भाग लोहे की साँकल से बँधकर अचल होकर कल्पपर्यन्त स्थिर हो, ऐसा प्रतीत होता था, कोटरों में भीतर डोलते मधुकर-समूह से सजीव जैसा, पक्षियों के गिरे हुए पंख जिस पर दिखने के कारण जो मामा शकुनि के प्रति प्रत्यक्ष पक्षपात रखते दुर्योधन जैसा लगता था, वन पंक्ति से युक्त होने के कारण वनमाला विभूषित नाभि में कमल धारण किये हुए विष्णु जैसा-नभ आकाश तक ऊँचा होने के कारण नभ-

सावन के महीने में प्रकट होने वाली नवीन मेघमाला जैसा, समस्त भुवनों का निरीक्षण करने के लिए वन-देवताओं के ऊँचे महल जैसा, दण्डक वन का मानो स्वामी, सब वनस्पतियों का नायक जैसा, विन्ध्याचल का मानो मित्र विन्ध्यटवी का जैसे शाखारूपी भुजाओं से आलिंगन करके खड़ा वृद्ध शाल्मली वृक्ष था।

विशेष (1)- अलंकारप्रधान एवं समासबहुला शैली के द्वारा महाकवि बाणभट्ट के द्वारा शाल्मली वृक्ष का अत्यन्त भव्य एवं उदात्त वर्णन किया गया है। उनकी भाषा ओज-गुण सम्पन्न है तथा शैली में पाञ्चाली रीति का स्वाभाविक प्रयोग है। इनके चित्रण पाटक की बुद्धि पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं।

तत्र च शाखाग्रेषु कोटरोदरेषु पल्लवान्तरेषु स्कन्धसन्धिषु जीर्णवल्कलविवरेषु च महावकाशतया विश्रब्ध विर-चितकुलायसहस्राणि दुरारोहतया विगलितविनाशभयानि नानादेशसमागतानि शुकशकुनिकुलानि प्रतिवसन्ति स्म। यैः परिणामविरलदलसंहतिरपि स वनस्पतिरविरलदलनिचयः श्यामल इवोपलक्ष्यते दिवानिशं निलीनैः।

शब्दार्थ तत्र= वहाँ। **कोटरोदरेषु=** कोटरों के मध्य भाग में। **पल्लवान्तरेषु=** पत्तों के भीतर। **स्कन्धसन्धिषु=** शाखाओं के जोड़ों में। **विवरेषु=** छिद्रों में। **महावकाशतया=** प्रभूत अधिक स्थान होने के कारण। **कुलाय=** घोंसले। **दुरारोहतया=** कठिनाई से चढ़े जाने योग्य। **कुलानि=** समूह। **संहतिरपि=** समुदाय भी। **निलीनैः=** छिपे हुओं के द्वारा।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी-कथामुखम्' से उद्धृत है। कवि ने पम्पा सरोवर के किनारे स्थित शाल्मली वृक्ष का अत्यन्त प्रभावपूर्ण एवं अलंकृत शैली में वर्णन किया है। वस्तुतः इनका वर्णन पाठक को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेता है।

हिन्दी अनुवाद- और वहाँ (वृक्ष की) शाखाओं के अग्रभागों में कोटरों के मध्य भागों, पत्तों के बीच में तथा शाखाओं के जोड़ों में, पुराने वल्कल के छिद्रों में पर्याप्त स्थान होने के कारण निर्भय रूप से हजारों घोंसलों को बनाकर वृक्ष पर चढ़ना कठिन होने के कारण (अत्यधिक ऊँचाई के कारण जिस पर चढ़ना कठिन था ऐसा मानकर) विगतभय हुए अनेक देशों से आये हुए शुक (एवं) पक्षियों के समुदाय निवास करते थे। जिनके दिन-रात बैठे रहने के कारण, पकने के कारण विरल (कम) पत्र समुदाय वाला होने पर भी वह वनस्पति (शाल्मली वृक्ष) सघन पत्र-समूह से श्यामल-सा दिखाई देता था।

विशेष- महाकवि बाण की कल्पना-शक्ति निसंदेह उच्चकोटि की है। उन्होंने अपनी अद्वितीय प्रतिभा के द्वारा शाल्मली वृक्ष का अत्यन्त सजीव चित्रण किया है। अलंकारमयी एवं समासबहुला शैली के द्वारा उनके चित्रण कहीं-कहीं पर अत्यन्त कठिन भी हो गये हैं।

ते च तस्मिन्नतिवाह्यातिवाह्य निशामात्मनीडेषु प्रतिदिनमुत्थायोत्थायाहारान्वेषणाय नभसि विरचितपङ्क्तयः मदकलहलधरहलमुखोत्क्षेपविकीणबहुस्रोतररामम्बरतले कलिन्दकन्यामिव दर्शयन्तः, सुरगजोन्मूलितविगलदाकाशगंगा-कमलिनीशङ्कामुत्पादयन्तः, संचारिणीमिव मरकतस्थलीम् विडम्ब्यन्तः शैवालपल्लवावलीमिवाम्बरसरसि प्रसारयन्तः, गगनविततै पक्षपुटैः कदलीदलैरिव

दिनकरखरकरनिकरपरिखेदितान्याशामुखनि वीजयन्तः, वियत विसारिणी शष्पवीथी-मिवारचयन्त, सेन्द्रायुधमिवान्तरिक्षमादधाना विचरन्ति स्म शुकशकुनयः।

शब्दार्थ- तस्मिन्= उस पर। **अतिवाह्य=** व्यतीत कर। **निशाम्=** रात को। **नीडेषु=** घोंसलों में। **उत्थाय=** उठकर। **आहारान्वेषणाय=** भोजन की खोज के निए। **नभसि=** आकाश में। **विरचितपङ्क्तयः=** पंक्तियाँ बनाकर। **मदकल=** मद से सुन्दर। **हलधर=** बलराम। **हलमुखोत्क्षेप=** हल के अग्र भाग से उठायी गयी। **विकीर्ण=** फैले हुए। **बहुस्रोतस=** अनेक धाराओं। **अम्बरतले=** आकाश में। **दर्शयन्तः=** दिखाते हुए। **उन्मूलित=** उखाड़े हुए। **विगलत्=** नीचे गिरती हुई। **उपजनयन्तः=** उत्पन्न करते हुए। **संचारिणीमिव=** मानो घूमती-फिरती। **विडम्ब्यन्तः=** अनुकरण करते हुए। **अम्बरसरसि=** अम्बररूपी सरोवर में। **प्रसारयन्तः=** बिखेरते हुए। **पक्षपुटैः=** पंखों से। **करनिकर=** किरण समुदाय। **खेदितानि=** मुरझाये हुए। **वीजयन्तः=**पंखा हिलाते हुए। **वियत्=** आकाश में। **विसारिणी=** फैली हुई। **सेन्द्रायुधमिव=** इन्द्रधनुष से युक्त। **विचरन्ति स्म=** विवरण करते थे।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ कवि ने वर्णन किया है कि उस शाल्मली वृक्ष के घोंसलों में वैशम्पायन के माता-पिता रहते थे। वहीं इसका जन्म हुआ, उसी का अत्यन्त प्रभावोत्पादक चित्रण किया गया है।

हिन्दी अनुवाद- वे पक्षी उस वृक्ष में अपने घोंसलों के अन्दर रात्रि बिता-बिताकर प्रतिदिन उठ उठकर आहार खोजने के लिए आकाश में पंक्तियाँ बनाये हुए मानो मद से सुन्दर बलराम के हल के अग्रभाग द्वारा फेंकने से बिखरी हुई अनेक धाराओं वाली यमुना को आकाश तल में दिखाते हुए, देवताओं की हाथी ऐरावत द्वारा उखाड़ी जाती हुई आकाश-गंगा की कमलिनियों की शङ्का उत्पन्न करते हुए, आकाश तल को सूर्य के रथ के घोड़ों की कान्ति से अनुलिप्त-सा प्रदर्शित करते हुए, चलती-फिरती मरकत (मणियों से निर्मित) स्थली का अनुकरण करते हुए (या तिरस्कार करते हुए), आकाशरूपी सरोवर में मानो शैवाल के पल्लवों की पंक्तियों को फैलाते हुए, आकाश में फैले हुए, पंख समूहों से मानो केले के पत्तों से सूर्य की प्रखर किरणों के समूह के कारण खिन्न दिशा-मुखों को पंखा हिलाते हुए मानो आकाश में विस्तृत बाल-तृणों के मार्ग की रचना करते हुए मानो अन्तरिक्ष को इन्द्रधनुष से युक्त बनाते हुए घूमते थे।

विशेष (1)-इस गद्यांश का भाव यह है कि महाकवि बाणभट्ट ने अपनी नवोन्मेषशालिनी दिव्य प्रतिभा से कादम्बरी की काल्पनिक कथा को एक सजीवता उत्पन्न कर दी है।

(2) इस गद्यांश में **उत्प्रेक्षा तथा सङ्कर अलंकार** का प्रयोग हुआ है।

कृताहाराश्च पुनः प्रतिनिवृत्त्यात्मकुलायायस्थितेभ्यः शावकेभ्यो विविधान् फलरसान् कलममञ्जरीविकारांश्च प्रहत-हरिणरुधिरानुरक्तशार्दूलनखकोटिपाटलेन चञ्चुपुटेन दत्त्वा दत्त्वाधरीकृतसर्वस्नेहनासाधारणेन गुरुणाऽपत्यप्रेम्णा तस्मिन्नेव क्रोडान्तर्निहिततनयाः क्षपाः क्षपयन्ति स्म।

शब्दार्थ-कृताहाराश्च= भोजन करने के बाद। **प्रतिनिवृत्त्य=** लौटकर। **आत्यकुलाय** = अपने घोंसलों से। **अवस्थितेभ्यः=** स्थित होते हुए। **शावकेभ्यः=** बच्चों को। **त्रिविधान्=** विभिन्न तरह के। **फलरसान्=** फलों

का रस। **कल**=सुन्दर। **विकारांश्च=** दाने। **शार्दूल**= सिंह। **कोटिपाटलेन**= पूर्वभाग के समान। **चञ्चुपुटेन=** चोंच द्वारा। **दत्त्वा=** देकर। **अधरीकृत**= नीचा करते हुए। **असाधारणेन**= असामान्य। **क्षपाः**= रात्रि। **क्षपयन्ति स्म=** व्यतीत करते थे।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी-कथामुखम्' से उद्धृत है। कवि ने यहाँ उस शाल्मली वृक्ष के घोंसले का जिसमें वैशम्पायन के माता-पिता रहते थे और वहीं इसका जन्म हुआ था, अत्यधिक प्रभावोत्पादक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- आहार करके फिर से लौटकर अपने घोंसलों में बैठे हुए बच्चों के लिए विभिन्न फलों के रसों, कलम (धान्य विशेष) की मञ्जरियों के कणों (विकारों) को मारे गये हरिण के रक्त से लाल सिंह के नखाग्र के समान चञ्चु (चोंच) से दे-देकर सभी प्रकार के स्नेह को नीचा करने वाले असाधारण, बड़े सन्तान-प्रेम से अपने अंक में छिपाये हुए पुत्रों वाले (वे पक्षी) उसी वृक्ष पर रात्रियाँ व्यतीत करते थे।

विशेष (1)-महाकवि बाण ने अपनी उद्भट कल्पना-शक्ति के द्वारा 'कादम्बरी' के कथानक को अति रंजित कर दिया है। उनकी वर्णन-चातुरी इतनी अगम्य है कि उसके द्वारा नाना प्रकार के चित्र पाठक के समक्ष प्रस्तुत हो जाते हैं और पाठक उन वर्णनों के घटाटोप में वास्तविक कथा को भूल जाता है। सर्वत्र विभिन्न अलंकारों का प्रयोग उसको और चित्रोपम बना देता है।

(2) प्रस्तुत गद्यांश में **लुप्तोपमा अलंकार** है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. पम्पा सरोवर कादम्बरी के किस भाग में वर्णित है?
2. पुराने ताड़ के वृक्ष के टुकड़े के समीप एक विशाल .... का वृक्ष था।
3. सब वनस्पतियों का नायक किस वृक्ष को कहा गया है?
4. पम्पा सरोवर में किन फूलों से भरा हुआ था?
5. अगस्त्य आश्रम से कुछ दूरी पर .... स्थित था?

11.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में पम्पा सरोवर एवं शाल्मली तरु का वर्णन वर्णित है।

11.5 कठिन शब्दावली

1.शतम्-सौ **2.शर**-बाण **3.परिमल**-सुगन्ध **4.धवलित**-स्वच्छ

11.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. कथामुख 2. शाल्मली 3. शाल्मली वृक्ष 4. कमल के फूलों 5. पम्पा सरोवर

11.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

11.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. पम्पा सरोवर का वर्णन कीजिए।
2. शाल्मली वृक्ष का वर्णन कीजिए।
3. प्रस्तुत गद्य की व्याख्या कीजिए-
    - (1) तस्य च .... पद्म सरः।
    - (2) स्वसमीपवर्त्तिनामुपरि .... शाल्मलीवृक्षः।

इकाई-12

शुक वर्णन

संरचना

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 शुक जन्म वृत्तान्त

12.3.1 प्रभात वर्णन

12.3.2 शुक-शावक वर्णन

12.3.3 शबर-मृगया वर्णन

- स्वयं आकलन प्रश्न

12.4 सारांश

12.5 कठिन शब्दावली

12.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

12.7 सहायक ग्रन्थ

12.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई शाल्मली वृक्ष पर रहने वाले शुक एवं उसके जन्म एवं वृद्ध पिता का वर्णन किया गया है। शुक वैशम्पायन द्वारा प्रात: काल का अलंकारिक शैली से वर्णन किया गया है। इस इकाईमें शुक राजा शूद्रक से शबर-मृगया के बारे में बताता है। यहाँ भीलों के शिकार का अत्यन्त सजीव वर्णन किया गया है।

12.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- शुक के जन्म की कहानी को विस्तार से जानेंगे।
- प्रभात वर्णन को मनोमुग्धकारी वर्णन के विषय में जानेंगे।
- शबर सेना एवं उसके सेनापति के विषय में जानेंगे।

12.3शुक जन्म वृत्तान्त

एकस्मिश्च जीर्णकोटरे जायया सह निवसतः पश्चिमे वयसि वर्तमानस्य कथमपि पितुरहमेवैको विधिवशात् सूनुर- भवम्। अतिप्रबलया चाभिभूता ममैव जायमानस्य प्रसववेदनया जननी मे परलोकमगमत्। अभिमतजायाविनाश-दुःखितोऽपि खलु तातः सुतस्नेहादन्तर्निगृह्य पटुप्रसरमपि शोकमेकाकी मत्संवर्धनपर एवाभवत्। अतिपरिणतवयाश्च कुशचीरानुकारिणीमल्पावशिष्टजाणपिच्छ जानजर्जरामवस्त्रस्तांसदेशशिथिलामपगतोत्पतनसंस्कारां पक्षसन्ततिमुदवहन् उपारूढकम्पतया सन्तापकरिणीमङ्गलग्नां जरामिव विधुन्वन् अकठोरशेफालिकाकुसुमनालपञ्जिरेण कलममञ्जरीदलन-मसृणित क्षीणोपान्तलेखेन स्फुटिताग्रकोटिना चञ्चुपुटेन परनीऽपतिताभ्यः शालिबल्लरीभ्यस्तण्डुलकणानादायादाय तरुमूलनिपतितानि च शुककुलावदलितानि फलशकलानि समाहृत्य परिभ्रमितमशक्तो महामदात्। प्रतिदिवसमात्मना च मदुपमुक्त्शेषमकरोदशनम्।

शब्दार्थ- एकस्मिश्च= उसके ही। **जीर्णकोटरे**= पुराना खोखला। **जायया सह=** स्त्री के साथ। **पश्चिमे वयसि**= वृद्धावस्था में। **विधिवशात्**= भाग्य से। **सुनु**= पुत्र। **चाभिभूता**= पीड़ित। **अतिप्रबलया**= अत्यन्त असहनीय। **प्रसववेदनया=** प्रसवकाल में। **परलोकमगमत्=** स्वर्ग-लोक चली गई। **अभिमत=** प्यारी। **खलु**= निश्चय ही। **सुतस्नेहात्=** पुत्र-प्रेम के कारण। **अन्तर्निगृह्य=** शोक को छिपाकर। **मत्संवर्धन**= लालन-पालन में। **कुशचीर=** कुश के चिथड़े। **जीणपिच्छजालजर्जरम्=** पुराने पंखों के जाल से जर्जर। **पक्षसन्ततिमुदवहन**= पंख समुदाय धारण करने वाले। **अङ्गलग्नाम्=** अंगों से चिपकी हुई। **शेफालिकाकुसुमनालपञ्जिरेण=** कोमल हार-सिंगार फूल की डंडी के समान सुनहरे रंग के। **मसृणित=** चिकनी। **उपान्तलेखेन=** किनारे की रेखा। **स्फुटिताग्रकोटिना**= टूटी हुई पूर्वभाग की नोंक। **चञ्चपुटेन**= चोंच से। **परनीऽपतिताभ्यः**= अन्य घोंसलों से गिरी हुई। **वदलितानि=** कुतरे हुए। **समाहृत्य=** इकट्ठे करके। **अदात्**= देते थे। **आत्मना**= स्वयं। **मकरोदशनम्**= खाते थे।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी-कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ कवि ने शाल्मली वृक्ष का अत्यन्त प्रभावशाली वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- वहाँ पर अपनी पत्नी के साथ एक पुराने खोखले में रहते थे, अपने पिता की ढलती आयु में भाग्यवश अकेला ही पुत्र हुआ। अत्यन्त प्रबल प्रसव पीड़ा से हारी मेरी जन्मदात्री मेरे उत्पन्न होते ही परलोक (स्वर्ग-लोक) को चली गयी। प्रिय पत्नी की मृत्यु से दुःखित मेरे पिता पुत्र-प्रेम से दारुण शोक को मन में छिपाकर अकेले मेरे परिपालन में तत्पर हुए। बहुत बूढ़े हो जाने से पुराने वस्त्र-खण्ड का अनुकरण करते, थोड़े से बचे हुए परों से जर्जर, स्कन्ध भाग में जोड़ों के ढीले हो जाने से उड़ने की क्षमता से विहीन पंखों को धारण करते, कम्प उत्पन्न हो जाने से जैसे कष्ट देने वाले, अंगों में लगे बुढ़ापे को झटकारते हुए, दूर जाने में असमर्थ अतः कोमल हरसिंगार के फूलों के वृन्त के समान पिंगल, कलमधान की मञ्जरियाँ कुतरने से चिकनी और घिसी प्रान्तसमीप रेखा वाली तथा टूटी नोंक वाली चोंच से दूसरों के घोसलों से गिरी हुई धानमञ्जरियों ने तण्डुल के कण ला-लाकर और वृक्ष की जड़ में गिरे तोतों के द्वारा कुतरे फलों के टुकड़े एकत्र कर मुझे देते थे और प्रतिदिन मेरे द्वारा बचा हुआ भोजन स्वयं करते थे।

विशेष (1)इस गद्यांश में महाकवि बाण ने शाल्मली वृक्ष का विभिन्न उपमानों के द्वारा अत्यन्त सौन्दर्यशाली वर्णन किया है। इनकी अलंकृत भाषा-शैली अत्यन्त सजीव एवं चमत्कारपूर्ण है। इन्होंने प्रत्येक

वर्णन में एक अपूर्व लावण्य और सजीवता उत्पन्न कर दी है। वस्तुतः संस्कृत गद्य-साहित्य में बाणभट्ट का अद्वितीय स्थान है।

(2) इस गद्यांश में स्पट रूप से **उत्प्रेक्षा एवं लुप्तोपमा अलंकार है तथा बहुव्रीहि** समास है।

12.3.1 प्रभात वर्णन

एकदा तु प्रभातसंध्यारागलोहिते गगनतले कमलिनीमधुरक्त्पक्षपुटे वृद्धहस इव मन्दाकिनीपुलिनादपर-जलनिधितटमवतरति चन्द्रमसि, परिणतरङ्कुरोमपाण्डुनि व्रजति विशालतामाशाचक्रवाले, गजरुधिररक्त्हरिसटालोहिनीभिः प्रतप्तलाक्षिकतन्तुपाटलाभिरायामिनीभिरशिशिरकिरणदीधितिभिः पद्मरागशलाकासंमार्जनीभिरिव समुत्सार्यमाणे गगन-कुट्टिमकुसुमप्रकरे तारागणे, सन्ध्यामुपासितुमुत्तराशावलम्बिनि मानससरस्तीरमिवावतरति सप्तर्षिमण्डले, तटगतविघटित-शुक्तिसंपुटविकीर्णमरुणकरप्रेरणाधोगलितमुडुगणमिव मुक्ताफलनिकरमुद्वहति धवलितपुलिनमुदन्वति पूर्वेतरे।

शब्दार्थ- एकदा तु= एक समय। **प्रभातसंध्यारागलोहिते**= प्रात कालीन सन्ध्या की लालिमा के समान रक्त्। **गगनतले=** आकाश के। **कमलिनीमधुरक्त्पक्षपुटे=** कमलिनी के मधु से लाल पंखों वाले। **पाण्डुनि=** पीली। रंकु=हरिण। **रोम**= बाल। **लाक्षिक=** लाख के। **आयामिनीभिः**= लम्बी। **अशिशिर=** गर्म सूर्य। **पद्मरागशलाकासंमार्जनीभिरिव**= मानो पद्मराग मणियों की सलाइयों से बनी हुई बुहारी से। **समुत्यर्य्य=** दूर किये जाते हुए। **गगनकुट्टिमकुसुमप्रकरे**= गगन के फर्श पर बिखरे हुए फूल समूह के। **उपासितुम्**= पूजा करने के लिए। **उत्तराशा**= उत्तर दिशा। **अवलम्बिनि**= लटके हुए। **अवतरित=** उतरने पर। **तटगत**= किनारे पर। **विघटित**= टूटी हुई। **शुक्ति**= सीपी। **विप्रकीर्णम्=** बिखरे हुए। **अरुणकर**= सूर्य। **प्रेरणा**= द्वारा। **अधोगलित=** नीचे गिराये हुए। **उडुगण=** तारों का समूह। **उद्वहति**= धारण करते हुए। **उदन्वति**= सागर के।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा रचित 'कादम्बरी' से उधृत किया गया है। कवि ने वैशम्पायन शुक द्वारा प्रातःकाल का आलंकारिक शैली में भव्य एवं उदात्त वर्णन कराया है। शुक राजा शूद्रक से कहता है।

हिन्दी अनुवाद- एक बार प्रभातकालीन संध्या की लालिमा या रंग से गगन-तल के लाल हो जाने पर चन्द्रमा मानो कमलिनी के मधु से लाल पंख समूह वाले वृद्ध हंस के समान था, आकाशगंगा के रेतीले तट से दूसरे अर्थात् पश्चिम समुद्र के तट पर उतरने पर, वृद्ध रंकु नामक मृग के रोमों के समान पाण्डु दिशा-समूह के विस्तार को प्राप्त कर लेने पर हाथी के रुधिर से लाल सिंह के केसर के बालों के समान आरक्त तथा तपाये हुए लाख के तन्तुओं के समान गुलाबी लम्बी-लम्बी सूर्य की किरणों से मानो पद्मराग शलाकाओं की झुंडों से आकाशरूपी फर्श के कुसुम समूह के समान तारागणों को दूर कर दिये जाने पर उत्तर दिशा में लटके हुए सप्तऋषि मण्डल के मानो प्रातःकालीन संध्या की उपासना के लिए मानसरोवर के किनारे उतरने पर,

पश्चिम समुद्र के तटपर फूटी हुई सीपियों के संपुट के बिखरे हुए थे उन्होंने, पुलिन को धवल बना दिया था, जिससे ज्ञात होता था, मानो सूर्य-किरणों ने तारा-समूह को धराशायी कर दिया हो।

विशेष- इस गद्यांश में प्रातःकाल लुप्त होते तारों को झाडू से एकत्र किए जाते हुए पुष्पों का समूह बताया गया है। यहाँ कवि द्वारा प्रातःकाल का आलंकारिक शैली में वर्णन किया गया है।

तुषारबिन्दुवर्षिणि विबुद्धशिखिकुले विजृम्भमाणकेशरिणिकरिणीकदम्बकप्रबोध्यमानसमदकरिणि क्षपाजल-जडकेशरं कुसुमनिकरमुदयगिरिशिखरस्थितं सवितारमिवोद्दिश्य पल्लवाञ्जलिभिः समुत्सृजति कानने रासभरोमधूसरासु वनदेवताप्रसादानां तरुणां शिखरेषु पारवतमालायमानासु धर्मपताकास्विव समुन्मिषन्तीषु तपोवनाग्निहोत्रधूमलेखासु, अवश्यामीकरिणि ललितकमलवने रतिखिन्नशबरसीमन्तिनीस्वेदजलकणापहारिणि वनमहिषरोमन्थफेन बिन्दुवाहिनि चलितपल्लवलतालास्योपदेशव्यसनिनि विघटमानकमलखण्डमधुसीकरासारवर्षिणि कुसुमामोदतर्पितालिजाले निशावसान-जातजडिम्न मन्दमन्दसंचारिणि प्रवाति प्राभातिके मातरश्वनि।

शब्दार्थ-तुषारबिन्दुवर्षिणि= ओस के बिन्दुओं की वर्षा। **विबुद्ध**= जागृत। **शिखिकुले**= मयूरों का समूह। **कदम्बक**= समूह। **क्षपा**= रात्रि। **सवितारं**= सूर्य। **समुत्सृजति=** छोड़ रही थी। **रासभ**= गधा। **रोम=** रोंगटे। **वनदेवता**= वनदेवियाँ। **प्रसादानां**= महल। **शिखरेषु**= चोटियों पर। **पारावतम्**= कबूतर। **आलयमानासु**= पंक्तियाँ जैसी। **समुन्मिषन्तीषु**= प्रतीत होती हुई। **अवश्याय**= ओस की बूँदों से युक्त। **लुलित**= कुम्पित। **खिन्न**= थके हुए। **शबर सीमान्तिनी=** शबर स्त्रियों के। **स्वेदजलकण**= पसीने की बूँदें। **अपहारिणी**= सुखाने वाली। **महिष**= भैंसा। **रोमन्थ**= जुगाली। **वाहिनि**= ले जाने वाली। **लास्य**= नृत्य। **अपदेश**= बहाना। **व्यसनिनि**= व्यसन वाली। **विघटमान=** विकसित होते हुए। **आसार=** घनी। **जडिम्नि=** शीतलता, जड़ता। **प्रवाति**=वायु के चलने पर। **मातरश्विनि=** वायु या हवा। घनी। **तर्पित=** सन्तुष्ट। **अलिजाले=** भ्रमर समूह। **प्रभातिक=** प्रातःकाल में। **मातरश्विनि**= वायु या हवा।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी-कथामुखम्' से लिया गया है। कवि ने वैशम्पायन शुक द्वारा प्रातःकाल का आलंकारिक शैली में भव्य एवं उदात्त वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- ओस की बूँदों की वर्षा हो रही थी, मोरों के झुण्ड जाग चुके थे, सिंह जम्भाई ले रहे थे। हथिनियों के समूह द्वारा मद-युक्त हाथी जगाये जा रहे थे, पल्लवरूपी अञ्जलियों से उदयाचल के शिखर पर स्थित सूर्य को उद्देश्य करके, रात्रि जल (ओस) से निश्चल केसर वाले पुष्प समूह को पूजा के लिए चढ़ाये जाने पर, गधे के बालों के समान धूसर वृक्षरूपी वनदेवियों के महलों के शिखरों पर कबूतरों की पंक्ति प्रतीत होती हुई धर्मपताका तपोवन के अग्निहोत्र की धूम रेखाओं के मानो ऊपर उठने वाली थी। ओस की बूँदों से युक्त कमल वन को कम्पित करने वाली, रति से खिन्न शबर स्त्रियों के पसीने के जलकणों को सुखाने वाली, जंगली भैंसों की जुगाली के फेन-बिन्दुओं को वहन करने वाली, कम्पित पल्लवों वाली लता के नृत्य के शिक्षण के व्यसन वाली, खिलते हुए कमल-वनों के मधु कणों को घनी वर्षा वाली, पुष्पों की सुगन्ध से भ्रमर

समूह को तृप्त करने वाली, रात्रि के अवसान से उत्पन्न स्थिरता (या शीतलता) वाली, धीरे-धीरे बहने वाली प्रभातकालीन वायु (हवा) चल रही थी।

विशेष (1)- महाकवि बाण पाञ्चाली रीति के प्रमुख आचार्य हैं, जो ओज गुण-सम्पन्न है। अपनी वाक्य-प्रतिभा के द्वारा इस गद्यांश में वैशम्पायन शुक द्वारा प्रातःकालीन चित्रण भव्य एवं उदात्त रूप में किया है। जो अत्यन्त ही मनोमुग्धकारी है, उपमा तथा उत्प्रेक्षा अलंकारों के द्वारा उसमें प्राणवत्ता एवं चमत्कार का सुन्दर प्रदर्शन है।

(2) इस गद्यांश में उत्प्रेक्षा, लुप्तोपमा, सङ्कर, समासोक्ति और रूपक अलंकार है। "धारा सम्पात आसारः" में अमरकोश है।

12.3.2 शुक-शावक वर्णन

कमलवनप्रबोधमङ्गलपाठकानामिभगण्डडिण्डिमानां मधुलिहा कुमुदोदरेषु विघटमानदलपुटनिरुद्धपक्षसंहती-नामुच्चरत्सु हुङ्कारेषु प्रभातशिशिरवाय्वाहतमुत्तप्तजतुरसाश्लिष्ट पक्ष्मालमिव सशेषनिद्राजिह्मतारं चक्षुरुन्मीलयत्सु शनैः शनैरुषरशय्याधूसरक्रोडरोमराजिषु वनमृगेषु, इतस्ततः संचरत्सु वनचरेषु विजृम्भमाणे क्षोत्रहारिणि पम्पासरः कलहंस कोलाहले, समुल्लसति नार्त्तिशिखण्डिमण्डले मनोहरं वनगजकर्णतालशब्दे, क्रमेण च गगनतलमवतरतो दिवसकरवारण-स्यावचूडचामरकलाप इवोपलक्ष्यमाणे मञ्जिष्ठारागलोहिते किरणजालैः शनैः-शनैः रुदिते भगवति, सवितरि, पम्पासरः पर्यन्ततरुशिखरसंचारिण्यध्यासितगिरिशिखरे दिवसकरजन्मनि हृततारे पुनरिव कपीश्वरे वनमभिपतति बालातपे, स्पष्टे जाते प्रत्युषसि, नचिरादिव दिवसाष्टमभागभाजि स्पष्टभासि भास्वतिभूते, प्रयातेषु यथाभिमतानिदिगन्तराणि शुककुलेषु, कुलायनिलीननिभृतशुकशावकसनाथेऽपि निःशब्दतया शून्य इव तस्मिन् वनस्पतौ, स्वनीडावस्थित एव ताते, मयि च शैशवादसंजातबलेसमुद्भिद्यमानपक्षपुटेः पितु समीपवर्तिनि कोटरगते।

शब्दार्थ- प्रबोध= जाग्रत। **इभगण्ड=** हाथी का गण्डस्थल। **मधुलिहा**= भौरे। **कुमुदोदरेषु**= कुमुदों का मध्य भाग। **विघटमान=** संकोच करती हुई। **निरुद्ध=** फँसे हुए। **उच्चरत्सु**= उच्चारण करने पर। **आहत=** ताड़ित। **जतुरस**= लाख का रस। **पक्ष्ममालम्=** पलकों का समूह। **जिह्नितताराम्**= सुस्त तारे। **उन्मीलयत्सु**= खोलने पर। **इतस्ततः**= इधर-उधर। **संचरत्सु=** घूमते हुए। **विजृम्भमाणे**= बढ़ने से। **क्षोत्रहारिणि**= कानों को आकृष्ट करते हुए। **शिखण्डि**= मयूर। **वनगजकर्ण**= हाथियों के कान। **तालशब्दे=** करतलध्वनि। **क्रमेण=** लगातार। **अवतरतः**= उतरते हुए। **वारणस्य**= हाथी। **अवचूड**= कान,**उपलक्ष्यमाणे**= दिखाई देने पर। **मञ्जिष्ठारागलोहिते**= मजीठ की लाली की भाँति। **रुदिते**= उदय होने पर। **पर्य्यन्त=** चारों तरफ। **अध्यासित**= आश्रय लेने वाले। **इव कपीश्वरे**= सुग्रीव की भाँति। **स्पष्टे जाते=** स्पष्ट हो जाने से। **नाचिरादिव**= शीघ्र ही। **भास्वति=** सूर्य के। **निलीन=** छिपे हुए। **कुलाय=** घोंसले। **निभृत**= शान्त। **वनस्पतौ**= वृक्ष को। **असज्जातवले**= शक्ति से रहित। **कोटरगते=** पास में ही कोटर में निवास करने पर।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी-कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ कवि ने वैशम्पायन शुक द्वारा प्रातःकाल का आलंकारिक शैली में भव्य एवं उदात्त वर्णन किया है। साथ ही शुक राजा शूद्रक से शबर-मृगया का वर्णन करता है।

हिन्दी अनुवाद- मंगल-पाठ द्वारा कमल-वन को जगाने के लिए हाथियों के गण्डस्थलों को नगाड़े बजाने वाले, भौंरों के जिनके पंख-समूह कुमुदों के मध्य भाग में बन्द होती हुई पंखुड़ियों के समूह में फँस गये थे, हुंकार का उच्चारण करने पर, ऊसर (भूमि) की शय्या से धूसर हृदय स्थल की रोम-पंक्ति वाले वनमृगों के प्रभात की शीतल वायु से पीड़ित मानो तपाये हुए लाक्षारस से चिपकाये हुए पलकों वाले (और) अवशेष निद्रा के कारण सुस्त (या तिरछी) पुतली वाले नेत्रों को धीरे-धीरे खोलने पर वनचरों के इधर-उधर संचरण (आरम्भ) करने पर, कानों के आकृष्ट करने वाले पम्पा सरोवर के कलहंसों के कोलाहल के ऊपर उठने पर मयूरों को नचाने वाले मनोहर जंगली हाथियों के कानों के ताल (फड़फड़ाना या वाद्यविशेष) के शब्द को प्रकट होने पर मजीठ की लालिमा की भाँति लाल किरण समूह के क्रम से आकाश तल में उतरते हुए सूर्यरूपी हाथी के अधोमुख बालों वाले (मजीठ की लालिमा से लाल) चंवर समूह के समान दिखाई पड़ने पर भगवान सूर्य के धीरे-धीरे उदित होने पर पम्पा सरोवर की सीमाओं के वृक्ष-शिखरों पर संचरण करने वाले, गिरि-शिखर पर आश्रय लेने वाले सूर्य से उत्पन्न (सुग्रीव पक्ष में सूर्य के पुत्र) तारों (सुग्रीव पक्ष में बाली के, मानो फिर से वानर-राज (सुग्रीव) के वन में प्रवेश करने पर प्रभात के स्पष्ट होने वाला था। दिन के आठवें भाग (प्रथम प्रहर) में सूर्य का प्रकाश निखर उठा था, सभी सुग्गे अपनी-अपनी मनचाही दिशाओं की ओर उड़ गये थे। यद्यपि बच्चे घोंसलों में ही रह गये थे लेकिन उनकी चुप्पी से वह वृक्ष अत्यन्त नीरव (शब्दहीन) और सूना-सा जान पड़ता था। मेरे पिता भी उस वृक्ष पर अपने घोंसले में ही घे और मैं भी उसी में उनके पंखों से चिपका हुआ पड़ा था। बचपन के कारण मुझमें अभी शक्ति नहीं आई थी और पंख तो अभी फूट ही रहे थे।

विशेष- इस गद्यांश में **उत्प्रेक्षा, संसृष्टि तथा लुप्तोपमा अलंकार** है।

सहसैव तस्मिन् महावने संत्रासितसकलवनेचरः सरभससमुत्पतत्पतत्रिपक्षपुटशब्दसन्ततः भीतकरिपोतचीत्कार-पीवरः प्रचलितलताकुलमत्तालिकुलक्वणितमांसलः परिभ्रमदुद्घोणवनवराहरवघर्घरः गिरिगुहासुप्तप्रबुद्धसिंहनिनादोपबृंहितः कम्पयन्निव तरून् भगीरथावतार्यमाणगङ्गाप्रवाहकलकलबहलो भीतवन्देवताकर्णितो मृगयाकोलाहलध्वनिरुदचरत्। आकर्ण्य च तमहमश्रुतपूर्वमुपजातवेपथुर र्भकतयाजर्जरितकर्णविवरो भयविह्वलः समीपवर्तिनः पितुः प्रतीकारबुद्ध्या जराशिथिल-पक्षपुटान्तरमविशम्।

शब्दार्थ- सहसैव= अचानक। **तस्मिन्=** उस। **महावने=** महावन में। **संत्रासितसकलवनेचर=** सभी वनचरों को डराने वाला। **सरभससमुत्पतत्पतत्रिपक्षपुटशब्द सन्ततः=** वेग से उड़ते हुए पक्षियों के पंखों के शब्दों से चारों ओर। **भीतकरिपोतचीत्कारपीवरः=** हाथियों के डरे हुए बच्चों की चिल्लाहट से बढ़ा हुआ।**गिरिगुहासुप्तप्रबुद्ध=** पहाड़ी गुफाओं में सोकर जागे हुए। **सिंहनिनादोपबृंहितः=** सिहों को दहाड़ से बढ़े हुए। **कम्पयन्निव तरून्=** वृक्षों को कँपाती हुई-सी। **भगीरथावतार्यमाण=** भगीरथ द्वारा उतारी गयी।

गंगाप्रवाहकलकलबहलो= गंगा के प्रवाह की कलकल ध्वनि के समान। **भोतवनदेवताकर्णितः**= वन देवियों से भयभीत होकर सुमर गया। **आकर्ण्य च तमहमश्रुतपूर्वमुपजातवेपुथरर्भकतया**= उस समय से न सुनी गई उस ध्वनि को सुनकर कम्पन उत्पन्न होने से तथा बालकपन के कारण। **जर्जरितकर्णविवरो**= जर्जर हुए कर्ण छिद्रों वाला। **भयविह्वलः**= भय से व्याकुल होकर। **समीपवर्तिनः पितुः**= समीपवर्ती पिता के। **प्रतीकारबुद्ध्या**= बचाव के विचार से। **जराशिथिलपक्षपुटान्तरमविशम्**= शिथिल पंखों के भीतर घुस गया।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा रचित 'कादम्बरी' से उद्धृत किया गया है। इसमें वैशम्पायन शुक द्वारा प्रातःकाल का आलंकारिक शैली में भव्य एवं उदात्त वर्णन कराने के बाद शुक राजा शूद्रक से शबर मृगया का वर्णन करता है।

हिन्दी अनुवाद- सहसा ही उस हांके को सुनकर सारे वनचर भयभीत हो उठे, पक्षी व्याकुल होकर पंख फड़फड़ाने लगे। भयभीत हाथियों के बच्चे एक साथ चिंघाड़ने लगे। उड़ते हुए मतवाले भौंरों की घनी गुंजार घनघनाने लगी, घूमते हुए बनैले सूअर थूथन उठा-उठाकर घुरघुराने लगे, पहाड़ी गुफाओं में सोये हुए सिंह जागकर दहाड़ने लगे और जंगल के सारे वृक्ष मानो काँपकर हरहराने लगे। उस समय की सारी ध्वनियाँ मिलकर ऐसी प्रतीत हो रही थीं, मानो भगीरथ के पीछे चलने वाली गंगा के जल की अत्यन्त घनी हरहराहट हो। उसे वनदेवता भी अत्यन्त भयभीत होकर सुन रहे थे। उस समय से पूर्व न सुनी गई उस ध्वनि को सुनकर मैं काँप गया, बच्चा होने के कारण मेरे कानों के छिद्र फट गये। भय से व्याकुल होकर में बचने की भावना से समीपवर्ती पिता के बुढ़ापे से शिथिल पंखों के भीतर घुस गया।

विशेष- वैशम्पायन ने अपनी बाल्यावस्था का स्वाभाविक वर्णन किया है। भाषा-शैली अत्यन्त सजीव एवं चमत्कारपूर्ण है। वस्तुतः संस्कृत गद्य-साहित्य में महाकवि बाण का अद्वितीय स्थान है।

12.3.3 शबर-मृगया वर्णन

अनन्तरम् च सरभसमितो गजयूथपतिलुलितकमलिनीपरिमलः, इतः क्रोडकुलदश्यमानभद्रमुस्तारसामोद, इतः करिकलभभज्यमानसल्लकीकषायगन्धः, इतो निपतितशुष्कपत्रमर्मरध्वनिः, इतो वनमहिषविषाणकोटिकुलिशभिद्यमान-वल्मीकधूलिः, इतो मृगकदम्बकम् इतो वनगजकुलम्, इतो वनवराहयूथम् इतो वनमहिषवृन्दम् इतः शिखण्डिमण्डल-विरुतम्, इतः कपिञ्जलकुलकलकूजितम्, इतः कुररकुलक्वणितम् इतो मृगपतिनखभिद्यमानकुम्भकुञ्जररसितम् इय-मार्द्रपङ्कमलिना वराहपद्धतिः इयमभिनवशष्यकवलरसश्यामला हरिणरोमन्थफेनसहतिः, इयमुन्यदगन्धगजण्डकण्डूयन परि-मलनिलीनमुखरमधुमधुकरविरुतिः, एषानिपतितरुधिरबिन्दुसिक्तशुष्कपत्रपाटला रुरुपदवी एतद् द्विरदचरणमृदितविटप-पल्लवपटलम्, एतत् खडिगकुलक्रीडितम्, एष नख कोटिविलिखितविकटपत्रलेखो रुधिरपाटलः करिमौक्तिकदलदन्तुरो मृगपतिमार्गः एषा प्रत्यग्रप्रसूतवनमृगीगर्भरुधिरलोहिनी भूमिः, इयमटवीवेणिकानुसारिणी पक्षचरस्य

यूथपतेर्मदजलमलिना संचार-वीथी, चमरीपङ्क्तिरियमनुगम्यताम् उच्छुष्कमृगकरीषपांसुला त्वरिततरमध्यास्यतामियं वनस्थली, तरुशिखरमारुह्य-ताम्, आलोक्यतां दिगियम्, आकर्ण्यतामियं शब्दः गृह्यतां धनुः, अवहितैः स्थीयताम्, विमुच्यतां श्वानः इत्यन्योन्यम-भिवदतो मृगयासक्तस्य महतो जनसमूहस्य तरुगहनान्तरितविग्रहस्य क्षोभितकाननं कोलाहलमशृणवम्।

शब्दार्थ-अनन्तरम्= उसके बाद। **सरभसम=** शीघ्रतापूर्ण। **ललित=** मर्दित। **क्रोडकुल=** सूअरों का समूह। **दश्यमान=** चबायी जाती हुई। **भद्रमुस्ता=** श्रेष्ठ मोथा। **आमोदः=** सुगन्धि। **भज्यमान**= तोड़ी गई। **विषाण**= सींग। **भिद्यमान**= फोड़ीया भेदन की जाती हुई। **कदम्बकम्=** समूह। **वराहयूथम्**= सूअरों का समूह। **वृन्दम्=** समुदाय। **शिखण्डि=** मयूर। **विरुतम्=** ध्वनि। **कपिञ्जल**= विशेष प्रकार का पक्षी। **क्वणितम्=** आवाज। **कुम्भ**= गण्डस्थल। **कुञ्जर=** हाथी। **आद्रपङ्क=** गीली कीचड़। **पद्धति**= मार्ग। **शष्प=** घास। **कवल=** ग्रास। **रोमन्थ=** जुगाली। **सहतिः**= समूह। **कण्डूयन=** खुजलाते हुए। **निलीन**= छिपे हुए। **विरुतिः**= शब्द या ध्वनि। **सिक्त्**= सींची हुई। **शुष्कपत्रपाटला**= सूखे पत्तों से गुलाबी। **रुरुपदवी**= रुरु नाम के एक विशेष मृग का मार्ग। **द्विरद**= हाथी। **पटलम्**= समूह। **खडिंग**= गेंडा। **नखकोटि**= नखों का अग्रभाग। **दन्तुरो=** प्रकाशित। **प्रत्यग्र**= शीघ्र ही। **प्रसूत**= व्यायी हुई। **वेणिकानुसारिणी**= चोटी का अनुसरण करने वाली। **यूथपते**= स्वामी। **मलिना**= मैली। **संचार-वीथी**= चलने का मार्ग। **उच्छुष्क=** सूखा हुआ। **पांसुला**= धूल-धूसरित। **त्वरितरम**= अत्यन्त शीघ्र। **अध्यास्यताम्**= पहुँचो। **तरुशिखरम्=** वृक्षों की चोटी। **दिगियम्=** इस दिशा को। **अयं**= इस। **अवहितैः**= सावधान। **स्थीयताम् अभिदधतो**= कहते हुए। **विग्रहस्य=** शरीर वाले। **अशृण्वम्**= सुना।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'बाणभट्ट-कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ पर कवि ने भीलों के शिकार का अत्यन्त ही सजीव वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- और बाद में, वेगपूर्वक,"इधर (यहाँ) गजयूथपतियों के द्वारा तोड़ी गयी कमलिनी की गन्ध है, इधर शूकर कुलों के द्वारा चबायी जाती हुई भद्रमुस्ता के रस की गन्ध है, इधर हाथी के बच्चों के द्वारा तोड़ी गयी सल्लकी की कसैली गन्ध है, इधर गिरे हुए सूखे पत्तों की मर्मर ध्वनि है, इधर जंगली भैंसों के श्रृंग के अग्रभाग रूपी वज्रों के द्वारा फोड़ी या भेदी जाती हुई वल्मीकि की धूल है, इधर हरिणों का झुण्ड है, यहाँ जंगली हाथियों का समूह है, इघर जंगली सूअरों का यूथ है, इधर जंगली भैंसों का वृन्द है, इधर मयूरों के मण्डल का समूह है तथा ध्वनि, इधर कपिंजलों के कुलों का कल-कूजन है, इधर कुरर-कुलों का शब्द है, इधर सिंह के नखों से फाड़े गये कुम्भस्थल वाले हाथियों की चीत्कार है, यह गीले पंक से मलिन शूकरों का मार्ग है, यह नयी घास के प्रासों के रस से श्यामल हरिणों की जुगाली के झागों का समूह है, यह उन्मत्त गन्ध गज के खुजलाने से लगे हुए परिमल पर बैठे हुए मुखरित भ्रमरों का गुञ्जन है, यह गिरे हुए, रक्त की बिन्दुओं से सींचे गये सूखे पत्रों से गुलाबी 'रुरु' (मृग विशेष) का मार्ग है, यह हाथी के पैरों से मसले हुए वृक्षों के पत्तों का समूह है, यह गेंडों के कुल की क्रीड़ा है, यह नखों के अग्रभाग से विकट (गहरी) लिखी हुई पत्र लेखा वाला, रक्त से गुलाबी, हाथी के सिर के मोतियों के समूह से ऊँचा-नीचा सिंह का मार्ग है। यह

ताजी ब्यायी हुई जंगली हरिणी के गर्भ के रक्त से लाल-लाल भूमि है, यह जंगल की वेणी (चोटी) का अनुकरण करने वाली, समूह में चलने वाले यूथपति गज के मद जल से मलिन संचार-वीथी (संचरण-मार्ग) है। इस चमरी मृगया (गौओं) की पंक्ति का अनुगमन करो, इस सूखे हुए मृगों की पुरीष (शौच या मेंगनी) धूलयुक्त वनस्थली में शीघ्र पहुँची (बैठी) इस वृक्ष के शिखर पर चढ़ जाओ, इस दिशा को देखो, इस शब्द को सुनो, धनुष ग्रहण करो, सावधान खड़े हो जाओ, कुत्ते छोड़ दो" इस प्रकार परस्पर बोलते हुए आखेट में आसक्त् वृक्षों के वन में छिपे हुए शरीर वाले महान् जनसमूह का वन को क्षुब्ध कर देने वाला कोलाहल (मैंने) सुना।

विशेष (1)-महाकवि ने अपनी उद्भट कल्पना से अद्वितीय प्रतिभा के द्वारा प्रत्येक वर्णन में अपूर्व लावण्य और सजीवता उत्पन्न कर दी है। भाषा-शैली में विभिन्न अलंकारों का समुचित प्रयोग है। प्रस्तुत गद्य में भालों के शिकार का वर्णन अति मनोग्राही है।

(2) यहाँ **लुप्तोपमा अलंकार** है।

अथ नातिचिरादेवानुलेपनार्द्रमृदङ्गध्वनिधीरेण गिरिविवरविजृम्भितप्रतिनिनादगम्भीरेण शबरशरताडितानां केसरिणां निनादेन, संत्रस्तयूथमुक्तानामेकाकिनां च गजयूथपतीनाम् जलधररसितानुकारिणा सञ्चरतामनवरतकरास्फोटमिश्रेण कण्ठगर्जितेन, सरभससारमेयविलुप्यमानावयवानामालोलकातरतरलतरतारकाणामेणकानां च करुणकूजितेन, निहत-यूथपतीनां वियोगिनीनामनुगतकलभानां च स्थित्वा समाकर्ण्य कलकलमुत्कर्णपल्लवानामितस्ततः परिभ्रमन्तीनां प्रत्य-ग्रपतिविनाशशोकदीर्धेणकरिणीनां चीत्कृतेन, कतिपयदिवसप्रसूतानां च खड्गधेनुकानां त्रासपरिभ्रष्टपोतकान्वेषिणी-नामुन्मुक्तकण्ठमारसन्तीनाम् क्रन्दितेन, तरुशिखर समुत्पतितानामाकुलाकुलचारिणां च पत्ररथानां कोलाहलेन, रूपानुसार-प्रधावितानां च मृगयूणां युगपदतिरभसपादताभिहतायाः भुवः कम्पमिव जनयता चरणशब्देन, कर्णान्ताकृष्टज्यानां च मदकलकुररकामिनीकण्ठकूजितकलशबलितेन शरनिकरवर्षिणां धनुषा निनादेन, पवनाहतिक्वणितधाराणामसीनां च कठिनमहिषस्कन्धपीठपातिनां रणितेन शुनां च सरभसविमुक्तघर्घरध्वनीनां वनान्तख्यापिना ध्वानेन सर्वतः प्रचलितमिव तदारण्यमभवत्।

शब्दार्थ-अनुलेपनार्द्र= लेप से गीले। **मृदङ्गध्वनिधीरेण**= मृदङ्ग की ठनक के समान धीर के द्वारा। **गिरिविवरविजृम्भितप्रतिनिनादगम्भीरेण**= पर्वत की गुफाओं में फैली हुई प्रतिध्वनि के कारण गम्भीर के द्वारा। **शबर**= भील। **ताडितानाम्**= मारे हुओं के। **संत्रस्त=** भयभीत। **यूथमुक्तानाम्=** समूह से अलग हुओं से। **सञ्चरतां**= घूमते हुओं के। **करास्फोट=** सूड़ों के प्रहार से। **मिश्रण**= मिले हुओं से। **कलकलमुत्कर्णपल्लवानाम्ः=** कल-कल ध्वनि को सुनकर कर्ण-पल्लव उठाये हुए। **परिभ्रमन्तीनां=** घूमती हुई का। **प्रत्यग्रपतिविन शशोक**= तत्काल हुए पति विनाश के शोक से। **चीत्कृतेन**= चीत्कार से। **कतिपयदिवसप्रसूतानाम्=** कुछ दिन पूर्व ब्यायी हुई के। **खड्गधेनुकानां**= गेंडों की पत्नियों के। **त्रास**= भय। **पोतकं**= बच्चा गिरे। **उन्मुक्त**= छोड़े हुए।

आरसन्तीना= चीखती हुई के। **तरुशिखरः**= वृक्षों की चोटी। **उत्पतितानाम्**= पड़ी हुओं के। **आमाकुलाकुलचारिणाम्**= अत्यन्त व्याकुल होकर घूमने वालों के। **पत्ररथानां**=पक्षियों के। **रूपानुसार**= अपनी शक्ति के। **युगपत्**= की हुई। **जनयता**= उत्पन्न करते हुओं के द्वारा। **कर्णान्ताकृष्टज्यानाम्**= कान तक खींची गई डोरियों के द्वारा। **मदकलकुररकामिनी**= मद द से सुन्दर कुरर पक्षी की मादा। **कण्ठकूजितकलशवलितेन**= कण्ठ के कूजन की मधुर ध्वनि से मिश्रत। **वर्षिणां धनुषां निनादेन**= वर्षा करने वाले धनुषों की टंकार से। **पवनाहति**= वायु से टकराती हुई। **असीनां**= तलवारों के। **पीठ**= स्थान। **सरभसविमुक्तघर्घरध्वनीनां वनान्तख्यापिना**= वेग से घर्घर ध्वनि करने वालों के। **ध्वानेन**= ध्वनि से। **सर्वतः**= चारों ओर। **प्रचलितमिव**= कॉप-सा गया।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट रचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। इसमें भीलों के शिकार का अत्यन्त सजीव वर्णन हुआ है। उनकी सेना ने जैसे ही जंगलों में प्रवेश किया, वैसे ही कोलाहल की ध्वनि सुनाई दी और शुक भय के कारण अपने पिता के पंखों में छिप गया। शुक इसी को राजा से कहता है।

हिन्दी अनुवाद- तत्पश्चात् कुछ देर बाद ही भीलों के बाणों से मारे गये केहरियों की आर्द्र मृदंग की ध्वनि के समान गंभीर और पर्वतराज की गुफाओं में फैलती हुई प्रतिध्वनि से घनीभूत हुए सिंहों की दहाड़ से घबराये हुए (हाथी) समूह से अलग हुए और अकेले घूमते हुए हस्ति-समूह के सरदारों की सूँड़ों के निरन्तर प्रहार की ध्वनि से मिश्रित बादल की गरज का अनुकरण करने वाले कण्ठों के गर्जनों से, वेग के साथ कुत्तों द्वारा काटे जाते हुए अवयवों वाले, चंचल और क्षुब्ध पुतलियों वाले हिरनों के करुण चीत्कार से, मारे हुए हाथियों के सरदारों की वियोगिनी हथनियों के, जिनका हाथियों के बच्चों द्वारा अनुगमन किया जा रहा था और जो रुक-रुककर कल-कल सुनकर कर्ण-पल्लव उठाये हुए इधर-उधर घूम रही थीं- ताजे-ताजे पति-विनाश के शोक से बढ़े हुए चीत्कार सेकुछ दिन पूर्व ब्यायी हुई गेंडों की पत्नियों के जो भय के कारण नष्ट या खोये हुए बच्चों को खोज रही थीं और उन्मुक्त कण्ठ से चीख रही थीं, क्रन्दन से, तरु शिखरों से उड़े हुए व्याकुल होकर घूमते हुए पक्षियों के कोलाहल से, अपनी शक्ति के अनुसार दौड़ते हुए मृगों के झुण्डों के एक साथ अत्यन्त वेग से गिरते हुए चरणों से चोट की जाती हुई पृथ्वी में मानो कम्पन्न उत्पन्न करते हुए चरण-शब्द से, कर्णों के अन्त तक खींचे गये और बाण समूह की वर्षा करने वाले धनुष के मद से, सुन्दर कुरर (पक्षी) की स्त्रियों के कण्ठ के कूजन की मधुर ध्वनि से मिश्रित निनाद से, पवन के टकराने से बजती हुई धार वाली और कठोर भैंसे के कन्धे के स्थान पर गिरने वाली तलवारों के रणत्कार से और वेग से घर्घर ध्वनि निकालते हुए अर्थात् भोंकते हुए कुत्तों की वन के अन्दर व्याप्त होने वाली ध्वनि से वह जंगल मानों चारों ओर से काँप उठा।

विशेष- इस गद्यांश में भीलों के द्वारा मृगया का वर्णन वैशम्पायन तोता राजा शूद्रक से अत्यन्त मार्मिक रूप से करता है। भाषा-शैली भव्य एवं उदात्त है। अलंकारों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है।

अचिराच्च प्रशान्ते तस्मिन् मृगयाकलकले, निर्वृष्टमूकजलधरवृन्दानुकारिणि मथनावसानोपशान्तवारिणि सागर इव स्तिमिततामुपगते कानने, मन्दीभूतभयोऽहमुपजातकुतूहलः पितुरुत्सङ्गादीषदिव, निष्क्रम्य कोटरस्थ एव शिरोधरां प्रसार्यं संत्रासतरलतारकः शैशवात् किमिदमित्युपजातदिद्वक्षस्तामेवं दिशंचक्षुः प्राहिणवम्।

शब्दार्थ- अदिराच्च= थोड़ी देर के बाद। **प्रशान्ते=** शान्त होने पर। **कलकले=** कोलाहल ध्वनि के। **निर्वृष्ट**= बरसने के बाद। **मूक=** शान्त। **वृन्दानुकारिणी**= समूह का अनुकरण करने वाली। **पितुरुत्सङ्गादीषदिव निष्क्रम्य**= पिता की गोद से थोड़ा सा निकलकर। **कोटरस्थ=** खुखार में रहते हुए। **शिरोधरां प्रासार्य**= गरदन फैलाकर। **संत्रासतरलतारकः**= डर के कारण। **शेशवात् किमिदमित्युपजातदिद्दृक्षस्तामेव**= पुतलियों के डबडबाने पर भी शैशव के कारण चंचल नयनों वाला। **दिशं चक्षुः प्राहिणवम्**= देखने की इच्छा उत्पन्न हो जाने से उसी दिशा की ओर दृष्टि डाली।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट कृत 'कादम्बरी' से लिया गया है। कवि ने अत्यन्त प्रभावपूर्ण शैली के द्वारा शबरों की सेना का चमत्कारयुक्त वर्णन किया है। तोता राजा शूद्रक से इस कथा को कहता है।

हिन्दी अनुवाद- शीघ्र ही उस मृगया के कलकल के शान्त होने पर बरसने के बाद शान्त मेघ-समूह का अनुसरण करने वाली (अर्थात् शान्त) हो जाने पर मंथन के बाद शान्त जल वाले सागर के समान कानन के शान्ति को प्राप्त होने पर मन्द भय वाले और उत्पन्न कुतूहलयुक्त होते हुए, पिता की गोद से थोड़ा सा निकलकर, कोटर में स्थित (रहते हुए ही) ग्रीवा को फैलाकर भय के कारण चंचल पुतलियोंवाले शैशव के कारण 'यह क्या है' इस प्रकार उत्पन्न देखने की इच्छा वाले होते हुए (मैंने) उसी दिशा में दृष्टि डाली।

विशेष- प्रस्तुत वर्णन में कवि ने शबर-सेना का अत्यन्त विलक्षण वर्णन किया है जो प्रभावपूर्ण है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. शाल्मली वृक्ष पर बहुत सारे .... रहते थे।
2. शुक पक्षी किस वृक्ष पर रहते थे?
3. शबरसेना का सेनापति कैसा था?
4. शुक ने वन प्रदेश में सहस्र संख्या वाली .... देखी।
5. उन भीलों के समूह में एक .... था।

12.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में शुक जन्म, प्रभात वर्णन तथा भीलों के द्वारा मृगया का अत्यन्त मार्मिक वर्णन वर्णित है।

12.5 कठिन शब्दावली

1.अखिल- समस्त **2.कुञ्जर** - हाथी **3.पितु:** - पिता का

12.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. शुक 2. शाल्मली 3. युवा 4. शबर सेना 5. बूढ़ा भील

12.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

12.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. शबर सेनापति का चरित्रचित्रण कीजिए।
2. शबर सेना का वर्णन करो।
3. कथामुख के आधार पर प्रभात वर्णन को वर्णित करो।
4. प्रस्तुत गद्यांश की प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए-

    (1) एकदा तु .... पूर्वेतरे।

    (2) एकस्मिन जीर्णकोटरे .... महामदात्।

    (3) सहसैव.................. जराशिथिलपक्षपुटन्तरमविशम्।

इकाई-13

शबर सैन्य वर्णन

संरचना

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 शबर सैन्य वर्णन

13.3.1 शबर सेनापति वर्णन

13.3.2 शबर चरित्र वर्णन

- स्वयं आकलन प्रश्न

13.4 सारांश

13.5 कठिन शब्दावली

13.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

13.7 सहायक ग्रन्थ

13.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

13.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाईमें शबर सेना, शबर सेनापति के चरित्र-चित्रण का अत्यन्त सजीव वर्णन किया गया है।

13.2 उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

- शबर सेना के विषय में जानेंगे।
- शबर सेनापति के बारे में जानेंगे।
- शबरों की क्रूरता का ज्ञान होगा।

13.3 शबर सैन्य वर्णन

अभिमुखपताञ्च तस्माद् वनान्तरादर्जनभुजदण्डसहस्त्रविप्रकीर्णमिव नर्मदाप्रवाहम्, अनिलचलितमिव तमाल-काननम्, एकीभूतमिव कालरात्रीणां यामसंघातम् अञ्जनशिलास्तम्भ संभारमिव क्षितिकम्पविघूणितम् अन्धकारपूर-मिवरविकिरणाकुलितम्, अन्तकपरिवारामव परिभ्रमन्तम्, अवदारितसरसातलोद्भूतमिव दानवलोकम्, अशुभकर्मसमूह-मिवैकत्र समागतम्

अनेकदण्डकारण्यवासिमुनिजनशापसार्थमिव संचरन्तम् अनवरतशरनिकरवर्षिरामनिहतखरदूषणबल-निवहमिव तदपध्यानात् पिशाचतामुपगतम् कलिकालबन्धुवर्गमिवैकत्र संगतम्, अवगाहप्रस्थितमिव वनमहिषयूथम्, अच-लशिखरस्थितकेसरिकारकृष्टिपतनशीर्णमिव कालाभ्रमपटलम्, अखिल रूपविनाशाय धूमकेतुजालमिव समुद्गतम् अन्ध-कारितकाननम्, सहस्त्रसंख्यम्, अतिभयजनकमुत्पातवेतालव्रातमिव शबरसैन्यमद्राक्षम्।

शब्दार्थ-अभिमुखम्= सामने। **अर्जुनभुजदण्ड**= कार्तवीर्य की भुजारूपी दण्ड। **विप्रकीर्णमिव=** बखेरे (फैलाये) हुए। **नर्मदाप्रवाहम्=** नर्मदा धारा की भाँति। **अनिल=** वायु। **एकीभूतम्**= एकत्रित। **याम**= पहर। **संघातम्**=समूह। **अञ्जन**= श्यामवर्ण। **सम्भारमिव=** ढेर के समान। **विघूर्णितम्**= हिलते हुए। **किरण-आकुलितम्**= किरणों से व्याकुल (परेशान)। **अन्तक**=यमराज। **परिभ्रमन्तम्**= घूमते हुए परिजन की भाँति। **अवदारित=** विदीर्ण। **उद्भूतमिव=** निकलते हुए। **अशुभकर्मसमूहमिव**= बुरे कार्यों के समुदाय के समान। **सार्थम्=** एक साथ। **संचरन्तरम्**= चलते-फिरते। **अनवरत=** निरन्तर। **प्रस्थितम्**= जाते हुए। **अचल=** पर्वत। **केसरि=** सिंह। **कर**= पुञ्जे। **आकृष्टि=** खींचे हुए। **शीर्णमि=** बिखरे हुए। **पटल=** समूह। **धूमकेतुजालमिव**= पुच्छल तारों के समूह की भाँति। **समुद्गतम्=** उत्पन्न हुआ हो। **सहस्त्रसंख्यम्=** सैकड़ों संख्या वाली। **अतिभयजनकम्**= अत्यन्त भय उत्पन्न कराने वाली। **अद्राक्षम्**= देखा। **उत्पात**= उपद्रव से युक्त।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। इसमें कवि ने अत्यन्त प्रभावपूर्ण शैली के द्वारा शवरों की सेना का चमत्कारयुक्त वर्णन किया है। यहाँ तोता राजा शूद्रक से इस कथा को कहता है।

हिन्दी अनुवाद- मैंने उस वन के भीतर से ही अपनी ओर आने वाली अत्यन्त भयदायिनी भीलों की सेना देखी जिसमें अनेकों हजार भील थे। वह सैन्य दल ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो कार्तवीर्य अर्जुन की हजारों बाहुओं से कई धाराओं में बिखरा हुआ नर्मदा नदी का प्रवाह हो, अथवा वायु (हवा) के झोंकों में काँपता हुआ तमाल वृक्षों का वन हो, अथवा कालरात्रि के एकत्रित पहरों का समूह हो और भूचाल में हिलते हुए काले पत्थरों के खम्भों का ढेर हो, अथवा सूर्य की किरणों से व्याकुल अन्धकार का समूह हो, अथवा इधर-उधर नटकता हुआ यमराज का परिवार हो, अथवा पृथ्वी तल को फोड़कर निकलते हुए दानवों का समूह हो, अथवा अशुभ कर्मों के समूह एकत्रित होकर आ गये हों, अथवा दण्डकारण्य में रहने वाले अनेकों मुनियों के शापों का झुण्ड एक साथ घूम रहा हो, अथवा निरन्तर तीखे बाणों की वर्षा करने वाले राम ने खर-दूषण के जिस सैन्य दल का विनाश कर डाला था, वही मानो राम का अहित सोचने के कारण पिशाचों के रूप में प्रकट हो गया हो, अथवा कलियुग के भाई-बन्धु इकट्ठे हो गये हों अथवा जंगली भैंसों का झुण्ड स्नान के लिए जा रहा हो, अथवा पहाड़ की चोटी पर खड़े सिंह के पंजों द्वारा खींच लेने से गिरकर बिखर

जाने वाले प्रलयकालीन काले बादलों का समूह हो, अथवा सम्पूर्ण जंगली पशुओं का विनाश करने के लिए धूमकेतुओं का जमाव लगा हो।

विशेष (1)-इस गद्यांश में कवि ने शबर सेना का अत्यन्त विलक्षण वर्णन किया है, जो प्रभावपूर्ण है। महाकवि बाणभट्ट की भाषा-शैली अत्यन्त सजीव एवं चमत्कारपूर्ण है। वस्तुतः संस्कृत गद्य-साहित्य में इनका अद्वितीय स्थान है।

(2) इस गद्यांश में लुप्तोपमा, उत्प्रेक्षा तथा उक्तालंकार है। **'सार्थोवणिक्यसमूहे स्यादपि संघातमात्रके'**इति मेदिनी।

13.3.1 शबर सेनापति वर्णन

मध्ये च तस्यातिमहतः शबरसैन्यस्य प्रथमे वयसि वर्तमानम्, अतिकर्कशत्वादायसमयियिव, एकलव्यमिव जन्मा-न्तरागतम् उद्भिद्यमानश्मश्रुराजितया प्रथममदलेखामण्डयमानगण्ड भित्तिमिव गजयूथपतिकुमारकम्, असितकुवलयश्या-मलेन देहप्रभाप्रवाहेण कालिन्दी जलेनेव पूरितारण्यम् आकुटिलग्रेण स्कन्धावलम्बिना कुन्तलभारेण केसरिणमिव गजमद-मलिनीकृतेन केसरकलापेनोपेतम्, आयतललाटम्, अतितुङ्गघोरघोणम् उपनीतस्यैककर्णाभरणतां भुजगफणामणेरापाट-लैरंशुभिरालोहितीकृतेन पर्णशयमाभ्यासाल्लग्नपल्लवरागेणेव वामपार्श्वेन विराजमानम्, अचिरप्रहतगजकपोलगृहीतेन सप्तच्छदपरिमलावाहिना कृष्णागुरुपङ्कनेव सुरभिणा मदेन कृताङ्गरानाम् उपरि तत्परिमलान्धेन परिभ्रमता मायूर-प्रिच्छातपत्रानुकारिणा मधुकरकुलेन तमाल पल्लवेनेव निवारितातपम्।

शब्दार्थ-अति महतः= अत्यन्त विशाल। **प्रथमे वयसि**= युवावस्था। **अतिकर्कशत्वात्=** अत्यधिक कठोर होने के कारण। **आयसमिव=** लोहे के समान। **उद्भिद्यमान=** निकलती हुई। **मण्डयमान**= सुशोभित। **गण्डभित्तिमिव**= कपोलस्थली। **गजयूथपतिकुमारकम्=** गजराज की भाँति। **असित=** काले। **कुवलय=** कमल। **प्रभा=** कान्ति। **प्रवाहेण=** धारा या प्रवाह से। **पूरयन्तम्=** परिपूर्ण करते हुए। **आक्टिलग्रेण=** घुँघराले, तिरछे पूर्व-भाग वाले। **स्कन्धौ=** कन्धों पर। **कुन्तल=** केशों के। **भारेण=** बोझ। **गजमद**= गज के मद द्वारा। **मलिनीकृतेन**= मलिन किये। **केसरिणमिव**= सिंह की गरदन के बालों का समूह। **उपेतम्=** युक्त। **आयन=** चौड़ा। **अतितुङ्ग=** अत्यन्त ऊँची। **घोण**= नासिका। **फणामवे=** फन की मणि। **आपाटलैः**= कुछ-कुछ गुलाबी। **अंशुभिः**= किरणों से। **लोहिती=** लाल। **आलग्न=** लगे हुए। **पल्लव=** पत्ते। **रागेणेव**= लाल रंग के समान। **विराजमानम्=** सुशोभित। **अचिरहत=** तुरन्त ही मारे हुए। **सप्तच्छद**= छितवन, एक विशेष पुष्प। **सुरभिणा=** सुगन्धित। **उपरि=** शिर का ऊर्ध्व भाग। **परिभ्रमता**= घूमते हुए। **परिमलान्थेन**= सुगन्ध से अन्धे। **मायूरप्रिच्छातपत्रानुकारिणा**= मयूर पंख से बने छत्र का अनुकरण करने वाले। **मधुकरकुलेन**= भ्रमर समुदाय। **पल्लवेनेव**= पत्तों की भाँति। **निवारित**= दूर करते हुए। **आपतम्=** धूप को।

प्रसंग-प्रस्तुत अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ शुक राजा शूद्रक से शबर सेनापति का चित्रण करता है। विभिन्न उपमानों के द्वारा कवि ने इसका वर्णन अत्यन्त भीषण रूप में किया है।

हिन्दी अनुवाद- उस विशाल किरात सेना के बीच तरुणावस्था को प्राप्त, अत्यन्त कठोर होने से लोहे से बने जैसे, दूसरा जन्म पाये एकलव्य की भाँति, भीगती मसों के रोयें होने के कारण पहिली मदधार से सुशोभित कपोल-स्थली से युक्त हाथियों के दलपति के बच्चे के समान, नीलकमल के समान शरीर-कान्ति के स्रोत से यमुना के जल की भाँति जंगल को परिपूर्ण करते, कुछ घुँघराली नोंकों वाले कंधों पर लटकते हुए बालों के कारण हाथी के मद से मैले हुए सटा-भार से युक्त सिंह से लगते, चौड़े मस्तक वाले, बहुत ऊँची घोर नाक वाले, बायें कान में आभूषण-स्वरूप पहने साँप के फन की मणि से श्वेत रक्तरणों से कुछ लाल (अतएव) पत्तों पर सोने के अभ्यास से लगी पत्तों की लाली से जैसे लाल बाँये भाग से सुशोभित, हाल ही में मारे हाथी के कपोल से लिए, छितवन की सुगन्ध का वहन करने वाले, कृष्णागरु के लेप के समान सुगन्धित मद का अंगराग लगाये, जिस पर पड़ती धूप का निवारण मयूरपिच्छ के छाते का अनुकरण करते, तमाल पत्र के समान, उस सुगन्ध से अन्धे, ऊपर मंडराते भौरों के समूह से हो रहा था।

विशेष (1)-महाकवि बाण ने जो पाञ्चाली रीति के प्रमुख आचार्य हैं। ओज- गुण-सम्पन्न काव्य-प्रतिभा के द्वारा शबर सेनापति का चित्रण भव्य एवं उदात्त रूप में किया है।

(2) इस गद्यांश में **उपमा, उत्प्रेक्षा, संसृष्टि तथा संकर अलंकार** है।

आलोलपल्लवव्याजेन भुजबलनिर्जितया भयप्रमुक्त्सेवया विन्ध्याटव्येव करतलैनाप मृज्यमानगण्डस्थलस्वेदलेखम् आपाटलया हरिणकुलकालरात्रिसंध्यायमानया शोणितार्द्रयेव दृष्ट्या रञ्जयन्तमिवाशाविभागान् आजानुलम्बिना कुञ्जरकर-प्रमाणमिव गृहीत्वा निर्मितेन चण्डिकारुधिरबलिप्रदानायासकृन्निशितशस्त्रोल्लेखविषमितशिखरेण भुजयुगलेनोपशोभितम्, अन्तरान्तरालग्नश्यानहरिणरुधिरबिन्दुना स्वेदजलकणिकाचितेन गुञ्जाफलमिश्रैः करिकुम्भमुक्ताफलैरिव रचिताभरणेन बिन्ध्यशिलातलविशालेन वक्षःस्थलेनोद्भासमानम् अविरतश्रमाभ्यासादुल्लिखितोदरम् इभमदमलिनमालानस्तम्भयुगल-मुपहसन्तमिवोरुदण्डद्वयेन, लाक्षालोहितकौशेयपरिधानम् अकारणेऽपि क्रूरतया बद्धत्रिपताकोदग्रभ्रुकुटिकराले ललाटफलके प्रबलभक्त्याराधितया मत्परिग्रहोऽयमितिकात्यायन्या त्रिशूलेनेवाङ्कित्तम्।

शब्दार्थ=आलोल= कम्पित। **व्याजेन=** छल से। **निर्जितया=** जाती हुई। **भयप्रयुक्त=** भय से युक्त। **अपमृज्यमान्**= पोंछते हुए। **गण्डस्थल=** कपोलस्थल। **स्वेदलेखम्=** पसीने की बूँदें। **आपाटलया=** कुछ-कुछ श्वेत रक्त वाली। **कुल**= समूह। **संध्यायमानया**= सन्ध्या की भाँति लगने वाली। **रञ्जयन्तमिव=** मानो रेंगते हुए। **आशाविभागा=** दिशाओं के भागों को। **लम्बिना=** लटकते हुए। **कुञ्जर=** हाथी। **असकृत्=** कई बार। **अन्तरान्तर=** बीच-बीच में। **रुधिरबिन्दुना=** रक्त की बूँदों वाले। **मुञ्जाफलैरिव**= मोतियों जैसे। **आभरणेन=** आभूषण। **उद्भासमानम्**= चमकते हुए। **अविरत=** निरन्तर। **उल्लिखितोदरम्**= कृश उदर वाले। **इभ**= हाथी। **उरुदण्डद्वयेन=** दोनों जंघा रूपी दण्ड। **उपहसन्तमिव=** मानो निरादर करते हुए। **लाक्षा=** लाख। **कौशेय=** रेशमी। **अकारणेऽपि**= बिना कारण के। **भ्रुकुटि=** भौंहों से। **कराले=** भयंकर। **परिग्रहो=** भक्त, सेवक। **कात्यायिन्या=** भगवती (पार्वती) द्वारा। **आङ्किकतम्=** सुशोभित।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी-कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ वैशम्पायन शुक राजा शूद्रक से शबर सेनापति के कथन का वर्णन करता है। इसी का कवि ने अत्यन्त सजीव चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- कुछ चंचल पत्तों के बहाने भुज-बल के द्वारा विजित और भय के कारण सेवा में लगी हुई विन्ध्याटवी के द्वारा ही (मानो पत्ररूपी) करतल (हथेली) से पोंछी जाती हुई कनपटियों की स्वेद की रेखा वाले, (मातंग नामक शबर सेनापति को देखा) कुछ-कुछ गुलाबी, हरिणों के समूह के लिए काल-रात्रि की संध्या का आचरण करती हुई (काल-रात्रि संध्या के समान) मानो रक्त से लाल दृष्टि के द्वारा दिशा को, विभागों को रँगते हुए (रँगने वाले), घुटनों तक लम्बे मानो हाथी की सूँड़ का नाप लेकर बनाये गये। काली को रुधिर की बलि प्रदान करने के लिए ही निरन्तर पैने शस्त्रों के लगने से विषम शिखर (अग्रभाग) वाले भुज- युगल से उपशोभित बीच-बीच में लगे हुए शुष्क (श्यान) मृगों के रक्त के बिन्दुओं से युक्त, पसीने की बूँदों (कणिकाओं) से व्याप्त (अतएव) मानो गुञ्जाफलों, मुक्ताओं से रचित आभरणों वाले, विन्ध्य-पर्वत की शिला के समान विशाल वक्षःस्थल से उद्भासित सुशोभित, निरन्तर परिश्रम के कारण लघु होने से (रेखांकित) उदर वाले अपने जंघाद्वय से हाथी के मद से मलिन (गजबंधन) के आलान दो खम्भों का उपहास करते हुए, लाख (चपड़ा, जतु) के द्वारा लाल रँगे हुए, रेशमी वस्त्र के परिधान (अधोवस्त्र) से युक्त, बिना किसी कारण के क्रूरता के कारण ही बनी हुई तीन पताकाओं से (सलवटों) माथे की शिकन और उठी हुई भौंहों से भयंकर ललाट पट्ट पर मानो प्रबल भक्ति से पूजित (आराधित) दुर्गा के द्वारा 'यह मेरा ही है, इस प्रकार (सोचकर) त्रिशूल के द्वारा अंकित (ललाट से युक्त मातंग नामक शबर-सेनापति को देखा)।

विशेष (1)-महाकवि बाण पाञ्चाली रीति के प्रमुख आचार्य हैं, जो ओज-गुण-सम्पन्न है, अपनी वाक्य-प्रतिभा के द्वारा इन्होंने शबर-सेनापति का चित्रण भव्य एवं उदात्त रूप में किया है और विभिन्न अलंकारों द्वारा उसमें प्राणवत्ता एवं चमत्कार का सुन्दर प्रदर्शन किया है।

(2) प्रस्तुत गद्यांश में **उपमा, उत्प्रेक्षा, संसृष्टि तथा संकर अलङ्कार** का प्रयोग है। विशेषकर **उत्प्रेक्षा** और **उपमा अलंकार** का अत्यधिक प्रयोग हुआ है। 'आलान बन्धस्तम्भे' वाक्य में **अमरकोश** है।

उपजातपरिचयैरनुगच्छद्भिः श्रमवशाद् दूरनिर्गताभिः स्वभावपाटलया शुष्काभिरपि हरिणशोणितमिव क्षरन्तीभि-र्जिह्वाभिरावेद्यमानखेदैर्विवृतमुखतया स्पष्टदृष्टवन्ताशून् दंष्ट्रान्तराललग्नकेसरिसटानिव सृक्कभागानुद्वहद्भिः स्थूलवराटकमा-लिकापरिगतकण्ठैमहावराहदंष्ट्राप्रहारजर्जरैरल्यकायैरपि महाशक्तित्वादनुपजातकेसरिव केसरिकिशोरकैर्मृगवधूवैधव्य-दीक्षादानदक्षैरनेकवर्णे श्वभिरतिप्रमाणाभिश्च केसरिणामभयप्रदानयाचनार्थमागताभिः सिंहीभिरिव कौलेयक कुटुम्बिनी-भिरनुगम्यमानम्।

शब्दार्थ- परिचयैः= जानते हुए। **अनुगच्छद्भिः=** पीछा करते हुए। **विनिर्गताभिः**= निकलते हुए। **पाटलतया=** श्वेतरक्त। **शोणितमिव=** रुधिर के समान। **क्षरन्तीभिः**= गिराती हुई। **आवेद्यमान=** प्रकट करते हुए। **खेदैः=** थकावट। **विवृत=** खुले हुए। **दन्तांशून=** दाँतों की किरणें। **दंष्ट्रा**= दाढ़। **अन्तराल**= भीतर। **श्वभि=**

कुत्तों के द्वारा। **दीक्षादानदक्षैः**= दीक्षा देने में कुशल। **अतिप्रमाणाभिः**= अत्यन्त बड़ा शरीर। **याचनार्थम्=** अनुरोध के लिए। **आगताभिः**= आयी हुई। **सिंहीभिरिव**= शेरनी के समान। **कौलेयक=** शबर। **अनुगम्यमानम्=** अनुगमन किया जा रहा था।

प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। कवि ने यहाँ वैशम्पायन शुक के द्वारा राजा शूद्रक से शबर सेनापति के कथन का अत्यन्त भीषण रूप में वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जो उत्पन्न परिचय वाले (अर्थात् जाने हुए) होने से अनुसरण करते हुए श्रम के कारण दूर तक निकली हुई और स्वभाव से गुलाबी होने के कारण शुष्क होते हुए भी मानो हरिण के शोणित की चुआती हुई जिह्वाओं द्वारा खेद आवेदन करते हुए, खुले हुए मुख होने के कारण स्पष्ट दिखाई पड़ते हुए दाँतों की किरणों वाले (और) मानो दाढ़ों के अन्दर लगे हुए सिंह के केसर (गरदन के बाल) वाले ओठों के प्रान्त भागों को वहन करते हुए, मोटी कौड़ियों की माला से परिगत कण्ठ वाले, विशाल सूअरों की दाढ़ों के प्रहार से जर्जर हुए, छोटे शरीर वाले होने पर भी महान् शक्ति होने के कारण मानो अनुत्पन्न केसर वाले सिंह के बच्चे, मृगों की वधुओं को वैधव्य की दीक्षा देने में कुशल, अनेक वर्णों वाले कुत्तों से और अत्यन्त विशाल आकार वाली मानो सिंहों के अभयदान की याचना के लिए आयी हुई सिंहनियों-सी कुतियों द्वारा अनुगमन किया जा रहा था।

विशेष (1)-इस गद्य में महाकवि बाणभट्ट ने शबर-सेनापति के कथन का शक्तिशाली अदम्य प्रभाव महासत्वता का चमत्कारपूर्ण अलंकृत भाषा-शैली द्वारा मनोग्राही चित्र उपस्थित किया है तथा विभिन्न अलंकारों द्वारा उसमें प्राणवत्ता का सुन्दर प्रदर्शन है। वस्तुतः बाणभट्ट पाञ्चाली रीति के ओज-गुण-सम्पन्न प्रमुख आचार्य हैं। संस्कृत गद्य-साहित्य में इनका अद्वितीय स्थान रहा है।

(2) इस गद्यांश में **उत्प्रेक्षा एवं उपमा अलंकार** है। 'दन्तवक्त्रं च तत्प्रान्तौ सृक्कणी' वाक्य में **अमरकोश** है।

कैश्चिद् गृहीतचमररवालगजदन्तभारैः कैश्चिदच्छिद्रपर्णबद्धमधुपुटैः, कैश्चिन्मृगपतिभिरिव विभिन्नगजकुम्भ-मुक्ताफलनिकरसनाथपाणिभिः, कैश्चिद्यातुधानैरिव गृहीतापिशितभारैः, कैश्चित् प्रमथैरिव केसरिकृत्तिधारिभिः, कैश्चित् क्षप-णकैरिव मयूरपिच्छवाहिभिः, कैश्चिच्छिशुभिरिव काकपक्षधरैः, कैश्चित् कृष्णचरितमिव दर्शयद्भिः समुत्खातविधृतगजदन्तैः, कैश्चिज्जलदागमदिवसैरिवं जलधरच्छाया मलिनाम्बरैरनेकवृत्तान्तैः शबरवृन्दैः परिवृतम्।

शब्दार्थ-कैश्चिद्= कुछ। **चमर**= मृग। **भारैः**= दण्डे। **आच्छिद्र**= छिद्ररहित। **पर्ण**= पत्ते। **पुटैः**= दोना। **मृगपतिभिरिव**= सिंहों की भाँति। **निकर**= समूह। **सनाथपाणिभिः**= संयुक्त हाथ वाले। **धानैरिव**= दानवों की भाँति। **गृहीतापिशित**= माँस के लिए। **भारैः**= भार। **प्रमथैरिव**= महादेव के गणों के। **कृत्ति**= चर्म। **क्षपणकैरिव**= बौद्ध भिक्षु के समान। **मयूरपिच्छवाहिभिः**= मोरों के पंख लिए। **शुभिरिव**= शिशुओं की भाँति। **काकपक्षधरैः**= कौवों के पंख लगाकर। **दर्शयद्भिः**= दर्शाते हुए। **समुत्खात्**= उखाड़कर। **मलिनाम्बरैः** मलिन

वस्त्र (आकाश)। **अनेकवृत्तान्तैः=** विभिन्न प्रकार के आचरण वाले। **शबरवृन्दैः=** भीलों का समुदाय। **परिवृतम्=** घिरा हुआ।

प्रसंग- यह गद्यांश बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्‌धृत किया गया है। यहाँ महाकवि ने वर्णन किया है कि शुक राजा शूद्रक से शबर-सेनापति का कथन कितने सजीव रूप में करता है।

हिन्दी अनुवाद- जो अनेक चरित्र वाले शबर समूहों से घिरा हुआ था (जिन शबर समूहो में) कुछ ने चमर (मृग) के बाल और गज-दन्त-भार ग्रहण कर रखे थे, कुछ ने छिद्ररहित पत्तों से मधु का दोना बना रखा था, कुछ सिंह के समान गज-कुम्भों के मोतियों के समूह से युक्त हाथ वाले थे, कुछ राक्षसों की भाँति-माँस भार ग्रहण किये हुए थे, कुछ महादेव के गणों को भाँति सिंह-चर्म धारण किये हुए थे, कुछ क्षपणकों (दिगम्बर जैन भिक्षुओं) के समान मयूरपंख धारण किये हुए थे, कुछ काकपक्ष धारी (घुँघराले बालों वाले) बच्चों की भाँति कौओं के पंख धारण किये हुए थे, कुछ उखाड़कर धारण किये हुए हाथीदाँत वाले थे, मानो कृष्णचरित दिखा रहे हों तथा कुछ बादलों की छाया के समान मलिन वस्त्र वाले थे, मानो बादलों की छाया से आकाश को मलिन करने वाले वर्षा ऋतु के दिन हों।

विशेष (1)-इस गद्यांश में महाकवि बाण ने शबर-सेनापति के कथन का अत्यन्त भीषण रूप में चित्रण किया है, मानो उसकी सजीव एवं स्वाभाविक मूर्ति पाठक के समक्ष उपस्थित कर दी है। वस्तुतः भट्टजी की भाषा-शैली में भाव-विषय को प्रकट करने की अद्वितीय क्षमता है।

(2) यहाँ **उपमा तथा उत्प्रेक्षा अलंकार** का विशेष रूप से प्रयोग हुआ है।

अरण्यमिव सखड्गधेनुकम्, अभिनवजलधरमिव मयूरपिच्छचित्र चापधारिणम्, वकराक्षसमिव गृहीतैकचक्रम् अरुणानुजमिवोद्धृतानेकमहानागदशनम्, भीष्ममिव शिखण्डिशत्रुम् निदाघदिवसमिव सतताविर्भूतमृगतृष्णम् विधाधरमिव मानसवेगम्, पराशरमिव योजनगन्धानु सारिणम्, घटोत्कचमिव भीमरूपधारिणम् अचलराजकन्यकाकेशपाशमिव नील-कण्ठ चन्द्रका भरणम् हिरण्याक्षदानवमिव महावराहदंष्ट्राविभिन्नवक्षः स्थलम्, अतिरागिणमिव कृतबहुबन्दीपरिग्रहम्, पिशिताशनमिव रक्तलुब्धकम् गीतकलाविन्यासमिव निषादानुगतम्, अम्बिकात्रिशूलमिव महिषरुधिरार्द्रकायम्।

शब्दार्थ- सखड्गधेनुकम्= गेंडों तथा हथिनियों से युक्त खड्ग तलवार। **अभिनवजलधरमिव=** नये मेघ के समान। **मयूरपिच्छचित्रचापधारिणम्=** मोरपंख के समान रंग-बिरंगे इन्द्रधनुष को धारण करने वाले। **वकराक्षसमिव=** वकराक्षस के समान। **एकचक्रम्=** इस नाम की नगरी। **मानसवेगम्=** तीव्र गति वाला। **योजनगन्धानुसारिणम्=** कस्तूरी मृग का अनुसरण करने वाला। **घटोत्कचमिव=** घटोत्कच की भाँति। **भीमरूपधारिणम्=** भयंकर रूप धारण करने वाला। **अचलराजकन्यकाकेशपाशमिव=** हिमाचलपुत्री (पार्वती) के केशजाल की भाँति। **नीलकण्ठचन्द्रकाभरणम्=** नीलकण्ठ शंकर के चन्द्रमा को आभूषण बनाने वाले। **हिरण्याक्षदानवमिव=** हिरण्याक्ष राक्षस के समान। **महावराह=** वराहावतार। **दंष्ट्राविभिन्नवक्षः स्थलम्=**

दाढ़ों से फटी हुई छाती वालों को। **कृतबहुबन्दी परिःहम्**= बहुत स्त्रियों को बन्दी बनाये हुए। **पिशिताशनमिव**= पिशाच के समान। **रक्त्लुब्धकम्**= रक्त के लोभी को। **निषादानुगतम्**= निषादस्वर से युक्त। **अम्बिकात्रिशूलमिव**= दुर्गा के त्रिशूल की भाँति। **महिषरुधिराद्रकायम्**= महिषासुर के रक्त से लथपथ शरीर वाले को।

प्रसंग- यह गद्यांश बाणभट्ट कृत 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। शबर की सेना का वर्णन करने के पश्चात् वैशम्पायन शुक द्वारा राजा शूद्रक से शबर-सेनापति का कथन अत्यन्त ही भीषण रूप में किया गया है। यहाँ महाकवि बाण ने उसकी सजीव एवं स्वाभाविक मूर्ति पाठक के समक्ष उपस्थित कर दी है।

हिन्दी अनुवाद- जो गेंडों और हथिनियों से युक्त जंगल की भाँति कटारी से युक्त था। जो मोरपंख के समान रंग-बिरंगे इन्द्रधनुष को धारण करने वाले नये मेघ के समान मोरपंखों से सजा हुआ था। जो रंग-बिरंगा धनुष धारण किये हुए था। जो एकचक्रा नामक नगरी को जीत लेने वाले वकराक्षस के समान एक चक्र (हाथ में) लिये हुए था। जो अनेक बड़े साँपों के दाँत उखाड़ चुका था, द्रुपदपुत्र शिखण्डी के शत्रु भीष्म की भाँति मोरों का शत्रु था। जो निरन्तर मृगतृष्णा (बालुका में जलभ्रम) प्रकट करने वाले ग्रीष्म-काल की भाँति सदा मृगों को मारने की तृष्णा प्रकट करता था, मानसरोवर की ओर वेग रखने वाले विद्याधर की भाँति अभिमान के कारण तीव्र गति वाला था। जो सत्यवती का अनुसरण करने वाले पराशर की भाँति कस्तूरी मृग का अनुसरण करने वाला था। जो भीम के समान रूप धारण करने वाले घटोत्कच की भाँति भयंकर रूप धारण किये हुए था। जो नीलकंठ शंकर के (माथे के) चन्द्रमा को आभूषण बनाने वाली हिमाचलपुत्री पार्वती के केशजाल की भाँति मोरपंखों का आभूषण बनाये हुए था। पार्वती के केशपाश के समान नीलकण्ठ (मयूर) के चन्द्रक (मोरछल) का आभरण बनाये हुए था। महावराह की दृष्ट्रा द्वारा फोड़े गये वक्षस्थल वाले हिरण्याक्ष दैत्य के समान महावराह (विशाल जंगली सूअर) की दाढ़ों से विदीर्ण वक्षःस्थल वाला था। बहुत अधिक वन्दियों (भाटों) का परिग्रहण करने वाले, अत्यन्त यश के अभिलाषी के समान बहुत-सी बन्दियों (बन्दी स्त्रियों) का ग्रहण करने वाला था। रक्त के लोभी (लुब्धक) राक्षस (पिशिताशन) के समान लुब्धकों (व्याधों) के द्वारा अनुरक्त था, जिसमें (लुब्धक) अनुरक्त थे। निषाद नामक स्वर के द्वारा अनुगत गीतकला के विन्यास के समान निषादों (भीलों) के द्वारा अनुगत था, महिष (असुर) के रक्त से आर्द्र शरीर वाले दुर्गाजी के त्रिशूल के समान महिषों (जंगली भैंसों) के रक्त से आर्द्र शरीर वाला था।

विशेष- महाकवि बाण पाञ्चाली रीति के प्रमुख आचार्य हैं। यह रीति ओजगुण सम्पन्न है, अपनी काव्य-प्रतिभा के द्वारा शबर-सेनापति का चित्रण भव्य एवं उदात्त रूप में किया है। उपमा तथा उत्प्रेक्षा अलंकारों के द्वारा उसमें प्राणवत्ता एवं चमत्कार का सुन्दर प्रदर्शन है। श्लेषमय विरोध से परिपुष्ट परिसंख्या अलंकार का चित्रण प्रभावोत्पादक है।

अभिनवयौवनमपि क्षपितबहुवयसम् कृतसारमेयसंग्रहमपि फलमूलाशनम्, कृष्णमप्यसुदर्शनम्, स्वच्छन्द-प्रचारमपि दुर्गैकशरणम् क्षितिभृत्पादानुवर्तिनमपि राजसेवानभिज्ञम् अपत्यमिव विन्ध्याचलस्य, अंशावतारमिव कृतान्तस्य, सहोदरमिव पापस्य, सारमिव कलिकालस्य, भीषणमपि महासत्त्वतया

गम्भीरमिवोपलक्ष्यमाणम् अनभिभवनीयाकृतिम् मातङ्गनामानं शबरसेनापतिमपश्यम्। अभिधानं तु तस्य पश्चादहमश्रौषम्।

शब्दार्थ- अभिनवयौवनमपि= नये यौवन वाला भी। **क्षपित=** नाश। **वयस=** पक्षी, अवस्था। **सारमेय**= कुत्ता। **संग्रहमपि**= संग्रह करने वाला भी। **फलमूलाशनम्=** फल-मूल खाने वाला। **विन्ध्याचलस्य अंशावतारमिव**= विन्ध्याचल अंशावतार के समान। **सहोदरमिव पापस्य**= पाप के भाई के समान। **भीषण**= भयंकर। **महासत्त्वतया=** होने के कारण शक्तियुक्त। **गम्भीरमिवोपलक्ष्यमाणम्=** गम्भीर-सा दिखाई देने वाले को। **अनभिभवनीयाकृतिम्=** जिसका व्यक्तित्व दबाये जाने योग्य नहीं था इसको। **मातङ्गनामानम्=** मातङ्ग नाम वाले को। **शबरसेनापतिमपश्यम्=** शबर सेनापति को देखा।

प्रसंग- यह गद्यांश बाणभट्ट कृत 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है इसमें शबर सेना का वर्णन करने के पश्चात् वैशम्पायन शुक द्वारा राजा शूद्रक से शबर सेनापति का वर्णन अत्यन्त भीषण रूप में किया गया है। महाकवि बाण ने मानो उसकी सजीव एवं स्वाभाविक मूर्ति पाठक के समक्ष उपस्थित कर दी है।

हिन्दी अनुवाद- अभिनव यौवनयुक्त होने पर भी बहुत वयसों अर्थात् पक्षियों का नाश करने वाला था। अभिनव यौवन होने पर अधिक वयस (अवस्था) का क्षय होना विरोध है। परिहार बहुत पक्षियों का क्षय करने वाला था। धन और अन्न संग्रह होने पर भी फल-मूल का भोजन करना विरोध है, परिहार, सारमेय कुत्तों का संग्रह करने वाला और फल-फूल का अशन करने वाला था। कृष्ण होने पर भी असुदर्शन है। स्वच्छन्द विचरण करने पर भी दुर्गेक, स्वच्छन्द विचरण करने पर भी दुर्ग की शरण में रहने वाला अर्थात् दुर्गा का उपासक है। क्षिति-भृत् के पदानुवर्ती होने पर भी राजसेवा में अनभिज्ञ। (जो क्षितिभृत् राजा का पादानुवर्ती है, वह राजसेवा से अनभिज्ञ कैसे हो सकता है ? यह विरोध है परिहार क्षितिभृतपाद पर्वतों की तलहटियों का अनुवर्ती होने के कारण राजा की सेवा से अनभिज्ञ) जो विन्ध्याचल के पुत्र के समान, यमराज के अंशावतार के समान पाप के सगे भाई के समान, कलियुग के सार के समान प्रतीत होता था और जो भीषण होने पर भी महाशक्ति के कारण गंभीर-सा दिखायी देता था, ऐसे उस अनभिभवनीय (दबंग) आकृति वाले मातंग नामक शबर सेनापति को देखा, उसका नाम तो मैंने बाद में ही सुना।

विशेष (1)-महाकवि बाण ने शबर सेनापति की शक्तिमत्ता, अदम्य प्रभाव एवं महासत्वता का चमत्कारपूर्ण अलंकारिक शैली में चित्र उपस्थित किया है। इसमें श्लेष से परिपूर्ण परिसंख्या अलंकार है।

13.3.2 शबर चरित्र वर्णन

आसीच्च मे मनसि अहो! मोहप्रायमेतेषां जीवितम् साधुजनविगर्हितं च चरितम्। तथाहिपुरुष पिशितोपहारे धर्मबुद्धि, आहारः साधुजनविगर्हितो मधुमांसादि, श्रमो मृगया, शास्त्रं शिवारुतम् उपदेष्टारः सदसतां कौशिकाः, प्रज्ञा शकुनिज्ञानम्, परिचिताः श्वानः, राज्यं शून्याटवीषु, आपानकमुत्सवः, मित्राणि क्रूरकर्मसाधनानि धनूषि, सहाया, विषदिग्ध मुखा भुजङ्गा इव सायका, गीतमुत्सादकारि मुग्धमृगाणाम् कलत्राणि बन्दीकृताः परयोषितः क्रूरात्मभिः शार्दूलैः सह संवासः, पशुरुधिरेण देवतार्चनम्, मांसेन

बलिकर्म, चौर्येण जीवनम् भूषणानि भुजङ्गमणयः, वनगजमदैरङ्गरागः यस्मिन्नेव कानने निवसन्ति, तदेवोत्खातमूलमशेषतः कुर्वन्ति।

शब्दार्थ-मे मनसि मेरे मन में। **मोहप्रायम्=** विवेकशून्य। **एतेषां**=इनका। **जीवितं**= जीवन। **साधुजनविगर्हितं**= सत्पुरुषों से निन्दितः। **चरितम्**= आचरण। **पिशितोपहारे**= माँस की बलि। **धर्मबुद्धि**= धर्म सूझता है। **आहारः**= भोजन। **मृगया=** शिकार। **शिवारुतम्**= गीदड़ियों का शब्द। **उपदेष्टारः**= उपदेश करने वाले। **सदसतां=** भलों और बुरों के। **कोशिकाः**= उल्लू। **शकुनि**= पक्षी। **परिचिताःश्वानः** कुत्ते इनके परिचित है। **शून्य**= निर्जन। **परयोषितः**= पराई स्त्रियाँ। **देवतार्चनम्**= देवपूजा। **मांसेन बलिकर्म**= मांस से ये बलिकर्म करते हैं। **चौर्येण=** चोरी से। जीवनम्= जीविका। **भुजङ्गमणयः**= साँपों की मणियाँ। **वनगजमदैरङ्गरागः**= जंगली हाथियों के मद से इनका अंगराग होता है। **उत्खातमूलम्=** पूर्ण रूप से ऊजड़।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट रचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। इसमें वैशम्पायन नामक शुक राजा शूद्रक से शबर सेनापति का वर्णन करके शबरों के चरित्रादि का विवेचन करता है।

हिन्दी अनुवाद- मेरे मन में (शबर सेना को देखकर यह विचार) उत्पन्न हुआ। अहो, इन लोगों का जीवन प्रायः विवेकशून्य और आचरण सत्पुरुषों से निन्दित है। उदाहरण के लिए-नरमांस की बलि देने में इन्हें धर्म सूझता है, सत्पुरुषों से निन्दित सुरा-मांस आदि इनका भोजन है। इनका व्यायाम शिकार है। गीदड़ियों का रोदन-स्वर इनके लिए शास्त्र है। इन्हें सत और असत का उपदेश देने वाले उल्लू हैं। पक्षियों की जानकारी इनकी सूझबूझ है। कुत्ते इनके परिचित हैं। क्रूरकर्म के साधन धनुष इनके मित्र हैं। विषैले मुख वाले साँपों की भाँति विषबुझे फलकों वाले बाण इनके सहायक हैं, भोले मृगों के प्राण लेने वाला इनका गीत है। बन्दी बनायी गयीं परायी स्त्रियाँ इनकी रमणियाँ हैं। निष्ठुर बाघों के साथ इनका निवास है। पशुओं के रक्त से इनकी देवपूजा होती है। मांस से ये बलिकर्म करते हैं। चोरी से इनकी जीविका चलती है। साँपों की मणियाँ इनके आभूषण हैं। जंगली हाथियों का मद इनका अंगराग है। जिस वन में ये निवास करते हैं, उसे पूर्णरूप से ऊजड़ कर देते हैं।

विशेष (1)-आपानकम्-आ समन्तात् आगत्य मिलन्ति यत्र तत् अपानमेव आपानकम् - मदिरापान की गोष्ठी, यहाँ कवि ने शबर सेनापति के विगर्हणीय चरित्र और निरंकुशता, निर्दयता का प्रभावोत्पादक वर्णन अलंकृत शैली में किया है।

चिन्तयत्येव मयि स शबरसेनापतिरटवीपरिभ्रमणसमुद्भवं श्रममपनिनीषुरागत्य तस्यैव शाल्मलीतरोरधश्छायाया-मवतारितकोदण्डस्त्वरितपरिजनोपनीतपल्लववासेन समुपाविशत्। अन्यतमस्तु शबरयुवा ससंभ्रममवतीर्य तस्मात् करयुगल-क्षोभिताम्भसः सरसो वैदूर्यद्रवानुकारिं, प्रलयदिवसकरकिरणोपतापादम्बरैकदेशमिव विलीनम् इन्दुमण्डलादिव प्रस्यान्दितम् द्रुतमिव मुक्ताफलनिकरम् अत्यच्छतया स्पर्शानुमेयं हिमजडम्, अरिबिन्दकोशरजः कषायमम्भः कमलिनीपत्रपुटेन प्रत्य-ग्रोधृताश्च धौतपङ्कनिर्मला मृणालिकाः समुपाहरत्। आपीतसललश्च सेनापतिस्ता मृणालिकाः

शशिकला इव सैहिकेयः क्रमेणादशत्। अपगतश्रमश्चोत्थाय परिपीताम्भसा सकलेन तेन शबरसैन्येनानुगम्यमानः शनैः शनैरभिमतं दिगन्तरमयासीत्।

शब्दार्थ- चिन्तयत्येव= सोचते हुए। **अटवी=** जंगल में। **परिभ्रमण=** घूमते हुए। **समुद्भवं=** उत्पन्न। **अपनिनीषु=** दूर करने की इच्छा से। **आगत्य=** आकार। **छायायाम्=** छाया में। **अवतरित=** उतारकर। **कोदण्ड=** धनुष। **त्वरित=** शीघ्र। **परिजन=** सेवक (भक्त)। **उपनीत=** लाये हुए। **पल्लवबासेन=** पत्तों के आसन पर। **समुपाविशत्=** सामने बैठ गया। **अन्यतमः=** दूसरा। **ससंभ्रम्=** वेगपूर्वक। **करयुगलक्षोभिताम्भसः=** दोनों हाथों से विलोड़न करते हुए। **वैदूर्यद्रवानुकांरि=** वैदूर्य मणि के रस का अनुकरण करते हुए। **प्रलयदिवसकर=** प्रलयकालीन सूर्य। **उपताप=** पिघलकर। **विलीनम्=** युक्त। **इन्दुमण्डलादिव=** मानो चन्द्रमण्डल द्वारा। **प्रस्यान्दितम्=** बहते हुए। **अत्यच्छतया=** अत्यन्त निर्मल। **हिमजडम्=** बहते हुए। **कोश=**कमल-कोश। **रजः=** पराग। **कषायमम्भः=** कषैला जल। **पत्रपुटेन=** पत्ते के दोने। **प्रत्यग्र=** तुरन्त। **धौतपङ्क=** धुली हुई कीचड़। **आपीत=** पीकर। **मृणालिकाः=** कमल-नाल। **सैहिकेयः=** राहु। **अदशत्=** काट लिया। **अपगत्=** दूर होने पर। **श्रमम्=** थकावट। **परिपीत=** पीने पर। **अम्भास=** जल से। **सकलेन=** सम्पूर्ण। **अनुगम्यमान=** पीछा करते हुए। **अभिमतम्=** अभीष्ट **दिगन्तरम्=** दूसरी दिशा को। **अयासीत्=** चला गया।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ शुक राजा शूद्रक से शबर-सेनापति का वर्णन कर उसके चरित्रादि का विवेचन करता है, इसी का कवि ने यहाँ चित्रण किया है, जो अत्यन्त ही सजीव है।

हिन्दी अनुवाद- मैं ऐसा सोच ही रहा था कि वह शबर-सेनापति जंगल में घूमने से उत्पन्न थकावट को दूर करने की इच्छा से उस शाल्मली वृक्ष के नीचे छाया में आकर धनुष उतारकर सेवकों द्वारा तुरन्त लाये गये पत्तों के आसन पर बैठ गया। दूसरा शबर युवक शीघ्रतापूर्वक उतरकर दोनों हाथों से जल को विलोड़ित कर पम्पासर से वैदूर्यमणि के रस का अनुकरण करने वाले, मानो प्रलयकालीन सूर्य की किरणों से पिघलकर टपकते आकाश के एक भाग के समान चन्द्रमण्डल से झरे, गले हुए मुक्ता-समूह-तुल्य, अत्यन्त निर्मल होने के कारण स्पर्श से ही जिसका अनुमान किया जा सकता था, ऐसे बर्फ से ठंडे, कमल-कोश के पराग से कषैले जल को कमलिनी पत्रों के दोने में और तुरन्त उखाड़ी गयी, धोये जाने से निर्मल मृणालें ले आया। सेनापति जल पीकर धीरे-धीरे उस कमल की जड़ को काटकर खाने लगा मानो राहु चन्द्रकला का भक्षण कर रहा हो। थोड़ी देर थकान मिटाकर वह उठ खड़ा हुआ और जल पीकर निश्चिन्त हुई उस भील सेना के साथ-साथ धीरे-धीरे अपनी इच्छित दिशा की ओर चल पड़ा।

विशेष (1)-इस गद्यांश में कवि का भाव है कि राजा शूद्रक से वैशम्पायन शुक शबर सेनापति का चित्रण कर रहा है। विभिन्न उपमानों के द्वारा आलंकारिक भाषा-शैली में अत्यन्त भव्य एवं उदात्त वर्णन

किया है। चाण्डाल की जीवन-क्रिया क्या होती है, उनका चरित्र कैसा है, इन सभी का प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली में चित्रण है। वस्तुतः संस्कृत गद्य-साहित्य में बाण की प्रतिभा अप्रतिद्वन्द्व है। उनके विषय में **"बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्"** कथन युक्तिसंगत है।

(2) यहाँ **लुप्तोपमा** तथा **उत्प्रेक्षा अलंकार** का प्रयोग हुआ है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. एकलव्य की भाँति किसे कहा गया है।
2. शबर सेनापति का क्या नाम था?
3. शबर सेनापति किससे घिरा हुआ रहता था?
4. शबर सेना का जीवन कैसा बताया है।

13.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में शबर सेना एवं सेनापति के लक्षणों का तथा उनके शिकार से वन चारों और क्षुभितसा हो जाता है ऐसा वर्णन वर्णित है।

13.5 कठिन शब्दावली

1.दृष्टया–देखकर **2.कलकले**–कोलाहल **3.संघात्**–समूह से**4.मधुकर-** भ्रमर **5.चौर्येण** -चोरी द्वारा

13.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. शबर सेनापति 2. मातंग 3. शबर समूह 4. विवेकशून्य

13.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

13.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. शबर सेनापति का चरित्र-चित्रण निरुपित कीजिए।

2. प्रस्तुत गद्यांश की प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए-

(1) अरण्यमिव .... कायम्।

(2) मध्ये च .... निवारितातपम्।

(3) अभिमुखम् .... सैन्यमद्राक्षम्।

इकाई-14

शुक-शावक वर्णन

संरचना

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 शुक शावक निपात

14.3.1 वैशम्पायन शुक-दशा वर्णन

- स्वयं आकलन प्रश्न

14.4 सारांश

14.5 कठिन शब्दावली

14.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

14.7 सहायक ग्रन्थ

14.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में वैशम्पायन नामक तोता राजा शूद्रक को अपने जन्म का वृत्तान्त बताते हुए बहेलियों के द्वारा शाल्मली वृक्ष की कोटरों से तोतों के बच्चों को धरतीपर गिराने का वर्णन वर्णित है। वैशम्पायन शुक की दयनीय अवस्था का वर्णन इस इकाई में किया गया है।

14.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

- शुक शावकों के निपात का ज्ञान होगा।
- शबर सेना की क्रूरता का यहाँ ज्ञान होगा।
- वैशम्पायन नामक शुक की दयनीय अवस्था के बारे में ज्ञान होगा।

14.3 शुक शावक निपात

एकतमस्तु जरच्छवरस्तमात्पुलिनवृन्दादनासादितहरिणपिशितः पिशिताशन इव विकृतदर्शनः पिशितार्थी तस्मिन्नेव तरुतले मुहूर्तमिव व्यलम्बत। अन्तरिते च तस्मिन् शबरसेनापतौ स जीर्णशबरः पिबन्निवास्माकमायूंषि रुधिरबिन्दुपाटलया कपिलभूलतापरिवेषभीषणया दृष्ट्या गणयन्निव शुककुलकुलायस्थानानि श्येन इव विहगामिषास्वादलालसः सुचिर-मारुरुक्षस्तं वनस्पतिमामूलादपश्यन्। उत्क्रान्तमिव तस्मिन् क्षणे तदालोकनभीतानां शुककुलानामसुभिः।

शब्दार्थ- एकतमस्तु= उनमें से एक। **जरच्छवर**= बूढ़ा भील। **पुलिन्दवृन्दात्**= भीलों का समूह। अ**नासादित**= न प्राप्त करने वाला। **पिशितः**= माँस। **आविकृत**= भयंकर। **तरुतले**= वृक्ष के नीचे। **व्यलम्बत्** रुका। **अन्तरिते च**= और दिखाई न देने पर। **पिबन्निव**= पीता हुआ। **रुधिरबिन्दुपाटलया**= लाल बूँदों से श्वेत रक्त वर्ण। **कपिल**= भूरी। **परिवेष**= आकृति। **भीषणया**= भयंकर। **गणयन्निव**= शुक समुदाय गिनता हुआ। **श्येन इव=** बाज की भाँति। **कुलाय**= घोंसले। **आमिष=** स्वाद। **लालसः**= लालायित। **सुचिरम्**= बहुत समय तक। **आरुरुक्षुः**= चढ़ने की इच्छा रखने वाला। **उत्क्रान्तमिव**= मानो प्राण उड़ गये। **तदालोकन**= तब उसके देखने पर। **असुभिः**= प्राण।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ कवि ने शबर-सेनापति के चरित्र का चित्रण तथा एक बूढ़े भील का बहुत ही सजीव वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जब किरातदल में से एक बूढ़ा किरात जिसे हिरण का माँस नहीं मिल पाया था तथा जो पिशाच की भाँति भयंकर आकृति वाला था, माँस की इच्छा से उसी पेड़ के नीचे थोड़ी-सी देर रुक गया। उस शबर सेनापति के दृष्टि से ओझल हो जाने पर वह बूढ़ा किरात (शबर) हमारी आयु को पीता हुआ रक्त बिन्दु की भाँति गुलाबी तथा भूरी भौंहों के घिराव से भयावनी दृष्टि से बाज के समान पक्षियों के माँस भक्षण की लालसा लेकर मानो शुकसमूह के घोंसले के स्थानों को गिनता हुआ चढ़ने की इच्छा से बहुत देर तक उस वृक्ष को जड़ से लेकर (ऊपर तक) देखता रहा। उस समय उसके निरीक्षण से डरे तोतों के कुलों के प्राण जैसे उड़ गये।

विशेष (1)-इस गद्यांश में राजा शूद्रक से वैशम्पायन शुक द्वारा शबर-सेनापति के कथन का अत्यन्त ही सजीव रूप में वर्णन कराया गया है। इसमें महाकवि बाण ने मानो उसकी सजीव एवं स्वाभाविक मूर्ति को पाठक के समक्ष उपस्थित कर दिया है। उनकी भाषा-शैली में भाव-विषय को प्रकट करने की अद्वितीय क्षमता है।

(2) यहाँ **उत्प्रेक्षा** तथा **उपमा अलंकार** है।

किमिव हि दुष्करमकरुणानाम् ? यतः स तमनेकतालतुङ्गमभ्रङ्कषशाखाशिखरमपि सोपानैरिवायलेनैव पादपमारुह्य तानमुपजातोत्पतनशक्तीन् कांश्चिदल्पदिवसजातान् गर्भच्छविविपाटलाञ्छाल्मलीकुसुमशङ्कामुपजनयतः कांश्चिदुद्भि-द्यमानपक्षतया नलिनसंवर्तिकानुसारिणः, कांश्चिदर्कफलसदृशान् कांश्चिल्लोहितायमानचञ्चुकोटीनीषद्विघटितदलपुट-पाटलमुकानां कमलमुकुलानां श्रियमुद्वहतः, कांश्चिदनवरतशिरः कम्पव्याजेन निवारयत् इव प्रतीकारासमर्थानेकैकतया फलानीव तस्य वनस्पतेः शाखासन्धिभ्यः कोटरान्तरेभ्यश्च शुकशावकानग्रहीत् अपगतासूंश्च कृत्वा क्षितावपातयत्।

शब्दार्थ- अकरुणानाम्= निर्दय, निष्ठुर लोग। **तुङ्ग**=ऊँचे। **अभ्रङ्कष**= बादलों का स्पर्श करने वाले। **सोपानैः**= सीढ़ियों के द्वारा। **अयलेनैव**= विना प्रयत्न के। **पादपम्**= वृक्ष पर। **आरुह्य**= चढ़कर। **अनुपजात्**= उत्पन्न नहीं हुई। **उत्पतन्**= उत्पन्न होने की। **अल्प**= कम। **गर्भच्छविपाटत्यात्**= शीघ्र ही प्रसूत गर्भ की आभा से गुलाबी। **उपजनयत्**= उत्पन्न करते हुए। उद्भिद्यमान= निकलते हुए। **पक्षतया**= पंख। **नलिन**= कमल।

संवर्तिकानुकरणः= कोपलों का अनुकरण करने वाले। **अर्कफल**= मदार का फल। **काश्चित्**= कोई। **चञ्चुकोटीन**= चोंच की नोंक। **ईषत्**= थोड़े। **विघटित**= खिले हुए। **उद्वहतः**= धारण करके। **अनवरत पुटपाटल**= निरन्तर। **व्याजेन**= बहाने से। **प्रतीकार**= बदला। **असमर्थनात्**= अशक्त। **अग्रहीत्**= पकड़ा। **अपगतान्**= नष्ट। **असून**= प्राण। **कृत्वा**= करके। **क्षितौ**= पृथ्वी पर। **अपातयत्**= गिराने लगा।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ कवि ने वैशम्पायन द्वारा राजा शूद्रक से अपने जन्म का वृत्तान्त कहते हुए, बूढ़े बहेलिये द्वारा शाल्मली वृक्ष के कोटरों से तोते के बच्चों को जमीन पर गिराने का वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- निर्दय लोग क्या नहीं कर सकते ? क्योंकि वह अनेक ताड़ वृक्षों जैसे ऊँचे, बादलों की छूती शाखाओं की फुनगियों से युक्त भी उस वृक्ष पर जैसे कोई सीढ़ियों पर चढ़ रहा हो, ऐसे सरलतापूर्वक चढ़कर जिनमें उड़ने की शक्ति नहीं आयी थी, ऐसे उन कुछ ही दिन पूर्व उत्पन्न, हाल ही में प्रसूत गर्भ की प्रभा से गुलाबी शाल्मली के फूलों की भ्रान्ति उत्पन्न करने वाले, कुछ उगते पंखों के कारण कमलों के नये पत्तों से लगते, कुछ मदार के फलों जैसे, कुछ लाल होती चोंचों की नोंक वाले थोड़े खिले पत्रपुटों के कारण गुलाबी मुख वाली कमल-कलियों की शोभा धारण करते, कुछ निरन्तर शिर काँपने को मानो रोकते उपाय करने में असमर्थ तोतों के बच्चों को, जैसे फल हों ऐसे, एक-एक करके उस वृक्ष की डालों की संधों और कुलाड़ों के भीतर से पकड़ने लगा और निष्प्राणों की भाँति धरती पर फेंकने लगा।

विशेष (1)-इस गद्यांश में महाकवि बाण ने उस नृशंस वृद्ध भील का अत्यन्त हृदयविदारक चित्रण किया है। भाषा-शैली में सर्वत्र सजीवता एवं मार्मिकता दृष्टव्य है।

(2) यहाँ **उपमा** तथा **उत्प्रेक्षा** अलंकार है।

तातस्तु तं महान्तमकाण्डम् एवं प्राणहरमप्रतीकारमुपप्लवमुपनतमवलोक्य द्विगुणतरोपजात वेपथुर्मरणभया-दुद्भ्रान्ततरलतारकां विषादशून्यामश्रुजलप्लुतां दृशमितस्ततो दिक्षु विक्षिपन् उच्छुष्कतालुरात्मप्रतीकाराक्षमः त्रासस्त्र-स्तसन्धिशिथिलेन पक्षसंपुटेनाच्छाद्य मां तत्कालोचितं प्रतीकारं मन्यमानः स्नेहपरवशो मद्रक्षणाकुलः किंकर्त्तव्यताविमूढः क्रोडभागेन मामवष्टभ्य तस्थौ।

शब्दार्थ- महान्तम्= बड़े। **अकाण्डम्**= असमय। **प्राणहरम्**= प्राणघात। **अप्रतीकारम्**= उपायरहित। **उपनतम्**= आई हुई। **वेपथुः**= कम्पन। **उद्भ्रान्त**= उलटने लगी। **विषादशून्यामश्रुजलप्लुताम्**= दुःख के कारण सूनी और आँसूभरी। **तत्कालोचितं**= उस समय के अनुरूप। **प्रतीकारं मन्यमानः**= उपाय मानते हुए। **स्नेहपरवशाः**= प्रेम-विवश होकर। **मद्रक्षणाकुलः** मेरी रक्षा के लिए। **किंकर्त्तव्यताविमूढः क्रोडभागेन मामवष्टभ्य तस्थौ**= किंकर्त्तव्यविमूढ होकर मुझे छाती से चिपकाकर बैठ गये।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। वैशम्पायन नामक तोता राजा शूद्रक से अपने जन्म का वृत्तान्त वर्णन करते हुए बहेलियों के द्वारा शाल्मली वृक्ष की कोटरों से तोतों के बच्चों को धरती पर गिराने का वर्णन करता है।

हिन्दी अनुवाद- मेरे पिता ने भलीभाँति समझ लिया कि यह एक बहुत बड़ी आकस्मिक प्राणनाशक विपत्ति आ गई है। अब इससे बचने का कोई उपाय नहीं है। इसलिए भय के कारण उनके शरीर की कँपकपी दुगनी हो गयी। मृत्यु के भय से उनकी पुतलियाँ उलटने लगीं और वे दुःख से सूनी-सूनी आँसूभरी आँखों से इधर-उधर देखने लगे। उनका तालू सूख गया। उनमें अपने को बचा पाने की कोई शक्ति न रह गयी। भय के कारण उनके सभी अंग ढीले पड़ गये तथा पंख भी अधिक लटक गये। वे मेरी रक्षा के लिए व्याकुल हो उठे। मेरे प्रेम ने उन्हें इतना विवश कर दिया कि उन्होंने मुझे अपने पंखों से ढककर छाती से चिपका लिया और हक्का-बक्का होकर चुपचाप बैठ गये। उस समय उन्हें मेरी रक्षा का यही उपाय सूझ पड़ा।

विशेष- महाकवि बाण ने उस नृशंस भील का कितना हृदयविदारक वर्णन किया है। भाषा-शैली में सर्वत्र सजीवता, स्वाभाविकता एवं मार्मिकता दृष्टव्य है। आलंकारिता का मोह उनके साथ सर्वत्र लगा हुआ है।

असावपि पापः क्रमेण शाखान्तरैः संचरणमाणः कोटरद्वारमागत्य जीर्णासितभुजङ्गभोगभीषणं प्रसार्य विविघ-वनवराहवसाविस्त्रगन्धिकरतलं अनवरतं कोदण्डगुणाकर्षणव्रणाङ्कत प्रकोष्ठमन्तकदण्डानुकारिणं वामबाहुमति नृशंसो-मुहुर्मुहुर्दत्तचञ्चुप्रहारमुत्कूजन्तमाकृष्य तातमपगतासुमकरोत्। मां तु स्वल्पशरीरत्वाद् भयसपिण्डिताङ्गत्त्वात् सावशेषत्वा-च्चायुषः कथमपि तत्पक्षपुटान्तरगतं नालक्षयत्। उपरतं च तमवनितले शिथिलशिरोधरमधोमुखममुञ्चत्। अहमपि तच्च-रणान्तरे निवेशितशिरोधरो निभृतमङ्कनिलीनस्तेनैव सहपातम्। अवशिष्टपुण्यतया तू पवनवशात् पुञ्जितस्य महतः शुष्कपत्र- राशेरुपणि परितमात्मानमपश्यम्। अङ्गानि येन मे नाशीर्यन्त।

शब्दार्थ-असौ-अपि= वह भी। **शाखान्तरैः**= दूसरी डाली पर। **सञ्चरणमाण**= चलते हुए। **कोटर**= घोंसले के। **द्वारमागत्य** = दरवाजे पर आकर। **जीर्ण**= पुराने। **असित**= काले। **भुजंग**= सर्प। **भोग**= फन। **भीषणम्**= भयंकर। **प्रसार्य**= फैलाकर। **विविधवनवराह**= विभिन्न जंगली शूकर। **वसा**= चर्बी। **विस्त्रगन्धि**= गन्ध वाला। **अनवरत**= निरन्तर। **कोदण्ड**= धनुष। **व्रण**= धाव। **प्रकोष्ठम्**= कलाई। **अन्तक**= यमराज। **वामवाहुव**= बाँयी भुजा। **नृशंसो**= क्रूरता। **चञ्चुप्रहारम्**= चोंच से प्रहार करना। **उत्कूजन्तं**= चिल्लाते हुए। **पक्ष**= पंख। **पुट**= मध्य। **निलीनैः**= छिपाये हुए। **पुञ्जितस्य**= इकट्ठे किए हुए। **पतितम्**= गिरा हुआ। **येन**= जिससे। **नाशीर्यन्त**= टूटे-फूटे नहीं।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ कवि ने शाल्मली वृक्ष के कोटरों से तोतों के बच्चों को जमीन पर गिराने का हृदयद्रावक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- उस अत्यन्त क्रूर पापी शबर ने दूसरी शाखाओं पर घूमते हुए क्रमशः हमारी खखोडल के द्वार पर आकर, बूढ़े काले साँप के शरीर के समान भयंकर अपनी बाँयी भुजा को, जिसकी हथेली से अनेक जंगली सुअरों की चर्बी जैसी गन्ध आ रही थी, धनुष की डोरी खींचने से जिसकी कलाई में घाव का निशान पड़ गया था तथा जो यमराज के दण्ड का अनुकरण करने वाली थी, फैलाकर बार-बार चोंच से प्रहार करने वाले व चीखते हुए मेरे पिता को खींचकर मार डाला। छोटा शरीर होने के कारण, भय से अंग सिकुड़ जाने के कारण तथा आयु के शेष होने के कारण पिता के पंखों के भीतर छिपे हुए मुझे वह किसी

कारण से नहीं देख पाया और उसने मेरे उस मृत पिता को, जिसकी गरदन झूल गयी थी और मुँह नीचे लटंक गया था पृथ्वीतल पर गिरा दिया। मैं भी उनके पैरों के बीच में ग्रीवा को रखता हुआ (फंसाता हुआ), गुप्त रूप से गोदी में छुपा हुआ उन्हीं के साथ गिरा। (मैंने) बचे हुए पुण्यों वाला होने के कारण पवन (हवा) के द्वारा एकत्रित हुए विशाल सूखे पत्तों के पुञ्ज के ऊपर पड़ा हुआ अपने आपको देखा, जिसके कारण मेरे अंग टूटे-फूटे नहीं।

विशेष (1)-इस गद्यांश में महाकवि बाण ने उस नृशंस वृद्ध भील का अत्यन्त हृदयविदारक चित्रण किया है। भाषा-शैली में सर्वत्र सजीवता, स्वाभाविकता एवं मार्मिकता दृष्टव्य है। आलंकारिता का मोह उनके साथ सर्वत्र लगा हुआ है। शुकशावकों का दयनीय मार्मिक वर्णन है। वस्तुतः बाणभट्ट का संस्कृत गद्य-साहित्य में अद्वितीय स्थान है, क्योंकि इनमें अलंकृत भाषा-शैली द्वारा भाव-विषय को प्रकट करने की अत्यधिक क्षमता है।

(2) यहाँ **लुप्तोपमा अलंकार** है। **'विस्र स्यादामगन्धि यत्'**वाक्य में **अमरकोश** है।

14.3.1 वैशम्पायन शुक-दशा वर्णन

यावच्चासौ तस्मात् तरुशिखरान्नावतरति तावदहमवशीपर्णसवर्णत्वादस्फुटोपलक्ष्यमामूर्त्तिः पितरमुपरतमृत्सृज्य नृशंस इव प्राणपरित्यागयोग्येऽपि काले बालतया कालान्तरभुवः स्नेहरसस्यानभिज्ञो जन्मसहभुवा भयेनैव केवलमभि-भूयमानः किञ्चिदुपजाताभ्यां पक्षाभ्यामीषत्कृतावष्टम्भो लुठन्नितस्तः कृतान्तमुखकुहरादिव विनिर्गतमात्मानः मन्यमानो नातिदूरवर्तिनः शबरसुन्दरीकर्णपूररचनोपयुक्तपल्लवस्यः संकर्षणपटनीलच्छाययोपहसत् इव गदाधरदेहच्छविम् अच्छैः कालिन्दीजलच्छेदैरिव विरचितच्छदस्य, वनकरिमदोपसिक्तकिसलयस्य, विन्ध्याटवी केशपाशश्रियमुद्वहतः, दिवाप्यन्ध-कारितशाखान्तरस्य अप्रविष्टसूर्यकिरणमतिगहनमपरस्येव। पितुरुत्सङ्गमतिमहतस्तमालविटपिनो मूलदेशमविशम्।

शब्दार्थ-तस्मात्= उस। **शिखरात्**= चोटी से। **नावतरति**= नहीं उतरता है। **अवशीर्ण**=सूखे-पीले। **पर्ण**= पत्ते। **अस्फुट**= पूर्ण स्पष्ट न होने से। **उपलक्ष्यमाण**= आकृति वाला। **उपरतं**= मरा हुआ। **नृशंस**= हत्यारे। **परित्याग**= छोड़कर। **काले**= समय। **कालान्तर भुवः=** देर में उत्पन्न होने वाले। **अनभिज्ञ**= अपरिचित। **भवा**= उत्पन्न। **भयेनैव=** मानो भय से। **अभिभूयमान**= तिरस्कृत। **पजाताभ्यां**= निकले हुए पंख। **ईषत्**= थोड़ा। **अवष्टम्भो**= आश्रय लेकर। **लुठन्**= लुढ़कते हुए। **कुहरादिव**= मानो कुहर (विवर) से। **विनिर्गतम्**= निकलता हुआ। **नातिदूरवर्तिनः**= समीपवर्ती। **कर्णपूर**= कर्णफूल। **अच्छैः**= स्वच्छ। **उपसिक्त**= सींचे गये। **दिवा=** दिन। **अन्धकारित**= अन्धकार। **शाखान्तरस्य**= शाखाओं के भीतर। **अप्रविष्ट**= प्रवेशरहित। **अतिगहनम्**= अत्यन्त घने। **अपरस्येव**= दूसरी। **उत्सङ्ग**= गोद। **अतिमहत**= बहुत बड़े। **तमालविटपिनः**= तमालवृक्ष के। **मूलदेशम्**= जड़ में। **अविशम्**= घुसा।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से अवतरित है। यहाँ वैशम्पायन शुक राजा शूद्रक से अपनी दयनीय अवस्था का चित्रण करता है। इसी का कवि ने प्रभावोत्पादक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- जब तक वह (शबर) उस वृक्ष के शिखर से नहीं उतरा, तब तक गिरे हुए पत्तों के समान रंग का होने के कारण अस्पष्ट दिखाई पड़ती हुई आकृति वाला मैं क्रूर (व्यक्ति) के समान पिता को त्यागकर प्राण परित्याग करने योग्य समय में भी, बचपन के कारण कालान्तर में होने वाले स्नेह-रस से अपरिचित केवल जन्म के साथ होने वाले भय से अभिभूत होता हुआ, कुछ उगे हुए पंखों से थोड़ा-सा सहारा लेकर इधर-उधर लोटता हुआ अपने को मानो यम के मुख कुहर से निकला हुआ मानता हुआ, (एक) समीपवर्ती अत्यन्त विशाल तमाल वृक्ष के जिसके पल्लव शबर-सुन्दरियों के कर्णपूरों की रचना के लिए उपयुक्त थे (अथवा कर्णपूरों की रचना में उपयोग किये जाते थे); जो बलराम के नीले वस्त्र के समान कान्ति से मानो गदाधारी (विष्णु) के शरीर की छवि का उपहास करता था; मानो स्वच्छ यमुना के जल (खण्डों) से जिसके पत्ते बनाये गये थे, जंगली हाथियों के मद से जिसके किसलय सींचे गये थेः जो विन्ध्याटवी के केश-समूह की शोभा को धारण किये हुए था, (और) दिन में भी जिसकी शाखाओं का भीतरी भाग अन्धकारयुक्त था-मूल प्रदेश में प्रविष्ट हो गया (जिस) मूल प्रदेश में सूर्य की किरणें प्रवेश नहीं करती थीं; जो अत्यन्त गहन (घना) था और मानो पिता की दूसरी गोद था।

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाण ने अपनी अलंकृत भाषा-शैली द्वारा तोते की दयनीय दशा का अत्यन्त भव्य एवं उदात्त वर्णन किया है। इनमें भाव विषय को प्रकट करने की अद्वितीय क्षमता है। कवि ने अलंकारमयी शब्द रचना द्वारा इसको चमत्कृत बना दिया है। किन्तु उसमें स्वाभाविकता एवं सजीवता दृष्टव्य है तथा बाणभट्ट का संस्कृत गद्य- साहित्य में अद्वितीय स्थान है।

(2) यहाँ **उत्प्रेक्षा, लुप्तोपमा** तथा **निदर्शना अलंकार** का प्रयोग है।

अवतीर्य च स तेन समयेन क्षितितलविप्रकीर्णान् संहृत्य तान् शुकशिशूनकलतापाशसंयतानाबध्य पर्ण-पुटेऽतित्वरितगमनः सेनापतिगतेनैव वत्मना तामेव दिशमगच्छत्। मां तु लब्धजीविताशं प्रत्यग्रपितृमरणशोकशुष्क-हृदयमतिदूरपातादायाशितशरीरं संत्रासजातवेपथुं सर्वाङ्गोपतापिनी बलवती पिपासा परवशमकरोत्। अनया च कालकलया सुदूरमतिक्रान्तः स पापकृदिति परिकलय्य किंचिदुन्नमतिकन्धरो भयचकितया दृशा दिशोऽवलोक्य तृणेऽपि चलति पुनः प्रतिनिवृत्त इति तमेव पदे-पदे पापकारिणमुत्प्रेक्षमाणो निष्क्रम्य तस्मात् सलिलसमीपमपसर्तुं प्रयत्नमकरवम्।

शब्दार्थ-अवतीर्य= उतरकर। **क्षितितल**= भूमि पर। **विप्रकीर्णान्**= फैले हुए। **संहृत्य=** इकट्ठा करके। **शिशून्**= बच्चों को। **पाश**= जाल। **बध्य**= बाँधकर। **पर्णपुटे**= पत्तों से निर्मित। **त्वरितगमनः**= तीव्र गति से चलता हुआ। **वर्त्मना**= मार्ग। **दिशमगच्छत्**= दिशा में गया। **लब्ध**= प्राप्त। **जीविताशं**= जीवन की इच्छा। **प्रत्यग्र**= नवीन। **शोकशुष्कः**= वियोग से सूखा। **अतिदूरापाताद्**= अत्यन्त ऊँचे से गिरने पर। **आयासित**= थका हुआ। **संत्रास**= भय से। **सर्वाङ्गः**= समस्त अंग। **परवशमकरोत्=** पराधीन किया। **परिकलय्य**= मानकर। **किंचिदुन्नमतिकन्धरो**= थोड़ी गरदन ऊँची किये हुए। **भयचकितया**= भय से चौंका। **तृणेऽपि**= तिनके के। **उत्प्रेक्षमाणः**= सम्भावना। **प्रयत्नमकरवम्=** कोशिश करने लगा।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ कवि ने वर्णन किया है कि शुक किस प्रकार राजा शूद्रक से अपनी दयनीय दशा का चित्रण कर रहा है।

हिन्दी अनुवाद- इस समय तक वह (शबर) उतरकर धरती के तल पर बिखरे पड़े उन शुक-शावकों को एकत्र कर और अनेक पाश-लताओं में जकड़कर उन्हें पत्तों की टोकरी में बाँधकर जिस मार्ग पर सेनापति गया था, उसी मार्ग से उसी ओर जल्दी-जल्दी पग बढ़ाता चला गया। जिसे जीवन की आशा प्राप्त हो गयी थी, पिता की मृत्यु के नवीन शोक से जिसका हृदय सूख गया था, बहुत ऊँचे से गिरने के कारण जिसका शरीर दुःख रहा था, ऐसे भय से काँपते मुझको सब अंगों को शिथिल कर डालने वाली तीव्र प्यास ने पराधीन कर दिया। इस समय तक वह पापकर्मी बहुत दूर तक चला गया होगा, ऐसा मानकर कुछ ऊँची गरदन करके भय के कारण चकित दृष्टि से चारों ओर देखकर तिनका खड़कते ही वह लौटा इस प्रकार पग-पग पर उस पापकारी की सम्भावना करता उस तमाल वृक्ष के मूल से निकलकर पानी के पास पहुँचने का प्रयत्न करने लगा।

विशेष(1)- महाकवि बाणभट्ट ने अपनी अलौकिक प्रतिभा द्वारा 'कादम्बरी' के कथानक को संस्कृत गद्य-साहित्य में सर्वोत्कृष्ट कथा-प्रबन्ध बना दिया है। वैशम्पायन शुक की अवस्था का कितना करुण रसपूर्ण दर्दनाक चित्रण उपस्थित किया है, जो अपनी सजीवता एवं स्वाभाविकता से परिपूर्ण है। भट्टजी में भाव-विषय को प्रकट करने की विशेष क्षमता है। संस्कृत गद्य-साहित्य में अद्वितीय स्थान रहा है।

(2) 'कालवाचक' वाक्य में **तृतीया विभक्ति** का प्रयोग है। 'सेनापतिगतेन' व्याकरण में कर्ता से अधिष्ठित मार्ग की भी कर्म-संज्ञा होती है।

अजातपक्षतया च नातिस्थिरतरचरणसञ्चारस्य मुहुर्मुहुर्मुखेन पततो मुहुस्तिर्यङनिपतन्तमात्मानमेकया पक्षपाल्या सन्धारयतः क्षितितलसंसर्पणश्रमातुरस्य अनभ्यासवशादेकमपि दत्त्वा पदममनवरतमुन्मुखस्य, स्थूलस्थूलं श्वसतो धूलिधूस-रस्य संसर्पतो मम समभून्मनसि अतिकष्टा स्ववस्थास्वपि जीवित निरपेक्षा न भवन्ति खलु जगति प्राणिनां वृत्तयः। नास्ति जीवितादन्यदभिमततरमिह जगति सर्वजन्तूनाम्। एवमुपरतेऽपि सुग्रहीतनाम्नि ताते यदहमविकलेन्द्रियः पुनरेव प्राणिमि। धिङ्मामकरुणमतिनिष्ठुरमकृतज्ञम्। अहो! सोढपितृमरणशोकदारुणं येन मया जीव्यते उपकृतमपि नापेक्ष्यते। खलं हि खलु मे हृदयम्।

शब्दार्थ- अजातपक्षतया च नातिस्थिरतरचरणसंचारस्य= पंख न निकलने के कारण पैरों की गति दृढ़ नहीं हो पाई का। **मुहुर्मुहुर्मुखेन पततो**= बार-बार मुँह के बल गिरते हुए का। **तिर्यक्**= तिरछा। **निपन्तन्तम्**= गिरते हुए को। **पक्षपाल्या**= करवट से। **संधारयतः**= सँभालते हुए। **संसर्पण**= सरकना। **आनभ्यासवशादेकमपि**= चलने का अभ्यास न होने से एक भी। **दत्त्वा पदममनवरतमुन्मुखस्य**= एक पग चलकर बहुत देर तक ऊपर को मुँह किये। **स्थूल-स्थूल श्वसतो**= लम्बी-लम्बी साँसें लेते हुए का। **धूलिधूसरस्य संसर्पतो**= धूल में सनकर रेंगते हुए। **मम समभून्मनसि**= मेरे मन में विचार उत्पन्न हुआ। **निरपेक्षा=** उदासीन। **खलु जगति प्रणिनां**= संसार में सब प्राणियों का। **वृत्तयः**= स्वभाव। **जीवितात्**= जीवन से। **अभिपत**= अभीष्ट। **इह जगति सर्वजन्तूनाम्**= इस संसार में सव जीवों का। **सुगृहीतनाम्नि**= प्रशंसनीय।

यदहमविकलेन्द्रियः= जो मैं स्वस्थ इन्द्रियों वाला हूँ। **धिङ्मामकरुणमतिनिष्ठुरमकृतज्ञम्**= मुझ निर्दय अत्यन्त निष्ठुर और कृतघ्न को धिक्कार है। **सोढपितृमरणशोकदारुणंयेन**= पिता की मृत्यु के दुःख सह लेने की दारुणता जिसने। **मया जीव्यते**= मेरे द्वारा जिया जा रहा है। **उपकृतमपि**= किये हुए उपकार को। **नापेक्ष्यते**= नहीं देख रहा हूँ। **खलं**= कठोर। **खलु में हृदयम्** सचमुच मेरा हृदय है।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ वैशम्पायन शुक राजा शूद्रक से अपनी दयनीय अवस्था का वर्णन कर रहा है कि वृक्ष के नीचे गिरकर वह किस दशा में पहुँचा।

हिन्दी अनुवाद- पंख न निकल पाने के कारण मेरे पैरों की गति बहुत दृढ़ नहीं हो पाई थी। इसलिए मैं बार-बार मुँह के बल गिर जाता था, फिर तिरछा गिरते शरीर को एक करवट के सहारे सँभालता था। धरातल पर रेंगने की थकावट से व्याकुल होकर मैं चलने का अभ्यास न होने के कारण एक पग चलकर ही बहुत देर तक ऊपर को मुँह करके लम्बी-लम्बी साँसें लेने लगता था। इस प्रकार धूलि में सनकर रेंगते हुए मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि वास्तव में संसार में अत्यन्त कष्टपूर्ण दशाओं में भी प्राणियों की वृत्तियाँ जीवन से उदासीन नहीं होतीं। इस संसार में सब जीवों को जीवन से अधिक प्यारा अन्य कुछ नहीं है। यही कारण है जो प्रातः स्मरणीय पिता के इस प्रकार मर जाने पर भी मैं स्वस्थ इन्द्रियों वाला हूँ और फिर भी जी रहा हूँ। मुझ निर्दय अतिनिष्ठुर और कृतघ्न को धिक्कार है। अहो पिता की मृत्यु के दुःख को सह लेने की दारुणता लेकर मैं जी रहा हूँ और किये गये उपकार का भी ध्यान नहीं कर रहा हूँ, इससे सिद्ध है कि सचमुच मेरा हृदय नीच ही है।

विशेष- इस गद्यांश में धिक् धिक्कारः धिग्योगेऽत्र द्वितीया।

मया हि लोकान्तरगतायाम्बायां नियम्य शोकावेगमाप्रसव दिवसात् परिणतवयसापि सता तैस्तैरुपायैः संवर्धन-क्लेशमति महान्तमपि स्नेहवशादगणयता यत् परिपालितंत्सर्वमेकपदे विस्मृतम्। अतिकृपणाः खल्वमी प्राणाः यदुप-कारिणमपि तातमद्यापिगच्छन्तं नानुगच्छन्ति सर्वथा न कश्चिन्न न खलीकरोति जीविततृष्णा, यदीगावस्थामपि मामाया-सयति जलाभिलाषः। मन्येचागणितपितृमरणशोकस्य निघृणतैव केवलमियं मम सलिलपानबुद्धिः।

शब्दार्थ- लोकान्तरम्= स्वर्ग। **उपगतायां**= जाने पर। **नियम्य**= रोककर। **आप्रसवदिवसात्**= जन्मदिन से लेकर। **परिणतवयसा**= वृद्धावस्था के। **सता**= होते हुए भी। **संवर्द्धन=** पालन-पोषण। **क्लेशं**= दुःख। **महान्तमपि स्नेहवशादगणतया**= महान् कष्ट को भी स्नेहवश चिन्ता न करते हुए। **उपकारिणम्**= उपकारी को। **अद्य**= आज। **नानुगच्छन्ति**= अनुगमन नहीं करते है। **खलीकरोति**= दुष्ट बनाती है। **यत्**= जो। **ईदृक्**= ऐसी। **माम्**= मुझको। **आयासयति**= खल रही है। **जलाभिलाषः**= जल की इच्छा। **मन्ये चागणितपितृमरणशोकस्य**= मैं मानता कि पिता की मृत्यु के शोक की। **निघृणतैव केवलमियं मम सलिलपानबुद्धि**= मेरी यह जल पीने की बुद्धि केवल निष्ठुरता ही है।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। वैशम्पायन शुक राजा शूद्रक से अपनी दयनीय अवस्था का वर्णन कर रहा है कि वृक्ष के नीचे गिरकर मैं किस दशा में पहुँचा।

हिन्दी अनुवाद- माता के दूसरे लोक को चले जाने पर शोक के वेग को रोककर जन्म-दिन से लेकर वृद्धावस्था वाले होते हुए भी मेरे पिता ने अत्यन्त दुख सहन करते हुए अनेक उपायों से जो (मेरा) परिपालन किया, मैंने उस सब को एकदम ही भुला दिया। ये प्राण सचमुच अत्यन्त कृपण हैं,जो कहीं जाते हुए उपकारी पिता का अनुसरण अब भी नहीं करते। ऐसा कोई नहीं है जिसे जीवन की तृष्णा सर्वथा दुष्ट नहीं बना देती है, जो ऐसी अवस्था वाले भी मुझको जल की अभिलाषा सताती है।

विशेष (1)-महाकवि बाणभट्ट ने अपनी अलौकिक प्रतिभा द्वारा कादम्बरी के कथानक को संस्कृत गद्य-साहित्य का सर्वोत्कृष्ट कथा-प्रबन्ध बना दिया है। वैशम्पायन शुक की अवस्था का कितना करुण रसपूर्ण चित्रण उपस्थित किया है। यह सजीवता एवं स्वाभाविकता से परिपूर्ण है। वस्तुतः शुकावस्था वाला प्रसंग करुण रस का मार्मिक स्थल है जो सहृदय को उद्वेलित करने वाला है।

अद्यापि दूरत एव सरस्तीरम्। तथा हिजलदेवतानूपुररवानुकारि दूरेऽद्यापि कलहंसविरुतम्, अस्फुटानि श्रूयन्ते सारसरसितानि, अयं च विप्रकर्षादाशामुखविसर्पणविरलः संचरति नलिनीषण्ड परिमलः। दिवसस्य चेयमतिकष्टा दशा वर्तते। तथा हिरविरम्बरतलमध्यवर्ती स्फुरन्तमातपमनवरतमनलधूलिनिकरमिव विकिरति करैः अधिक मुपजनयात तृष-मातपसतप्तपांसुपटलदुगमा भू, अतिप्रबलपिपासावसन्नानि मन्तुमल्पमपि मे नालमङ्गकानि, अप्रभुरस्म्यात्मन: सीदति मे हृदयम् अन्धकारतामुपयाति चक्षुः अपि नाम खलो विधिरनिच्छतोऽपे मे मरणमद्यैवोपपादयेत्।

शब्दार्थ-अद्यापि= अब भी। **दूरत=** दूर। **सरस्तीरम्=** सरोवर का किनारा। **रव=** शब्द। **अनुकारि=** अनुकरण करने वाले। **कलहंस=** राजहंस। **विरुतम्=** आवाज। **अस्फुटानि=** अस्पष्ट। **श्रूयन्ते=** सुनाई देना। **रसितानि=** कलरव। **विप्रकर्षात्=** दूर होने से। **आशामुख=** दिशाओं के मुख में। **विसर्पण=** फैलने वाली। **विरलः=** कम। **नलिनी=** कमलिनी। **षण्ड=** वन। **परिमलः=** सुगन्धि। **अतिकष्टा=** अत्यन्त कष्टदायक। **दशा=** अवस्था। **रम्बरतल=** आकाश तल। **मध्यवर्ती=** बीच में स्थित। **स्फुरन्तम्=** निकलती हुई। **आतप=** धूप। **अनवरत=** निरन्तर। **अनल=** अग्नि। **धूल=** लपटें। **निकरमिव=** समूह की भाँति। **तृषाम्=** प्यास। **आतपसंतप्त=** धूप से तपे। **भूः=** पृथ्वी। **अतिप्रबल=** अत्यधिक प्रबल। **अवसन्न=** शिथिल। **अलम=** समर्थ। **न=** नहीं। **अङ्गकानि=** अंग। **अप्रभु=** असक्त अस्मि= हूँ। **सीदति=** सूखा। **मुपयाति=** प्राप्त होना। **चक्षुः=** नेत्र। **खलो=** निर्दय। **विधिः=** विधाता। **अनिच्छतोऽपि=** इच्छा न होने पर भी। **मरणम्=** मृत्यु। **अद्यैव=** आज।

प्रसंग- यह अवतरण बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ राजा शूद्रक से वैशम्पायन शुक अपनी दयनीय अवस्था का चित्रण कर रहा है। महाकवि ने इसी का अत्यन्त सजीव रूप में वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- सरोवर अभी बहुत दूर है, क्योंकि जलदेवता के नूपुरों के समान झंकृत होने वाली कलहंसों की यह ध्वनि अभी दूर जान पड़ती है, सारसों का कलरव (कोलाहल) भी अभी अस्पष्ट सुनाई पड़ रहा है और अधिक दूर होने के कारण दिशाओं में फैलकर अत्यन्त हल्की पड़ जाने वाली कमल तनों की गन्ध भी नहीं आ रही है। दिन की हालत अत्यन्त सताने वाली हो गयी है। आकाश के बीच में पहुँचे हुए सूर्य की किरणों से निकलती हुई धूप ऐसी लगती है मानो आग की चिनगारियाँ बरस रही हों। इससे गला और भी सूखता-सा जा रहा है। धूप में जलती हुई धूल के कारण पृथ्वी पर चलना अत्यधिक कठिन हो रहा है, अत्यन्त तीखी प्यास के कारण मेरे समस्त अंग सूखे से हो गये हैं जिससे अब थोड़ी दूर भी चलने की शक्ति नहीं गयी है, अब में अपने वश में नहीं रह गया हूँ, हृदय बैठा जा रहा है, आँखों में अँधेरा छा रहा है, क्या ही अच्छा होता कि क्रूर विधाता न चाहते हुए भी मुझे आज मृत्यु ही दे देता।

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्य में महाकवि बाण ने अपनी अलंकृत भाषा-शैली द्वारा वैशम्पायन शुक की दशा का भव्य एवं उदात्त वर्णन किया है।

(2) यहाँ **उपमा अलंकार** का प्रयोग हुआ है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. किरात दल में एक .... किरात था।
2. बूढ़ा किरात किसकी भाँति था?
3. वैशम्पायन शुक के पिता की .... हो गई।
4. .... से पराधीन शुक की व्यथा बहुत दयनीय थी।

14.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में शबरों की क्रूरता द्वारा शुकों का शाल्मली वृक्ष से गिरना व मरना वर्णित है। वैशम्पायन नामक शुक की दयनीय अवस्था वर्णित है।

14.5 कठिन शब्दावली

1.शिशु – बच्चा **2.संत्रास** – भय **3.ईषत्** – थोड़ा

14.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. बूढ़ा 2. पिशाच3. मृत्यु 4. प्यास

14.7 सहायक ग्रन्थ

1. कादम्बरी - सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2. कादम्बरी कथामुख - सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3. साहित्य दर्पण - सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

4. बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन - अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7

5. बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी - नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।

6. साहित्यदर्पण - सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

14.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांश की प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए-

   (1) एकमस्तु .... शुककुलानामसुभिः।

   (2) तातस्तु तं .... तस्थौ।

   (3) अवतीर्य च .... प्रयत्नमकरणम्।

इकाई-15
हारीत वर्णन

संरचना

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 हारीत वर्णन

15.3.1 शुक-जलपानादि वर्णन

15.3.2 महर्षि जाबालि-आश्रम वर्णन

- स्वयं आकलन प्रश्न

15.4 सारांश

15.5 कठिन शब्दावली

15.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

15.7 सहायक ग्रन्थ

15.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

15.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में जाबालि मुनि के पुत्र हारीत का वर्णन तथा उसके द्वारा शुक शावक की दशा पर दया का विवेचन किया गया है। हारीत दयनीय अवस्थायुक्त शुक के बच्चे तालाब के पास जलपान कराकर, स्नान के बाद उसे अपने आश्रम ले जाता है। इसमें महर्षि जाबालि के आश्रम का मनोहारी वर्णन किया गया है।

15.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

- जाबालि ऋषि के पुत्र हारीत के विषय में जानेंगे।
- जाबालि ऋषि के आश्रम के विषय में जानेंगे।
- शुक की दयनीय अवस्था के विषय में जानेंगे।

15.3हारीत वर्णन

एवं चिन्तयत्येव मयि तस्मात् सरसो नातिदूरवर्तिनि तपोवने जाबालिर्नाम महातपा मुनिः प्रतिवसति स्म। तत्तनयश्च हारीतनामा मुनिकुमारकः सनत्कुमार इव सर्वविद्यावदातचेताः, समानवयोभिरपरैस्तपोधनकुमारकैरनुगम्य-मानस्तेनैव पथा द्वितीय इव भगवान विभावसुरतितेजस्वितया दुर्निरीक्ष्यमूर्तिः उद्यतो दिवसकरमण्डलादिवोत्कीर्ण, तडिद्भिरिव रचितावयवः तप्तकनकद्रवेणेव बहिरूपलिप्तमूर्तिः आपिशङ्गावदातया देहप्रभया स्फुरन्त्या सबालातपमिव दिवसं सदावानलमिव वनमुपदर्शयन्।

शब्दार्थ-एवं चिन्तयत्येव= इस प्रकार विचार करते हुए। **तस्मात्**= उस। **सरसो**= सरोवर के। **अदूरवर्तिन**= समीप। **महातपा**= महातपस्वी। **प्रतिवसति स्म**= निवास करते थे। **तत्तनयश्व**= और उनके सुपुत्र। **सर्वविद्यावदातचेताः**= समस्त विद्याओं से प्राप्त शुद्ध चित्त वाला। **समानवयोभिः**= साधारण अवस्था। **अपरैः**= दूसरे। **अनुगम्यमानः**= अनुकरण किये जाते हुए। **पथा**= मार्ग से। **इव विभावसु**= सूर्य के समान। **अतितेजस्वितया=** अत्यधिक तेजस्वी होने से। **दुर्निरीक्ष्यमूर्तिः**= कठिनता से देखे जाने योग्य शरीर वाले। **उद्यतो**= उगते हुए। **कर**= किरण। **उत्कीर्णः**= खुदे हुए। **तडिद्भिरिव**= बिजलियों की भाँति। **विरचित**= निर्मित। **तप्तकनक**=तपाया हुआ सोना। **द्रवेणेव**= रस से। **बहिः**= बाहर। **आपिशङ्ग**= कुछ-कुछ पिंगल वर्ण। **प्रभया**= कान्ति से। **स्फुरन्त्या**= दमकती हुई। **सवालातपमिव**= प्रातःकाल की धूप से परिपूर्ण। **सदावानले**= दावाग्नि-सहित। **उपदर्शयन्**= प्रदर्शित करता हुआ।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्‌धृत किया गया है। जाबालि मुनि के पुत्र हारीत को उस शुक शावक की दशा पर दया आती है। इसी का कवि ने अत्यन्त ही मनोमुग्धकारी चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- मैं ऐसा सोच ही रहा था कि उस सरोवर के समीप में स्थित तपोवन में जाबालि नाम का महातपस्वी मुनि रहता था और उसका पुत्र हारीत नामक मुनि कुमार जो सनत्कुमार के समान सब विद्याओं (के अध्ययन) से शुद्ध चित्त वाला था; अत्यधिक तेजस्वी होने के कारण जिसका शरीर दुर्निरीक्ष्य था (अतः) जो मानो दूसरा भगवान अग्नि (सूर्य) था, जो मानो उदय होते हुए सूर्य-मण्डल से काटकर निकाला गया था, जिसके अवयव मानो विद्युत से रचे गये थे; तपाये गये सोने के लेप से मानो जिसके शरीर पर बाहर से लेप किया गया था, पीली निर्मल (और) चमकती हुई शरीर की कान्ति से वह दिन को प्रात:कालीन धूप से युक्त सा और वन को दावानल से युक्त-सा प्रकट कर रहा था।

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाण ने अलंकारयुक्त समासबहुला तथा ओज गुण-सम्पन्न भाषा-शैली में अपनी लेखनीरूपी तूलिका से शब्दचित्रों को विविध रूपों में चित्रित किया है। यहाँ जाबालि मुनि के पुत्र हारीत का वर्णन वैशम्पायन राजा शूद्रक से कर रहा है। हारीत का चित्रण अत्यन्त प्रभावपूर्ण एवं तपस्या से युक्त है तथा विभिन्न उपमानों के द्वारा अलौकिक चित्रांकन है। वस्तुतः बाणभट्ट की भाषा-शैली में भाव-विषय को प्रकट करने की अद्वितीय क्षमता है।

(2) यहाँ **उत्प्रेक्षा** तथा **पूर्णोपमाअलंकार** का प्रयोग हुआ है। **'तेजो दीप्तौ प्रभावे च स्यात्पराक्रमरेतसोः'** इति में **मेदिनी** है।

उत्तप्तलौहलोहिनीनामनेकतीर्थाभिषेकपूतानामंसस्थलावलम्बिनीनां जटानां निकरेणोपेतः, स्तम्भितशिखाकलापः खाण्डववनदिधक्षया कृतकपटवटुवेषः इव भगवान पावक तपोवनदेवतानूपुरानुकारिणा धर्मशासनकटकेनेव स्फटिकेना-क्षवलयेन दक्षिणश्रवणावलम्बिना विराजमानः, सकलविषयोपभोगनिवृत्यर्थमुपपादितेन ललाटपट्टके त्रिसत्येनेव भस्म-त्रिपुण्ड्रकेणालंकृतः, गगनगमनोन्मुखबलाकानुकारिणा स्वर्गमार्गमिव दर्शयता सततमुग्रीवेण स्फटिकमणिकमण्डलु-नाध्यासितवामकरतल:स्कन्धदेशावलम्बिना कृष्णाजिनेन नीलपाण्डुभासातपस्तृष्णा निपीतेनान्तनिष्पतता धूमपटलेनेव परीतमूर्तिः, अभिनवविससूत्रनिर्मितेनेव परिलघुतया पवनलोलेन निर्मासविरलपार्श्वकपञ्जरमिव गणयता वामांसावलम्बिना यज्ञोपवीतेनोद्भासमानः, देवतार्चनार्थमागृहीतवनलताकुसुमपरिपूर्णपर्णसनाथशिखरेणाषाढदण्डेन व्यापृतसव्यतरपाणिः, विषाणशिरो- त्खातामुद्वहता स्नानमृदमुपजातपरिचयेन नीवारमुष्टि संवर्धितेन कुशकुसुमलतायास्यामानलोल- दृष्टिना तपोवनमृगेणानुगध्यमानः।

शब्दार्थ-उत्तप्त= तपाये हुए। **लौहिनीनाम्**= रक्त्वर्ण की। **पूतानाम्**= पवित्र। **अंसस्थल=** कंध प्रदेश। **अवलम्बिनीनां**= लटकती हुई। **जटानां**= जटा से। **निकरेण**= समूह। **उपेतः**= युक्त। **कलाप**= समुदाय। **दिधक्षया**= जलाने की इच्छा से। **कृतकपट**= छलपूर्वक। **बटु**= ब्रह्मचारी। **वेश इव**= रूप धारण करके। **पावक**= सूर्यदेव। **नूपुर**= नूपुरों का। **अनुकारिणा=** अनुकरण करते हुए। **कटकेनेव**= सैन्य की भाँति। **अक्षवलयेन**= अक्षमाला। **दक्षिणश्रवण**= दाहिना कान। **विराजमानः**= सुशोभित। **सकलविषयोपभोग**= समस्त विषयों का उपभोग। **निवृत्यर्थम्**= मुक्ति पाने के लिए। **ललाट**= मस्तक। **त्रिसत्येनेव**= त्रिसत्य की भाँति। **उन्मुख**= ऊपर को मुख किये हुए। **दर्शयता**= दिखाते हुए। **सततम्**= निरन्तर। **उद्ग्रीवेण** उन्नत ग्रीवा (गरदन)। **अध्यासित**= धारण किये हुए। **वामकरतलः**= बाँया हाथ। **परीत**= घिरी हुई। **विससूत्र**= कमलनाल से। **निर्मितेनेव**= मानो बने हुए। **परिलघुतया**= अत्यधिक हल्का। **लोलेन**= चंचल। **गणयता**= गिनती करते हुए। **आगृहीत**= चुने हुए। **पर्णपुट**= पत्तों के दोने। **शिखरेण**= पूर्वभाग। **व्याप्त**= दाहिना। **विषाण**= सींग। **उत्खाताम्**= उखाड़ी हुई। **उद्वहता**= धारण करते हुए। **आयास्यमान**= खिन्नता प्राप्त किये हुए।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ कवि ने जाबालि मुनि के पुत्र हारीत के उस शुक-शावक पर दया आने का चित्रण किया है तथा तोता हारीत के प्रभाव का वर्णन करता है।

हिन्दी अनुवाद- तपाये हुए लौहे के समान चमकीली और अनेक तीर्थों के जल से पवित्र उनकी जटाएँ कन्धों पर लटक रही थीं तथा सिर पर चोटियों का जूड़ा बना हुआ था जिससे वह ऐसे प्रतीत हो रहे थे मानो खाण्डव वन जलाने की अभिलाषा से भगवान अग्निदेव (सूर्यदेव) ने ब्रह्मचारी का कपट वेश बना लिया हो। उनके दाहिने कान में तपोवन की देवी के नूपुरों के समान स्फटिक मणि से बनी हुई रुद्राक्ष की माला ऐसी प्रतीत हो रही थी मानो कानों में पड़े हुए गुरु के धर्मोपदेशों की रक्षा के लिए सेना का व्यूह हो,

उनके ललाट (मस्तक) पर भस्म का त्रिपुंड इस प्रकार सुशोभित हो रहा था मानो सम्पूर्ण विषयोपभोग से छुटकारा पाने के लिए उन्होंने त्रिसत्य (तीन बार किये हुए शपथ) का चिह्न धारण कर लिया हो। उनके बाँये हाथ में बिल्लौरी कमण्डलु था जिसकी गरदन उड़ने की तैयारी में आकाश की ओर देखने वाले बगुलों की गरदन के समान ऊपर उठी हुई थी, मानो वह स्वर्ग की ओर देख रहा हो। उनके कन्धों से काले मृग का चर्म लटका हुआ था, जिससे वे अपने शरीर से फूटकर फैली हुई धुमैली कान्ति से घिरे हुए थे। मानो अपनी तपस्या सफल होने के लिए उन्होंने यज्ञों में जितना धुआँ पिया था,वह सभी बाहर निकल पड़ा हो और वे उसी में घिर गये हों। उनके बाँये कन्धे से बहुत ही महीन जनेऊ हवा में हिल रहा था मानो वह कमल के कोमल रेशों से बना हो और उनकी मांसरहित पसलियों की हड्डियाँ गिन रहा हो। उनके दाहिने हाथ में पलाश का डंडा सुशोभित हो रहा था, जिसके सिरे पर देव-पूजा के लिए जंगली लताओं से चुने हुए फूलों पे भरा हुआ दोना बँधा था। उनके पीछे-पीछे तपोवन का पालतू हिरन भी चला आ रहा था, जिसके नीवार की मूठें खिला-खिलाकर मुनियों ने बड़े स्नेह से पाला था, जिसकी सींगों की नोंकों पर उनसे खुदी हुई स्नान-मृत्तिका (मुनि लोग स्नान के समय अपने शरीर में जो मिट्टी लगाते थे, उसे स्नान-मृत्तिका कहते थे) लिपटी हुई थी और रास्ते में कुशों, फूलों और लताओं के गपेड़ों से उस बेचारे की आँखें थककर व्याकुल हो गयी थीं।

विशेष (1)-महाकवि बाण ने अपनी नवोन्मेषशालिनी दिव्य प्रतिभा के द्वारा 'कादम्बरी' के काल्पनिक कथानक को भी वास्तविकता से सँजोया है। उन्होंने अलंकारयुक्त समासबहुला तथा ओजगुण-सम्पन्न भाषा-शैली में अपनी लेखनीरूपी तूलिका से शब्द-चित्रों को विविध रूपों में चित्रित किया है। यहाँ जाबालि मुनि के पुत्र हारीत का वर्णन वैशम्पायन राजा शूद्रक से करता है। हारीत का चित्रण अत्यधिक प्रभावपूर्ण एवं तपस्या से युक्त है। विभिन्न उपमानों के द्वारा उनके व्यक्तित्व का अलौकिक चित्रांकन हुआ है।

(2) यहाँ **उपमा, उत्प्रेक्षा, संसृष्टि** तथा **सङ्कर अलंकार** का सुन्दर प्रयोग हुआ है। **'सत्यं कृते च शपथे च त्रिषु तद्वति'**में **मेदिनी** है।

विटप इव कोमलवल्कलावृतशरीरः, गिरिरिव समेखलः, राहुरिवासकृदास्वादितसोमः, पद्मनिकर इव दिवस-करमरीचिपः, नदीतटतरुरिवसततजलक्षालनविमल जटः करिकलभ इव विकचकुमुददलशकलासितदशनः, द्रोणिरिव कृपानुगतः, नक्षत्रराशिरिव चित्रमृगकृत्तिकाश्लेषोपशोभितः, धर्मकालदिवस इव क्षपितदोषः जलधरसमय इव प्रशमितरजः प्रसर, वरुण इव कृतोदवासः हरिरिवापिनीतनरकभयः, प्रदोशारम्भ इव सन्ध्यापिङ्गलतारकः, प्रभातकाल इव बालात-पकपिलः, रविरथ इव दृढनियमिताक्षचक्रः, सुराजेव निगूढमन्त्रसाधनक्षपितविग्रहः जलनिधिरिव करालशङ्खमण्डला-वतनाभिगर्तः, भागीरथ इव दृष्टगङ्गावतारः, भ्रमर इवासकृदनभूतपुष्करवनवासः, वनचरोऽपि

कृतमहालयप्रवेशः, असंय-तोऽपि मोक्षार्थी, सामप्रयोगपरोऽपि सतत्तावलम्बितदण्डः, सुप्तोऽपि प्रबुद्धः संनिहितनेत्रद्वयोऽपि परित्यक्तवामलोचनस्तदेव कमलसरः सिस्नागुरुपागमत्।

शब्दार्थ- विटप इव= वृक्ष के समान। **आवृतः**= घिरा हुआ। **असकृत**= बार-बार। **आस्वादित सोमः**= सोमरस का पान करते हुए। **पद्मननिकर**= कमल समूह। **सतत**= निरन्तर। **क्षालन**= धोना। **विमल**= स्वच्छ। **करिकलभ**= हाथी का बच्चा। **विकच**= खिले हुए। **दल**= पंखुड़ियाँ। **सित**= श्वेत (सफेद)। **दर्शनः**= दाँतों वाले। **कृपा**= दया, कृपाचार्य। **नक्षत्रराशिः**= नक्षत्र समुदाय। **चित्र-मृग कृत्तिकाश्लेषा-उपशोभितः**= चितकबरे हिरन के चर्म (कृतिका) को झपटने (आश्लेषा) से सुशोभित। **क्षपित**= रात्रि (नाश)। **दोषः**= बुराई। **रजःप्रशर**= धूल का प्रसार (रजोगुण)। **कृतोदवासः=** जल में निवास करने वाला (तपस्या के समय)। **नरकभयः**= नरक का डर, नरकासुर का भय। **पिङ्गल**= कपिश वर्ण। **रविरथ इवः**= अग्निदेव के रथ की भाँति। **दृढ-नियमिताक्षचक्रः**= रथ के मध्य और चक्रभाग को नियमित रखने वाले, इन्द्रिय-समूह को दृढ़ता से नियन्त्रण में रखने वाला। **निगूढ**= गुप्त। **क्षपित**= क्षीण। **जलनिधिरिव**= सागर की भाँति। **कराल**= विशाल। **आवर्त**= रेखाएँ। **दृष्टगङ्गावतारः**= घाटों को देखते हुए। **वनचरोऽपि**= वनचारी होते हुए भी। **महालय**= महाभवन परब्रह्म में लीन रहने वाला। **असंयतोऽपि**= बन्धन से रहित होते हुए भी। **सतत**= निरन्तर। **अवलम्बितदण्डः**= दण्ड धारण से युक्त। **प्रबुद्ध**= ज्ञाता। **परित्यक्त**= त्याग करने वाले। **सरः**= सरोवर। **सिस्नासुः**= स्नान की इच्छा।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। हारीत को शुक-शावक की दशा पर दया आ जाती है तथा तोता हारीत के प्रभाव का वर्णन करता है। इसी का कवि ने यहाँ हृदयग्राही चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- अतः चंचल दृष्टि वाले तपोवन के मृग से जिसका अनुसरण किया जा रहा था; वृक्ष के समान जिसका शरीर कोमल वल्कल (वल्कल वस्त्र, छाल) से ढका हुआ था, पर्वत के समान जो मेखला (मौजी पर्वत का मध्य भाग) से युक्त था, राहु के सम्मान अनेक बार जो सोम (सोमरस, चन्द्रमा) का पान कर चुका था, पद्म-समूह की भाँति जो सूर्य की किरणों को (पञ्चाग्नि-साधन यज्ञ में) पीता था, नदी-तट के तरु की भाँति जो निरन्तर जल द्वारा धुलने से स्वच्छ जटाओं वाला था, हाथी के बच्चे के समान जिसके दाँत खिले हुए कुमुद के दलों के खण्डों की भाँति श्वेत थे, द्रोण-पुत्र (अश्वत्थामा) जिस प्रकार कृपा (आचार्य) से अनुगत थे, उसी प्रकार जो कृपा (दया) से अनुगत (युक्त) था, नक्षत्र-समूह जिस प्रकार चित्रा मृग, कृत्तिका और आश्लेषा से शोभित हैं, उसी प्रकार जो चित्र (चितकबरे) मृग की वृत्तिका (चर्म) के श्लेष (सम्बन्ध) से सुशोभित था; ग्रीष्मकाल का दिन जिस प्रकार बहुत (अंश से) छोटी हुई रात वाला होता है, उसी प्रकार जिसने अनेक दोषों को नष्ट कर दिया था, वर्षा-काल की भाँति जिसने रज (रजोगुण, धूल) का प्रसार शान्त कर दिया था, वरुण के समान जिसने (व्रत में) जल-वास किया था; विष्णु के समान जिसने नरक (नरक, नरकासुर) का भय दूर कर दिया था, रात्रि का आरम्भ जिस प्रकार पीले तारों वाला होता है, उसी प्रकार जो संध्या के समान पीले तारों (कनीनिका) वाला था; प्रभातकाल जिस प्रकार प्रातःकालीन धूप से पीला होता है, उसी प्रकार

जो प्रातः कालीन धूप के समान पीला था, सूर्य का रथ जिस प्रकार दृढ़ता से नियमित अक्ष और चक्र वाला है, (उसी प्रकार जो दृढ़ता से नियमित अक्ष चक्र (इन्द्रिय-समूह) वाला था, अच्छा राजा जिस प्रकार गुप्त-मन्त्रणा और साधन (सेना आदि) से लड़ाई (विग्रह) को समाप्त कर देता है, उसी प्रकार जिसने गुप्त मन्त्र के साधन से विग्रह (शरीर) को क्षीण कर दिया था, समुद्र जिस प्रकार भयानक शंखमण्डल (गोल शंख) भँवरों और गड्डों (या गड्डों जैसी गहरी भँवरों) से युक्त है, उसी प्रकार जो ऊँचे शंखमण्डल (मस्तक व कानों के मध्य का भाग) पर आवर्त (घुँघराले बाल) और गर्त (नीचा प्रदेश) अथवा आवर्त-युक्त गर्त अर्थात् घुँघराले बालों से युक्त गड्डे) से युक्त था, भागीरथ के समान जिसने अनेक बार गंगा का अवतार (घाट, उतरना) देखा था, भ्रमर के समान जिसने अनेक बार पुष्कर वन (पुष्कर तीर्थ या पुष्कर तीर्थ का जल, कमल-वन) में निवास का अनुभव किया था; वनचारी होते हुए भी जिसने महालय में प्रवेश किया था; असंयत होते हुए भी जो मोक्ष का इच्छुक था; साम युक्त होता हुआ भी जो निरन्तर दण्ड धारण करता था; सुप्त (सोता हुआ) भी जो प्रबुद्ध (वि. जागा हुआ, प. ज्ञानी) था। दो नेत्रों से युक्त होते हुए भी जिसने वाम लोचन (बाँया नेत्र) का परित्याग कर दिया था, (वह हारीत) समान आयु वाले तपस्वी कुमारों से अनुगमन किया जाता हुआ, उसी रास्ते से, कमल-सरोवर में स्नान की इच्छा से आया।

विशेष (1)-इस गद्यांश में महाकवि बाण ने अपनी नवोन्मेषशालिनी दिव्य-प्रतिभा के द्वारा 'कादम्बरी' के काल्पनिक कथानक को भी वास्तविकता से सँजोया है। उन्होंने अलंकारयुक्त समासबहुला तथा ओजगुण-सम्पन्न भाषा-शैली में अपनी लेखनी-रूपी तूलिका से शब्द चित्रों को विविध रूपों में चित्रित किया है।

प्रायेणाकारणमित्राण्यतिकरुणाद्राणि च सदा खलु भवन्ति सतां चेतासि। यतः स मां तदवस्थमालोक्य समुपजातकरुणः समीपवर्तिनपृषिकुमारकमन्यतममब्रवीत्-अयं कथमपि शुकशिशुरसंजातपक्षपुट एव तरुशिखरादस्मात् परिच्युतः। श्येनमुखपरिभ्रष्टेन वानेन भवितव्यम्। तथा हिअतिदवीयस्तया प्रपातस्याल्पशेषजीवितोऽयमामीलितलोचनो मुहुर्मुहुर्मुखेन पतति हुर्मुहुरत्युल्वणं श्वसिति, मुहुर्मुहुश्चञ्चपुटं विवृणोति, न शक्नोति शिरोधरां धारयितुम्। तदेहि यावदेवायमसुभिर्न विमुच्यते तावदेव गृहाणेमम् अवतारय सलिलसमीपम् इत्यभिधाय तेन मां सरस्तीरमनाययत्।

शब्दार्थ- प्रायेण= प्रायः। **अति**= अत्यधिक। **करुणाद्राणि**= करुणा से द्रवीभूत। **खलु**= निश्चिन्त। **सतां**= सज्जन। **चेतांसि**= हृदय। **यतः**= जिससे। **अलोक्य**= देखकर। **समुपजातकरुणः**= उत्पन्न करुणा वाला। **समीपवर्तिनम्**= सामने ही खड़े। **अन्यतमं**= दूसरे। **अब्रवीत्**= कहा। **कथम् अपि**= किसी भी तरह। **असञ्जात्**= उत्पन्न नहीं हुए हैं। **पक्षपुटः**= पंख। **श्येन**= बाज। **जीवितम्**= जीवन। **परिभ्रष्टेन**= गिरने के कारण। **अमीलित**= बन्द। **मुहः-मुहः**= बार-बार। **पतति**= गिरा। **उल्वणं**= लम्बी-लम्बी उल्टी। **श्वसित**= साँस। **विवृणोति**= खोलता है। **शिरोधरा**= ग्रीवा (गरदन)। **तदेहि**= तब आओ। **असुभिः**= प्राण। **न**= नहीं।

अवतारय= उठाकर। **सलिलसमीपम्**= जल के निकट। **अभिधाय**= कहकर। **माम्**= मुझको। **अनाययत्**= ले आया।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ हारीत ने शुक-शावक की दशा देखकर अत्यन्त दया प्रकट की है। कवि ने इसी का ही चित्रण भव्य रूप में किया है।

हिन्दी अनुवाद- सज्जनों के हृदय प्रायः सभी प्राणियों के प्रति सर्वदा निःस्वार्थ भाव से मैत्री का व्यवहार करने वाले तथा करुणा से अत्यन्त कोमल होते हैं, क्योंकि मुझे ऐसी दशा में देखकर उस ऋषिकुमार को दया आ गयी और उन्होंने अपने पास ही में खड़े एक-दूसरे मुनि- कुमार से कहा- देखो, इस सुग्गे के बच्चे के अभी पंख भी नहीं आये हैं, लेकिन न जाने कैसे यह वृक्ष की चोटी से गिर पड़ा है, अथवा यह भी हो सकता है कि किसी बाज पक्षी के मुख से छूटकर गिर पड़ा है। अब इसमें बहुत थोड़ी ही जीवन-शक्ति शेष रह गयी है, इसलिए यह आँखें बन्द किये हुए बार-बार लम्बी-लम्बी उल्टी सांसें खींच रहा है, बार-बार औंधे मुँह लुढ़क रहा है और बार-बार चोंच खोल रहा है। अब यह अपनी गरदन भी नहीं सँभाल पा रहा है। इसलिए इसे मरने के पहले ही उठाकर जल के पास पहुँचा दो। इस प्रकार कहकर वे मुझे सरोवर के किनारे ले गये।

विशेष- प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाणभट्ट ने अपनी अलौकिक प्रतिभा के द्वारा 'कादम्बरी' के कथानक को संस्कृत गद्य-साहित्य का सर्वोत्कृष्ट कथा-प्रबन्ध बना दिया है। इस वर्णन में हारीत द्वारा शुक-शावक की दयनीय दशा देखकर उसके प्रति दया का भाव प्रकट किया गया है जो अपनी सजीवता एवं स्वाभाविकता से परिपूर्ण है।

15.3.1 शुक-जलपानादि वर्णन

उपसृत्य च जलसमीपमेकदेशतिहितदण्डकमण्डलुरादाय स्वयं मामामुक्तप्रयत्नमुत्तानितम् खमङ्गल्या कतिचित् सलिलविन्दनपाययत। अम्भः क्षोदकृतसेकचोपजातनवीनप्राणमुपतटप्ररूढस्य नवनलिनीपलाशस्य जलशिशिरातां छायायां निधाय यथासमुचितमकरोत् स्नानविधिम्। अभिषेकावसाने चानेकप्राणायामपूतो जपन पवित्राण्यघमर्षणानि प्रत्यग्रभग्नैरु मुखो रक्तारविन्दैर्नलिनीपत्रपुटेन भगवते सवित्रे दत्त्वाध्यमुदतिष्ठत्। आगृहीतधौतधवलवल्कश्च सज्योत्स्न इव संध्यातपः करतलनिर्धूतन विशदसटः प्रत्यग्रस्नानार्द्रजटेन सकले तेन मुनिकुमारकद्र केनानुगम्य-मानो मां गृहीत्वा तपोवनाभिमुखं शनैः शनैरगच्छत्।

शब्दार्थ- उपसृत्य= ले जाकर। **जलसमीपम्**= जल के निकट। **एकदेश**= एक स्थान पर। **तिहित**= रखकर। **आदाय**= लेकर। **आमुक्तप्रयत्न:**= सब प्रयलों को छोड़ देने वाले। **उत्तानित**= ऊपर को। **अङ्गुल्या**= अँगुलियों से। **कतिचित्**= कुछ। **अपाययत्**= पिला दिया। **अम्भः**= जल। **क्षोदकृतसेकश्च**= छींटों से सींचे गये। **उपतट**= किनारे के पास। **प्ररूढ**= उगे हुए। **नवनलनीपलाशस्य**= कमलिनी के नये पत्ते। **शिशिरातां**= शीतल (ठण्डी)। **निधाय**= रखकर। **समुचितम्**= भली प्रकार। **पूतः**= पवित्र। **अघमर्षणानि**= अघमर्षण मन्त्र। **जपन**= जपते हुए। **प्रत्यग्र**= शीघ्र ही। **भग्नै:**= तोड़े गये। **उन्मुखो**= ऊपर को मुख करके। **रक्तारविन्दैः**= लाल कमल से। **पत्रपुटेन**= पत्तों के दोने। **सवित्रे**= सूर्य को। **उदतिष्ठ**= उठ खड़ा हुआ। **धौत**= धुले हुए। **धदलवल्कश्च**= श्वेत

वल्कल (वस्त्र) पहनकर। **सज्योत्स्न**= ज्योत्स्ना सहित। **स्नानार्द्र**= स्नान से गीली। **सकलेन**= समस्त। **कद्र**= दल या समूह। **मां**= मुझे। **गृहीत्वा**= लेकर। **आगच्छत्**= चला गया।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ कवि ने वर्णन किया है कि हारीत दयनीय अवस्थायुक्त शुक के बच्चे तालाब के पास जलपान कराकर, स्नान के बाद उसे अपने आश्रम में ले गया।

हिन्दी अनुवाद- जल के समीप जाकर, दण्ड और कमण्डलु को एक स्थान पर रखकर, जिसने प्रयत्न त्याग दिया था, ऐसे मुझको स्वयं लेकर (मेरा) मुख उठाकर, उँगली से कुछ जल की बूंदें पिलायीं। जिस पर जल का छीटों से सिञ्चन किया गया था और जिसमें नवीन प्राण उत्पन्न हो गये थे, ऐसे मुझको तट के समीप उगे हुए नये कमल के दल की जल से शीतल छाया में रखकर, अपने लिए उचित स्नान-विधि को किया। स्नान की समाप्ति पर, अनेक प्राणायाम से पवित्र होकर, पवित्र अघर्षण (मन्त्रों) को जपते हुए, उन्मुख (होकर) उसी समय तोड़े गये लाल कमलों से, कमल-पत्तों के दोने के द्वारा, भगवान सूर्य को अर्घ देकर उठ खड़ा हुआ। धुले हुए श्वेत (वल्कल) वस्त्र को पहनकर, ज्योत्स्ना-सहित संध्या की धूप-सा (प्रतीत होता हुआ) हाथों द्वारा फटकारने या झाड़ने से स्वच्छ केशों वाला (वह हारीत) तत्कालीन स्नान से आई जटा वाले उस सम्पूर्ण मुनि-कुमारों के समूह से अनुगमन किया जाता हुआ, मुझको लेकर, तपोवन की ओर धीरे-धीरे चला गया।

15.3.2 महर्षि जाबालि-आश्रम वर्णन

अनतिदूरमिव गत्वा दिशि-दिशि सदा संनिहितकुसुमफलैस्तालतिलकत मालहिन्तालबकुलबहुलैः, एलालता-कुलितनारिकेलकलापै, आलोललोध्रलवलीलवङ्गपल्लवैः, उल्लसच्चूतरेणुपटलैः अलिकुलझङ्कारमुखरसहकारैः उन्मद-कोकिलकुलकलालापकोलाहलिभिः, उत्फुल्लकेतकीरजः पुञ्जपिञ्जरैः पुगीलतादोलाधिरूढवनदेवतैः तारकावर्षमिवा-धर्मविनाशपिशुनं कुसुमनिकरमनिलचलितमनवरत मतिधवलमुत्सृजद्भिः संसक्तपादपैः काननैरूपगूढं, अचकितप्रचलित-कृष्णसारशतशबलाभि, उत्फुल्लकमलिनीलोहिनीभिः मारीचमायामृगावलूनरूढवीरूद्दलाभि, दाशरथिचापकोटिक्षतकन्द-गर्तविषमिततलाभिः दण्डकारण्यस्थलीभिरूपशोभितप्रान्तम्।

शब्दार्थ-**अनतिदूरमिव**= समीप ही। **गत्वा**= जाकर। **सदा**= सदैव। **संनिहित**= रखे हुए। **कुसुमफलै**= फूल-फल। **बकुल**= वृक्ष। **बहुलैः**= बहुत (अधिक)। **आकुलित**= भरे हुए। **कलापै**= समूह। **आलोल**= चंचल। **पल्लवैः**= पत्तों वाले। **उल्लसत्**= उड़ती हुई। **रेणुपटलैः**= पराग समुदाय। **अलिकुलझङ्कार**= भ्रमर-समूह की गूंज से। **सहकारैः**= आम। **उन्मद**= उन्मत्त। **कलालाप**= मधुर आवाज। **उत्फुल्लकेतकी**= खिले हुए केवड़े के फूल। **पुञ्ज**= समूह। **पिञ्जरैः**= पीले। **पुगी**= सुपारी। **दोलाधिरूढ**= लताओंरूपी झूले पर। **पिशुनं**= सूचना देने वाले। **अनिलचलितम्**= हवा के द्वारा हिलते हुए। **अनवरतम्**= निरन्तर। **अतिधवलम्**= अत्यधिक श्वेत। **उत्सृजद्भिः**= छोड़ते हुए। **संसक्त**= सघन। **पादपैः**= वृक्षों से। **उपगूढम्**= आलिंगन। **प्रचलित**= चलते-फिरते

हुए। **शत**= सैकड़ों। **शबलाभिः**= चित्रित। **अचकित**= निर्भय। **लोहिनीभिः**= लाल। **अवलून=** काटी गई। **वीरूत्**= लताएँ। **दल**= पत्ते। **चापकोटि**= धनुष का पूर्वभाग। **क्षतकन्द**= खोदे गये कन्द। **गर्त**= गड्ढे। **विषमित**= ऊबड़-खाबड़। **स्थलाभिः**= भूमियों से। **उपशोभितप्रान्तम्**= सुशोभित किया हुआ प्रान्त भाग।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा प्रणीत 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ वैशम्पायन शुक-शावक का राजा शूद्रक से महामुनि जाबालि के तपोवन आश्रम का कवि ने प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली में चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- थोड़ी-सी ही दूर जाकर मैंने एक आश्रम देखा जो प्रत्येक दशा में सदा पुष्प और फलों को धारण करने वाले बड़ी इलायची की लता से घिरे हुए नारियल के समूह वाले, लोध्र धवली एवं लवङ्ग के चञ्चल-पल्लवों वाले उड़ती हुई आम के बौर-समूह वाले, भ्रमर कुल की झंकार से मुखरित आम्र वृक्षों वाले, मदमत्त कोकिल कुल के समूह के कोलाहल वाले, खिलते हुए केवड़े के रज पटल से पीले, सुपारियों की लताओं-रूपी झूलों पर चढ़ी हुई वनदेवियों वाले, अधर्म-विनाशसूचक उल्कापात के समान, पवन के द्वारा हिलाये गये, अत्यधिक श्वेत पुष्प-पुञ्ज को निरन्तर बिखेरते हुए, सघन वृक्षों वाले जंगलों से घिरा हुआ था, भयरहित घूमते हुए सैकड़ों कृष्ण हरिणों के कारण चित्र-विचित्र था, खिलती हुई कमलनियों के कारण लाल दिखाई देता था, मारीच माया-मृग के द्वारा काटी गयी और पुनः उत्पन्न लता-पत्तों वाली, श्रीराम के धनुष के, अग्रभाग से काटे गये (उबड़-खाबड़) दण्डकारण्य की स्थलियों (भूमियों) से सुशोभित प्रान्त वाला था।

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में कवि ने महामुनि जाबालि का आश्रम अनेक प्रकार के फल एवं पुष्पों वाले वृक्षों से युक्त था तथा उसमें किसी भी वस्तु की कमी नहीं थी, अपनी भाषा-शैली के द्वारा मुनि के आश्रम का अत्यन्त ही सजीव, स्वाभाविक एवं चमत्कृत वर्णन किया है। कवि ने नवोन्मेषशालिनी दिव्य प्रतिभा के द्वारा 'कादम्बरी' के काल्पनिक कथानक को भी वास्तविकता में सँजोया है तथा विभिन्न उपमानों के द्वारा उनके व्यक्तित्व का अलौकिक चित्रांकन किया है। (2) यहाँ अतिशयोक्ति एवं पूर्णोपमा अलंकार का प्रयोग हुआ है।

आगृहीतसमित्कुशकुसुममृद्भिः अध्ययनमुखरशिष्यानुगतैः सर्वतः प्रविशद्भिर्मुनिभिरशून्योपकण्ठं, उत्कण्ठित-शिखण्डिमण्डलश्रूयमाणजलकलशपूरणध्वानम्, अनवरताज्याहुतिप्रीतैश्चित्रभानुभिः, शरीरमेव मुनिजनममरलोकम् निनीषुभिरुधूयमानधूमलेखाच्छलेनाबध्यस्वर्गमार्गगमनसोपानसेतुमिवोपलक्ष्यमाणं, आसन्नवर्तिनीभिः तपोवन-संपर्कादिवापगतकालुष्याभिः तरङ्गपरम्परासंक्रांतरविबिम्बपंक्तिभिस्तापसदर्शनागत्सप्तर्षिमालाविगाह्यमानाभिरिव, अतिविकचकुमुदवनमृषिजनमुपासितुमवतीर्णं ग्रहगणमिव निशासूद्वहन्तीभिर्दीर्घिकाभिः परिवृत्तम्, अनिलावनमित-शिखराभिः प्रणम्यमानमिव वनलताभिः, अनवरतक्तकुसुमैरभ्यर्च्यमानमिव पादपैः

आबद्धपल्लवाञ्जलिभिरूपास्यमानमिव विटपैः, ऊटजाजिरप्रकीर्णशुष्यच्छयामाकम्, उपसंगृहीतामलकलवलीकर्कन्धूकदलीलकुचचूतपनसतालीफलम् अध्ययन-मुखरवटुजनम् अनवरतश्रवणगृहीतवषट्कारवाचालशुककुलम् अनेकसारिकोद्धुष्यमाणसुब्रह्मण्यम्।

शब्दार्थ- आगृहीत= लिए हुए। **सर्वतः**= चारों तरफ। **प्रविशद्भिः**= प्रवेश कर रहे। **अशून्योपकण्ठम्**= परिपूर्ण समीपवर्ती देश से घिरा हुआ। **उत्कण्ठित**= व्याकुल। **शिखण्डि**= मयूर। **कलशपूरण**= घड़ा भरने की। **ध्वानम्**= निरन्तर। **आज्य**= घी। **चित्रभानुभिः**= अग्नियाँ **अमरलोके**= देवलोक। **उधूयमान**= उठते हुए। **लेखाच्छलेन**= रेखा के बहाने। **सोपान**= सीढ़ियाँ। **सेतुमिव**= पुल के समान। **उपलक्ष्यमाणम्**= दिखाई देता हुआ। **आसन्नवतिनीभिः**= समीपवर्ती। **संपर्कात्**= व्यवहार से। **अपगत**= दूर होना। **तरंग**= लहरें। **दर्शनागत**= दर्शन के लिए आया हुआ। **विगाह्यमानाभिः**= स्नान करते हुए। **अतिविकच**= अत्यन्त खिले हुए। **उपसितुम्**= उपासना करने के लिए। **अवतीर्ण**= उत्तरते हुए। **ग्रहगणमिव**= नक्षत्रमण्डल। **उद्वहन्तीभिः**= धारण करते हुए। **दीर्घिकाभिः**= बावड़ियाँ। **परिवृत्तम्**= घिरा हुआ। **अवनमित** झुकी हुई। **प्रणम्यमानमिव**= मानो प्रणाम किया। **अनवरत**= निरन्तर। **अभ्यर्च्य**= पूजा की। **आवद्ध**= मिले हुए। **उपास्यामान्**= उपासना की जाती हुई। **अजिर**= आँगन। **प्रकीर्ण**= फैले हुए। **शुष्यत्**= सूखा। **उपसंग्रहीत्**= इकट्ठे किये गये। **कदली**= केला। **लकुच**= बड़हर। **पनस**= कटहल। **वटुजनम्**= ब्रह्मचारी। **श्रवणगृहीत**= सुनने से ग्रहण किये गये। **शुककुलम्**= तोतों का समूह। **सारिका**= मैना। **उद्घष्यमाण**= उच्चारण करती हुई। **सुब्रह्मण्यम्**= वेद मन्त्रों का।

प्रसंग- यह अवतरण महाकवि बाण द्वारा प्रणीत 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। कवि ने इसमें महामुनि जाबालि के तपोपूत आश्रम का प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली में वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- समिधा, कुश, फूल और मिट्टी लिए, पीछे-पीछे चलने वाले, वेद-पाठ करते शिष्यों से युक्त, चारों ओर से प्रविष्ट होते मुनियों से जिसका समीप देश परिपूर्ण था और जिसमें (मेघगर्जन) का भ्रम उत्पन्न होने से उत्कण्ठित मयूरों के समूहों द्वारा सुनी जाती जल से कलश भरने की ध्वनि उठ रही थी ऐसा निरन्तर हविष् की आहुति प्राप्त करने से प्रसन्न होमाग्नियों द्वारा मानो मुनिजनों को सशरीर स्वर्ग ले जाने की इच्छा से उठी धूम-पंक्तियों के व्याज से स्वर्ग जाने की सीढ़ियों का निर्माण करता दीखता था, जैसे तपस्वियों के संसर्ग के कारण जिनका कालुष्य दूर हो गया हो ऐसी लहरों की पाँतों में पड़ती सूर्य-मण्डल की प्रतिबिम्ब-मालाओं से पूर्ण होने के कारण तपस्वियों के दर्शन के लिए आये सप्तर्षियों द्वारा विलोड़ित होती प्रतीत होती।ऋषियों की उपासना के लिए उतरे ग्रहों की भाँति लगते खूब खिले कुमुद-समूह को रात्रियों में धारण करती वापियों से परिवेष्टितः जिसे वायु द्वारा झुकी चोटियों वाली वन-लताएँ जैसे प्रणाम कर रही थीं, निरन्तर फूल गिराकर वृक्ष जैसे जिसकी अर्चना कर रहे थे और पल्लवों की अञ्जलि बाँधे वृक्ष जिसकी उपासना कर रहे थे- ऐसा, आँगन में फैले सूखते श्यामाक (साँवा) धान्य से परिपूर्ण पर्णकुटियों से युक्त, एकत्र किये आँवला, लौंग, बेर, केला, बड़हर, आम, कटहल और लाल फलों से पूर्ण अध्ययन करते मुखर ब्रह्मचारियों और निरन्तर सुनने से सीखे हविष् दाव-मन्त्रों को उच्चारते अतः वाचाल तोतों के समूह से युक्तअनेक मैनाओं द्वारा उच्च स्वर में घोषित होते सुब्रह्मण्य मन्त्रों से पूर्ण था।

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाणभट्ट ने अपनी अलंकृत भाषा-शैली के द्वारा महामुनि जाबालि के आश्रम का अत्यन्त सुन्दर चित्रण किया है। उनकी शैली में एक विशेष आकर्षण है। वस्तुतः इनकी भाषा-शैली में भाव-विषय को प्रकट करने की अद्वितीय क्षमता है, इसलिए बाणभट्ट का अन्य कवियों की तुलना में संस्कृत गद्य-साहित्य में सर्वश्रेष्ठ स्थान रहा है।

(2) यहाँ **उत्प्रेक्षा** तथा **सङ्करअलंकार** है। **उत्प्रेक्षा अलंकार** का विशेष प्रयोग हुआ है।

अरण्यकुक्कुटोपभुज्यमानवैश्वदेवबलिपिण्डम् आसन्नवापीकलहंसपोतभुज्यमाननीवारवलिम्, एणीजिह्वा-पल्लवोपलिह्यमानमुनिबालकम्, अग्निकार्यार्धदग्धसिमसिमायमानसामत्कुशकुसुमम् उपलभग्ननारिकेलरसस्निग्धशिलातलम् अचिरक्षण्णवल्कलरसपाटलभूतलम् रक्त्वन्दनोपलिप्तादित्यमण्डलकनिहितकरवीरकुसुमम् इतस्ततो विक्षिप्तभस्मलेखालंकृतमुनिजनभोजनभूमिभागम् परिचितशाखामृगकराकृष्टयष्टिनिष्कास्यमानप्रवेश्यमानजरदन्यतापसम् इभकलभार्थो- पभुक्तपतितैः सरस्वतीभुजलताविगलितैः शङ्खवलयं रिव मृणालशकलैः कल्माषितम्।

शब्दार्थ- अरण्यकुक्कुट= वन के मुर्गे। **उपभुज्यमान=** खाये हुए। **आसन्न=** समीप। **पोत=** बच्चे। **एणी=** हरिणी। **उपलिह्यमान्=** चाटते हुए। **अग्निकार्य=** यज्ञ, हवन आदि। **अर्धदग्ध=** आधी जली हुई। **सिमसिमायमान=** सिम-सिम शब्द करती हुई। **सामत्कुशकुसुमम्=** समिधा, कुश और फूल। **उपल=** पत्थर। **भग्न=** तोड़े। **स्निग्ध=** चिकने। **अचिर=** शीघ्र। **पाटल=** गुलाबी। **भूतलम्=** पृथ्वी का तल। **रक्तवन्दन=** लाल चन्दन। **उपलिप्त=** लिए हुए। **मण्डलक=** मण्डल पर। **निहित=** रखे हुए। **करवीर=** लाल कनेर। **इतस्ततो=** इधर-उधर। **विक्षिप्त=** खींची गई। **अलंकृत=** सुशोभित। **करायष्टि=** हाथ से खींचकर। **निष्काय=** निकालना। **प्रवेश्यमान=** भीतर ले जाना। **जरद्न्ध=** बूढ़े-अन्धे। **तापसम्=** तपस्वी। **इभकलभ=** हाथी के बच्चे। **अर्ध=** आधे। **उपभुक्त=** खाये हुए। **विगलितैः=** गिरे हुए। **शङ्खवलयैः=** कंकड़ों के समान। **मृणाल=** कमल का डंठल। **शकलैः=** टुकड़े। **कल्माषितम्=** रंगबिरंगा।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ वैशम्पायन राजा शूद्रक से जाबालि के आश्रम का वर्णन करता है। इसका कवि ने प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली में चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- वहाँ जंगली मुर्गे वैश्व-देव बलि के पिण्ड खा रहे थे, वहाँ समीपस्थ बावड़ी में कलहंसों के बच्चों द्वारा नीवार बलि का भोग किया जा रहा था, वहाँ हरिणियाँ पल्लव-सदृश जिह्वा से मुनियों के बच्चों को चाट रही थीं। यज्ञ-हवनादि में अधजली समिधाएँ, कुशा तथा पुष्प सिम-सिम शब्द कर रहे थे, पत्थर पर तोड़े गये नारियल के रस से शिलायें चिकनी हो गयी थीं, परन्तु तोड़े गये वल्कलों के रस से वहाँ का धरातल लाल हो गया था, वहाँ लाल चन्दन से लिखित सूर्यमण्डल पर कनेर के फूल चढ़ाये गये थे, इधर-उधर खींची गई भस्म-रेखाओं से वहाँ मुनि लोगों के भोजन के लिए चौके का स्थान सीमित (निर्धारित) कर दिया गया था। उस आश्रम में परचे हुए वानर हाथ खींचकर बूढ़े अन्धे तपस्वियों को भीतर-

बाहर ले जा रहे थे, हाथियों के बच्चों द्वारा आधे खाये जाकर गिरे हुए कमलनाल के टुकड़ों से, जो मानो सरस्वती की बाहु लता से गिरे हुए शंखनिर्मित कंगन हों, वह आश्रम चित्रित था।

विशेष (1)- इस गद्यांश में कवि ने मुनि की तपस्या से आश्रम का अत्यन्त ही सजीव स्वाभाविक एवं चमत्कृत विभिन्न उपमानों के द्वारा अत्यधिक भव्य एवं उदात्त वर्णन किया है। महामुनि जाबालि का आश्रम अनेक प्रकार के फल-फूलों वाले वृक्षों से सम्पन्न था। उसमें किसी भी वस्तु की कमी नहीं थी।

(2) यहाँ **उत्प्रेक्षा अलंकार** है।

ऋषिजनार्थमेणकैर्विषाणशिखरोत्खन्यमानविविधकन्दमूलम् अम्बुपूर्णपुष्करपुटैर्वनकरिभिरापर्यमाणविटपा-लबालकम्, ऋषिकुमारकाकृष्यमाणवनवराहदंष्ट्रान्तराललग्नशालकम्, उपजातपरिचयैः कलापिभिः पक्षपुटपवनसंधुक्ष्य-माणमुनिहोमहुताशनम् आरब्धमृतचरुचारुगन्धम् अर्धपक्वपुरोडाशपरिमलामोदितम् अविच्छिन्नाज्यधाराहुतिहुतभुग्हुङ्कार-मुखरितम् उपचर्यमाणातिथिवर्गम् पूज्यमानपितृदैवतम् अर्च्यमानहरिहरपिता महम् उद्दिश्यमानश्राद्धकल्पम्, व्याख्या- यमानयज्ञविद्यम् आलोच्यमान धर्मशास्त्रम् वाच्यमानविविधपुस्तकम्, विचार्यमाणसकलशास्त्रार्थम् आरभ्यमाणपर्णशालम् उपलिप्यमानजिरम्, उपमृत्यमानोसाध्यमानमन्त्रम्, अभ्य स्यानयोगमु उपहियमाणवनदेवताबलिम् निर्वर्त्यमान मौञ्ज-मेखलम्, प्रक्षाल्यमानवल्कलम् उपसंगृह्यमाणसमिधम् उपसंस्क्रियमाणकृष्णाजिनम् गृह्यमाणगवेधुकम् शोष्यमाण-पुष्करबीजम् ग्रथ्यमानाक्षमालम् गृह्यमाणत्रिपुण्ड्रकम्, नयस्यमानवेत्रदण्डम् सत्क्रियमाणपरिव्राजकम् आपूर्यमाण-कमण्डलुम्।

शब्दार्थ-एणकैः= हिरणों के। **विषाण=** सींग। **उत्खन्यधमान**= खोदे हुए। **विविधकन्दमूलम्**= विभिन्न तरह के कन्दमूल। **अम्बुपूर्ण**= पानी से भरे। **पुष्करपुटै**= सूँड़ों के अग्रभाग। **वनकरिभिः**= जंगली हाथी। **आलवालकम्**= क्यारियाँ। **वनवराह**= जंगली शूकर। **द्रष्ट्रान्तराल**= दाड़ों के बीच में फँसे हुए। **लग्नशालूकम्**= लगे हुए कमलकन्द। **कलापिभिः**= मयूर। **संधुक्ष्यमाण=** दहकाते हुए। **हुताशनम्**= अग्नियाँ जलाई। **आरब्ध**= पकाये जाते हुए। **अमृतचरु**= घी में पके हुए चावल, जौ। **चारुगन्यम्**= उत्तम सुगन्ध। **अर्धपक्व**= आधे पके। **आमोदित=** आश्चर्यजनक। **अविच्छिन=** निरन्तर। **आज्य**= घी। **हुतभुक**= अग्नि। **उपचर्यमाण**= सम्मान करते हुए। **उद्दिश्यमानश्राद्धकल्पम्**= श्राद्ध क्रिया का उपदेश किया। **यज्ञविद्यम्**= हवन-विद्या। **आलोच्यमान**= आलोचना की गई। **आरभ्यमाण**= बनायी जा रही थी। **पर्णशालम्**= पर्णकुटियाँ। **उपलिप्यमान**= गोबर से लीपे गये। **अजिरम्=** आँगन। **उपमृज्यमान**= साफ किये जाते हुए। **आवध्यमानध्यानम्**= स्मरण करते हुए। **साध्यमान**= सिद्ध किये गये। **उपहियमाणम्**= दी जा रही। **निर्वर्त्यमान=** बनायी जा रही। **मौञ्जमेखलम्**= मूँज की करधनी। **प्रक्षाल्यमानवल्कलम्**= धोये गये वल्कल वस्त्र। **उपसंगृह्यमाण** इकट्ठी करना। **संस्क्रिय**= विशुद्ध। **गवेधुकम्**= धान्य विशेष। **शोष्यमाण**= सुखाये गये। **पुष्करवीजम्**= कमलगट्टा। **ग्रध्यमानाक्षमालम्**= गूँथी गई अक्षमालाएँ। **गृह्यमाण**= धारण किये। **न्यस्तमान**= रखे गये। **सत्क्रियमाण**= सम्मान किया जाता हुआ। **परिव्राजकम्**= अतिथिजनों का। **आपूर्यमाण**= भरे जाते हुए।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा प्रणीत 'कादम्बरी कथामुखम्' से अवतरित है। यहाँ वैशम्पायन शुक राजा शूद्रक से महामुनि जाबालि के तपोभूत आश्रम का वैभवपूर्ण वर्णन करता है। इसी का कवि ने हृदयग्राही चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- कहीं हरिण अपने सींगों से ऋषियों के लिए कई प्रकार के कन्दमूल उखाड़ रहे थे, कहीं जंगली हाथी अपनी सूँड़ों में पानी लेकर वृक्षों को सींच रहे थे, कहीं ऋषियों के बच्चों द्वारा जंगली सूअरों की दाढ़ों के अन्दर लगे हुए कमलों के कन्द खींचे जा रहे थे, कहीं परचे हुए मोर अपने पंखों की हवा से मुनियों की आग सुलगा रहे थे, कहीं चरु की मनोहर सुगन्ध चारों ओर फैल रही थी, कहीं आधे पके हुए पुरोडाश की पवित्र गन्ध से वह आश्रम सुगन्धित हो रहा था। कहीं हवनकुण्डों में लगातार अटूट धारा से घी की आहुति दी जा रही थी, जिससे अग्नि में से 'हुँ-हुँ' का शब्द हो रहा था, कहीं अतिथियों की सेवा हो रही थी, कहीं पितरों की पूजा हो रही थी, कहीं विष्णु, शंकर और ब्रह्मा की पूजा हो रही थी, कहीं श्राद्ध के नियमों का उपदेश दिया जा रहा था, कहीं यज्ञविद्या की व्यवस्था हो रही थी, कहीं धर्मशास्त्रों की मीमांसा हो रही थी, कहीं तरह-तरह की पुस्तकें पढ़ी जा रही थीं, कहीं शास्त्रों के अर्थों पर विचार-विगर्श किया जा रहा था, कहीं झोंपड़ियाँ बनायी जा रही थीं, कहीं आँगन लीपे जा रहे थे, कहीं झोंपड़ियों के भीतर की सफाई हो रही थी, तो कहीं इष्टदेवताओं का स्मरण (ध्यान) किया जा रहा था, कहीं मन्त्र सिद्ध किये जा रहे थे, तो कहीं योग का अभ्यास किया जा रहा था, कहीं वनदेवताओं की बलि दी जा रही थी, तो कहीं मूँज की करधनियाँ बनाई जा रही थीं, कहीं छाल के वस्त्र धोये जा रहे थे, तो कहीं समिधाएँ इकट्ठी की जा रही थीं, कहीं काले हरिण के चमड़े सिझाये (शुद्ध किये) जा रहे थे, कहीं कमल के पके हुए कमलगट्टे सुखाये जा रहे थे, कहीं रुद्राक्ष की मालाएँ गूँथी जा रही थीं, कहीं त्रिपुण्ड धारण किया जा रहा था, कहीं के के डंडे रखे जा रहे थे और कहीं कमण्डलुओं में जल भरा जा रहा था।

विशेष (1)-महाकवि बाणभट्ट ने यहाँ अपनी अलंकृत-भाषा शैली द्वारा महामुनि जाबालि की तपस्या से पूत आश्रम का अत्यन्त सजीव, स्वाभाविक एवं चमत्कृत वर्णन किया है। उनकी शैली में एक विशेष आकर्षण है, जो मनोमुग्धकारी है।

(2) यहाँ **अनुप्रास** तथा **स्वभावोक्ति अलंकार** है।

अदृष्टपूर्वकलिकालस्य, अपरिचितमनृतस्य, अश्रुतपूर्वमनङ्गस्य, अब्जयोनिअश्रुतपूर्वमन मिव त्रिभुवनवन्दितम् असुरारिमिवप्रकटितावराहनरसिंहरूपम्, सांख्यमिव कपिलाधिष्ठितम् मथुरोपवनमिव बलावयीढदर्पितधेनुकम् उदयन-मिवानन्दितवत्सकुलम् किंपुरुषाधिराज्यमिव मुनिजनगृहीतकलशाभिषिच्यमानद्रुमम् निदाघसमयावसानमिव प्रत्यासन्न-जलप्रपातम्, जलधरसमयमिव वनगहनमध्यसुखसुप्तहरिम्, हनूमन्तमिव शिलाशकलप्रहारसंचूर्णिताक्षास्थिनिचयम्, खाण्डवविनाशोद्यतार्जुनमिव प्रारब्धाग्नि कार्यम्, सुरभिविलेपनधरमपि सतताविर्भूत हव्यधूमगन्धम्

मातङ्गकुलाध्यासितमपि पवित्रम् उल्लसितधूमकेतुशतमपि प्रशान्तोपद्रवम्, परिपूर्ण द्विजपतिमण्डलसनाथमपि सदा संनिहिततरुगहनान्धकारम्, अतिरमणीयमपरमिव ब्रह्मलोकमाश्रमम् अपश्यम्।

शब्दार्थ-अनृतस्य= झूठ। **अपरिचित=** अनजान। **अनङ्गस्य**= कामदेव। **अन्जयोनिमिव**= ब्रह्मा के समान। **त्रिभुवनवन्दितम्**= तीनों भुवनों में पूज्यनीय। **असुरारिमिव**= दैत्यशत्रु विष्णु की भाँति। **वराह**= शूकर। **कपिलाधिष्ठितम्**= कपिल मुनि, कपिला गायों से युक्त। **मथुरोपवनमिव**= मथुरा के उपवन की भाँति। **बलावयीढदर्पितधेनुकम्**= बलराम द्वारा नष्ट किये धेनुकासुर, बल के गर्व के युक्त हथिनियाँ। **वत्सकुलम्**= वत्स नामक वंश, बछड़ों का समूह। **गृहीतकलशा**= कलश लेकर। **द्रुमम्**= राजा, वृक्ष। **निदाघसमत्र**= ग्रीष्मकालीन। **जलप्रपातम्**= वर्षा, झरना। **जलधरसमयमिव**= वर्षाकाल की भाँति। **गहन**= गहरे। **शकल**= खण्ड। **अक्षास्थिनिचयम्**= अक्ष का अस्थिसमूह, बहेड़ों का समुदाय। **विनाशोद्यतार्जुनमिव**= विनाश (नष्ट) के लिए उद्धृत अर्जुन की भाँति। **प्रारब्ध=** प्रारम्भ। **सुरभि** गाय, सुगन्धि। **विलेपन=** तेल आदि, लीपना। **घर=** लगाना या धारण करना। **सतत्**= निरन्तर। **आविर्भूत=** प्रकट होना। **धूम**= धुआँ। **मातङ्गकुल**= हस्ति समूह। **अध्यासित=** आश्रित। **उल्लसित=** प्रकट होते हुए। **धूमकेतु**= उत्पातग्रह। **शत**= सैकड़ों। **परिपूर्ण=** ज्ञान से पूर्ण। **द्विजपतिमण्डलसनाथमपि**= ब्राह्मण समूह से युक्त होते हुए भी। **गहन**= गहरा। **अतिरमणीयम्**= अत्यधिक मनोहर। **अपरं ब्रह्मलोकमिव**= दूसरे स्वर्गलोक की भाँति। **अपश्यम्**= देखा।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ कवि ने महामुनि जाबालि के तपोपूत आश्रम का अत्यन्त भव्य एवं उदात्त, प्रवाहपूर्ण तथा हृदयग्राही वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- उस आश्रम को कलियुग ने कभी देखा भी न था, झूठ ने उधर कभी झांका भी न था और काम ने कभी उसके विषय में सुना भी न था। वह ब्रह्मा के समान तीनों लोकों द्वारा पूज्यनीय था। वह भगवान विष्णु की भाँति नृसिंह वराहरूप प्रकट करने वाला था (भगवान विष्णु ने नृसिंह और वराह का रूप धारण किया था, उस आश्रम में मनुष्य सिंह, शूकर और मृग पाये जाते थे), वह सांख्य दर्शन के समान कपिलाधिष्ठित था (कपिल मुनि सांख्य- दर्शन के प्रणेता थे, उस आश्रम में अनेक सीधी-सादी गायें थी), मथुरा के उपवन की भाँति शक्तिशाली और अभिमानी धेनुक वाला था (मथुरा के उपवन में अत्यन्त बली तथा अभिमानी धेनुक नाम का राक्षस रहता था), उस आश्रम में तगड़ी और नयी ब्यायी गायें रहती थीं, राजा उदयन के समान वत्स-कुल को सुखी बनाने वाला था (राजा उदयन ने अपने वत्सकुल को आनन्दित किया था, उस आश्रम में सुख के साथ बछड़े विचरत रहते थे), किन्नरों के राज्य के समान वहाँ जल के घड़ों से ऋषि लोग द्रुमाभिषेक किया करते थे (किन्नरों के राज्य में द्रुम नामक राजा का अभिषेक हुआ था, उस आश्रम में ऋषि लोग जल के घड़ों से वृक्षों को सींचा करते थे), ग्रीष्मकाल के अन्त के समान वहाँ जल प्रपात समीप ही था (गर्मी के अन्त में वर्षा होती है, उस आश्रम के समीप झरने झर रहे थे), वर्षा ऋतु के समान

वहाँ घने वनों के बीच हरि (विष्णु) सुख से सो रहे थे (वर्षा ऋतु में भगवान विष्णु गहरे जल के बीच सोते हैं, उस आश्रम में घने जंगलों के बीच सिंह सुख की नींद लिया करते थे), हनुमान के समान वहाँ पत्थरों के टुकड़ों से अक्ष की अस्थियाँ तोड़ी जाती थीं (हनुमान ने रावण के पुत्र अक्षकुमार की हड्डियाँ तोड़ डाली थीं, उस आश्रम में बहेड़े की गुठलियाँ तोड़ी जाती थी) और खाण्डव वन जलाने के लिए तैयार अर्जुन की भाँति वहाँ अग्नि के कार्य हो रहे थे (खाण्डव वन जलाने में अर्जुन ने अग्नि को सहायता पहुँचायी थी, उस आश्रम में मुनि लोग होम आदि अग्नि द्वारा होने वाले कार्यों के लिए आग जला रहे थे), वहाँ सुरभि लेपन (गोबर का लेप, चन्दन आदि सुगन्धित वस्तुओं का लेप) होने पर भी होम के धुओं से सर्वदा सुगन्ध निकला करती थी, मातंगों (चाण्डालों या मतवाले हाथियों) का निवास होने पर भी वह आश्रम पवित्र था, अनेकों चमकते हुए धूमकेतुओं (पुच्छल तारों, हवन की लपटों) के होने पर भी कोई भी उपद्रव नहीं था और वहाँ द्विजपति मण्डल (चन्द्रमण्डल, श्रेष्ठ ब्राह्मणों का समूह) होने पर भी पास के वृक्षों को झुरमुटों में सदा अन्धकार छाया रहता था।

विशेष (1)-इस गद्यांश में बाणभट्ट ने महामुनि जाबालि के आश्रम का अलंकारपूर्ण भाषा-शैली द्वारा भव्य एवं उदात्त वर्णन किया गया है। यह अत्यन्त चमत्कृतपूर्ण है। इनकी शैली में भाव-विषय को प्रकट करने की अद्वितीय क्षमता है। इसलिए महाकवि बाण का संस्कृत गद्य-साहित्य में सर्वश्रेष्ठ स्थान है।

(2) यहाँ **विरोधाभास**, **उत्प्रेक्षा** तथा **पूणर्णोपमाअलंकार** का प्रयोग हुआ है।

यत्र च मलिनता हविघूमेषु न चरितेषु, मुखरागः शुकेषु न कोपेषु तीक्ष्णता कुशाग्रेषु न स्वभावेषु चञ्चलता, कदलीदलेषु न मनःसु, चक्षुरागः कोकिलेषु न परकलत्रेषु, कण्ठग्रहः कमण्डलुषु न सुरतेषु, मेखलाबन्धो व्रतेषु नेर्ष्या-कलहेषु, स्तनस्पर्शी होमधेनुषु न कामिनीषु, पक्षपातः कृकवाकुषु न विद्याविवादेषु, भ्रान्तिरनलप्रदक्षिणासु न शास्त्रेषु वसुसंकीर्त दिव्यकथासु न तृष्णासु, गणनारुद्राक्षवलयेषु न शरीरेषु मुनिबालनाशः क्रतुदीक्षया न मृत्युना, रामानुरागो रामायणेन यौवने, मुखभङ्कविकारो जरया न धनाभिमानेन। यत्र च महाभारते शकुनिवधः, पुराणे वायुप्रलापितिम् वयः परिणामेन द्विजपतनम्, उपवन-चन्दनेषु जाड्यम्, अनीनां भूतिमत्त्वम् एणकानां गीतश्रवणव्यसनम्, शिखण्डिनां नृत्य-पक्षपातः, भुजंगमानां भोग, कपीनां श्रीफलाभिलाषः मूलानामधोगतिः।

शब्दार्थ-यत्र= जिस आश्रम में। **मलिनता=** कालिमा। **चरितेषु=** चरित्रों में। **मुखरागः**= लाल मुख। **कण्ठग्रहः**= गला पकड़ना। **सुरतेषु=** रति-क्रीड़ा। **मेखलाबन्धी**= जंजीर से बाँधना। **स्तनस्पर्शोहोमधेनुषु**= गौओं का स्तनस्पर्श। **न कामिनीषु=** कामनियों का नहीं। **पक्षपातः=** पंखों का गिरना, किसी का पक्षपात लेना। **कृकवाकुषु=** मुर्गों में। **न विद्याविवादेषु**= विद्या सम्बन्धी विद्वानों में पक्षपात अनुचित नहीं। **भ्रान्ति**= घूमना। **भ्रमवसु=** धन, वसु नामक देवता। **दिव्यकथासु=** दिव्यकथाओं में होना। **गणनारुद्राक्षवलयेषु=**

रुद्राक्षमालाओं में गणना होती थी। **बालनाश** मुंडन, बच्चों की मृत्यु। **क्रतु**= यज्ञ। **रामानुरागो**= राम के प्रति अनुराग। **मुखभङ्गविकारो=** मुख पर अङ्गविकार। **जरया**= वृद्धावस्था। **धनाभिमानेन=** धन के अभिमान के कारण। **शकुनि**= पक्षी, शकुनि राजा। **द्विजपतनम्**= उपवन के चन्दन वृक्षों में जड़ता। **नृत्यपक्षपातः=** मुनियों का नृत्य के प्रति झुकाव। **भुजङ्गमानांभोगः=** सर्पों का भोग। **कपीनां**= वानर। **श्रीफलभिलाषः**= फल की अभिलाषा। **मूलानामधोगतिः**= वृक्षों की जड़ों का अधोगमन होना।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट प्रणीत 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। इसमें शुक-शावक वैशम्पायन राजा शूद्रक से महामुनि जाबालि के तपःपूत आश्रम का प्रवाहपूर्ण शैली में वर्णन कर रहा है।

हिन्दी अनुवाद- उस आश्रम में कालिमा केवल यज्ञ के धुएँ में थी, किसी के आचरण में नहीं थी। मुख पर लालिमा केवल तोतों की चोंच में थी, किसी के क्रोध में नहीं थी। तीखापन केवल कुशों की नोंक में था, किसी के स्वभाव में नहीं था। चंचलता केवल केले के पत्ते में थी, किसी के मन में नहीं थीं। चक्षुराग (नेत्रों की लालिमा, नेत्रों में प्रेम) केवल कोकिलों में था,परस्त्रियों के विषय में नहीं था। कण्ठ-ग्रह (गर्दन पकड़कर आलिंगन करना) केवल कमण्डलु उठाने में था, रतिविलास में नहीं था। मेखलाबन्ध (मौञ्जीबन्ध, साँकल में बाँधना) केवल व्रतधारी ब्रह्मचारियों में था, ईर्ष्या सम्बन्धी कलहों में नहीं था। स्तनों का स्पर्श होम के लिए गायों को दुहने में ही था, स्त्रियों में नहीं था। पक्षपात (पंखों का झड़ना, पक्षपात करा) केवल मुर्गों में था, विद्या-सम्बन्धी विवादों में नहीं था, भ्रान्ति (चक्कर काटना भ्रम सन्देश में) केवल अग्नि की प्रदक्षिणा में थी, शास्त्र-ज्ञान के विषय में नहीं थी। वसुसंकीर्तन (वसु नामक देवताओं के वर्णन में धन की चर्चा) केवल देवताओं को कहानियों में थी, धन की अभिलाषा में नहीं थी। गणना केवल रुद्राक्ष की मालाओं में थी, शरीर के विषय में नहीं थी, मुनियों के बालों का नाश (बाल कटा देना, बालकों का नाश) केवल यज्ञ की दीक्षा लेने में ही होता था, मृत्यु के द्वारा नहीं, रामानुराग (रामचन्द्रजी के प्रति प्रेम, स्त्री के प्रति प्रेम) केवल रामायण में था, यौवन में नहीं था और मुख पर भंग विकार (झुरीं पड़ना, अहंकार) केवल बुढ़ापे में ही होता था, धन के अभिमान में नहीं होता था। वहाँ शकुनिवध केवल महाभारत की कथा में सुना जाता था, आश्रम में पक्षियों का वध करना लोग जानते भी नहीं थे। वायु का प्रलाप (वायुदेवता का भाषण) केवल पुसणों की कथा में मिलता था, वायु-विकार के कारण कोई व्यर्थ का प्रलाप नहीं था, द्विजपतन (दाँतों का गिरना, ब्राह्मणों की अवनति होना) केवल बुढ़ापे में होता था, ब्राह्मणों की अवनति नहीं होती थी। जड़ता (शीलता बुद्धिहीनता) केवल उपवन के चन्दनों में पायी जाती थी, ऋषियों की बुद्धि में नहीं थी। भूति (भस्म, ऐश्वर्य, धन) केवल अग्नि में मिलती थी, लोगों में धन के प्रति कोई आसक्ति नहीं थी, गीत सुनने का व्यसन केवल मृगों में था, लोगों को उसकी अभिलाषा नहीं थी। नृत्य के प्रति अनुराग केवल मोरों में था, भोग (फल) सांसारिक सुख, केवल सर्पों में था, वहाँ लोग भोगी नहीं थे। श्रीफल (बेल का फल, धन से प्राप्त होने वाला

सुख) की अभिलाषा केवल बन्दरों में थी, वहाँ के लोगों में धन से मिलने वाले सुख की अभिलाषा नहीं थी। अधोगति (नीचे की ओर जाना, नरक में पड़ना) केवल वृक्षों की जड़ों की होती थी, ऋषियों और मुनियों की नहीं होती थी।

विशेष- महामुनि जाबालि का आश्रम अनेक प्रकार के फल-फूलों वाले वृक्षों से युक्त था। उसमें किसी भी वस्तु की कमी नहीं थी। कवि ने मुनि की तपस्या से पवित्र आश्रम का अत्यन्त ही सजीव, स्वाभाविक एवं चमत्कृत वर्णन किया है। उनकी शैली में एक विशेष आकर्षण है जो मनोमुग्धकारी है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. हारीत मुनि किसके पुत्र थे?
2. जाबालि ऋषि कैसे थे?
3. जाबालि मुनि कौन थे?
4. हारीत को किसकी दशा पर दया आ जाती है।

15.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में जाबालि ऋषि के पुत्र हारीत के गुणों का वर्णन किया गया है। उनकी सद्भावना से वैशम्पायन नामक शुक की जान बची। घायल शुक की सहायता की और उसे जाबालि आश्रम ले आए। आश्रम का मनोहारी वर्णन किया गया है।

15.5 कठिन शब्दावली

1.कराल – विशाल **2.सर** – सरोवर **3.वनचर** – जंगली जीव

15.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. जाबालि ऋषि 2. त्रिकालदर्शी 3. महातपस्वी 4. वैशम्पायन शुक

15.7 सहायक ग्रन्थ

1. कादम्बरी - सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2. कादम्बरी कथामुख - सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3. साहित्य दर्पण - सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4. बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन - अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5. बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी - नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।

6. साहित्यदर्पण - सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

15.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. जाबालि ऋषि के आश्रम के सौन्दर्य का वर्णन कीजिए।
2. हारीत का चरित्र-चित्रण वर्णित कीजिए।
3. कथामुख के आधार पर प्रकृति-चित्रण कीजिए।
4. वैशम्पायन शुक की दयनीय अवस्था का वर्णन कीजिए।

इकाई-16

जाबालि वर्णन

संरचना

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 जाबालि वर्णन

16.3.1 जाबालि के शिष्यों की जिज्ञासा का वर्णन

16.3.2 सन्ध्या वर्णन

16.3.3 रात्रि वर्णन

- स्वयं आकलन प्रश्न

16.4 सारांश

16.5 कठिन शब्दावली

16.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

16.7 सहायक ग्रन्थ

16.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

16.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में जाबालि ऋषि के चरित्र-चित्रण का विवेचन किया गया है। शुक वर्णन, सन्ध्या एवं रात्रि का मनोहारी वर्णन का अध्ययन विस्तार से करेंगे।

16.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

- जाबालि ऋषि के विषय में जानेंगे।
- सन्ध्या के मनोहारी वर्णन से अवगत होंगे।
- रात्रि वर्णन द्वारा प्रकृति के मधुरम् वर्णन का ज्ञान होगा।

16.3 जाबालि वर्णन

तस्य चैवंविधस्य मध्यभागमलंकुर्वाणस्य, अलक्तलोहितपल्लवस्य, मुनिजनालम्बितकृष्णाजिनजलकर-कसाथशाखस्य, तापसकुमारिकाभिरालवालदत्तपीतपिष्टपञ्चाङ्गलस्य, हरिणशिशुभिःपीयमानालवालसलिलस्य मुनिकुमार-काबद्धकुशचीरदाम्नो, हरितगोमयोपलेपनविविक्ततलस्य तत्क्षणकृतकुसुमोपहाररमणीयस्य, नातिमहतः परिमण्डलतया विस्तीर्णावाकशस्यरक्ताशोकतरोधश्छायायामुपविष्टम्, उग्रततपोभिर्भुवनमिव सागरैः, कनकगिरिमिव कुलपर्वतैः क्रतुमिव वैतानवह्निभिः, कल्पान्तदिवसमिव रविभिः, कालमिव कल्पैः, समन्तान्महर्षिभिः परिवृतम्।।

शब्दार्थ-अलंकुर्वाणस्य= सुशोभित करते हुए। **अलक्त्का=** महावर। **लोहितपल्लवस्य**= लाल पत्तों की भाँति। **कृष्णाजिन**= कृष्ण मृगचर्म। **जलकरक**= पानी के पात्र। **पीत**= हल्दी। **पञ्चांगुलस्य**= थापे। **हरिणशिशुभिः**= हिरन के बच्चों द्वारा। **परिपीय**= पिये गये। **अबद्धकुशचीर**= कुश के बने वस्त्र। **दाम्नो**= रस्सी। **गोमय**= गोबर। **विविक्त**= पवित्र। **रमणीयस्य**= सुन्दर लगते हुए। **नातिमहतः**= अत्यन्त विशाल नहीं। **परिमण्डलतया**= चारों ओर व्याप्त। **अवकाश**= स्थान। **उपविष्टम्**= बैठे हुए। **उग्रततोभिः**= उग्र तपस्या करने वाले तपस्वियों से। **कनकगिरिमिव**= सुमेरु पर्वत की भाँति। **कालमिव=**समय की भाँति। **वैतान्**= यज्ञ की। **समन्तात=** चारों तरफ से। **परिवृतम्=** घिरे हुए।

प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। यहाँ कवि ने वैशम्पायन द्वारा राजा शूद्रक से महामुनि जाबालि के अप्रतिम व्यक्तित्व एवं तपस्या का प्रभावोत्पादक चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- और ऐसे इस प्रकार से उस (आश्रम) के मध्य भाग को अलंकृत करने वाले, अलक्त्क के समान लाल पत्ते वाले, मुनिजनों के द्वारा लटकाये गये कृष्ण मृगचर्म और पानी के पात्रों से सनाथ शाखा वाले, तापसकुमारिकाओं के द्वारा आलवाल में बनाये गये हल्दी के चूर्ण के थापों वाले, हरिण के बच्चों द्वारा पीये जाते हुए थाँवले के जल वाले, मुनिकुमारों के द्वारा बाँधे गये कुशचीर की रस्सी वाले, हरे गोबर से लीपे गये पवित्र तल वाले, उसी समय किये गये पुष्पोपहार के कारण रमणीय कुछ बड़े, चारों ओर फैलाव के कारण विस्तीर्ण सागरों के द्वारा भुवन के समान, कुल पर्वतों के द्वारा सुमेरु के समान, यज्ञीय अग्नियों (गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि) के द्वारा यज्ञ की भाँति, सूर्यो, द्वादशादित्यों के द्वारा प्रलय के दिवस के समान, कल्पों के द्वारा समय के समान, चारों ओर से उग्रतपस्वी महर्षियों से घिरे हुए जाबालि को देखा अर्थात् मैंने उन जाबालि मुनि को देखा, जो उस आश्रम के मध्यभाग को अलंकृत करने वाले, लाल अशोक की छाया में विद्यमान थे। उस अशोक वृक्ष के पत्ते महावर के समान लाल रंग के थे, उसकी शाखाओं पर मुनियों

ने जल से भरे हुए कमण्डलु) लटका रखे थे, तपस्वियों की कन्याओं ने पिसी हल्दी के चूर्ण के घोल से उस पर थापे लगा रखे थे, उस थाँवले का पानी मृग के छोने पी रहे थे, मुनियों के बच्चों ने उस पर कुशा की बनाई रस्सी लपेट दी थी, उसके नीचे का भाग हरे (ताजे) गोबर के लीपने से स्वच्छ कर दिया था, तत्काल समर्पित किये गये पुष्पों से वह रमणीय लग रहा था। यद्यपि वह बहुत बड़ा नहीं था फिर भी गोलाकार होने के कारण उसके नीचे पर्याप्त स्थान था। वहाँ उग्र तपस्या करने वाले महर्षियों से घिरे हुए जाबालि ऐसे घिरे हुए बैठे थे जैसे समुद्रों से पृथ्वी, कुलाचलों से सुमेरु, यज्ञीय वह्नियों से यज्ञ, द्वादशादित्यों से प्रलयकालीन दिन कल्पों से काल (समय) घिरा रहता है।

विशेष (1)-महामुनि जाबालि की तपस्या उच्चकोटि की है, उनके प्रभाव से आश्रम के वन्य प्राणी भी परस्पर विरोध को छोडकर मित्रता का व्यवहार करते हैं। कहीं भी पापाचार नहीं है। प्रकृति के अन्य उपकरण तथा शक्तियाँ मुनि के प्रभाव तथा शाप के भय से स्वतः सभी अभावों को दूर करते रहते हैं। यहाँ महाकवि ने प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली में अत्यन्त सजीव एवं भव्य चित्रण किया है। मुनि का व्यक्तित्व प्रभावपूर्ण है।

(2) यहाँ **मालोपमा अलंकार** है।

उग्रशापभीतयेव कम्पितदेहया प्रणयिन्येव विहितकेशग्रहवा क्रुद्धयेव कृतभ्रूभ्रङ्गया मत्तयेवाकुलितगमनया प्रसाधितयेव प्रकटिततिलकया जरया गृहीतव्रतयेव भस्मधवलया धवलीकृतविग्रहम्, आयामिनोभिः पलितपाण्डु-राभिस्तपसा विजित्य मुनिजनमखिलम् धर्मपताकाभिरिवोच्छिताभिरमरलोकमारोढुम् पुण्यरज्जुभिरिवोपसंगृहीता-भिरतिदूरप्रवृद्धस्य पुण्यतरोः कुसुममञ्जरीभिरवोद्गताभिर्जटाभिरुपशोभितम्, उपरचितभस्मत्रिपुण्ड्रकेण तिर्यकप्रवृत्तत्रिपथगा-स्त्रोतस्त्रयेण हिमगिरिशिलातलेनेवललाटफलकेनोपेतम्।

शब्दार्थ- भीतयेव= डरे हुए जैसे। **कम्पितदेहया=** काँपता हुआ शरीर। **प्रणयिन्येव=** नायिका की भाँति। **विहित=** थी। **कुद्धयेव=** क्रुद्धा के समान। **मत्तयेव=** मदमाती। **आकुलित=** लड़खड़ाती। **प्रसाधितयेव=** सुसज्जित हुई-सी। **जरया=** वृद्धावस्था। **गृहीत=** धारण कर। **धवलया=** श्वेतवर्ण। **विग्रहम्=** शरीर। **आयामिनोभिः=** फैली हुई। **विजित्य=** जीतकर। **तपसा=** तपस्या के द्वारा। **उपसंगृहीतिभिः=** इकट्ठी की हुई। **आरोढुम्=** चढ़ने के लिए। **अतिदूरप्रवृद्धस्य=** अत्यधिक दूर तक बिखरे हुए। **कुसुम=** पुष्प। **उद्गताभिः=** निकली हुई। **उपशोभितम्=** सुशोभित होने वाली। **तिर्यक=** तिरछे। **प्रवृत्त=** प्रवृत्त होने वाले। **स्रोत=** धारा। **त्रयेण=** तीन। **शिलातलेनेव=** पहाड़ी की भाँति। **ललाटफलकेन=** मस्तक के द्वारा। **उपेतम्=** युक्त।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाण द्वारा प्रणीत 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। यहाँ कवि ने महामुनि जाबालि के अप्रतिम व्यक्तित्व एवं तपस्या का प्रभावोत्पादक चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- प्रचण्ड शाप के भय से जिसका शरीर मानो काँपता था, जो प्रणयिनी के समान केशों का ग्रहण किये हुई थी, जिसने क्रुद्धा के समान भ्रुकुटि भंग किया था, जो मदमाती के समान लड़खड़ाती

चाल से युक्त थी और जिसने प्रसाधित होने में तिल बना लिये हों, ऐसी मानो व्रत करती हुई होने के कारण भस्म से श्वेत, जरा से शुभ देह वाले, लम्बी-लम्बी वृद्धावस्थाजनित श्वेतिमा से श्वेत, तपस्या द्वारा समस्त मुनियों को जीतकर ऊपर उड़ती धर्म ध्वजाओं के तुल्य, स्वर्गलोक पर चढ़ने के लिए एकत्र की गयी पुण्य की रज्जु-जैसी, बहुत दूर तक बढ़े तपरूपी वृक्ष की उत्पन्न हुई पुष्प-मञ्जरियों के समान जटाओं से सुशोभित,भस्म का त्रिपुण्ड लगा हुआ होने के कारण जो गंगा के तीन टेढ़े बहते स्रोतों से युक्त हिमालय पर्वत के शिलातल की भाँति प्रतीत हो रहा था, ऐसे मस्तक (भाल) से युक्त थे।

विशेष (1)-यहाँ महाकवि बाणभट्ट ने अपनी अलंकृत भाषा-शैली के द्वारा जाबालि की तपस्या का वर्णन अत्यन्त भव्य एवं उदात्त रूप में किया है। कवि ने अपनी शैली में भाव-विषय को प्रकट किया है। इनके प्रत्येक वर्णन में एक अलौकिक चमत्कृति है। इनकी शैली में एक विशेष आकर्षण है, जो हृदय को अत्यन्त लुभाता है। इसलिए संस्कृत गद्य-साहित्य में इनका अद्वितीय स्थान है।

(2) इसमें **उत्प्रेक्षा, पूर्णोपमा** तथा **सङ्कर अलंकार** का प्रयोग हुआ है।

अधोमुखचन्द्र कलाकाराभ्यामवलम्बितबलिशिथिलाभ्यां भूलताभ्यामवष्टभ्यमानदृष्टिम्, आवरतमन्त्राभ्यासवि-वृताधरपुटतया निष्पतद्भिरतिशुचिभिः सत्प्ररोहैरिव स्वच्छेन्द्रियवृत्तिभरिव विद्यागुणैरिव करुणारसप्रवाहैरिव दशनमयूखै-धवलितपुरोभागम्, उद्वमदमलगङ्गाप्रवाहमिव जह्नुम, अनवरतसोमोद्गरसुगन्धिनिश्वासावकृष्टैमूर्त्तिमद्भिः शापाक्षरै रिव सदा मुखभागसंनिहितैः परिस्फुरद्भिरलिभिरविरहितम् अतिकृशतया निम्नतरगण्डगर्तम्, उन्नततरहनुघोणम् आकारालतारकम् अवशीर्य-माणविरलनयनपक्ष्ममालम्, उद्गतदीर्घरोमरुद्धश्रवणविवरम् आनाभिलम्बितकुर्चकलापमाननमादधानम्।

शब्दार्थ- अधोमुख= उल्टी। **चन्द्रकलाकाराभ्याम्**= चन्द्रकला के आकार वाली। **बलि**= खाल। **अवष्टभ्यमान्**= अवरुद्ध। **विवृत**= खुले हुए। **अधरपुटतया**= दोनों ओंठ। **निष्पतद्भिः**= निकलते हुए। **प्ररोहै**= अंकुरों। **दशन**= दाँतों की। **मयूखैः**= किरणों से। **धवलित**= श्वेत। **पुरोभागम्**= सामने का। **ललाटफलक**= मस्तकमण्डल। **अमल**= निर्मल। **उदवमत्**= बाहर निकले हुए। **सोम**= सोम रस। **निश्वासावकृष्टै**= निश्वास से आकृष्ट हुए। **अलिभि**= भ्रमरों से। **अविरहितम्**= रहित नहीं था। **गण्डगर्तम्**= कपोल का गड्ढा। **आकराल**= वक्र। **तारकम**= पुतलियाँ। **अवशीर्यमाण**= क्षीण होती हुई। **पक्ष्ममालम्**= बरौनियाँ। **रुद्ध**= रुके हुए। **कूर्चकलापम्**= दाढ़ी के बालों का समूह।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम् से उद्धृत किया गया है। यहाँ कवि ने वैशम्पायन द्वारा राजा शूद्रक से जाबालि के अप्रतिम व्यक्तित्व एवं तपस्या का प्रभावोत्पादक चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- जिनकी दृष्टि अधोमुखी चन्द्र-कलाओं जैसी लटकती झुर्रियों के कारण शिथिल भ्रू-रूपी लताओं से आबद्ध हो रही थी, निरन्तर मन्त्र जपने के कारण खुले दोनों ओठों से निकले, सत्य के अंकुरों

जैसे, निर्मल इन्द्रिय व्यापारों के समान विद्या के गुणों के तुल्य करुण रस के प्रवाहों की भाँति दाँतों की किरणों से सामने का भाग श्वेत था। जो मानो गंगा प्रवाह का उद्गमन करता हुआ जह्नु था, जो निरन्तर यज्ञ में पिये गये सोम की सुगन्ध के उद्गार से सुगन्धित निश्वास से आकृष्ट हुए सदा मुख भाग के समीप रहने वाले मँडराते हुए भौंरों से, मानो मूर्त्तिमान शापाक्षरों से रहित नहीं था, जो अत्यन्त दुबले होने के कारण अधिक गहरे गाल के गड्ढे वाले, अधिक उठी हुई ठोढी तथा नाक वाले कुछ तक या उठी हुई कनीनिका वाले गिरते हुए विरल नेत्रों की पलकों की पंक्ति वाले, उत्पन्न हुए लम्बे रोमों से घिरे हुए श्रवण-विवर वाले और नाभि तक लटकी हुई दाढ़ी के समूह वाले मुख को धारण किये हुए थे।

विशेष (1)-इस गद्यांश में कवि का आशय यह है कि महामुनि जाबालि की तपस्या अत्यन्त उच्चकोटि की है। प्रकृति के अन्य उपकरण तथा शक्तियाँ मुनि के प्रभाव तथा शाप के भय से स्वतः सभी अभावों को दूर करते रहते हैं। कवि की प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली में अत्यन्त सजीवता है।

(2) 'चन्द्रकलाया आकार इव आकार' में **आर्थी लुप्तोपमा अलंकार** है। **उत्प्रेक्षा** और **सङ्कर अलंकार** का भी प्रयोग है।

अतिचपलानाभिन्द्रयाश्वानामन्ते सममनरज्जूभिरिवा तताभिः कण्ठनाडीभिर्निरन्तरावनद्ध कन्धरम् समुन्नतविर-लास्थिपञ्जरम्, असावलम्बितधवलयज्ञोपवीतम् अनिलवशजनिततनुतरङ्ग भङ्गमुत्प्लवमानमृणालमिव मन्दाकिनी प्रवाहम् कलुषमङ्गमुद्वहन्तम्, अमलस्फटिकशकलघटित मक्षवलयमत्युज्ज्वस्थूलमुक्ताफलग्रथितं सरस्वतीहारमिव चलङ्गलिवि-वरगतमावर्तयन्तम्, अनवरत भ्रमिततारकाचक्रमपरिमिव ध्रुवं उन्नमता शिराजालकेन जरत्कल्पतरुमिव परिणतलतासंचयेन निरन्तरनिचितम् अमलेन चन्द्राशुभिरिवामृतफेनैरिव गुणसन्तानतन्तुभिरिव निर्मितेन मानससरोजक्षालनशुचिना दुकूल-वल्कलेनाद्वितीयेनेव जराजालकेन संछादितम् आसन्नवर्तिना मन्दाकिनी सलिलपूर्णेन त्रिदण्डोपविष्टेन स्फटिककमण्डलुना, स्थैर्येणाचलानां गम्भीर्येण सागराणां तेजसा सवितुः प्रशमेन सुषाररश्मेर्निर्मलतयाम्बरतलस्य संविभागमिव कुर्वाणम्।

शब्दार्थ- अतिचपलानाम्= अत्यधिक चंचल। **अश्व=** घोड़े। **रज्जूभिइव=** रस्सियों के समान। **आतताभिः=** विस्तृत। **अलनद्ध=** आवेष्टित। **कन्धरम्=** गरदन वाले। **समुन्नत=** उठी हुई। **अवलम्बित=** लटके हुए। **धवल=** शुभ्रवर्ण। **अनिलवशजनित=** हवा के झोंके से उत्पन्न। **उत्प्लवमान=** तैरते हुए। **प्रवाहम्=** धारा की भाँति। **उद्वहन्तम्=** धारण करके। **घटित=** बने हुए। **मुक्ताफल=** मोतियों से। **ग्रथितं=** गुथी हुई। **विवर=** छिद्र। **आवर्तयन्तम्=** घुमाते हुए। **तारका=** नक्षत्र। **अनवरत=** निरन्तर। **शिरा=** नसें। **उन्नमता=** ऊपर उठी हुई। **जरत्कल्पतरुइव=** पुराने वृक्ष की भाँति। **चन्द्राशुभिरिव=** मानो चन्द्रमा की किरणें। **गुणसन्तान=** गुणों का विस्तार। **शुचिना=** पवित्र। **दुकूलवल्केन=** छाल से निर्मित किये गये वस्त्र। **संछादितम्=** दबे हुए। **आसन्नवर्तिना=** पास में बैठे हुए। **सलिलपूर्णेन=** जल से परिपूर्ण। **विकच=** खिले हुए। **राशि=** समूह। **उपशोभमानम्=** सुसज्जित। **स्थैर्येण=** स्थिरता। **सवितुः=** सूर्य। **संविभागमिव=** विभाजन-सा।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। इसमें कवि ने महामुनि जाबालि के अप्रतिम व्यक्तित्व तथा तपस्या का प्रभावोत्पादक चित्रण किया है, जो अत्यन्त ही हृदयग्राही है।

हिन्दी अनुवाद- अत्यन्त चपल इन्द्रियरूपी अश्वों को अन्दर संयमित करने की रज्जु जैसी विस्तीर्ण कण्ठनाड़ियों से निरन्तर सम्बद्ध ग्रीवा वाले उठी हुई विरल अस्थियों के पञ्जर वाले कन्धे पर लटके यज्ञोपवीत वाले शरीर को इस प्रकार धारण कर रहा था मानो वायु के कारण उत्पन्न सूक्ष्म तरंग भंगों वाले और तैरते हुए नव मृणाल वाले गंगा के प्रवाह को वहन कर रहा हो, जो चलती हुई उँगलियों के बीच में स्थित स्वच्छ स्फटिक के टुकड़े से बनायी अक्ष माला को, मानो अत्युज्वल मोटे-मोटे मोतियों से गूँथे गये सरस्वती के हार को घुमा रहा था जो मानो निरन्तर घूमते हुए तारों के समूह से युक्त दूसरा ध्रुव था, जो उठी हुई शिराओं के समूह से निरन्तर व्याप्त था, मानो पकी हुई लता-समूह से निरन्तर व्याप्त पुराना कल्पवृक्ष हो जो मानो चन्द्रमा की किरणों सेअथवा मानो अमृत के फेन सेअथवा मानो दया आदि गुण परम्परा-रूपी तन्तुओं से निर्मित, मानसरोवर के जल के समान जल में धोये जाने से स्वच्छ, रेशमी वस्त्र के समान वल्कल से मानो अद्वितीय जरा-समूह से ढके हुए थे, समीप में स्थित गंगा के जल से भरे हुए, तिपाई पर रखे हुए स्फटिक निर्मित कमण्डलु से जो इस प्रकार शोभित हो रहे थे जैसे खिला हुआ कमल-समूह राजहंस से शोभित होता है जो मानो स्थिरता में पर्वतों का, गम्भीरता में सागरों का, तेज में सूर्य का, शान्ति में चन्द्रमा का (और) निर्मलता में आकाश तल का हिस्सा बँटा रहा था।

विशेष (1)-यहाँ कवि का भाव यह है कि महामुनि जाबालि की तपस्या उच्च कोटि की है। उनके प्रभाव से आश्रम के अन्य प्राणी भी परस्पर विरोध-भाव छोड़कर मित्रता का व्यवहार करते हैं।

(2) यहाँ **उपमा, उत्प्रेक्षा** तथा **सङ्करअलंकार** है, किन्तु **उपमा अलंकार** का विशेष प्रयोग किया गया है।

वैनतेयमिव स्वप्रभावोपात्तद्विजाधिपत्यम्, कमलासनमिवाश्रमरुम्, जरच्चन्दनतरुमिव भुजङ्गनिर्मोकधवल-जटाकुलम् प्रशस्तवारणपतिमिव प्रलम्बकर्णबालम् बृहस्पतिमिवाजन्मसंवर्धितकचम्, दिवसमिवोद्यदर्कबिम्बभास्वरमुखम् शरत्कालमिव क्षीणवर्षम् शान्तनुमिव प्रियसत्यव्रतम् अम्बिकाकरतलमिव रुद्राक्षग्रहणनिपुणम्, शिशिरसमयसूर्यमिव कृतो-त्तरासङ्गम्, वडवानलमिव संततपयोभक्षम् शून्यनगरमिव दीनानाथविपन्नशरणम् पशुपतिमिव भस्मपाण्डुरोमाश्लिष्टशरीरं भगवन्तं जाबालिमपश्यम्।

शब्दार्थ-वैनतेय= गरुड़। **द्विज=** पक्षी, ब्राह्मण। **उपात्त=** प्राप्त। **कमलासनमिव=** ब्रह्मा की भाँति। **जरच्चन्दनतरु=** पुराना चन्दन का वृक्ष। **निर्मोक=** केंचुली। **वारण=** हाथी। **प्रलम्बकर्णवालम्=** कान तक लम्बे

बाल। **कचम्=** केश। **उद्यदर्क=** उदय होने वाले। **बिम्बभास्वर=** सूर्य की भाँति। **शरत्कालमिव=** शरद ऋतु की भाँति। **क्षीणवर्षम्=** वर्षा की कमी, अधिक उम्र वाले। **अम्बिका=** पार्वती। **निपुणम्=** कुशल। **कृतोत्तराससङ्गम्=** उत्तरायण सूर्य के समान, उत्तरीय का संग किये हो। **अनलमिव=** अग्नि की भाँति। **सततपयोभक्षम्=** हमेशा दूध या जल का आहार करने वाले। **पशुपतिमिव=** शंकर की भाँति। **रोमाश्लिष्टशरीरम्=** रोओं से युक्त शरीर। **जाबालिमपश्यम्=** जाबालि ऋषि को देखा।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कशामुखम्' से लिया गया है। यहाँ कवि ने जो वर्णन किया है वह वैशम्पायन ने राजा शूद्रक से महामुनि जाबालि के अप्रतिम व्यक्तित्व एवं तपस्या का प्रभावोत्पादक चित्रण करता है।

हिन्दी अनुवाद- जिसने विनता पुत्र (गरुड़) की भाँति अपने प्रभाव से द्विजों, ब्राह्मणों, पक्षियों पर आधिपत्य प्राप्त कर लिया था। चारों आश्रमों के गुरु प्रवर्तक ब्रह्मा के समान जोअपने आश्रम के गुरु थे; धवल जटाओं-सी सर्पों की केंचुली से व्याप्त पुराने चन्दन वृक्ष के समान जो सर्पों की केंचुल के समान धवल जटाओं से व्याप्त थे, लटकते हुए कान और पूँछ से युक्त श्रेष्ठ हाथियों के सरदार की भाँति जिसके कानों के बाल बहुत लम्बे थे, जन्म से ही अपने पुत्र कच का संवर्धन करने वाले बृहस्पति के समान जिसने जन्म से ही अपने कचों (बालों) का संवर्धन किया था,उदय होते हुए सूर्य बिम्ब से चमकीले मुख वाले, (प्रभात वाले) दिन के समान जिसका मुख उदय होते हुए सूर्य-बिम्ब के समान दीप्त था, क्षीण वर्षा वाले शरद-काल के समान जो क्षीण वर्षों (आयु) वाला था, सत्यव्रत भीष्म को प्यार करने वाले (राजा) शांतनु की भाँति जिसको सत्य का व्रत प्रिय था, शिवजी की गोल आँख (अर्थात् तृतीय नेत्र) को ग्रहण करने (अर्थात् ढकने) में निपुण पार्वती के करतल की भाँति रुद्राक्ष की माला को ग्रहण करने में निपुण था, उत्तर दिशा का संसर्ग करने वाले शीतकालीन सूर्य की भाँति जिसने उत्तरीय वस्त्र पहना था वडवाग्नि के समान जो निरन्तर पय दूध, समुद्र का जल का भोजन करते थे, शोभाहीन स्वामीरहित और नष्ट हुए घरों वाले शून्य नगर की भाँति जो दीन, अनाथ और विपन्न व्यक्तियों के आश्रय थेऔर भस्म से श्वेत तथा उमा से अलिंगित शरीर वाले शिव की भाँति जिसका शरीर भस्म से श्वेत और रोमों से आश्लिष्ट युक्त था।

अवलोक्य चाहमचिन्तयम् अहो प्रभावस्तपसाम्। इयमस्य शान्तापि मूर्तिरुत्तप्तकन-कावदाता परिस्फुरन्ती सौदामिनीव चक्षुषः प्रतिहन्ति तेजांसि, सततमुदासीनापि महाप्रभावतया भयमिवोपजनयति प्रथमोपगतस्य शुष्कनलकाशकुसमनिपतितानलचटुलवृत्ति नित्यमसहिष्णुतपस्विनां तनुतपसामपि तेजः प्रकृत्या दुःसहं भवति, किमुत सकलभुवनवन्दितचरणानामनवरततपः क्षपितमलानां करतलामलवदखिलम् जगदालोययतां दिव्येन चक्षुषा भगवतामेवं- विधानामघ क्षयकारिणाम्।

शब्दार्थ- अहो प्रभावस्तपसाम= तपस्या का कैसा अद्भुत प्रभाव है। **उत्तप्त=** तपाये हुए। **कनक=** स्वर्ण। **अवदात=** कान्ति। **परिस्फुरन्ती=** चमकती हुई। **सौदामिनीव=** बिजली की तरह। **चक्षुषः प्रतिहन्ति=**

आँखों की ज्योति को नष्ट करती हुई। **सततमुदासीनापि**= सदा उदास होकर भी। **महाप्रभावतया**= अत्यन्त प्रभावशाली होने के काल। **भयमिवोपजनयति**= मन में भय सा पैदा करती है। **नल**= नरकुल (तृण विशेष)। **कुसुमनिपतितानलचटुलवृत्ति**= कांस के फूलों पर पड़ी हुई अग्नि के समान चंचलवृत्ति वाला। **प्रतनु**= थोडा। **प्रकृत्या**= स्वभाव से। **आमलकफलवत्**= आँवले के फल के समान। **जगत्**= संसार को। **एवंविधानाम्**= इस प्रकार के। **अघ**= पाप। **क्षयकारिणाम्**= नाश करने वालों का।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा प्रणीत 'कादम्बरी कथामुखम्' से अवतरित है। इसमें कवि ने वैशम्पायन द्वारा राजा शूद्रव से महामुनि जाबालि के अप्रतिम व्यक्तित्व एवं तपस्या का प्रभावोत्पादक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- उन्हें देखकर मैं सोचने लगा- ओहो, तपस्या का प्रभाव कैसा अद्भुत है ? इन महर्षि की यह अत्यधिक तपे हुए स्वर्ण के समान उज्ज्वल आकृति शान्त होती हुई भी दमकती हुई बिजली की तरह आँखों की ज्योति को नष्ट कर रही है। सदा उदासीन होकर भी अत्यन्त प्रभावशाली होने के कारण पहली बार आये व्यक्ति के मन में भय-सा पैदा करती है। जब थोड़े तप वाले तपस्वियों का भी तेज सूखे हुए नरकुल (तृण विशेष) तथा कांस के फूलों पर पड़ी हुई अग्नि के समान चंचल वृत्ति वाला तथा स्वभाव से ही सर्वथा असहनशील होता है तो फिर इस प्रकार के पापों का क्षय करने वाले भगवान जाबालि जैसे महान् तपस्वियों का क्या कहना ? सारे धरातल से जिनके चरण पूजित हों। निरन्तर तप करके जिन्होंने पापों को नष्ट कर दिया हो तथा दिव्य दृष्टि से जो सम्पूर्ण जगत् को हथेली पर रखे हुए आवले की तरह देख रहे हों।

विशेष- महामुनि जाबालि की तपस्या उच्च कोटि की है। उनके प्रभाव से आश्रम के अन्य प्राणी भी परस्पर विरोध को छोड़कर मित्रता का व्यवहार करते हैं। कहीं भी पापाचार नहीं है। प्रकृति के अन्य उपकरण तथा शक्तियाँ मुनि के प्रभाव तथा शाप के भय से स्वतः सभी अभावों को दूर करते रहते हैं। कवि ने प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली में अत्यन्त सजीव एवं भव्य वर्णन किया है।

पुण्यानि हि नामग्रहणान्यपि महामुनिनाम्, किं पुनर्दर्शनानि धन्यमिदमाश्रमपदमयमधिपतिर्यत्र अथवा भुवन-तलमिव धन्यमखिलमनेनाधिष्ठितमवनितलकमलयोनिना। पुष्पभाजः खल्वमी मुनयो यदहर्निशमेनमपरमिव नलिनासन-मपगतान्यव्यापारा मुखावलोकननिश्चलदृष्ट्यः पुण्याः कथाः शृण्वन्तः समुपासते। सरस्वत्यपि धान्या यास्य तु सतत-मतिप्रसन्ने करुणाजल निस्यन्दिन्यगाधगाम्भीर्ये रुचिरद्विजपरिवारा मुखकमलमसम्पर्कसुखमनुभवन्ती निवसति राजहंसीव मानसे। चतुर्मुखे कमलवासिभिश्चतुर्वेदैः सुचिरादिव द्वितीयमिदामामासादितं स्थानम्। एनमासाद्यशरत्कालमिव कलिकालजलधरसमयकलुषिताः प्रसादमुपगताः पुनरपि जगति सरित इव सर्वविद्याः।

शब्दार्थ- नामग्रहणानि= नाम का पुकारना। **आश्रमपदम**= आश्रमस्थल। **अधिपति**= स्वामी। **भुवनतलम्**= पृथ्वी तल। **अखिलं**= समस्त। **कमलयोनिना**= ब्रह्मा। **पुण्यभाजः**= पुण्यशाली। **एनम्**= इनको। **अपरमिव**= दूसरे। **नलिनासनम्**= ब्रह्मा। **अपगत**= छोड़ते हुए। **अवलोकन**= देखने। **शृण्वन्तः**= सुनते हुए। **सततम्**= निरन्तर। **अतिप्रसन्ने**= अत्यन्त रमणीय। **निस्यन्दिनी**= प्रवाहित करने वाले। **द्विज**=ब्राह्मण। **अनुभवन्ती**= अनुभव करती हुई। **मानसे**= हृदय में। **निवसति**= रहती है। **चतुर्मुख**= ब्रह्मा का मुख।

सुचिरादिव= बहुत समय के बाद। **आसाद्य**= प्राप्त करके। **कलुषिताः**= कलिन। **प्रसादं**= स्वच्छता। **सरित इव**= नदी की भाँति। **पुनरपि**= फिर से। **सर्वविद्याः**= सभी विद्याएँ।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। कवि ने यहाँ महामुनि जाबालि के अप्रतिम व्यक्तित्व एवं तपस्या का प्रभावोत्पादक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- मुनियों का नाम लेना ही बहुत बड़ा पुण्य है, फिर दर्शन की तो बात ही क्या है। यह आश्रम भी धन्य है जिसके ये स्वामी हैं अथवा यह पृथ्वीतल ही धन्य है, जिस पर इस लोक के ब्रह्मा के समान ऐसे महर्षि स्थित हैं। ये मुनि लोग भी कितने पुण्यवान् हैं जो अपने सभी कार्यों को छोड़कर इन महर्षि के मुँह को अपलक आँखों से देखते हुए रात-दिन कथाएँ सुना करते हैं और दूसरे ब्रह्मा के समान इनकी उपासना में लगे रहते हैं। वह सरस्वती भी धन्य हैं जो निर्मल जल से भरे अथाह मानस सरोवर में पक्षियों के साथ कमलों के सुख का अनुभव करने वाली राजहंसिनी के समान इन महर्षि के मुख के सम्पर्क का सुख प्राप्त करती हुई उनके अत्यन्त प्रसन्न कारुणिक एवं गम्भीर हृदय में निवास करती हैं। ब्रह्मा के मुख-कमलों में निवास करने वाले चारों वेदों को बहुत दिनों के पश्चात् यह दूसरा स्थान (जाबालि का मुख) प्राप्त हुआ है। जैसे वर्षा-काल में कीचड़ से भरी हुई नदियाँ शरद् ऋतु पाकर फिर निर्मल हो जाती हैं, उसी प्रकार कलिकाल के प्रभाव से दूषित सारी विद्याएँ इन महर्षि जाबालि को पाकर फिर निर्दोष हो गयी हैं।

विशेष (1)-इस गद्यांश में कवि ने अपनी अलंकृत भाषा-शैली द्वारा जाबालि के चरित्रादि का भव्य एवं उदात्त वर्णन प्रस्तुत किया है। अर्थात् अपनी भाषा-शैली के द्वारा भाव-विषय को प्रकट किया है।

(2) **रूपक, उत्प्रेक्षा, पूर्णोपमा अलंकार** का प्रयोग हुआ है।

(3) **'पुण्यानि हि किं पुनर्दर्शनानि'**सूक्ति का सफल प्रयोग है।

नियतमिह सर्वात्मना कृतावस्थितिना भगवता परिभूतकलिकालविलसितेन धर्म्मेण न स्मर्यते कृतयुगस्य। धरणितलमनेनाधिष्ठिमालोक्य न वहति नूनमिदानी सप्तर्षिमण्डल निवासाभिमानमम्बरतलम्। अहो! महासत्त्वेयम् जरा यास्य प्रलय रविरश्मिनिकरदुर्निरीक्ष्ये रजनिकरकिरणपाण्डुशिरोरुहे जटाभारे फेनपुञ्जधवला गङ्गेव पशुपतेः क्षीराहुतिरिव शिखाकलापे विभावसोर्निपतन्ती न भीता। बहुलाज्यधूमपटलमलिनीकृताश्रमस्य भगवतः प्रभावाद्भीतमिव रविकिरण-जालमपि दूरतः परिहरति तपोवनम्। एते च पवनलोल पुञ्जीकृत शिखाकलापा रुचिताञ्जलयः इवात्र मन्त्रपूतानि हवींषि गृह्णन्त्येतत्प्रीत्याशुशुक्षणयः। तरलितदुकूलवल्कलोऽयं चाश्रमलताकुसुमसुरभिपरिमलो मन्दमन्दसंचारी सशङ्क इवास्य समीपमुपसर्पति गन्धवाहः।

शब्दार्थ-नियतम्= निश्चित। **कृतावास्थितिना=** अवस्थिति (मर्यादा) बनाए हुए। **परिभूत=** तिरस्कृत। **विलसितेन=** क्रीड़ा से। **धर्मेण न स्मर्यते कृतयुगस्य=** धर्म के द्वारा सत्युग का स्मरण नहीं किया जाता है। **महासत्त्वेयं=** यह शक्तिशाली। **जरा=** वृद्धावस्था। **प्रलयरविरश्मि=** प्रलयकालीन सूर्य की किरण। **दुर्निरीक्ष्य=** देखने में असहनीय। **शिरोरुहे=** जटाभार। **फेनपुञ्जधवला गंगेव=** फेन समूह के समान उज्ज्वल गङ्गा के समान। **क्षीराहुतिरिव=** दूध की आहुति के समान। **विभावसोः=** सूर्य की। **निपतन्ती=** गिरती हुई। **बहुल=** अधिक। **आज्य=** घी। **मलिनीकृताश्रमस्य भगवतः=** आश्रम को मलिन बना देने वाले भगवान। **प्रभावाद=**

प्रभाव से। **भीतमिव**= डरा हुआ सा। **रविकिरणजालमपि**= सूर्य की किरणों का समूह भी। **दूरतः**= दूर से। **परिहरति**= छोड़ देता है। **तपोवनम्**= तपोवन को। **मन्त्रपूतानि**= मन्त्रों से पवित्र। **हवींषि**= हवि। **गृहन्ति**= ग्रहण करती है। **तरलित**= चंचल। **दुकूलवल्कलोऽयं**= रेशमी वस्त्र की भाँति। **सुरभि**= सुगन्ध। **सञ्चारी**= चलता हुआ। **सशङ्क इव**= भयभीत से। **समीपमुपसम्पति=** पास में जाता है।

प्रसंग- महाकवि बाणभट्ट द्वारा 'कादम्बरी कथामुखम्' से अवतरित इस प्रसंग में कवि ने वैशम्पायन द्वारा राजा शूद्रक से महामुनि जाबालि के अप्रतिम व्यक्तित्व एवं तपस्या का प्रभावोत्पादक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- निश्चय ही कलियुग की विशाल चेष्टाओं को दबाकर इस महात्मा में पूरी तरह से स्थान बनाये हुए भगवान धर्म को सत्य युग का स्मरण नहीं होता होगा। इन्हें धरातल पर आया देखकर निश्चय ही इस समय आकाश सप्तऋषि मण्डल के निवास के समान अभिमान नहीं रखता होगा। अहो,यह वृद्धावस्था भी बड़े साहस वाली है, जो इस महात्मा के प्रलयकालीन सूर्य के किरण-समूह के साथ कठिनाई से देखे जाने योग्य तथा चन्द्रमा की किरणों के समान श्वेत केशों वाले जटाभार पर, शिव की जटाओं पर झागों के समूह से उज्ज्वल गंगा के समान तथा अग्नि के ज्वाल समूह पर दूध की आहुति के समान गिरती हुई डरी नहीं। अत्यधिक घृत की (आहुति की) धूमराशि से आश्रम को मलिन बना देने पर भगवान जाबालि के प्रभाव से डरा हुआ-सा सूर्य-किरणों का समूह तपोवन को दूर से ही छोड़ देता है और ये वायु के कारण चंचल तथा जुड़ी हुई लपटों वाली अग्नियाँ मानो हाथ जोड़कर यहाँ पर इनके स्नेह के कारण मन्त्रों से पवित्र हवि ग्रहण करती हैं। रेशमी वस्त्रों को उड़ाता, आश्रम की बेलियों के फूलों की सुगन्ध से सौरभमय, मन्द-मन्द संचरण करता यह समीरण जैसे सशंक हो इनके पास पहुँचता है।

विशेष (1)-महर्षि जाबालि और उनके आश्रम का चकित कर देने वाला वर्णन है।

(2) बाणभट्ट ने श्लेष के आधार पर **परिसंख्या अलंकार** की झड़ी लगा दी है।

प्रायो महाभूतानामपि दुरभिभवानि भवन्ति तेजांसि। सर्वतेजस्विनामयम् चाग्रणीः। द्विसूर्यमिवाभाति जग-दनेनाधिष्ठितं महात्मना। निष्कम्पेव क्षितिरेतदवष्टम्भात्। एष प्रवाहः करुणारसस्य, संतरणसेतुः संसारसिन्धोः, आधारः क्षमाम्भसाम्, परशुस्तृणालतागहनस्य, सागरः सन्तोषामृतरसस्य, उपदेष्टा सिद्धिमार्गस्य, अस्तगिरिरसद्ग्रहस्य, मूलमु-पशमतरोः, नाभिः प्रज्ञाचक्रस्य, स्थितिवंशो धर्मध्वजस्य, तीर्थं सर्वविद्यावताराणाम्, वडवानलो लोभार्णवस्य निकषोपलः शास्त्ररत्नानाम् दावानलो रागपल्लवस्य, महामन्त्रः कोधभुजङ्गस्य, दिवसकरो मोहान्धकारस्य, अर्गलाबन्धो नरकद्वाराणाम्, कुलभवनमाचारणाम्, आयतनं मङ्गलानाम्, अभूमिर्मदविकाराणाम्, दर्शकः सतपथानाम्, उत्पत्तिः साधुतायाः नेमि-रुत्साहचक्रस्य, आश्रयः सत्त्वस्य, प्रतिपक्षः कलिकालस्य, कोशस्तपसः, सखा सत्यस्य, क्षेत्रमार्जवस्य, प्रभवः पुण्य-संचयस्य, अदत्तावकाशो मत्सरस्य, अरतिर्विपत्तेः, अस्थानम् परिभूतेः, अननुकूलोऽभिमानस्य, असंमतो दैन्यस्य, अनायत्तो रोषस्य, अनभिमुखः सुखानाम्।

शब्दार्थ- प्रायो महाभूतानामपि= प्रायः पृथ्वी आदि महाभूतों के। **दुरभिभवानि**= असह्य। **सर्वतेजस्विनामयं**= सब तेजस्वियों के ये। **द्विसूर्यमिवाभाति**= दो सूर्यो वाली समान सुशोभित है। **जगदनेनाधिष्ठितम्**= संसार इनके द्वारा अधिष्ठित है। **अवष्टम्भात्**= आश्रय से। **एष प्रवाहः**= यह प्रवाह। **करुणारसस्य**= करुणा रस का। **सन्तरण**= पार उतारने वाला। **संसारसिन्धोः**= संसार सागर। **क्षमाम्भसाम्**= क्षमारूपी जलों के। **उपदेष्टा**= उपदेशक। **मूलमुपशमतरोः**= शान्तिरूपी वृक्ष की। **प्रज्ञाचक्रस्य**= बुद्धिरूपी चक्र को। **स्थितिवंशो धर्मध्वजस्य**= धर्मरूपी ध्वजा के लिए बाँस की स्थिति है। **सर्वविद्यावताराणाम्**= सब विद्याओं के अवतारों का। **लोभार्णवस्य**= लोभरूपी समुद्र के। **शास्त्ररत्नानाम्**= शास्त्ररूपी रत्नों के। **रागपल्लवस्य**= रागरूपी पत्ते से। **क्रोधभुजङ्गम्**= क्रोधी रूपी सर्प। **दिवसकरो मोहान्धकारस्य=** मोहरूपी अन्धकार के लिए सूर्य। **अर्गलाबन्धो नरकद्वाराणाम्**= नरक के द्वार के लिए अर्गला। **आयतनं**= घर। **अभूमिः**= स्थान का अभाव। **नेमिरुत्साहचक्रस्य**= उत्साहरूपी पहिये की धुरी। **कोशः**= खजाना। **आर्जवस्य**= मृदुता, सरलता। **प्रभव:=** उत्पत्ति। **पुण्यसंचयस्य**= पुष्पराखि के। **परिभूतेः**= पराजय के। **अननुकूलोऽभिमानस्य**= घमंड के प्रतिकूल। **अनभिमुखः सुखानाम्**= सुखों की ओर मुँह न करने वाले।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा रचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से अवतरित है। इसमें वैशम्पायन ने राजा शूद्रक से महामुनि जाबालि के अप्रतिम व्यक्तित्व एवं तपस्या का प्रभावोत्पातक वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- महान् प्राणियों के तेज प्रायः दुःख से पराजित करने योग्य होते हैं और ये सब तेजस्वियों में अग्रगण्य हैं। इन महात्मा से अधिष्ठित यह जगत् जैसे दो सूर्यो से समन्वित प्रतीत होता है। इनके आश्रय के कारण जैसे धरती निश्चल रहती है। ये करुण रस के प्रवाह हैं, संसार-सागर को पार करने के लिए सेतु हैं, क्षमारूपी जलों के आधार हैं, तृष्णारूपी लतावन को काटने के लिए परशु हैं, सन्तोषरूपी अमृतरस के समुद्र हैं, सिद्धिमार्ग का उपदेश देने वाले हैं, दुष्टग्रह के अस्ताचल हैं, शान्तिरूपी वृक्ष की जड़ हैं, ज्ञान-चक्र के मध्य स्थल हैं, धर्म-ध्वजा को टाँगने के वंश-दण्ड हैं। सब विद्याओं में प्रवेश के लिए घाट हैं, लोभ-समुद्र के लिए वडवाग्नि हैं, शास्त्ररूपी रत्नों की कसौटी हैं, विषयाभिलाषारूपी पत्तों के लिए अग्नि हैं। क्रोधरूपी सर्प के लिए महामंत्र हैं, घोर अंधकार के लिए सूर्य हैं, नरक के दरवाजों को बन्द करने की सिटकनी हैं, सदाचारों के आश्रय ग्रह हैं, मंगलों के भवन हैं, अभिमानादि विकारों के अस्थान हैं सन्मार्गों को दिखाने वाले हैं, सज्जनता के उत्पत्ति-स्थान हैं, उत्साहरूपी पहिये की धुरी हैं, सत्त्वगुण के आश्रय हैं, कलियुग के विरोध हैं, तप के कोश हैं, सत्य के सखा हैं, सरलता के क्षेत्र हैं, पुण्यपुञ्ज के कारण हैं, विद्वेष को स्थान न देने वाले हैं, विपत्ति के शत्रु हैं, अवज्ञा की अभूमि हैं, अभिमान के प्रतिकूल हैं, दीनता के अमाने हैं, रोष के अधीन नहीं हैं और सुख के अनिच्छुक हैं।

विशेष- महामुनि जाबालि की तपस्या उच्चकोटि की है। उनके प्रभाव से आश्रम के अन्य प्राणी भी परस्पर विरोध को छोड़कर मित्रता का व्यवहार करते हैं। कहीं भी पापाचार नहीं है। प्रकृति के अन्य

उपकरण तथा शक्तियाँ मुनि के प्रभाव तथा शाप के भय से स्वतः सभी अभावों को दूर करते रहते हैं। कवि ने प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली में अत्यन्त सजीव एवं भव्य चित्रण किया है।

अस्य भगवतः प्रभावादेवोपशान्तवैरमपगतमत्सरं तपोवनम्। अहो! प्रभावो महात्मनाम्। अत्र हि शाश्व-तिकमपहाय विरोधमुपशान्तात्मानस्तिर्यञ्चोऽपि तपोवनवसतिसुखमनुभवन्ति। तथाहि एष विकचोत्पलवनरचना-नुकारिणमुत्यतच्चारुचन्द्रकशतं हरिणलोचनद्युतिशबलमभिनवशाद्वलमिव विशति शिखिनः कलापमातपाहतो निःशङ्कमहिः। अयमुत्सृज्य मातरमजातकेसरैः केसरिशिशुभिः सहोपजातपरिचयः क्षरत्क्षीरकरम् पिबति कुरङ्गशावकः सिंहीस्तनम्। एष मृणालकलापाशङ्किभिः शशिकरधवलं सटाभारमामीलितलोचनो बहु मन्यते द्विरदकलभैरा-कृष्यमाणं मृगपतिः।

शब्दार्थ- भगवतः= भगवान के। **प्रभावात्=** प्रभाव से। **उपशान्त=** समाप्त। **अपगत=** दूर। **मत्सर=** द्वेष। **शाश्वतिकम्=** जन्मजात, सर्वदा से। **अपहाय=** छोड़कर। **उपशान्त=** शान्तियुक्त। **तिर्यञ्चोऽपि=** पशु-पक्षी भी। **तपोवनवसतिसुखमनुभवन्ति=** तपोवन में रहते हुए सुख का अनुभव करते हैं। **विकचोत्पल=** खिले हुए कमल। **उत्पतत्=** उठते हुए। **द्युति=** चमक। **शाद्वलम्=** हरी घास को। **अहिः=** सर्प। **आहतोः=** खिन्न। **अजात=** उत्पन्न नहीं हुए हैं। **क्षरत्=** बहते हुए। **केशरि=** सिंह। **कुरंग=** हिरन। **आशांकिभिः=** शंका करते हुए। **आमीलीत=** बन्द किये हुए। आँखें मूंदे हुए बढ़े। **द्विरदकलभैराकृष्यमाणंमृगपतिः=** गज-शिशुओं द्वारा खींचे जाने वाले सुख का अनुभव कर रहा है।

प्रसंग- यह प्रसंग महाकवि बाणभट्ट रचित 'कादम्बरी' से उद्धृत है। वैशम्पायन नामक शुक राजा शूद्रक से शबर-सेनापति का वर्णन करके महर्षि जाबालि के आश्रम का वर्णन है।

हिन्दी अनुवाद- इन भगवान (जाबालि) की कृपा से ही यह तपोवन ऐसा है जिसमें वैर शान्त हो गया है और ईर्ष्या दूर हो गयी है। अहो, महात्माओं का प्रभाव कितना अद्भुत हैं, क्योंकि यहाँ पर पशु भी अपना परम्परागत विरोध छोड़कर तथा शान्त आत्मा वाले होकर तपोवन में रहने का सुख अनुभव करते हैं। जैसे कि यह धूप से व्याकुल सर्प खिले हुए कमलवन की रचना का अनुकरण करने वाले सैकड़ों उठते हुए सुन्दर चन्द्रों वाले एवं हिरन के नेत्रों की कान्ति के समान चितकबरे मोरों के समूह में मानो ताजी हरी घास में ही निःशङ्क होकर प्रवेश कर रहा है। यह हिरन का बच्चा, जिसका अनुत्पन्न केसर वाले सिंह के बच्चों से परिचय उत्पन्न हो गया है, अपनी माता को छोड़कर दूध की धारा का स्रवण करते हुए सिंही के स्तनों का पान कर रहा है। यह सिंह चन्द्र-किरणों के समान धवल केसर भार को मृणाल-समूह की शंका करने वाले हाथी के बच्चों द्वारा खींचे जाते हुए देखकर नेत्र मूँदे हुए आदर कर रहा है. बहुत समझ रहा है।

विशेष (1)-आलंकारिक एवं चमत्कारपूर्ण भाषा-शैली में महाकवि बाण ने प्रस्तुत विषय का मनोमुग्धकारी वर्णन किया है। भाषा में सर्वत्र प्रवाह, ओज एवं सरसता है। शान्त रस की सुन्दर अभिव्यंजना है। वस्तुतः मुनि जाबालि के आश्रम का वर्णन प्राचीन काल की गुरुकुल प्रणाली तथा मुनियों की आध्यात्मिक प्रेरणा का भव्य परिचय कराता है।

इदमिह कपिकुलमपगतचापलमुपनयति मुनिकुमारकेभ्यः स्नातेभ्यः फलानि। एते च न निवारयन्ति मदान्धा अपि गण्डस्थलीभाञ्जि मदजलपाननिश्चलानि मधुकरकुलानि संजातदयाः कर्णतालैः करिणः। किं

बहुना तापसाग्निहो-त्रधूमलेखाभिरुत्सर्पन्तीभिरनिशमुपपादितकृष्णाजिनोत्तरासङ्गशोभाः फलमूलभृतो वल्कलिनो निश्चेतनास्तरवोऽपि सनियमा इव लक्ष्यन्तेऽस्य भगवतः किं पुनः सचेतनाः प्राणिनः।

शब्दार्थ- कपिकुलम्= बन्दरों का गण। **अपगत**= त्यागकर। **उपनयति**= लाता है। **स्नातेभ्यः**= स्नान करके। फलानि। **गण्डस्थलीभाञ्जि**= गण्डस्थल पर विराजमान। **मदजलपान**= मदजल का पान करने से। **मधुकरकुलानि**= भ्रमर समुदाय। **कर्णतालैः**= कानरूपी पंखों से। **धूमलेखाभिः**=धुएँ की रेखाएँ। **उत्त्सर्पन्तीभिः**= उठती हुई। **उत्तर**= वस्त्र। **आसङ्ग**= धारण किये हुए। **वल्कलिनः**= वल्कल वस्त्र, छाल के वस्त्र। **सचेतना**= सजीव। **सनियमा इव**= व्रत करते हुए। **लक्ष्यन्ते**= दिखाई दे रहे थे।

प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण महाकवि बाण द्वारा रचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत है। इसमें वैशम्पायन राजा शूद्रक से जाबालि के चरित्रादि का विवेचन करता है। कवि ने यहाँ इसी का चित्रण किया है, भाषा सजीव एवं शिक्षाप्रद है।

हिन्दी अनुवाद- यह वानर-समूह जिसमें से चपलता जातो रही है, स्नान किए हुए मुनि- कुमारों के लिए फल ला रहा है और ये हाथी मदमत्त (होते हुए) भी गण्डस्थल पर बैठे हुए (और) मदजल को पीने के कारण निश्चल भ्रमर समूह को दया-युक्त होकर अपने कानरूपी तालों से हटाते नहीं है। अधिक कहने से क्या (लाभ), इन भगवान (जाबालि) के निश्चेतन वृक्ष भी फल-मूलभूत (फल-मूल धारण करने वाले, फल-मूल पर जीविका चलाने वाले), वल्कल- युक्त (छाल से युक्त, वल्कल वस्त्र पहने हुए) (और) तपस्वियों के अग्निहोत्र की उठती हुई धुएँ की रेखाओं से निरन्तर कृष्ण मृगचर्म को पहनने की शोभा का सम्पादन करने वाले हैं, (अतः) व्रतधारी से प्रतीत होते हैं। फिर सचेतन प्राणियों की (तो बात ही) क्या?

विशेष (1)- महाकवि बाणभट्ट ने प्रस्तुत वर्णन में अपनी अलंकृत भाषा-शैली के द्वारा जाबालि के चरित्रादि का भव्य एवं उदात्त चित्रण किया है। इनकी शैली में भावविषय को प्रकट करने की अद्वितीय क्षमता है। विभिन्न उपमानों के द्वारा अत्यन्त ही मनोमुग्धकारी चित्रा इन्होंने उपस्थित कर दिया है।

(2) 'कृष्णाजिनोत्तरासङ्गशोभाः' में **लुप्तोपमा अलंकार** है तथा **उत्प्रेक्षा** एवं **संकर अलंकार** का भी प्रयोग हुआ है।

इत्येवं चिन्तयन्तमेव मां तस्यामेवाशोकतरोरधश्छायायामेकदेशे स्थापयित्त्वा हारीतः पादावुपगृह्य कृताभिवादनः पितुरनतिसमीपवर्तिनि कुशासने समुपाविशत्। आलोक्य तु मा सर्व एव मुनयः 'कुतोऽयमासादितः शुकशिशुः' इति तमासीनमपृच्छन्। असौ तु तान ब्रवीत्-अय माया स्नातुमितो गतेन कमलिनीसरस्तीरतरुनीडपतितः शुकशिशुरातपजनि-तक्लान्तिरुत्तप्तपांसुपटलमध्यगतोद्र निपतनविह्वलतनुरल्पावशेषायुरासादि तस्तपस्विदुरारोहतया च तस्य वनस्पतेनं शक्यते स्वनीडमारोपयितुमिति जातदयेनानीतः।

शब्दार्थ- चिन्तयन्तमेव= सोचते हुए। **अशोकतरोः**= अशोक का वृक्ष। **अधः**= नीचे। **एकदेशे**= एक स्थान पर। **पादौ**= चरणों के। **उपगृह्य**= पकड़कर। **अभिवादनः**= प्रणाम। **अनति**= अत्यधिक समीप न होना।

समुपाविशत्= पास में बैठा। **आलोक्य**= देखकर। **तु**= तो। **सर्व**= समस्त। **कुतो**= कहाँ से। **आसादित**= प्राप्त किया है। **तम्**= उनको। **पतित=** गिरा हुआ। **आतपजतिन=** ग्रीष्म (घास) से उत्पन्न। **विह्वल**= व्याकुल।**आसादितः**= प्राप्त किया। **तपस्विदुरारोहतया**= तपस्वियों के लिए भी चढ़ने में कठिन। **न शक्यते**= असम्भव। **जातदये**= उत्पन्न दया वाला।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' लिया गया है। इसमें कवि ने जाबालि के चरित्रादि का वर्णन किया है। इसकी भाषा सजीव तथा प्रभावपूर्ण है।

हिन्दी अनुवाद- ऐसा सोचते हुए ही मुझको अशोक वृक्ष की उसी छाया में एक स्थान पर रखकर हारीत पिता के चरणों को छूकर अभिवादन करके उस कुश आसन पर बैठ गया जो पिता के अत्यधिक समीप नहीं था। मुझे देखते ही सभी मुनि लोग उस बैठे हुए हारीत से पूछने लगे- "यह सुग्गे का बच्चा कहाँ मिला" तब हारीत ने उनसे कहा- "मैं यहाँ से स्नान करने के लिए जा रहा था, उस समय कमल सरोवर के किनारे एक वृक्ष के घोंसले में से गिरा हुआ यह सुग्गे का बच्चा धूप की गर्मी से व्याकुल होकर जलती हुई रेत (धूल) में पड़ा था। दूर से गिरने के कारण इसका शरीर अत्यन्त विह्वल हो गया था और इसमें थोड़ी-सी जान बाकी रह गयी थी। इसे देखकर मुझे दया आ गयी, किन्तु उस पर चढ़ना तपस्वियों के लिए अत्यन्त कठिन था, इसलिए इसे घोंसले में न रखकर साथ लेकर चला आया।"

विशेष (1)-प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि ने शुक के प्रति हारीत को दया आने का चित्र उपस्थित किया हारीत उसको आश्रम में ले आया।

(2) **'समेतु पदग्रहणमभिवादनमित्युश'**में अमरकोश है।

तद्यावदयमप्ररूढपक्षतिरक्षमोऽन्तरिक्षमुत्पतितुं तावदत्रैव कस्मिश्चिदाश्रमतरुकोटरे मुनिकुमारकैस्माभिश्चोपनीतेन नीवारकणनिकरेण विविफलरसेन च संवध्यमानो धारयतु जीवितम्। अनाथपरिपालनं हि धर्मोऽस्मद्विधानाम्। उद्भिन्न-पक्षतिस्तु गगनतलसंचरणसमर्थो यास्यति यात्रास्मै रोचिष्यते। इहैववोपजातपरिचयः स्थास्यति इत्येवमादिकमस्मत्स-बद्धमालापमाकर्ण्य किंचिदुपजातकुतूहलो भगवान जाबालिरोषदावलितकन्धरः पुण्यजलैः प्रक्षालयन्निव मामतिप्रशान्तया दृष्ट्या दृष्ट्वा सुचिरमुपजातप्रत्यभिज्ञान इव पुनः पुनर्विलोक्य 'स्वस्यैवाविनयस्य फल-मनेनानुभूयते' इत्यवोचत्। स हि भगवान कालत्रयदर्शी तपः प्रभावाद् दिव्येन चक्षुषा सर्वमेव करतलगतमिव जगदवलोक- यति, वेत्ति च जन्मान्तराण्यप्यतीतानि। कथयत्यागामिनमप्यर्थम्, ईक्षणगोचरगतानां च प्राणिनामायुषः सख्यामावेदयति।

शब्दार्थ- यावद्= जब तक। **अप्ररूढ**= बिना उगे हुए। **पक्षति**= पंख। **अक्षमो**= असमर्थ। **उत्पतितुं**= उड़ने में। **कस्मिश्चिद् आश्रमे**= किसी आश्रम के कोटर, खोखल। **उपनीतेन**= लाये हुए। **नीवार**= जंगली धान्य। **निकरेण**= समूह से। **विविफलरसेन**= विभिन्न फलों का रस। **उद्भिन्नपक्षतिस्तु**= पंखों के उगने पर। **गगनतल**= अम्बर तल। **सञ्चरणसमर्थः**= उड़ने में सक्षम। **रोचिष्यते**= रुचि आयेगी। **उपजात**= उत्पन्न। **आदिकम्**= इत्यादि। **आलापम्**= बातचीत। **आकर्ण्य**= सुनने पर। **किंचित्**= कुछ। **कुतूहलो**= आश्चर्य। **आवलित**= झुकाकर, कन्धरः ग्रीवा (गरदन)। **पुण्यजलैः**= शुद्ध जल। **प्रक्षालयन्निव**= मानो स्नान कराते हुए।

माम्= मुझको। **दृष्टा**= देखा। **सुचिरम्**= बहुत देर। **प्रत्यभिज्ञान**= जानकारी। **विलोक्य**= देखकर। **अविनय**= धृष्टता। **फलम्**= भोग। **इत्यवोचत्**= ऐसा बोला। **हि**= क्योंकि। **त्रयदर्शी**= तीनों को देखने वाले। **दिव्येन चक्षुषा**= दिव्य दृष्टि से। **करतलगतमिव**= हथेली पर रखे हुए के समान। **जगत्**= संसार। **वेत्ति**= जानते हैं। **अतीतानि**= व्यतीत हुए। **आगामिनम्**= आने वाली। **अर्थम्**= रहस्य। **ईक्षण**= नेत्रों से। **गतानाम्**= गये हुए। **संख्या**= गणना। **आवेदयति**= बताते हैं।

प्रसंग- महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित प्रस्तुत अवतरण 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ शुक राजा शूद्रक से मुनि जाबालि के चरित्रादि का वर्णन करता है। इसी का कवि ने प्रभावपूर्ण चित्रण किया है।

हिन्दी अनुवाद- जब तक इसके पंख न निकल आएँ और यह आकाश में उड़ने योग्य न हो जाय तब तक इसी आश्रम के किसी वृक्ष के खोखले में मुनि बालकों और मेरे द्वारा दिये गये तिन्नी के कणों को खाकर तथा फलों का रस पीकर पलता हुआ पड़ा रहेगा। अनाथों का पालन-पोषण तो हम-जैसे तपस्वियों का धर्म ही है। डैने निकल आने पर यह आकाश में उडने योग्य हो जायेगा फिर जहाँ इसका मन होगा उड जायेगा या हिल-मिल गया तो यहीं रह जायेगा। इस प्रकार मेरे से सम्बन्धित बातचीत को सुनकर, कुछ उत्पन्न कुतूहल वाले भगवान जाबालि ने (अपनी) गर्दन को कुछ घुमाकर मानो पुण्य जलों से मुझे धोते हुए-से अत्यन्त शान्त दृष्टि से देर तक देखकर पहचान-सी प्राप्त करके बार-बार देखकर कहा- अपने ही अविनय का फल (यह) भोग रहा है। वे त्रिकालदर्शी भगवान जाबालि तपस्या के प्रभाव से दिव्य दृष्टि द्वारा सम्पूर्ण जगत् को हथेली पर रखा हुआ-सा देखते हैं और बीते हुए दूसरे जन्मों को भी जानते हैं। आने वाली बातों को भी बता देते हैं तथा दृष्टिगोचर होते हुए प्राणियों की भी आयु की संख्या बता देते हैं।

विशेष (1)-यहाँ बाणभट्ट ने विभिन्न उपमानों के द्वारा आलंकारिक भाषा-शैली में अत्यन्त भव्य एवं उदात्त वर्णन किया है तथा जीवन की क्रिया क्या होती है, ऋषियों का चरित्र कैसा होता है ? इन सभी बातों का प्रवाहपूर्ण शैली में चित्र उपस्थित किया है।

(2) इस गद्यांश में **उत्प्रेक्षा** तथा **संकर अलंकार** है।

16.3.1 जाबालि के शिष्यों की जिज्ञासा का वर्णन

ततः सर्वेव सा तापसपरिषच्छ्रुत्वा विदिततत्प्रभावा कीदृशोऽनेनाविनयः कृतः, किमर्थं वा कृतः, क्व वा कृतः, जन्मान्तरे वा कोऽयमासीद् इति कुतूहलिन्यभवत्। उपनाथितवती च तं भगवन्तम् आवेदय, प्रसीद भगवन् कीदृशस्या-विनयस्य फलमनेनानुभूयते, कश्चायमासीज्जन्मान्तरे, विहगजातौ वा कथमस्य संभवः किमभिधानो वाऽयम्। अपनयतु नः कुतूहलम्। आश्चर्याणां हि सर्वेषां भगवान प्रभवः।

शब्दार्थ- ततः= तदन्तर। **सर्वेव**= समस्त। **परिषद्**= सभा। **श्रुत्वा**= सुनकर। **विदित**= जाने हुए। **कीदृशो**= किस प्रकार की। **किमर्थम्**= किसलिए। **कव**= कहाँ। **जन्मान्तरे**= दूसरे जन्म में। **इति**= ऐसा। **कुतूहलिनि**= आश्चर्य। **उपनाथितवती**= पूछने पर। **कीदृशस्य**= किस प्रकार की। **अविनयस्य**= धृष्टता। **फलम्**=

परिणाम्। **विहग –** पक्षी। **अपनयतु=** दूर करें। **नः=** हमारे। **जातौ**= उत्पन्न होने पर। **संभवः**=उत्पति। **प्रसवः**= उत्पत्ति-स्थान।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ कवि ने जाबालि के चरित्र का वर्णन किया है। भाषा सजीव एवं शिक्षाप्रद है।

हिन्दी अनुवाद- (अत: मेरे विषय में इस बात को) सुनकर, उनके प्रभाव को जानने वाली सारी तपस्वियों की परिषद् 'इसने किस प्रकार का अविनय किया ? या किसलिए किया? और कहाँ किया? दूसरे जन्म में यह कौन था?' इस प्रकार कूतूहलयुक्त हो गई और उन भगवान जाबालि से प्रार्थना करने लगी 'भगवान आप प्रसन्न होइये, बताइए किस प्रकार के अविनय का फल (यह) अनुभव कर रहा है (भुगत रहा है)?' और यह जन्मान्तर में कौन था? और पक्षी जाति में इसकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई? और इसका नाम क्या है? (आप) हमारा कुतूहल दूर कीजिए, क्योंकि आप सम्पूर्ण आश्चर्यों के उत्पत्ति-स्थान हैं।

विशेष (1)-महाकवि बाणभट्ट ने अपनी प्रभावोत्पादक शैली के द्वारा जाबालि के प्रभाव का लोकोत्तर वर्णन किया है। भाषा का पदविन्यास अत्यन्त ही सुन्दर है।

(2) **'कीदृशस्याविनयस्य फलमनेनानुभूयते'**सूक्ति का सफल प्रयोग है।

इत्येवमपयाचितस्तपोधनपरिषदा स महामुनिः प्रत्यवदत्-अतिमहदिदमाश्चर्यमाख्यातव्यम् अल्पशेषमहः प्रत्यासी-दति च नः स्नानसमयः भवतामप्यतिक्रामति देवाचनविधिवेला। तदुत्तिष्ठन्तु भवन्तः सर्व एवाचरन्तु यथोचितं दिवसव्या-पारम्। अपराह्नसमये भवता पुनः कृतमूलफलाशनानां विस्त्रब्धोपविष्टानामांदितः प्रभृति सर्वमावेदयिष्यामि योऽयम् कृतमपरस्मिन् जन्मनि, इह च लोके यथास्य सम्भूतिः अयं च तावदपगतक्लमः क्रियतामाहारेण। नियतमयमप्यात्मनो जन्मान्तरोदन्तं स्वप्नोपलब्धमिव मयि कथयति। 'सर्वमशेषतः स्मरिष्यति' इत्यभिदधदेवोत्थाय सह मुनिभिः स्नानादि-कमुचितदिवसव्यापारमकरोत्।

शब्दार्थ- उपयाचित= प्रार्थना करने। **परिषदा**= मण्डली। **अतिमहद्=** अत्यधिक बड़ी। **अहः**= दिन। **प्रत्यासीदित**= उपस्थित है। **अतिक्रामति**= व्यतीत होना। **वेला**= समय। **सर्व एव=** समस्त। **आचरन्तु**= सम्पादित। **यथोचितं**=अभीष्ट। **दिवसव्यापरम्**= दैनिक क्रियाकलाप। **अपराह्नसमये**= दोपहर के बाद। भवतां= आप सभी। **अशनं**= भोजन। **विस्त्रब्धो**= विश्वासपूर्वक। **आदितः**= प्रारम्भ से। **कृतम्**= क्रिया की गयी। **अपरस्मिन जन्मनि**= पहले जन्म में। **इह च लोके**= और इस जगत् में। **सम्भूतिः**= उत्पत्ति। **अपगतक्लमः**= थकावट दूर करके। **क्रियताम्**= दूर करो। **आहारेण**= आहार के द्वारा। **नियतम्**= निश्चय ही। **उदन्तं**= कहने पर। **स्वप्नोपलब्धमिव**= मानो स्वप्न में भी उपलब्ध (प्राप्त)। **अशेषतः**= पूर्ण रूप में। **स्मरष्यति**= ध्यान करेगा। **उत्थाय**= उठकर। **सह**= साथ ही। **दिवसव्यापारम्**= दैनिक क्रियाकलाप। **अकरोत्**= करने लगे।

प्रसंग- यह गद्यावतरण बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। इसमें महाकवि ने वैशम्पायन (शुक) द्वारा राजा शूद्रक से महामुनि जाबालि के चरित्रादि का वर्णन किया है। भाषा सजीव एवं शिक्षाप्रद है।

हिन्दी अनुवाद- तपस्वी मण्डली के इस प्रकार प्रार्थना करने पर वे महामुनि बोले-यह आश्चर्यपूर्ण कथा बहुत बड़ी है, दिन थोड़ा ही शेष रहा है और हमारा स्नान करने का समय उपस्थित है, देव-पूजा करने का आपका समय भी बीत रहा है; सो आप लोग उठें और सब लोग यथोचित दैनिक क्रिया करें। तीसरे पहर फलमूल-ग्रहण कर आप लोगों के सुस्थता से बैठने पर जो यह है, पूर्व-जन्म जो इसने किया और अब जैसे इसका जन्म हुआ, सब हम आरम्भ से लेकर बतायेंगे। इसे आहार देकर इसका श्रम दूर कीजिए। मेरे कहने पर निश्चय ही अपने पूर्व-जन्म का वृत्तान्त जैसे स्वप्न में देखा हो, इस प्रकार यह पूर्णतया स्मरण करेगा। ऐसा कहते ही उठकर वे उन मुनियों के साथ स्नानादिक उचित दैनिक कार्य करने लगे।

विशेष (1)-इस गद्यांश में बाणभट्ट ने अपनी ओजमयी भाषा-शैली के द्वारा जाबालि के प्रभाव का लोकोत्तर वर्णन किया है। इसमें एक विशेष प्रवाह तथा विस्मयोद्रेक की भावना है। अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग है।

(2) **'विस्त्रब्धोपविष्ट'**वाक्य में अमरकोश है।

16.3.2 सन्ध्या वर्णन

अनेन च समयेन परिणतो दिवसः। स्नानोत्थितेन मुनिजनेनार्धविधिमुपपादयता यः क्षितितले दत्तस्तम्बरतलगतः साक्षादिव रक्तचन्दनाङ्गरागं रविरुद्वहत्। ऊर्ध्वमुखैरर्कबिम्बिविनिहितदृष्टिभि रूष्मपैस्तपोधनैरिव परिपीयमानतेजः प्रसरो विरलानपस्तनिमानमभजत्। उद्यसप्तर्षि सार्थस्पर्शपरिजिहीर्षयेव संहृतपादः पारावतपादपाटलरागो रविरम्बरतलाद-वालम्बत्। आलोहितांशुजालं जलशयनमध्यगतस्य मधुरिपोर्विगलन्मधुधारमिव नाभिनलिन प्रतिमागतपरार्णवे सूर्यमण्डल-मलक्ष्यत्। विहाय धरणीतलमुन्मुच्य च कमलिनीवनानि शकुनय इव दिवसावसाने तरुशिखरेषु पर्वताग्रेषु च रविकिरणाः स्थितिमकुर्वत। आलग्नलोहितातपच्छेदामुनिभिरालम्बितलोहितवल्कला इव तरवः क्षणमदृश्यन्त।

शब्दार्थ- अनेन च समयेन= इसी काल के मध्य। **परिणतो**= समाप्त। **अर्घविधि**= पूजा की। **उपपादयता**= पूर्ण करके। **क्षितितले**= भूमि-तल। **दत्तः**= दिया हुआ। साक्षादिव= मानो प्रत्यक्ष रूप में। **विनिहित=** लगी हुई। **उद्वहत्**= धारण किया। **ऊर्ध्व=** उठाये हुए। **ऊष्मपैः**= धूम पीने वाले या धूमपायी। **विरलातप**= छुट-पुट धूम वाले। **उद्यत्=** निकलते हुए। **सार्थ**= मण्डल। **परिजिहीषयेव**= स्पर्श को बचाने की इच्छा से। **संहृतः**= सिकोड़ना। **पारावत्**= कबूतर। **पाटलरागः**= लाल रंग की भाँति। **अम्बरतलात्**= आकाश से। **जालं**= समूह। **मध्यगतस्य**= बीच में स्थित। **विगलत्**= निकलते हुए। **परार्णवे**= पश्चिमी समुद्र। **अलक्ष्यत्**= प्रतीत हो रहा। **विहाय**= त्यागकर। **धरणीतलम्**= भूमि तल को। **शुकनय**= पक्षी। **तरुशिखरेषु**= वृक्ष का पूर्व-

भाग। **पर्वताग्रेषु**= पर्वतों की चोटी। **आलग्नलोहितातपच्छेदाः**= कहीं-कहीं लाल धूप के कण लगे रहने से। **आलम्बित**= लटकाये हुए। **क्षणमदृश्यन्त**= थोड़ी देर के लिए प्रतीत होते थे।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ कवि ने सायंकालीन सन्ध्या का अत्यन्त भव्य एवं उदात्त वर्णन किया है।

हिन्दी अनुवाद- यह सब होते-जाते प्रायः दिन समाप्त हो गया। सूर्यमण्डल लाल हो गया मानो स्नान के उपरान्त मुनियों ने सूर्य को अर्घ्य देते समय पृथ्वी पर जो लाल चन्दन गिराया था, उसे ही उसने आकाश में उठाकर साक्षात् अपने शरीर में अंगराग की तरह मल लिया हो। तेजहीन सूर्य बिम्ब धीरे-धीरे छोटा पड़ने पर मानो ऊपर की ओर मुख उठाकर उस बिम्ब में दृष्टि लगाने वाले ऊष्मपायी (धूम पीने वाले-तपस्या की एक साधना करने वाले) मुनियों ने सारा तेज ही पी लिया हो। सायंकाल उदित होते हुए सप्तर्षिमण्डल से कहीं पैरों का स्पर्श न हो जाय, इस भय से कबूतर के पैरों के समान लाल रंग वाला सूर्य मानो अपने किरणरूपी चरणों को समेटकर आकाश के एक ओर लटक गया और पश्चिमी समुद्र में पडती हुई उसकी लाल परछाईं ऐसी प्रतीत होने लगी मानो जल में शयन करने पाले भगवान विष्णु का मधु बिन्दु बहाने वाला नाभि-कमल हो। सूर्य की किरणें पृथ्वी और कमल वनों को छोड़कर सायंकाल के समय पक्षियों की तरह वृक्षों और पहाडियों की चोटी पर जा बैठीं। अभी कहीं-कहीं आश्रम के वृक्षों पर लाल-लाल धूप बची हुई थी। जो ऐसी प्रतीत होती थी भानो ऋषियों ने उस पर अपने लाल-लाल वल्कल वस्त्र लटका दिये हों। सूर्य के अस्त हो जाने पर पश्चिमी समुद्र के तल से मूँगे की फूली हुई लता के समान उठती हुई सन्ध्या दिखाई देने लगी।

विशेष (1)-इस गद्यांश में महाकवि बाणभट्ट ने सन्ध्या के समय सूर्य के अस्त होने एवं उसके स्वरूप के विषय में विभिन्न उपमानों के द्वारा आलंकारिक भाषा-शैली में अत्यन्त भव्य एवं उदात्त चित्रण उपस्थित किया है। वस्तुतः संस्कृत गद्य-साहित्य में बाण की प्रतिभा अप्रतिद्वन्द्व है। उनके चरित्र में **"बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्"** का कथन युक्तिसंगत है। इसलिए इनको अन्य कवियों की तुलना में सर्वश्रेष्ठ माना गया है।

(2) 'अनेन च समयेन' इस वाक्य में 'अपवर्गे तृतीया सूत्र' से **तृतीया विभक्ति** का प्रयोग है। 'पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा इति पा. सूत्रेण इमनिच् प्रत्ययः यहाँ **उत्प्रेक्षा, लुप्तोपमा, अतिशयोक्ति, सङ्कर** तथा **उपमा अलंकारों** का प्रयोग हुआ है।

अस्तमुपगते च भगवति सहस्रदीधितावपरार्णवतालादुल्लीसन्ती विद्रुमलतेव पाटला संध्या समदृश्यत्। यस्यामाबध्यमानध्यानम्, एकदेशदुह्यमान होमधेनुदुग्धधाराध्वनितधन्यतरातिमनोहरम्, अग्निहोत्रवेदिविकीर्णमाणहरि-त्कुशम्, ऋषिकुमारिकाभिरितस्ततो विक्षिप्यमाणदिग्देवताबलिसिक्थमाश्रमपदमभवत् क्वापि विहृत्य दिवसावसाने लोहिततारका तपोवनधेनुरिव कपिला परिवर्तमाना संध्या तपोधनैरदृश्यत्।

शब्दार्थ-अस्तम्= छिप या अस्त। **उपगते** = हो जाने पर। **सहस्रदीधितौ**= हजार किरणों वाले। **अपरार्णव**= पश्चिमी समुद्र। **उल्लसन्ती**= उठती हुई। **विद्रुमलतेव**= मूँगे की शाखा की भाँति। **पाटला=**

गुलाबी। **समदृश्यत्**= दिखाई दे रही। **आबध्यमानध्यानम्**= स्मरण किया गया। **दुह्यमान्**= दुहे जाते हुए। **ध्वनित**= शब्दायमान। **अतिमनोहर**= अत्यन्त रमणीय। **विप्रकीर्यमाण**= बिछाये हुए। **हरित्कुशम्**= हरी कुशाएँ। **इतस्ततः**= इधर-उधर। **विक्षिप्यमाण**= फेंकती हुई। **सिक्थम्**= पिण्ड। **क्वापि**= कहीं से। **विहृत्य**= घूमकर। **लोहिततारका**= लाल पलकों वाली। **धेनुरिव**= गाय की भाँति। **कपिला**= स्वर्ण वर्ण-युक्त। **परिवर्त्तमाना**= लौटती हुई। **दृश्यत्**= दिखाई दी।

प्रसंग- यह गद्यावरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से लिया गया है। कवि ने यहाँ सायंकालीन सन्ध्या का अत्यन्त प्रभावशाली चित्रण किया है, भाषा सजीव एवं सरल है।

हिन्दी अनुवाद- भगवान सूर्य के अस्त हो जाने पर पश्चिमी समुद्र के तल से विद्रुमलता की भाँति उठती हुई गुलाबी संध्या दिखाई दी। जब आश्रम-स्थल में एक ओर ध्यान लगाया जा रहा था। एक ओर दुही जाती हुई होमधेनु की दुग्धधारा की ध्वनि से वह अधिक भव्य एवं मनोहर लग रहा था, एक ओर यज्ञ की वेदियों पर हरी कुशाएँ बिछाई जा रही थीं। एक ओर मुनिकुमारियाँ दिग्देवताओं को इधर-उधर बलिपिण्ड फेंक रही थीं। दिन की समाप्ति पर लाल तारों वाली सन्ध्या तपस्वियों को ऐसी दिखाई दी मानो लाल पुतलियों वाली तपोवन की गौ दिन की समाप्ति पर कहीं घूमकर वापिस लौट रही थी।

विशेष (1)-इस गद्यांश में बाण ने सन्ध्याकाल का अलंकृत भाषा-शैली के द्वारा अत्यन्त ही सुन्दर वर्णन किया है।

(2) यहाँ **उपमा अलंकार** है।

अचिरप्रोषिते च सवितरि शोकविधुरा कमलमुकुल कमण्डलुधारिणी हंससितदुकूलपरिधाना मृणालधवलयज्ञो-पवीतिनी मधुकरमण्डलाक्षवलयम् उद्वहन्ती कमलिनी दिनपतिसमागमव्रतम्भिवाचरत्। अपरसागराम्भसि पतिते दिवसकरे वेगोत्थितम् अम्भः सीकरनिकरमिव तारागणमम्बरम् अधारयत्। अचिराच्च सिद्धकन्यका विक्षिप्तसन्ध्यार्चनकुसुमशबलमिव तारकितं वियदराजत। क्षणेन चोन्मुखेन मुनिजनेनोर्ध्व विप्रकीर्णैः प्रणामाञ्जलिसलिलैः प्रक्षाल्यमान इवागलदखिलः सन्ध्यारागः।

शब्दार्थ- अचिर= शीघ्र ही। **प्रोषिते**= परदेश जाने पर। **शोक विधुरा**= शोक से व्याकुल। **मुकुल**= कली। **कमण्डलुधारिणी**= कमण्डलु को धारण करने वाली। **हंससितदुकूलपरिधाना**= हंसरूपी श्वेत वस्त्र पहने हुए। **मृणालधवलयज्ञोपवीतिनी**= कमलतन्तुरूपी यज्ञोपवीत पहनकर। **अक्षवलयम्**= रुद्राक्ष का कंगन। **उद्वहन्ती**= धारण करती हुई। **समागम**= मिलन। **आचरत्**= आचरण किया। **अपर**= पश्चिमी। **सागर**= समुद्र। **अम्भसि**= जल में। **पतिते**= गिर जाने पर। **दिवसकरे**= सूर्य के। **वेगोत्थितमम्भः**= वेग (वायु) से उठे हुए जल के। **सीकर**= बूँदें। **कण निकरमिव**= समूह के समान। **तारागणमम्बरमधारयत्**= तारों को आकाश ने धारण किया। **विक्षिप्त**= फेंकी गई। **वियत्**= आकाश। **अराजत**= सुशोभित हुआ। **क्षणेन**= क्षण भर में। **उन्मुखेन**= ऊपर मुँह किये हुए ने। **मुनिजनेनोर्ध्वविप्रकीर्णेः**= मुनिजनों द्वारा ऊपर फेंके गये। **प्रणामाञ्जलिसलिलैः**= प्रणामाञ्जलि के जलों से। **क्षाल्यमान**= धोये हुए। **इवागलदखिलः संध्यारागः**= सायंकालीन अँधेरा नष्ट सा हो गया।

प्रसंग- यह गद्यांश महाकवि बाणभट्ट द्वारा रचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्‌धृत हैं। इसमें वैशम्पायन तोता राजा शूद्रक को अपने पूर्व-जन्म की कथा सुनाता है। यहाँ जाबालि के आश्रम का वर्णन है। इसी कथा को जाबालि तोते (वैशम्पायन) को अन्य मुनिजनों को सुनाने को कहते हैं। यहाँ सायंकालीन सन्ध्या का वर्णन है।

हिन्दी अनुवाद- सूर्य के कुछ देर पहले ही परदेश चले जाने पर शोक से व्याकुल कमल की कलीरूपी कमण्डलु को धारण करने वाली हंसरूपी श्वेत दुकूल (पहनने ओढ़ने) वाली मृणालरूपी श्वेत यज्ञोपवीत धारण करने वाली भ्रमर रूपी रुद्राक्ष की माला को धारण करने वाली कमलिनी ने मानो सूर्य से मिलने के लिए व्रत का आचरण किया है। सूर्य के पश्चिम समुद्र के जल में गिर जाने पर वेग से उठे हुए जल-कण समूह के समान तारागण को आकाश ने धारण किया। शीघ्र ही सिद्ध कन्याओं के द्वारा फेंके गये सन्ध्या के अर्चन के लिए पुष्पों से चित्रित-सा तारों से खचाखच भरा हुआ आकाश शोभित हुआ। क्षण-भर में ही उन्मुख मुनिजनों के द्वारा ऊपर फेंके गये प्रणामाञ्जलि के जलों से धोया जाता हुआ-सा सम्पूर्ण संध्या का राग समाप्त हो गया।

विशेष-अचिरप्रोषिते सवितरि-कुछ समय पूर्व ही सूर्य के प्रवास चले जाने पर, यहाँ प्रोषित शब्द का प्रयोग करके कवि ने यहाँ समासोक्ति अलंकार का प्रयोग किया है। परिधान-अधोवस्त्र, धोती (अन्तरीयोपसंव्यानपरिधानान्यधीशुके, अमरकोश)। मृणालधवल- यज्ञोपवीतिनी - मृणाल ही कमलिनी का श्वेत यज्ञसूत्र था, इससे यह ध्वनि निकलती है कि पुरातन काल में स्त्रियाँ भी यज्ञसूत्र धारण करती थीं।

16.3.3 रात्रि वर्णन

क्षयमुपगतायां संध्यायां तद्विनाशदुःखिता कृष्णाजिनमिव विभावरी तिमिरोद्गममभिनवमवहत् अपहाय मुनिहृदयानि सर्वमन्यदन्धकारतां तिमिरमनयत् क्रमेण च रविरस्तं गतः इत्युदन्तमुपलभ्य जातवैराग्यो धोतदुकूल-वल्कलधवलाम्बरः सतारान्तः पुरः पर्यन्तस्थिततनुतिमिरतमालवृक्षलेखसप्तर्षिमण्डलाध्युषितुमरुन्धतीसंचरणपूतमुपहिता-षाढमालक्ष्यमाणमूलमेकान्तस्थित चारुतारकमृगममर लोकाश्रममिव गगनतलमभृतदीधितिरध्यतिष्ठित्।

शब्दार्थ- क्षयम्= क्षीण। **उपगतायां**= हो जाने पर। **तद्विनाश**= विनाश से। **कृष्णाजिनमिव**= काले मृग के चर्म की भाँति। **तिमिरोद्गमम्**= अन्धकार का प्रादुर्भाव रूप। **सर्वमन्यत्**= और सब कुछ। **अनयत्**= ले आया। **अवहत्**= धारण किया। **अपहाय**= छोड़कर। **इत्युदन्तं**= ऐसे वृत्तान्त को। **उपलभ्य**= जानकर। **धोतदुकूलवल्कल**= धुले हुए रेशमी वस्त्र रूपी। **धवलाम्बरः**= निर्मल आकाश। **सतारान्तःपुरः**= ताराओं के अन्त: पुट वसा। **पर्यन्तस्थित**= आकाश के छोर पर विद्यमान। **अध्युषितम्**= अधिष्ठित। **संचरणपूतम्**= घूमने से पवित्र। **आलक्ष्यमाण=** प्रतीत हो रहा। **एकान्तस्थित**= एक ओर स्थित। **चारु**= मनोहर। **तारकामृगम्**= मृगशिरा नक्षत्र। **अमृतदिधितः**= चन्द्रमा। **अध्यतिष्ठित्**= अन्तर्ध्यान हो गया।

प्रसंग- प्रस्तुत गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्‌धृत है। सायंकालीन सन्ध्या के पश्चात् रात्रि उपस्थित होती है। उसी का कवि ने अलंकारमय एवं चमत्कारपूर्ण वर्णन किया है। भाषा-शैली सजीव एवं मनोरम है।

हिन्दी अनुवाद- सन्ध्या के समाप्त हो जाने पर उसके विनाश से दुःखित रात्रि ने काले मृगचर्म की भाँति नवीन अन्धकार को धारण कर लिया। मुनियों के हृदयों को छोड़कर शेष सब जगह अन्धकार ने अँधेरा कर दिया। सूर्य अस्त हो गया, धीरे-धीरे इस वृत्तान्त को जानकर उदयकालीन विशेष लाली से युक्त, धुले दुकूल वल्कल वस्त्र के समान आकाश को स्वच्छ बनाता तथा अश्विनी आदि ताराओं के अन्तःपुर वाला अतएव विराग से युक्त धुले दुकूल वल्कल के श्वेत वस्त्र पहिने हृदय में प्रणव का ध्यान-धरे मित्र के विनाश से दुःखी मित्र से तुलना करता अमृतकिरण वाला चन्द्रमा चारों ओर तमाल वन की पंक्ति के समान थोड़े अन्धकार से पूर्ण, सप्तर्षिमण्डल से आश्रित अरुंधती नक्षत्र के संचरण से पवित्र, पूर्वा तथा उत्तराषाढ़ा नक्षत्रों से युक्त, जिसमें मल नक्षत्र दीख रहा है तथा जिसके एक प्रदेश में सुन्दर मृगशिरा नक्षत्र स्थित है-ऐसे अतएव प्रान्त भाग में कुछ-कुछ काले तमाल वृक्षों के वन की पंक्ति से युक्त वसिष्ठादि सप्तर्षियों से आश्रित वसिष्ठा-पत्नी अरुंधती के संचरण से पवित्र जिसमें मुनियों द्वारा पलाशदण्ड स्थापित हैं, कन्दमूल दिखाई पड़ते हैं और एकान्त में सुन्दर नेत्रों वाले मृग बैठे हैं, ऐसे अमरलोक का आश्रम जैसा प्रतीत होता आकाशमण्डल में विराजमान हो गया।

विशेष (1)-इस गद्यांश में महाकवि बाण ने अत्यन्त भव्य एवं उदात्त भाषा-शैली के द्वारा रात्रि का वर्णन चित्रित किया है। विभिन्न उपमानों के द्वारा रात्रि का वर्णन चमत्कृत हो उठा है। उनका पदविन्यास दर्शनीय है। सर्वत्र एक विचित्र प्रतिभा का आभास है।

(2) यहाँ **उपमा, श्लेष, उत्प्रेक्षाअलंकारों** का प्रयोग हुआ है। **'पलाशो दण्ड आषाढः'**इत्यभिधानचिन्तामणिः।

चन्द्राभरणभृतस्तारकाकपालशकलालंकृतादम्बरतलात् त्रयम्बकोत्तमाङ्गादिव गङ्गा सागरानापूरयन्ती हंसधवला धरण्यामपतज्ज्योत्स्ना। हिमकरसरसि विकचपुण्डरीकसिते चन्द्रिका जलपानलोभादवतीर्णो निश्चलमूर्तिरमृतपङ्कलग्न इवा-दृश्यत् हरिणः। तिमिरजलधरसमयापगमानन्तरमभिनवसितसिन्दुवार कुसुमपाण्डुरैरर्णवागतैर्गाह्यन्त हंसैरिव कुमुदसरांसि चन्द्रपादैः। विगलित सकलोदयरागं रजनिकरबिम्बमम्बरापवगाहधौतसिन्दूरमैरावतकुम्भस्थलमिव तत्क्षणमलक्ष्यत्।

शब्दार्थ- चन्द्राभरण= चन्द्ररूपी आभूषण। **तारकाकपाल=** तारेरूपी नरमुंड। **भृत=** धारण किये हुए। **शकल=** टुकड़ा। **त्रम्बकः=** शिव। **उत्तमाङ्गात्=** शिर से। **आपूरयन्ती=** पूर्ण करती हुई। **हंसधवला=** हंसों के समान श्वेत। **धरण्याम्=** पृथ्वी पर। **अपतत्=** गिरी। **हिमकर=** चन्द्रमा। **सरसि=** तालाब में। **विकच=** खिले हुए। **अवतीर्णा=** उतरती हुई। **अमृतपङ्कलग्न=** अमृतरूपी कीचड़ में सनी हुई। **अपगमनान्तरम्=** व्यतीत होने पर। **अगाह्यन्त=** अवगाहन करने लगी। **पादैः=** किरणों। **सकलोदयरागम्=** सम्पूर्ण लालिमा। **रजनिकर=** चन्द्रमा।

प्रसंग- इस गद्यावतरण महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी-कथामुखम्' से उद्धृत है। सायंकालीन सन्ध्या के पश्चात् रात्रि उपस्थित होती है। उसी का कवि ने अत्यन्त अलकारमयी एवं चमत्कारपूर्ण भाषा में सजीव मनोरम चित्र उपस्थित किया है।

हिन्दी अनुवाद- चन्द्रमारूपी आभूषण तथा तारेरूपी नरकपाल खण्ड धारण किये हुए अतएव चन्द्राभूषणधारी, तारों के समान नरकपाल खण्डों से सजे शिव के शिर से तुलना करते आकाशमण्डल से सागर को आपूरित (पूर्ण) करती हंस के समान धवल चाँदनी धरती पर फैलने लगी। खिले श्वेत कमलों से श्वेत चन्द्रमारूपी सरोवर में चाँदनीरूपी जल पीने के लोभ से उतरा हिरण मूर्ति दिखाता अमृतरूपी कीचड़ में फँसा हुआ-सा दीखने लगा। अन्धकाररूपी वर्षाॠतु के व्यतीत होने पर नवीन श्वेत निर्गुण्डी फूलों के समान शुभ्र समुद्र से आये हुए हंसों के समान चन्द्रमा की किरणें कुमुदों के सरोवर में अवगाहन करने लगीं। उस क्षण उदयकाल की सम्पूर्ण लाली साफ हो जाने पर चन्द्रमण्डल आकाशगंगा में स्नान करने में जिसका सिन्दूर धुल गया है, ऐसे ऐरावत के कुम्भस्थल-जैसा दिखाई देने लगा।

विशेष- बाणभट्ट ने अत्यन्त भव्य एवं उदात्त भाषा के द्वारा रात्रि का वर्णन किया है। अलंकारों की छटा दर्शनीय है। समासों का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में हुआ है। विभिन्न उपमानों के द्वारा रात्रि का वर्णन चमत्कृत हो उठा है। उनका पदविन्यास दर्शनीय है। सर्वत्र विचित्र प्रतिभा का आभास मिलता है तथा प्रवाहपूर्ण वर्णन में सजीवता बन पड़ी है।

शनैः शनैश्च दूरोदिते भवति हिमस्रुति सुधाधूलिपटलेनेव धवलीकृते चन्द्रातपेन जगति, अवश्यायजलबिन्दु-मन्दगतिषु विघटमानकुमुदवनकषायपरिमलेषु समुपोढनिद्राभरालसतारकैरन्योन्यग्रथित पक्षपुटैरारब्धरोमन्थमुखैः सुखासीनै-राश्रममृगैरभिनन्दितागमनेषु प्रवहत्सु निशामुखसमीरणेषु अधयाममात्रावखण्डितायां विभावर्यां हारीतः कृताहारं मामादाय सर्वेस्तैर्महामुनिभिरुपसृत्य चन्द्रातपोद्भासिनि तपोवनैशदेशे वेत्रासनोपविष्टमनतिदूरवर्तिना जाल पादनाम्ना शिष्येण दर्भपवित्रधवित्रपाणिना मन्द-मन्दमुपवीज्यमान पितरमवोचत्-तात ! सकलेयमा-श्चर्यश्रवणकुतूहलाकलितहृदया समुपस्थिता तापसपरिषदाबद्धमण्डला प्रतीक्षते। व्यपनीतश्रमश्च कृतोऽयं पत्त्रिरपोतः तदावेद्यतां यदनेन कृतम्, अपरस्मिन् जन्मनि कोऽयमभूद् भविष्यति च इति। एवमुक्तास महामुनिरग्रतः स्थितं मामवलोक्य तांश्च सर्वानेकाग्रान् श्रवणपरान् मुनीन् बुद्ध्वा शनैः शनैरब्रवीत्-श्रूयतां यदि कूतूहलम्।

शब्दार्थ- शनैः शनैः= धीरे-धीरे। **हिमस्रुति**= चन्द्रमा। **सुधा**= अमृत। **पटलेनेव**= मानो समूह से। **धवलीकृते**= शुभ्र हो जाने पर। **चन्द्रातपेन**= चाँदनी ने। **अवश्याय**= ओस की। **बिन्दु**= कण। **विघटमान**= विकसित होते हुए। **परिमलेषु**= सुगन्धित। **समुपोढ**= आती हुई। **भरालस**= आलस्य से भरी हुई। **तारक**= पुतलियों से युक्त। **अन्योन्य**= परस्पर। **ग्रथित**= गुँथी हुई। **आरब्ध**= आरम्भ करके। **रोमन्थ**= जुगाली। **सुखासीनैः**= सम्पूर्ण सुख से विराजमान। **अभिनन्दितागमनेषु**= अभिनन्दित चाल वाले। **प्रवहत्सु**= प्रवाहित होने पर। **अधयाम**= आधा प्रहर। **अवखण्डितायां**= व्यतीत होने पर। **कृताहारं**= भोजन किया हो। **मामदाय**= मुझे लेकर। **सर्वे**= समस्त। **उपसृत्य**= समीप जाकर। **उद्भासिनि**= चमकते हुए। **वेत्रासनो**= वेत्र के आसन पर। **अनतिदूरवर्तिना**= समीपवर्ती। **दर्भ**= कुश। **धवित्र**= श्वेत। **उपवीज्यमान**= पंखा करते हुए। **पितरमवोचत्**=

पिता से बोला। **श्रवण**= सुनने के लिए। **आकलित**= भरे हुए। **परिषद्**= सभा। **आबद्ध**= उपस्थित। **प्रतीक्षते**= प्रतीक्षा कर रही है। **व्यपनीत**= दूर करके। **पतत्रि**= पक्षी। **पोत**= बच्चा। **आवेद्यताम्**= बताइए। **अपरस्मिन्जन्मनि**= दूसरे जन्म में। **कोऽयमभूदः**= यह कौन था। **एवमुक्तास**= इस तरह कहने से। **अग्रतः**= सामने। **अवलोक्य**= देखते हुए। **सर्वानेकाग्रान्**= सब एकाग्र होकर। **श्रवणपरान्**= सुनने के इच्छुक। **बुद्ध्वा**= समझकर। **अब्रवीत्**= कहा। **श्रूयतां**= सुनो। **कुतूहलम्**= आश्चर्य।

प्रसंग- यह गद्यावतरण महाकवि बाण द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथामुखम्' से उद्धृत किया गया है। यहाँ कवि ने रात्रि का वर्णन अत्यन्त अलंकारमयी एवं चमत्कारपूर्ण भाषा-शैली में किया है।

हिन्दी अनुवाद- और धीरे-धीरे ओस की धार को बहाने वाले भगवान चन्द्रमा के दूर (ऊँचे) उदित हो जाने पर अमृत की धूलिपटल के समान चन्द्रिका के द्वारा संसार को श्वेत कर देने पर ओस के जलबिन्दुओं के कारण मन्द गति वाले विकसित होते हुए कुमुदवन की कषैली गन्ध वाले, आती हुई निद्रा के भार से अलसायी हुई पुतलियों वाले, परस्पर पलक समूहों को सटाये हुए, जुगाली को प्रारम्भ करने से शिथिल (आलसयुक्त) मुख वाले सुखपूर्वक बैठे हुए आश्रम मृगों के द्वारा अभिनन्दित गति वाले, रात्रि के प्रारम्भ पवनों के प्रवाहित होने पर आधा प्रहर मात्र बीतने पर रात्रि में, चन्द्रिका से चमकते हुए तपोवन के एक भाग में बेंत के आसन पर बैठे हुए, निकटवर्ती 'जलपाद' नामक शिष्य के द्वारा कुशाओं के समान पवित्र मृगचर्म से निर्मित पंखे से धीरे-धीरे पंखा डुलाए जाते हुए, भोजन किए हुए पिता के पास मुझे लेकर और उन सभी महामुनियों के साथ जाकर हारीत ने कहा- पिताजी। यह समस्त उपस्थित तपस्वियों की सभा आश्चर्य (वृत्तान्त) को सुनने के कुतूहल से भरे हुए हृदय वाली मण्डल बाँधकर (आपकी) प्रतीक्षा कर रही है। यह पक्षी का बच्चा (वैशम्पायन) श्रमरहित कर दिया गया है। अतः (अब) बताइए, जो कुछ इसने किया। दूसरे जन्म में यह कौन था और आगे क्या होगा? ऐसा कहे जाने पर उन महामुनि ने आगे मुझे ही विद्यमान देखकर और उन सभी मुनियों को एकाय (होकर) सुनने में तत्पर समझकर धीरे-धीरे से कहा- "यदि आपको कौतूहल है तो सुनिए।"

विशेष (1)-महाकवि बाण ने इस गद्यांश में रात्रि का तथा शुक का पूर्वजन्म-सम्बन्धी अलंकृत भाषा-शैली के द्वारा प्रवाहपूर्ण चित्र उपस्थित किया है। इन्होंने अपनी शैली से भाव-विषय को भी प्रकट कर दिया है।

(2) **'प्रदोषाः रजन्याम्'**में अमरकोश है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. वैशम्पायन तोते को मुनि कुमार कहाँ से लाए थे?
2. जाबालि ऋषि का आश्रम किसकी भाँति दिखता था?
3. विनता के पुत्र गरुड़ की भाँति किसे कहा गया है।
4. रात्रि ने काले .... की भाँति नवीन अंधकार को धारण कर लिया था।

16.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में जाबालि ऋषि का वर्णन, शुक वर्णन, सन्ध्या एव रात्रि का वर्णन वर्णित है।

16.5 कठिन शब्दावली

1.विकच – खिले हुए **2.धवल** – सफेद **3.क्षयम्** – क्षीण, नष्ट

16.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. सरोवर से 2. ब्रह्म लोक के समान 3. जाबालि ऋषि 4. मृगचर्म

16.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

16.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. कथामुख के आधार पर रात्रि वर्णन कीजिए।
2. सन्ध्या वर्णन का मनोहारी वर्णन कीजिए।
3. जाबालि ऋषि का चरित्र-चित्रण वर्णित कीजिए।

इकाई-17
आचार्य विश्वनाथ एवं साहित्यदर्पण का परिचय

संरचना

17.1 प्रस्तावना

17.2 उद्देश्य

17.3 साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ का परिचय

17.3.1 साहित्यदर्पण शब्द की व्युत्पत्ति

17.3.2 साहित्य दर्पण की विशेषता

17.3.3 साहित्य दर्पण का वर्ण्य-विषय

17.3.4 विश्वनाथ के अनुसार काव्य प्रयोजन

- स्वयं आकलन प्रश्न

17.4 सारांश

17.5 कठिन शब्दावली

17.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

17.7 सहायक ग्रन्थ

17.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

17.1प्रस्तावना

गद्यकाव्य एवं साहित्यलोचन के अन्तर्गत पिछले अध्यायों में गद्य काव्य के अन्तर्गत कादम्बरी के कथामुख का अध्ययन किया जा चुका है। अब साहित्य दर्पण के अन्तर्गत इस अध्याय में आचार्य विश्वनाथ के जीवन परिचय, कृतियों, साहित्य दर्पण की व्युत्पत्ति, साहित्य दर्पण के दस परिच्छेदों में वर्णित वर्ण्य विषय, काव्य-प्रयोजन, काव्य-लक्षण के विषय में जानेंगे।

17.2उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से आप जानने में सक्षम होंगे-

- इस इकाई के पश्चात् आप आचार्य विश्वनाथ के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विषय में जानने में सक्षम होंगे।
- साहित्य दर्पण का अर्थ, साहित्य दर्पण में वर्णित दस परिच्छेदों में वर्णित वर्ण्य विषय से अवगत होंगे।
- विश्वनाथ के अनुसार काव्य-फल प्राप्ति के विषय में जानने में सक्षम होंगे।

17.3साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ का परिचय

साहित्य दर्पण के रचयिता विश्वनाथ अलंकार जगत में सबसे अधिक लोकप्रिय आलंकारिक हैं। ये उत्कल के बड़े प्रतिष्ठित पण्डित कुल में पैदा हुए थे। विश्वनाथ के पिता चन्द्रशेखर थे जो अपने पुत्र के समान ही कवि, विद्वान् तथा सन्धिविग्रहिक थे। विश्वनाथ ने अपने पिता के ग्रन्थ 'पुष्पमाला' और 'भाषार्णव' का उल्लेख अपने ग्रन्थ में किया है। नारायण, जिन्होंने अलंकारशास्त्र पर ग्रन्थों की रचना की थी या तो विश्वनाथ के पितामह थे अथवा वृद्ध प्रपितामह थे, क्योंकि काव्य-प्रकाश की टीका में विश्वनाथ ने नारायण का 'अस्मद् पितामह' कहकर निर्देश किया है, परन्तु साहित्यदर्पण में उन्हीं का 'अस्मत् वृद्धपितामह' कहकर उल्लेख किया है। काव्यप्रकाश की दीपिका टीका के रचयित्ता चण्डीदास भी विश्वनाथ के पितामह के अनुज थे। विश्वनाथ ने काव्यप्रकाश की टीका में बहुत से संस्कृत शब्दों के उड़िया भाषा के पर्यायवाची शब्दों को दिया है। इससे पता चलता है कि वह उड़ीसा के निवासी थे। विश्वनाथ के पिता तथा विश्वनाथ दोनों ही किसी राजा के सन्धिविग्रहिक (वैदेशिक मन्त्री) थे। सम्भवतः यह राजा कलिंग देश का ही अधिपति था।

विश्वनाथ एक सिद्ध कवि थे। ये संस्कृत तथा प्राकृत के ही पण्डित न थे, प्रत्युत अनेक भाषाओं के विद्वान् थे। इसलिए इन्होंने अपने को 'षोडशभाषावारविलासिनी भुजंग' लिखा है। आलोचक तथा आचार्य रूप में उन्होंने साहित्य दर्पण जैसी मौलिक कृति की रचना की तथा अपनी दुरुहता के लिए प्रसिद्ध काव्य-प्रकाश की काव्यप्रकाश-दर्पण नामक टीका लिखी। कवि के रूप में इनके द्वारा निर्मित काव्यग्रन्थ जिनका निर्देश इन्होंने स्वयं अपने ग्रन्थों में किया है (1) 'राघवविलास' नामक संस्कृत महाकाव्य, (2) कुवलयाश्चचरित-प्राकृत भाषा में निबद्ध काव्य, (3) प्रभावती परिणय नाटिका, (4) चन्द्रकला नाटिका, प्रशस्तिरत्नावली- यह षोडश भाषाओं में निबद्ध करम्भक है। इन सब काव्यों का निर्देश विश्वनाथ ने अपने साहित्यदर्पण में स्वयं दिया है। इन्होंने नरसिंहविजय नामक काव्यग्रन्थ की भी रचना की थी जिसका निर्देश 'काव्य प्रकाश दर्पण' टीका में मिलता है।

साहित्यदर्पणाकार का काल तेरहवीं शताब्दी का अन्तिम चरण अथवा चौदहवीं शताब्दी का प्रथम चरण मानाजाता है।

17.3.1 साहित्य-दर्पण शब्द की व्युत्पत्ति

साहित्य-दर्पण शब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है- 'साहित्य दर्पणम्' अर्थात् साहित्य का दर्पण। जिस प्रकार दर्पण में किसी वस्तु के स्वरूप का दर्शन यथावत् हो जाता है उसी प्रकार इस ग्रन्थ के अध्ययन से साहित्य को यथावत् ज्ञान हो जाता है। अब प्रश्न उपस्थित होता है- साहित्य किसे कहते हैं? साहित्य शब्द 'सहित' शब्द सेभाव या कर्म अर्थ में म् (ण्वज) प्रह्यय जुड़ने पर आदि स्वर को 'आ' वृद्धि होने पर बनता है। 'साहित' शब्द भी स (सह) तथा हित, इन दो शब्दों के योग से बनता है। सहित शब्द का व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ

है। हितेन सहितम्, अर्थात् वह वस्तु जो हित से युक्त हो, सहित कहलाती है। समाज में सह शब्द को स आदेश हो जाता है तथा हित शब्द के साथ समाज होने पर 'सहित' शब्द बनता है। उपर्युक्त व्युत्पत्ति के अनुसार हितसहित होना साहित्य कहलाएगा।

साहित्य की अनेक व्युत्पत्तियों में से एक व्युत्पत्ति और भी हैं जो साहित्य की व्युत्पत्ति के इतिहास पर कुछ प्रकाश डालती है। काव्य के प्रारम्भिक लक्षण "शब्दार्थौं सहितौ काव्यम्" आदि में शब्दार्थ (शब्द और अर्थ) के साथ सहितो विशेषण का प्रयोग मिलता है। इस प्रकार के लक्षणों में प्रयुक्त 'सहितो' विशेषण शब्द और अर्थ के साहित्य का बोधक है। काव्य में शब्द और अर्थ के साहित्य का तात्पर्य यह है कि काव्य में न तो केवल शब्दों का ही महत्व है और न केवल अर्थ का। इसमें शब्द और अर्थ दोनों का समान महत्त्व होना चाहिए। इसीलिए काव्यकृति शब्द-प्रधान वेदादि शास्त्रों से तथा अर्थ-प्रधान इतिहास पुराणादि से भिन्न होती है। इसी आशय को ध्यान में रखकर कुछ आचार्यों ने सहितयोः सामजस्येन स्थितयौः शब्दार्थयोः कर्म साहित्यम् अर्थात् सहितरूप से (समानुपात से) स्थित (परस्पर सम्बद्ध) शब्दार्थ युक्तिकृति साहित्य है-ऐसी व्युत्पत्ति की है।

विश्वनाथ की दृष्टि में इन दोनों व्युत्पत्तियों में से कौन-सी अधिक उपयुक्त है- इसका निर्णय साहित्य-दर्पण में उपलब्ध आन्तरिक प्रमाणों के आधार पर किया जा सकता है। विश्वनाथ से पूर्व प्रायः सभी काव्याचार्यों में अपने विशेष ग्रन्थों के नामकरण में काव्य-शब्द का ही प्रयोग किया है, साहित्य-शब्द का नहीं। काव्यालंकार, काव्यालंकार-सूत्र, काव्यादर्श, काव्य-दर्पण, काव्यमीमांसा तथा काव्य-प्रकाश आदि इसके निदर्शन है। विश्वनाथ ने प्रथम बार 'काव्य' शब्द के स्थान पर 'साहित्य' शब्द का प्रयोग किया है। उनका यह प्रयोग निश्चित रूप से इस अभिप्राय से है कि काव्य 'साहित्य' अर्थात् 'हित-सहित' कृति होना चाहिए। वह केवल स्वान्तः सुखाय ही नहीं, बहुजनहिताय भी होना चाहिए, तभी उसको साहित्य कह सकेंगे। यही कारण है कि उन्होंने काव्य के प्रयोजनों को ही काव्य-शास्त्र या साहित्य-शास्त्र का प्रयोजन माना है और इस प्रसंग में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की चर्चा की है। इस चतुर्वर्ग की प्राप्ति सामान्य काव्य से नहीं अपितु साहित्य (हित-सहित कृति) से ही हो सकती है। इसलिए प्रस्तुत प्रसंग में साहित्य शब्द-काव्य का बोधक होते हुए भी उसके साहित्य (हित सहित होना) रूप का द्योतक भी है।

17.3.2 साहित्य-दर्पण की विशेषता

यद्यपि भरतमुनि के नाट्यशास्त्र तथा अग्निपुराण से लेकर विश्वनाथ के समय तक भामह, वामन, दण्डी, रुद्रट, रुय्यक, कुन्तक, आनन्दवर्धन, अभिनवगुप्त, धनिक, धनंजय तथा मम्मट आदि अनेक आचार्यों के काव्यशास्त्र का विवेचन के पश्चात् कोई ऐसा नवीन विषय शेष नहीं रह गया था। जिस पर कुछ लिखा जाता। फिर भी विश्वनाथ ने साहित्य-शास्त्र पर लिखने के लिए अपनी लेखनी उठाई तथा पूर्वाचार्यों द्वारा प्रतिपादित विषयों को ही ऐसे नवीन रूप में प्रस्तुत किया कि भावी पीढ़ियाँ साहित्य-शास्त्र के अध्ययन के लिए साहित्यदर्पण को एकदम अपरिहार्य मानने लगीं। इस अपरिहार्यता का एकमात्र कारण इस ग्रन्थ की उपयोगिता ही रही है। विश्वनाथ की विषय-प्रतिपादन की शैली अत्यन्त सरल तथा स्पष्ट होने के साथ-

साथ संक्षिप्त भी है। अपरिमित विषय को परिमित शब्दों में सरल एवं स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करके उन्होंने गागर में सागर भरने की उक्ति को अक्षरशः चरितार्थ कर दिया है। विश्वनाथ से पूर्ववर्ती काव्याचार्यों ने काव्य-शास्त्र पर लिखते समय दृश्य तथा श्रव्य-काव्य की समीक्षा प्रायः अलग-अलग की है। परन्तु साहित्य दर्पण में हमें एकत्र ही दृश्य तथा श्रव्यकाव्य की आलोचना उपलब्ध हो जाती है। इस ग्रन्थ का छठा परिच्छेद दृश्यकाव्य के सभी भेदोपभेदों का सांगोपांग विवेचन प्रस्तुत करता है। यह सत्य है कि विश्वनाथ के उपजीव्य पूर्वाचार्यों के ग्रन्थ ही रहे हैं। इन ग्रन्थों से उन्होंने बहुत कुछ लिया है। परन्तु उनके प्रस्तुतिकरण की नवीनता इस आदान का ज्ञान सहज नहीं होने देती। पूर्वाचार्यों के मतों की यथास्थान आलोचना करके उन्होंने अपने समय में मान्य काव्य-सिद्धान्तों के परमस्वरूप को अपने पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। उनकी प्रांजल शैली 'बालाजी सुखबोधाय' का सुन्दर निदर्शन है। इसी कारण भावी पीढ़ी में अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा इस ग्रन्थ का पठन-पाठन अधिक प्रचलित रहा है।

17.3.3 साहित्य-दर्पण का वर्ण्य-विषय

साहित्य-दर्पण में दस परिच्छेद हैं। इन परिच्छेदों में जिन मुख्य विषयों पर विचार किया गया है उनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है-

मंगलाचरण

जिसका प्रारम्भ करना चाहते हैं उस ग्रन्थ का आरम्भ करने से पूर्व ग्रन्थकार, निर्विघ्नपूर्वक समाप्ति की इच्छा से, शास्त्रों में अधिकृत होने के कारण, भगवती सरस्वती की आराधना करते हैं। मंगल श्लोक में वाग्देवी होने के कारण सरस्वती की वन्दना की गई है तथा सम्पूर्ण अर्थों का प्रकाश करने की प्रार्थना, अत्यन्त सार्थक है क्योंकि अर्थों के यथावत् बोध के बिना साहित्य शास्त्र का विमर्श सम्यक् रूप में नहीं हो सकता।

प्रथम परिच्छेद-इस परिच्छेद में मंगलाचरण के पश्चात् साहित्य-शास्त्र (काव्य-शास्त्र) के प्रयोजनों के रूप में ही काव्य के प्रयोजनों पर विचार किया गया है। तदन्तर काव्य का स्वरूप बताते हुए विश्वनाथ ने पूर्वाचार्यों द्वारा ही कई काव्य की परिभाषाओं पर आलोचनात्मक दृष्टि से विचार किया है। उस आलोचना में उन्होंने पूर्वाचार्यों के लक्षणों के दोषों पर खूब टीका टिप्पणी की है। इस प्रसंग में भोजराज, कुन्तक, आनन्दवर्धन तथा वामन के काव्य-लक्षणों पर तो प्रहार किया ही गया है। परन्तु आचार्य मम्मट के काव्य-लक्षण की समीक्षा करते समय जो बाल की खाल निकाली गई है यह अति की श्रेणी तक पहुँच गई है। इस आलोचना में विश्वनाथ का ध्यान मम्मट के शब्दों पर ही अधिक रहा है, भावों पर कम। यही कारण है कि उन्हें मम्मट के काव्य-लक्षण में प्रयुक्त प्रत्येक पद दोषयुक्त ही दिखाई दिया है। 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' अर्थात रस है आत्मा जिसकी, ऐसा वाक्य (पद समूह) ही काव्य होता है। यह परिभाषा देकर विश्वनाथ के पथरस के साथ-साथ प्रबन्धरस की पुष्टि के लिए वाक्य के साथ महाकाव्य की कल्पना भी की है। महाकाव्य-सम्बन्धी यह कल्पना एकदम मौलिक होते हुए अत्यन्त उपयोगी भी है।

द्वितीय परिच्छेद-प्रथम परिच्छेद के अन्त में रसात्मक वाक्य को काव्य कहा गया है। यह वाक्य क्या है- इस का विवेचन दूसरे परिच्छेद में प्रारम्भ होता है। आकांक्षा, योग्यता तथा आसक्ति (सन्निधि, सामीप्य)

से युक्त पदों के समूह को वाक्य कहते हैं। आकांक्षा, योग्यता तथा आसक्ति की व्याख्या करके अन्त में पद का लक्षण करते हुए कहा है कि-प्रयोग योग्य परन्तु अन्वयरहित एक अर्थ के बोधक वर्ण ही पद कहलाते हैं। पद एक वर्ण का भी हो सकता है तथा एक से अधिक वर्णों का भी। परन्तु उसमें अर्थबोध की शक्ति होनी चाहिए। पद से प्रतीत होने वाला अर्थ सदा एक ही प्रकार का नहीं हुआ करता। उसके अनेक भेद होते हैं। इसलिए पद की परिभाषा देने के पश्चात् विश्वनाथ ने पद से प्रतीत होने वाले अर्थों का विचार किया है। वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य रूप से अर्थ तीन प्रकार का होता है। शब्द से अर्थ का बोध कराने वाली शक्ति (वृत्ति) भी तीन ही है। इन्हें क्रमशः अभिधा, लक्षणा तथा व्यंजना कहते हैं। शक्तियों से जब अर्थ का बोध होता है तो उस समय अर्थबोधक शब्दों को क्रमशः वाचक, लक्षण और व्यंजक नाम से पुकारा जाता है। कुछ आचार्य पदों के समूह वाक्य, के अन्वित अर्थ को पदार्थ से भिन्न वाक्यार्थ मानते हैं तथा इसी को तात्पर्यार्थ कहते हैं। यह तात्पर्या नामक चतुर्थ शक्ति से प्रतीत होता है तथा इसके बोधक समूह को वाक्य कहते हैं। इस परिच्छेद में अभिधा, लक्षणा तथा व्यंजना के भेदोपभेदों का विवेचन किया गया है।

तृतीय परिच्छेद-तीसरे परिच्छेद में व्यंग्यार्थ रूपी रस का विवेचन है। तीन प्रकार के अर्थों में व्यंग्यार्थ ही सबसे अधिक रोचक होता है। यही व्यंग्यार्थ रस रूप होने पर काव्य की आत्मा होता है इसीलिए विश्वनाथ ने काव्य की परिभाषा करते हुए रसात्मक वाक्य को काव्य कहा है। इस परिच्छेद में रस की परिभाषा, रस का स्वरूप, रस का आस्वाद, प्रकार तथा रस के उपकरण, विभाव, अनुभाव, संचारी भाव तथा स्थायी भाव आदि का वर्णन करते हुए आलम्बन विभाव के रूप में नायक-नायिका आदि का सांगोपांग वर्णन किया गया है। अन्त में रसों से पारस्परिक विरोध तथा उसके निराकरण पर विचार कर रसानुभूति में आठ प्रकार के (रसानुभूति रसाभासानुभूति, भावानुभूति, भासानुभूति, भावशान्त्यानुभूति, भावोदयानुभूति, भावसन्ध्यनुभूति, भावशबलतानुभूति भेदों की चर्चा है।)

चतुर्थ परिच्छेद-इस परिच्छेद में काव्य के ध्वनिकाल तथा गुणीभूत व्यंग्य नामक दो भेदों का सांगोपांग वर्णन है। रसात्मक वाक्य को काव्य मानने वाले आचार्य विश्वनाथ ने मम्मट सम्मत चित्रकाव्य नामक तीसरे भेद को नहीं माना है।

पंचम परिच्छेद- इस परिच्छेद में व्यंजना की आवश्यकता का प्रतिपादन किया गया है। अन्य आचार्यों द्वारा व्यंजना के अभिधा अथवा तात्पर्या से गतार्थ होने के सम्बन्ध दिए गए तर्कों का खण्डन युक्तिपूर्वक किया गया है।

षष्टम परिच्छेद-इस परिच्छेद में दृश्य काव्य के भेदोपभेदों का सांगोपांग विवेचन है। इस विवेचन में साहित्यदर्पणकार ने प्रायः धनंजय के दशरूपक को अपना उपजीव्य माना है। परिच्छेद के अन्त में श्रव्यकाव्य के भेदों पर भी विचार किया गया है।

सप्तम परिच्छेद-इस परिच्छेद में काव्यदोषों का सविस्तार वर्णन है। पददोष, वाक्यदोष, अर्थदोष, रसदोष तथा अलंकार दोषों का पूर्ण विवेचन किया गया है।

अष्टम परिच्छेद-इस परिच्छेद में काव्य के आत्मभूत रसों के माधुर्य, ओज और प्रसाद नामक गुणों का विवेचन हैं। गुणों के सम्बन्ध में पूर्वाचार्यों की उन मान्यताओं का खण्डन किया गया है जिनके अनुसार 10 शब्द-गुण और 10 अर्थ-गुण माने गए थे।

नवम परिच्छेद-इस परिच्छेद में वैदर्भी, गौडी , पांचाली तथा लाटी नामक रीतियों का विवेचन है।

दशम परिच्छेद-इस परिच्छेद में काव्य की आत्मा रस के उपकारक तत्व अलंकार पर विचार किया है। इस परिच्छेद में 7 शब्दालंकार तथा 75 अर्थालंकारों का विवेचन है। प्रारम्भ में शब्दालंकारों की चर्चा है तथा अन्त में अर्थालंकारों का सांगोपांग विवेचन करके अन्त में अलंकार सम्मिश्रण के दो भेद संसृष्टि और संकर पर भी विचार किया गया है।

इस प्रकार विश्वनाथ ने भरत से लेकर मम्मट पर्यन्त लगभग सभी प्रमुख काव्याचार्यों के सिद्धान्तों का मन्थन करके उनका सार अपने ग्रन्थ में देने का सफल प्रयत्न किया है। अनेक स्थानों पर उनकी आलोचना कटुता को स्पर्श करती प्रतीत होती है। विशेष रूप से मम्मट की काव्यालोचना के प्रसंग में से सीमा का उल्लंघन करते प्रतीत होते हैं। परन्तु वास्तविकता यह है कि विश्वनाथ के काल में काव्य प्रकाश की प्रसिद्धि तथा प्रतिष्ठा अपनी चरम सीमा पर थी। इसलिए अपने जीवन ग्रन्थ को प्राचीन काव्य समीक्षा-ग्रन्थों के समक्ष खड़ा करने के लिए उन्हें काव्य प्रकाश की कटु आलोचना करनी पड़ी। इतना होने पर भी इस बात से किसी की असहमति नहीं हो सकती कि विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में साहित्य शास्त्र सम्बन्धी सभी सिद्धान्तों को सुबोध शैली में प्रस्तुत करने में पर्याप्त सफलता प्राप्त की है।

17.3.4 विश्वनाथ के अनुसार काव्य-प्रयोजन

साहित्यदर्पण शब्द में प्रयुक्त साहित्य शब्द काव्य का बोधक है। अतः साहित्य अर्थात काव्य के प्रयोजन ही इस ग्रन्थ के भी प्रयोजन हैं। इसलिए इस ग्रन्थ के प्रयोजन बताते समय विश्वनाथ काव्य के प्रयोजनों पर चर्चा करते हैं। उनकी दृष्टि में काव्य का मूलभूत प्रयोजन है-

(1) **चर्तुवर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि।**
काव्यादेव यतस्तेन तत्स्वरूपं निरुप्यते।।

अल्प बुद्धि व्यक्तियों को भी सुख-पूर्वक धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष- इन पुरुषार्थ-चतुष्टय की प्राप्ति काव्य से होती है। मानव जीवन का चरमोद्देश्य (चरम उद्देश्य) इसी चतुर्वर्ग की प्राप्ति माना गया है काव्य इनकी प्राप्ति बड़ी ही सरलता से करा देता है। इसलिए मानव जीवन में काव्य की उपादेयता स्वतः सिद्ध हो जाती हैं रामायणादि काव्य को पढ़कर पाठक को यह शिक्षा मिलती है कि राम आदि सत् पुरुषों के समान आचरण करना चाहिए, रावण आदि दुष्टों के समान नहीं। इस प्रकार मानव धर्म-कर्म की ओर सहज ही प्रवृत्त हो जाता है। विश्वनाथ के इस यह से आचार्य मम्मट भी सहमत हैं। देवस्तुति परख कार्यों से धर्म की प्राप्ति प्रत्यक्ष सिद्ध है। मयूर कवि ने सूर्य की स्तुति करके कुष्ठ से निवृत्ति प्राप्त की थी। काव्य पढ़ने में हमें शब्दापशब्द का विवेक भी प्राप्त हो जाता है। शुद्ध शब्दों के ज्ञान और प्रयोग में धर्म प्राप्त होता है तथा अशुद्ध शब्दों के प्रयोग से अधर्म। इस विषय में महाभाष्यकार पतंजलि की उस उक्ति को प्रमाणरूप में उद्धत करते हैं जिसमें कहा गया है- **(2) "एक: शब्दः सुप्रयुक्त: सम्यग्ज्ञातः स्वर्गेलोके कामधुग्भवति"** अर्थात् एक

ही शब्द यदि अच्छी प्रकार से जान लिया जाए तथा उसका ठीक प्रयोग किया जाए तो यह स्वर्ग तथा इस लोक में कामधेनु (इच्छाओं को पूर्ण करने वाला) होता है। कवियों को काव्यकृतियों पर पुरस्कार के रूप में प्राचीनकाल से अर्थ प्राप्ति होती रही है। इस संसार में अर्थ (धन) से ही काम (इच्छा) प्राप्ति (पूर्ति) होती है। रही मोक्ष प्राप्ति की बात, वह धर्म कर्मों के फल के रूप में प्राप्ति होगी ही। दूसरी बात यह है कि काव्य पढ़ने से मोक्ष का मार्ग दिखाने वाले ग्रन्थों को समझने की शक्ति प्राप्त होती है, इसलिए मोक्षोपयोगी ग्रन्थों को पढ़कर मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार काव्य पढ़ने से चतुर्वर्ग की प्राप्ति निश्चित है। यद्यपि यह तर्क किया जा सकता है कि वेद आदि शास्त्रों को पढ़ने से भी तो पुरुषार्थचतुष्टय की प्राप्ति हो सकती है तो फिर नवीन काव्यों की क्या आवश्यकता है। इसका उत्तर पहले ही दिया जा चुका है। वेदादि शास्त्रों का पढ़ना सरल कार्य नहीं है। इसके लिए परिपक्व बुद्धि तथा कठोर श्रम की आवश्यकता होती है। परन्तु सुकुमार बुद्धि वाले व्यक्तियों द्वारा काव्य सरलता से पढ़े जा सकते हैं। इसलिए सरल उपाय होने के कारण उपादेय है। यदि रोग की शान्ति के लिए खाण्ड से कार्य चल जाए तो कौन ऐसा बुद्धिमान होगा जो कड़वी औषधि सेवन करे। काव्य की उपादेयता के विषय में विश्वनाथ ने अपने ग्रन्थ 'साहित्यदर्पण' में अग्निपुराण से उदाहरण उद्धृत किया है-

'नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा।
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा।।
'काव्यालापाश्च ये केचिद् गीतकान्यखिलानि च।
शब्दमूर्तिधरस्यैते विष्णोरंशा महात्मनः।।

अर्थात् पहले तो संसार में मनुष्य जन्म मिलना ही कठिन है, फिर विद्या होना और भी दुर्लभ है। इस पर भी कवित्व प्राप्त करना अति दुर्लभ और उसमें शक्ति प्राप्त करना अर्थात् कविता करने की स्वाभासिद्ध शक्ति पाना परम दुर्लभ है। विष्णुपुराण में भी लिखा है- सब काव्य और सम्पूर्ण गीत, शब्दरूपधारी भगवान् विष्णु के अंश हैं।

एक आलोचनात्मक दृष्टि

विश्वनाथ से पूर्ववर्ती सभी आचार्यों ने प्रायः काव्य के प्रयोजनों पर विचार किया है आचार्य मम्मट में इन सभी आचार्यों के मतों पर विचार करते हुए अपना मत इस रूप में दिया है।

काव्ययशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृत्तये कान्तासम्मित्तयोपदेशयुजे।।

अर्थात काव्य के छः प्रयोजन है- यश, अर्थ-प्राप्ति, व्यवहारज्ञान, अमंगल का नाश, आनन्द की प्राप्ति तथा पत्नी के समान मधुर वचनों से उपदेश। इन छः में भी मम्मट ने अपूर्व आनन्द की प्राप्ति मूर्धाभिषिक्त प्रयोजन माना है परन्तु विश्वनाथ ने मम्मटोक्त प्रयोजनों का उल्लेख करते हुए भी काव्य को चतुर्वर्ग की प्राप्ति का साधन बताकर उसकी उपादेयता को चार चांद लगाने का प्रयत्न किया है। यद्यपि वैज्ञानिक विवेचन मम्मट का है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. साहित्य दर्पण किसकी रचना है?
2. काव्य के प्रयोजन के चार वर्ग कौन-कौन से हैं?
3. काव्य का प्रयोजन क्या है?
4. काव्य के अधिकारी कौन है?

17.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में विश्वनाथ के काव्य प्रयोजन में चतुवर्ग फल प्राप्ति का वर्णन वर्णित है कि काव्य से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

17.5 कठिन शब्दावली

1. इन्दु - चन्द्रमा2. **गिरां** - वाणी**3. तमः**– अन्धकार**4.अपहृत्य** - नष्ट करके, 5. **अखिलान्** – समस्त **6.चतुर्वर्ग-** धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, **7.अल्प** – थोड़ा।

17.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. आचार्य विश्वनाथ की 2. धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, 3. चतुर्वर्गप्राप्ति 4. काव्य-प्रेमी सामाजिक जन।

17.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

17.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. आचार्य विश्वनाथ के अनुसार काव्य-प्रयोजन परिभाषित कीजिए।
2. विश्वनाथ के अनुसार काव्य का क्या स्वरूप है?
3. आचार्य विश्वनाथ का जीवन परिचय लिखिए।
4. चर्तुवर्गफलप्राप्ति पर टिप्पणी लिखिए।

इकाई-18
काव्य लक्षण

संरचना

18.1 प्रस्तावना

18.2 उद्देश्य

18.3 आचार्य विश्वनाथ द्वारा मम्मट के काव्य लक्षण का खण्डन

18.3.1 आलोचना की प्रत्यालोचना

18.3.2 कुन्तक का काव्य-लक्षण

18.3.3 आनन्दवर्द्धन का काव्य-लक्षण

18.3.4 वामन का काव्य-लक्षण

18.3.5 विश्वनाथ का काव्य-लक्षण

18.3.6 विश्वनाथ के काव्य-लक्षण में दोष, गुण, अलंकार तथा रीतियों का स्थान

- स्वयं आकलन प्रश्न

18.4 सारांश

18.5 कठिन शब्दावली

18.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

18.7 सहायक ग्रन्थ

18.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

18.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में आलोचना-प्रत्यालोचना, मम्मट, कुन्तक, आनन्दवर्द्धन तथा वामन के काव्य लक्षण का विश्वनाथ के द्वारा खण्डन, विश्वनाथ का काव्य-लक्षण तथा उसमें दोष, गुण, अलंकार एवं रीतियों के विषय में विस्तार से पढ़ेंगे।

18.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

- विश्वनाथ के द्वारा मम्मट, कुन्तक, आनन्दवर्द्धन, वामन आदि आचार्यों के काव्य-लक्षण के खण्डन केविषय में जानेंगे।
- विश्वनाथ के काव्य-लक्षण एवं उसमें दोष, गुण, अलंकार, रीतियों का स्थान इस विषय को जानेंगे।

18.3 आचार्य विश्वनाथ द्वारा मम्मट के काव्य लक्षण का खण्डन

काव्य लक्षण पर विचार करते समय कविराज विश्वनाथ ने पहले अन्य आचार्यों के काव्य लक्षणों पर विचार किया है। उन लक्षणों के दोषों को दर्शाते हुए अन्त में उन्होंने अपना काव्य-लक्षण प्रस्तुत किया है। इस प्रक्रिया में सर्वप्रथम उन्होंने काव्यप्रकाशकार मम्मट के काव्य लक्षण पर विचार किया है। मम्मट का काव्य-लक्षण है "**तत् अदोषौशब्दार्थौंसगुणौअनलंकृतिपुनः क्वापि।**" इस लक्षण में प्रयुक्त तत् सर्वनाम पूर्ववर्णित काव्य के लिए प्रयुक्त हुआ है। इस प्रकार मम्मट की प्रमुख स्थापना है। शब्दार्थी अर्थात् शब्द और अर्थ काव्य होते हैं। प्रत्येक शब्द और अर्थ काव्य न होने लगे, इसलिए मम्मट ने शब्दार्थ के तीन विशेषण दिए हैं जो विशेष प्रकार के शब्दार्थ तक ही काव्य को सीमित कर देते हैं। ये विशेषण है- दोष रहित, गुण-सहित तथा कभी-कभी अलंकार रहित भी, परन्तु प्रायः अलंकार सहित। ऊपर के विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मम्मट दोष रहित, गुण-सहित तथा प्रायः अलंकृत शब्दार्थ को काव्य मानते हैं।

अदोषों की आपत्ति-विश्वनाथ को मम्मट द्वारा किए गए शब्दार्थ के इन तीनों विशेषण पर आपत्ति हैं इनका कहना है कि यदि दोषरहित शब्दार्थ को ही काव्य मानेंगे तो काव्य का क्षेत्र या लुप्त हो जाएगा या फिर अत्यन्त सीमित हो जाएगा। क्योंकि सर्वथा निर्दोष काव्य मिलना असम्भव होगा।

दूसरी बात यह है कि कोई भी लक्षण ऐसा होना चाहिए जिनमें अव्याप्ति अतिव्याप्ति और असम्भव दोष न हो। यदि अदोष शब्दार्थ को काव्य मानेंगे तो अव्याप्ति दोष से बचना कठिन होगा। जहाँ लक्षण लागू होना चाहिए यदि वहां पर न लगे तो अव्याप्ति दोष होता है। हनुमन्नटक में 'न्यक्कारोह्ययमेव आदि एक श्लोक आया है। रावण की इसी उक्ति में 'अयमेव न्यक्कार' के स्थान पर न्यक्कारो ह्ययमेव कहा गया है। सामान्य नियम के अनुसार पहले उद्देश्य तथा बाद में विधेय का प्रयोग होना चाहिए। इसमें नियम का उल्लंघन होने से यह काव्य विधेयाविमर्श दोष से युक्त हो गया है इसी श्लोक के अंन्तिम चरण में स्वर्गग्रामटिका विलुण्ठन वृथोच्छूनैः किमेभिर्भुजैः पंक्ति में यद्यपि कवि का अभिप्राय उच्छून (मोटी) भुजाओं के वृथात्व का प्रतिपादन करता है परन्तु उसने वृथा पद को समास में उच्छून से पहले रखकर उसे गौण बना दिया है कवि कहना चाहता है मोटी तुरन्त व्यर्थ भुजाओं से क्या लाभ, परन्तु कहा गया है- व्यर्थ मोटी भुजाओं से क्या लाभ? इस प्रकार यहाँ पृथात्मक प्रधान न रहकर उच्छनत्व प्रधान हो गया है यहाँ भी विधेयाविमर्श दोष है। मम्मट के अनुसार यदि दोषरहित रचना को ही काव्य मानेंगे तो यह श्लोक काव्य-श्रेणी से वहिर्भूत समझा जाएगा। जबकि वास्तविकता यह है कि प्रस्तुत श्लोक को सभी काव्याचार्यों ने ध्वनि काव्य होने के कारण उत्तम काव्य माना है। यहाँ यह कहकर भी पीछा नहीं छुड़ा सकते कि दोषयुक्त अंश ही अकाव्य है, शेष अंश ध्वनि काव्य है क्योंकि अकाव्य और ध्वनि काव्य की खींचतानी में यह कहीं का भी नहीं रहेगा। वास्तविकता तो यह है कि काव्य के किसी अंश में दोष होगा तो वह सारे काव्य को ही दूषित कर देगा। यदि कोई काव्य की आत्मा रस के विधायक नहीं है तो उन्हें दोष ही नहीं माना जाता। काव्य में कुछ दोष नित्य होते हैं, कुछ अनित्य। जो दोष सर्वत्र रस-विघात के कारण होते हैं वे नित्य दोष होते हैं, तथा जो कहीं पर रस-विघात होते हैं तथा कहीं पर रस पोषक होते हैं, उन्हें अनित्य दोष कहा जाता है श्रुतिकटु आदि दोष शृंगार जैसे ललित रस में तो दोष होते हैं परन्तु रौद्र जैसे दीप्ति रस में दोष नहीं होते प्रत्त्युत गुण होते हैं। इस प्रकार सारे काव्य के अंश का दोष भी रसापकर्षक होने के कारण सारे काव्य को दूषित कर देगा।

इससे काव्य का क्षेत्र समाप्त नहीं तो अत्यन्त सीमित अवश्य ही हो जाएगा क्योंकि रससिद्ध कवियों की रचनाएँ भी सर्वथा दोष-मुक्त नहीं हुआ करती।

मम्मट के पक्षधरों में 'अदोषौ:' का अर्थ 'ईषद् दोषौ' अर्थात् 'स्वरूप दोष युक्त' किया है। यहां नञ् समास ईषद् अर्थ में है जैसे अनुरास कन्या का अर्थ स्वरूप उदर वाली कन्या है उसी प्रकार अदोषौ का अर्थ भी ईषद् दोषौ है। ऐसा मानने पर तो और भी गड़बड़ होने की सम्भावना है क्योंकि सर्वथा निर्दोष रचना काव्य श्रेणी से बहिर्भूत हो जाएगी। यदि इस दोष के परिहार के लिए यह कहें कि यदि दोष हो ही तो स्वल्प होना चाहिए तो भी उचित नहीं क्योंकि जिस प्रकार रत्नों का स्वरूप निर्देश करते समय यह नहीं कहा जाता कि कीटानुवेध (कीड़ा खाया) दोष से रहित ही रत्न होता है, उसी प्रकार काव्य लक्षण में भी दोषरहित शब्दार्थ काव्य होते हैं, यह नहीं कह सकते। वास्तव में कीटाणु आदि दोष रत्नों की रत्नता को समाप्त नहीं करते, अपितु उनकी उपादेयता में उत्कर्षापकर्ष के कारण ही होते हैं। इसी प्रकार श्रुतिकटु आदि दोष भी काव्य की काव्यता को समाप्त नहीं करते अपितु उसकी उत्कृष्टता को कम कर देते। दोष के होने पर भी जहां रसानुभूति होती है वहाँ काव्यता अवश्य होती है। विश्वनाथ से इस विषय में अन्य आचार्यों को भी प्रमाण रूप उद्धृत किया है।

सगुणौ भी अनुचित- विश्वनाथ के अनुसार शब्दार्थौं को 'सगुणौ' कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि मम्मट ने स्वयं गुणों को उसी प्रकार अंगी अर्थात् रस का धर्म माना है जिस प्रकार शौर्य आदि आत्मा के धर्म होते हैं। शब्दार्थ तो काव्य के शरीर है। इसलिए गुण शरीर के धर्म नहीं हो सकते। वे तो रस रूप आत्मा के धर्म ही हो सकते है। यदि यहाँ यह कहें कि रस के अभिव्यंजक शब्दार्थ परम्परा सम्बन्ध से रस के धर्म गुणों के भी अभिव्यंजक मान लिए जाते हैं, तो यह भी ठीक नहीं क्योंकि पहले इस बात का निर्णय होना चाहिए कि काव्य के शरीरभूत शब्द और अर्थ में रस है, या नहीं। यदि कहें कि रस नहीं है तो फिर गुण भी नहीं हो सकते क्योंकि गुण इनके साथ अन्वयव्यातिरेक सम्बन्ध रखते हैं। किसी वस्तु के होने पर अन्य वस्तु का होना अन्वय तथा किसी वस्तु के न होने पर अन्य वस्तु का न होना व्यतिरेक सम्बन्ध कहलाता है। यदि रस होता तो गुण भी होंगे, यदि रस नहीं होगा तो गुण भी नहीं होंगे। यही रस और गुणों का अन्वय-व्यतिरेक सम्बन्ध है। इसलिए यदि शब्द और अर्थ में रस नहीं है तो उनमें रस के धर्म गुण भी नहीं हो सकते। यदि यहाँ यह कहें कि काव्य के शरीरभूत शब्दार्थ में रस होता है तो फिर रसवन्ती (सरसौ) विशेषण देना ही ठीक होता। यदि हम कहें कि सगुणौ पद से भी सरसौ अर्थ प्रतीत हो जाएगा क्योंकि गुण रस के बिना रह ही नहीं सकते, तो भी सगुणौ विशेषण न देकर सरसौ ही देना चाहिए था क्योंकि यह देश प्राणिमान् है, इस वाक्य के स्थान पर 'यह देश शौर्यमान है' ऐसा कोई नहीं कहता। कहने का तात्पर्य यह है कि गुणों के कथन के प्रसंग में गुणी के कथन से काम नहीं चला करता। यदि 'सगुणौ शब्दार्थौं' का अभिप्राय यह है कि गुणों के अभिव्यंजक शब्द और अर्थ ही काव्य में प्रयुक्त करने चाहिए तो ठीक नहीं क्योंकि गुणों के अभिव्यंजक शब्दार्थ का काव्य होना केवल उसके उत्कर्ष को बढ़ाने वाला ही होगा, उसके स्वरूप का परिचायक नहीं होगा क्योंकि काव्याचार्यों ने काव्य-पुरुष की कल्पना में शब्द और अर्थ को शरीर, रसादि को आत्मा, माधुर्य आदि गुणों की शूरता

वीरता के समान, श्रुतिकटु आदि दोषों को काणत्व के समान वैदर्भी आदि रीतियों को शरीर के अवयव संस्थान (अंगविन्यास) के समान तथा शब्दालंकार एवं अर्थालंकार को कटक, कुण्डल आदि के समान माना है।

उपर्युक्त विवेचन से ही यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मम्मट ने काव्य स्वरूप का निर्देश करते हुए शब्द और अर्थ के विशेषण के रूप में अनलंकृति (अलंकार रहित) पद का प्रयोग किया है, वह भी ठीक नहीं है क्योंकि अलंकृत शब्द और अर्थ-काव्य की शोभा को ही बढ़ाते हैं, उसके स्वरूप के परिचायक नहीं हो सकते।

'अनलंकृत पुनः क्वापि' शब्द की व्याख्या करते हुए मम्मट ने कहा कि काव्य में प्रयुक्त शब्द और अर्थ प्रायः अलंकार-सहित ही प्रयुक्त होते हैं। परन्तु यदि कहीं पर अलंकार स्फुट न भी हो तथा रचना सरस हो तो वहाँ पर काव्यत्व रहता ही है। अस्फुट अलंकार का उदाहरण देते हुए मम्मट ने 'यः कौमारहरः' श्लोक को उद्धृत किया है। इस श्लोक में विप्रलम्भ शृंगार की सुन्दर अनुभूति कराई गई है तथा कोई विशेष अलंकार स्फुट नहीं है। परन्तु विश्वनाथ ने मम्मट के इस उदाहरण की भी शव परीक्षा की है। उन्हें यहाँ कौमारहर, वर आदि में अनुप्रास तथा अनुत्कण्ठा के कारणों के होने पर नायिका के मन में अनुकण्ठा नहीं हो रही है, इसलिए विशेषोक्ति तथा उत्कण्ठा के कारण न होने पर भी चित्त में उत्कण्ठा हो रही है, इसीलिए विभावना तथा इन दोनों अलंकारों में किसी एक का साधक या बाधक प्रमाण नहीं है, इसलिए इन दोनों का सन्देह संकर अलंकार दिखाई दे रहा है।

18.3.1 आलोचना की प्रत्यालोचना

विश्वनाथ ने मम्मट के काव्य-लक्षण की जो आलोचना की है वह आपततः देखने पर नितान्त युक्तिसंगत प्रतीत होती है। मम्मट के शब्दों को लेकर उन्होंने उनके खण्डन में जो तर्क प्रस्तुत किए हैं वे एक सफल वकील के उन तर्कों से कम महत्त्व नहीं रखते जिनके द्वारा वह विधि या शासकों की स्वाभिमत व्याख्या करके अपने पक्ष का समर्थन और विपक्ष का खण्डन करता है। वास्तव में मम्मट काव्य लक्षण पर विचार करते समय जिन ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि पर विश्वनाथ को ध्यान रखना चाहिए था वह उसकी दृष्टि से ओझल ही रही थी। फिर अपने काव्य-लक्षण को सर्वोत्तम बनाने के फेर में वे जानबूझ कर उसकी उपेक्षा करते रहे। मम्मट से पूर्व भरत या अग्निपुराणकार से लेकर अभिनवगुप्त तक संस्कृत काव्य-लक्षण की सर्वतोभद्र बनाने के फेर में जानबूझ कर उसकी उपेक्षा करते रहे। मम्मट से पूर्व भरत या अग्निपुराणकार से लेकर अभिनवगुप्त तक संस्कृत काव्य-शास्त्र में काव्य के सारभूत तत्व के बारे में रस, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति एक ध्वनि के रूप में जो बाद में प्रचलित रहे वे हटवाद का रूप धारण करने व कारण काव्य के विषय में प्रायः एकांगी दृष्टि से ही विचार कर सके थे। भामह के अलंकारवाद ने पूर्वचालित भरत के रसवाद को प्रायः अभिभूत कर दिया था। रीति एवं वक्रोक्तिवादी भी काव्य के कथ्य की अपेक्षा कथन-प्रकार पर ही रीझते रहे। ध्वनिकार ने कथन-प्रकार की अपेक्षा कथ्य पर बल देकर पुनः रसवाद की प्रतिष्ठा का प्रयत्न किया परन्तु भट्टनायक तथा मुकुलभट्ट आदि काव्याचार्य ध्वनि सिद्धान्त के खण्डन में इस प्रकार जुट गए मानो उनके पाण्डित्य की एक मात्र सार्थकता ध्वनि का उन्मूलन करने में ही हो। ऐसी स्थिति में मम्मट ने

काव्य के सम्बन्ध में एक सर्वांगीण दृष्टि से विचार किया और अपने युग तक प्रचलित सभी प्रमुख काव्यशास्त्रीय मान्यताओं को उचित महत्त्व देते हुए काव्य विशेष के नहीं अपितु काव्य-सामान्य के सर्वसम्मत स्वरूप व दर्शाने का भगीरथ प्रयन्त किया। इसलिए उनके काव्य-लक्षण में प्रयुक्त अदोषौ पद ने काव्य के ऐसे निर्दिष्ट स्वरूप की ओर संकेत किया है जिससे रसानुभूति में बाधा न हो। सर्वथा निर्दिष्ट वस्तु सर्वथा असम्भव है। इसलिए मम्मट के भाव को न समझकर उनके शब्दों की मनमानी व्याख्या करके ही विश्वनाथ ने इस विशेषण की आलोचना की है। मम्मट के काव्य-लक्षण में सरसौ के स्थान पर 'सगुणौ पद का प्रयोग भी जानबूझ कर किया है। गुण रस के बिना नहीं रह सकते, शब्दार्थ को सगुण मानकर मम्मट ने रस की सत्ता तो आवश्यक मानी ही है, साथ ही गुणाभिव्यंजक शब्दार्थ की संघटना विशेष को रीति का नाम देने वाले तथा उस रीति को गुणाभिव्यंजक भी मानने वाले वामन और दण्डी आदि की मान्यताओं का भी समावेश कर लिया है। अन्तिम विशेषण है- अनलंकृती पुनः क्वापि। यहां पर मम्मट ने संस्कृत पुनः क्यापि न कहकर नं युक्त अनलंकृति पद का प्रयोग करके इस बात की ओर स्पष्ट संकेत किया है कि रसवन्ती रचना के लिए अलंकार का होना आवश्यक नहीं है। इस नञ के माध्यम से उन्होंने भामह आदि द्वारा मान्य अलंकारों की अपरिहार्यता की ओर अपनी अरुचि प्रकट की है। परन्तु वे शोभा के बढ़ाने वाले होते हैं। इसलिए उनकी उचित उपादेयता को स्वीकार करते हुए 'यत् सर्वत्र सालंकारी, क्वचित् स्फुटालंकार विरहेऽपि अर्थात् काव्यवर्ती शब्दार्थ सर्वत्र अलंकृत होते हैं। परन्तु यदि कहीं अलंकार स्फुट प्रतीत न भी हो तो भी काव्यत्व की हानि नहीं होती- यह कहकर पूर्ण सामंजस्य स्थापित कर दिया है। अस्फुटालंकार का जो उदाहरण मम्मट ने दिया है वह उचित ही है क्योंकि यहां पर कोई एक अलंकार स्पष्ट रूप से प्रतीत होकर काव्य की शोभा को नहीं बढ़ा रहा। वहाँ तो पाठक अलंकार की सहायता के बिना ही शृंगार रस का आस्वाद करने लगता है।

यदि विश्वनाथ की दृष्टि से प्रस्तुत श्लोक के अलंकार का अन्वेषण करने लगे तो यहाँ विभावना, विशेषोक्ति तथा इनके सन्देह संकर के अतिरिक्त दीपक, परिसंख्या, समुच्य, तुल्ययोगिता, स्मरण तथा काव्यलिंग जैसे अर्थालंकारों की सम्भावना तथा 'यः स एवं हिः वर' में हरः और वरः में अनुप्रास रूप शब्दालंकर की सद्भावना की बात भी की जा सकती है। परन्तु वास्तविकता यह है कि जब तक कोई उक्ति अलंकरण का कार्य नहीं करती तब तक उसे अलंकार ही नहीं कह सकते। इस परिस्थिति में जब वहाँ रस स्वतः सिद्ध है तथा पाठक उसी में निमग्न होकर आनन्दित होने लगता है, तो फिर उक्ति प्रकार पर उसका ध्यान नहीं जाता। इसलिए यहाँ उक्ति अलंकरण का कार्य ही नहीं करती। इस दृष्टि से मम्मट ने कहा है कि यहाँ अलंकार स्फुट नहीं है अर्थात् स्फुट रूप से अलंकरण का काम नहीं कर रहा।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि विश्वनाथ ने मम्मट के शब्दों से मनमानी क्रीड़ा की है, उनके भाव को नही परखा है। मम्मट ने काव्य-सामान्य लक्षण देने का प्रयत्न किया है न कि विश्वनाथ के समान काव्य-विशेष (उत्तम-काव्य) का स्वसम्मत लक्षण।

सरस्वतीकण्ठाभरणकार भोज ने काव्य का जो लक्षण दिया है उनमें उन्होंने अदौष, गुणवत् तथ अलंकृत ये तीनों विशेषण प्रस्तुत किये हैं। इसलिए यह लक्षण भी मम्मट के लक्षण के समान विश्वनाथ को अमान्य है। इसकी आलोचना वही है जो मम्मट के लक्षण की है।

18.3.2 कुन्तक का काव्य-लक्षण

वक्रोक्ति जीवितकार कुन्तक का **'वक्रोक्ति काव्यजीवितम्'** अर्थात् वक्रोक्ति (विशिष्ट प्रकार की उक्ति) ही काव्य की आत्मा है। यह लक्षण विश्वनाथ को मान्य नहीं है क्योंकि वक्रोक्ति अलकार से भिन्न नहीं है तथा अलंकार शोभादायक तत्व होता है। प्राणदायक नहीं।

18.3.3 आनन्दवर्द्धन का काव्य-लक्षण

तदन्तर वे ध्वन्यालोक के लेखक आनन्दवर्द्धन के काव्य-लक्षण पर विचार करते हैं। ध्वनिकार ने **'काव्यस्यात्मा ध्वनिः'** अर्थात् ध्वनि को काव्य की आत्मा माना है तथा ध्वनि के भेदोपभेदों की चर्चा करते हुए वस्तुध्वनि, अलंकारध्वनि तथा रसध्वनि से तीन भेद किए हैं। विश्वनाथ केवल रसादिरूप ध्वनि को ही काव्य प्राणधायकत्व मानते हैं। वस्तुध्वनि को काव्य मानने पर पहेलियों भी काव्य होने लगेंगी क्योंकि पहेलियों में भी प्रतीयमान अर्थ ध्वनित होता है। अब प्रश्न उपस्थित होता है कि यदि रसादिरूप ही काव्य की आत्मा है तो वस्तुध्वनि को काव्य कैसे कहेंगे, जबकि वस्तुध्वनि को भी सभी आचार्य काव्य मानते आए हैं। श्वश्रूरत्र निमज्जति आदि उक्ति में यद्यपि वाच्य अर्थ निवेध रूप है परन्तु प्रतीयमान अर्थ आमन्त्रण रूप होने के कारण विधि रूप है। अतः वस्तु से वस्तु की ध्वनि होने के कारण यह काव्य कहलाने का सर्वथा अधिकारी है। विश्वनाथ का कथन है कि इस युक्ति में काव्यता वस्तुध्वनि के कारण नहीं अपितु रसानासात्मक अनुभूति के कारण ही है, जिसका रसादि शब्द से ग्रहण होता है। इसीलिए केवल वस्तुध्वनि युक्त युक्तियाँ काव्य नहीं कहला सकती। यदि इस प्रकार की उक्तियों को काव्य मानेगें तो देवदत्त (धनी पुरुष) गांव को जा रहा है जैसे साधारण वाक्य भी काव्य कहलाने लगेंगे क्योंकि धनी होने के कारण देवदत्त का गौकर भी साथ जा रहा है। ऐसी वस्तुध्वनि यहाँ भी विद्यमान है। इसलिए रसध्वनि ही काव्य की आत्मा हो सकती है, साधारण ध्वनि नहीं। उपदेशक होने पर भी काव्य और इतिहास का मुख्य भेदक तत्व काव्य की आत्मा हो सकती है। काव्यरत ऐसी मिठाई है जिसे वेदशास्त्रियों से विमुख एवं सुकुमारमति राजपुत्र आदि शिष्यों को खिलाकर (सुनाकर) रसादि के समान आचरण में कृत्य होने के कारण प्रवृत्ति तथा रावणादि के आचरण में अकृत्य होने के कारण अप्रवृत्ति जैसे उपदेश सहज ही दिए जा सकते हैं। इस विषय में विश्वनाथ ने अग्नि पुराण का उदारहण भी उद्धृत किया है, जिसका तात्पर्य है कि काव्य में उक्ति प्रधान होने पर भी जीवव्यापक तत्व रस ही है। इसी बात से व्यक्ति विवेक के लेखक महिमभट्ट भी सहमत हैं। उन्होंने भी काव्य की अंगी (आत्मा) रत अस्वीकार किया है। स्वयं ध्वनिकार ने काव्य और इतिहास का भेद स्पष्ट करते हुए कहा है कि कवि का कार्य केवल इतिवृत्त देना नहीं है। इतिवृत्त का ज्ञान तो इतिहास पुराण से ही हो जाता है। उनका तात्पर्य है कि मात्र वस्तु वर्णन से काव्य नहीं कहलाता।

सरस रचना ही काव्य है-ऐसा मानने पर एक बाधा हो सकती है। प्रबन्ध-काव्यों में कुछ पद मात्र इतिवृत्त निर्वाह के लिए होते हैं। उनमें रस नहीं होता। उन्हें काव्य-कोट में रखना कठिन होगा। इस समस्या

का समाधान विश्वनाथ ने यह तर्क देकर दिया है कि जिस प्रकार एक सरस पद्य में कुछ पद तो नीरस होते ही हैं, फिर भी सम्पूर्ण पथ की सरसता से नीरस पद भी सरस बनते हैं, उसी प्रकार प्रबन्ध के अन्तर्गत कुछ नीरस पथ प्रबन्ध-रस के कारण सरस ही लगते हैं, नीरस नहीं। यहां पर विश्वनाथ ने प्रबन्ध-रस की बात कहकर अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। जो लोग कहते हैं कि नीरस पदों में भी गुणाभिव्यंजक के प्रयोग के कारण, दोष न होने के कारण तथा अलंकृत होने के कारण काव्यत्व होता है- उनका यह कथन लाक्षणिक है, क्योंकि ऐसे स्थलों में काव्यता रसानियुक्त प्रबन्ध-काव्य के साम्य के कारण ही होता है।

18.3.4 वामन का काव्य-लक्षण

'रीतिरात्मा काव्यस्य'अर्थात् काव्य की आत्मा रीति है वामन का यह लक्षण भी विश्वनाथ को मान्य नहीं है क्योंकि रीति का काव्य में वही स्थान है जो शरीर में अवयव संस्थान का होता है। रीति पदसंघटना रूप होने के कारण काव्य की आत्मा नहीं हो सकती। इस मान्यता को विश्वनाथ ने ध्वनिकार के वचनों से ही खण्डित कर दिया है। ध्वनिकार ने ध्वनि को काव्य की आत्मा माना है। ऐसी स्थिति में प्रतीयमान अर्थ ही काव्य की आत्मा हो सकता है- बाध्य अर्थ नहीं क्योंकि बाध्य अर्थ तो शब्दार्थ के रूप में काव्य का शरीर ही है, आत्मा नहीं।

18.3.5 विश्वनाथ का काव्य लक्षण

इस प्रकार पूर्ववर्ती सभी प्रमुख आचार्यों के काव्य लक्षणों का खण्डन करके विश्वनाथ अपना काव्य-लक्षण प्रस्तुत करते हैं- **'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्'**अर्थात् रस है आत्मा जिसकी ऐसा वाक्य काव्य होता है।

रस ही काव्य का जीवनादायक तत्व हैं रस के अभाव में कोई रचना-काव्य नहीं कहला सकती। इस प्रसंग में रस शब्द का अर्थ केवल 'शृंगार आदि रस' ही नहीं है-अपितु रस्यते इति रस, अर्थात जो रसित (स्वादित) होता है, जिसे आनन्द रूप में भोगा जाता है, वह रस है इस व्युत्पत्ति के अनुसार रस, रसाभाव, भाव, भावाभास, भावोदय, भावशांति भावसन्धि अथवा भावशबलता रूप सभी प्रकार की आनन्दात्मक अनुभूतियां रस शब्द से अभिप्रेत हैं। अपने परिच्छेदों में इन सबका विवेचन किया गया है।

रसानुभूति कराने वाली रचना काव्य है-इसका उदाहरण-**'शून्यं वासगृहं विलोक्य शयनादुत्थाय किंचिच्छ नैर्निद्राव्याजमुपागतस्य सुचिरं निर्वर्ण्य पत्युर्मुखम्। विश्रब्धं परिचुम्ब्य जातपुलकामालोक्य गण्डस्थलीं लज्जानम्रमुखी प्रियेण हसता बाला चिरं चुम्बिता।।'**

यहाँ पर नायक-नायिका की पारस्परिक रति ही, विभाव, अनुभाव, संचारीभाव के सहकार से पुष्ट होकर सहृदय हृदय को आनन्दित करती है। अतः यह काव्य है। यहाँ सम्भोग शृंगार रस है।

संस्कृत काव्यशास्त्रियों ने नायक-नायिका विषयक रति को छोड़कर शेष प्रकार की रति को भाव ही माना है, प्रेम, स्नेह, श्रद्धा, मित्रता, वात्सल्य आदि अनेक प्रकार की रति होती है। इसमें नायक-नायिका विषयक रति के अतिरिक्त शेष सभी भावानुभूति के रूप में ही स्वदित होते हैं।

भावात्मक रसानुभूति का उदाहरण- **'यस्यालीयत शल्कसीम्नि जलधिः, पृष्ठे जगन्मण्डलं, दंष्ट्रायां धरणी, नखे दितिसुताधीशः, पदे रोदसी। क्रोधे क्षत्रगणः, शरे दशमुखः, पाणौ प्रलम्बासुरो, ध्याने विश्वम्, असावधार्मिककुलं कस्मैचिदस्मै नमः।"**

इसमें भगवान के दस अवतारों का वर्णन है। इसलिए कविनिष्ट भगवद्-विषय रति ही विभाव, अनुभाव संचारी भावों से पुष्ट होकर पाठक को आनन्दमग्न कर देती है। अतः यह भावात्मक रसानुभूति है।

यदि रस-सामग्री के उपयोग में औचित्य का अतिक्रमण किया गया हो तो यहाँ पर रसात्मक अनुभूति न होकर रसाभासात्मक अनुभूति होती है उपनायकनिष्ठ, बहुनायकनिष्ठ, एकपक्षनिष्ठ, गुरुजन विषयक तथा पशु-पक्षी विषयक रति का स्थायीभाव के रूप में वर्णन शृंगाराभास माना गया है। उदाहरण- मधु द्विरेफः कुसुमैकपात्रे पपौ प्रियां स्वामनुवर्तमानः। श्रृंङ्गेण च स्पर्शनिमीलिताक्षीं मृगीमकण्डूयत कृष्णासारः।। इस उदाहरण में पशु-पक्षियों की रति का वर्णन है, अतः शृंगाराभास है।

18.3.6 विश्वनाथ के काव्य-लक्षण में दोष, गुण अलंकार तथा रीतियों का स्थान

रसात्मक काव्य-रूप काव्य में दोष, गुण, अलंकार तथा रीतियों का क्या स्थान है इस प्रश्न का भी उत्तर विश्वनाथ ने स्वयं दिया है। उनका कथन है कि- **दोषास्तस्यापकर्षकाः** अर्थात् काव्य के अपकर्षक (सौन्दर्य का विघात करने वाले) तत्व दोष कहलाते हैं। जिस प्रकार काणत्व और खञ्जत्व (लंगड़ापन) शरीर की शोभा के विघातक होकर उसी के माध्यम से आत्मा की हीनता सूचित करते हैं, उसी प्रकार श्रुतिदुष्ट (श्रुतिकटु) आदि पद-दोष तथा अपुष्टार्थ आदि अर्थ-दोष भी काव्य के शरीरभूत पदार्थ के अपकर्षक होते हुए परम्परा से काव्य के आत्मभूत रस के भी अपकर्षक होते हैं। रक्त-दोष तो साक्षात् ही रस के अपकर्षक होते हैं। जैसे मूर्खता आदि दोषों से आत्मा का अपकर्ष प्रतीत होता है, उसी प्रकार व्यभिचारी भाव आदि का उनके वाचक शब्द से काव्य में आख्यान करना काव्य की आत्मा रस का साक्षात् अपकर्षक होता है। विश्वनाथ ने सप्तम् परिच्छेद में दोषों के सम्बन्ध में विस्तार से विचार किया है। यदि दोष काव्यात्मभूत रस के अपकर्षक होते हैं, **'उत्कर्षहेत्वः प्रोक्ता गुणलंकाररीतयः'** तो गुण, अलंकार और रीतियाँ काव्यात्मभूत रस के उत्कर्षक होते हैं। जिस प्रकार शूरता आदि गुण आत्मा के उत्कर्षक है, उसी प्रकार माधुर्य आदि गुण रस के उत्कर्षक होते हैं। कटक, कुण्डल आदि अलंकारों से शरीर की शोभा भी बढ़ती है और उसी से आत्मा की शोभा भी बढ़ती है। उसी प्रकार अनुप्रास आदि शब्दालंकार तथा उपमादि अर्थालंकार शब्दार्थ की शोभा के माध्यम से काव्यात्मभूत रस की शोभा भी बढ़ाते हैं और उनके माध्यम से आत्मा का। उसी प्रकार वैदर्भी आदि रीतियों से युक्त पद-संघटना काव्य शरीर की शोभादायक होती हुई उसकी आत्मा रस की भी शोभाधायक होती है। यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है कि गुण यद्यपि रस के धर्म होते हैं फिर यह रस के उत्कर्ष हेतु के रूप में जिस गुण शब्द का प्रयोग किया गया है, वह गुणों के अभिव्यंजक शब्दार्थ के लिए ही है क्योंकि काव्य में रसाभिव्यंजक शब्दार्थ का प्रयोग होता है। अब यदि शब्दार्थ रस के अभिव्यंजक हो सकते हैं तो रस में रहने वाले गुणों के अभिव्यंजक भी हो सकते है। इसलिए पहले भी मम्मटकृत काव्यलक्षण की समीक्षा के प्रसंग में

कहा गया था कि गुणों में अभिव्यंजक शब्द-काव्य के उत्कर्ष के कारण होते हैं। विश्वनाथ के इस विवेचन का निष्कर्ष यही है कि रसात्मक वाक्य (पदसमूह) ही काव्य है। उसी रस की शोभा को साक्षात् या परम्परा सम्बन्ध से घटाने वाले तत्व दोष तथा बढ़ाने वाले तत्व गुण, अलंकार और रीति कहलाते है। काव्य का प्राणदायक तत्व रस है, अतः रसात्मक वाक्य ही काव्य है।

किसी भी कवि, आचार्य या उनकी कृति एवं मान्यताओं की समीक्षा करते समय उनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को सदा ध्यान में रखना चाहिए क्योंकि कोई भी लेखक जब भी कुछ लिखता है तो उस समय की परिस्थिति उसकी विचार प्रक्रिया को अवश्य प्रभावित करती है। वह न केवल अपने परिवेश से ही प्रभावित होता है, अपने से पूर्ववर्ती परिस्थिति से भी किसी न किसी रूप में सम्बद्ध रहता है। तात्पर्य यह है कि किसी भी आचार्य या उसके सिद्धान्त की समीक्षा करते समय तत्कालीन तथा तत्पूर्ववर्ती स्थिति को अवश्य दृष्टिगत रखना चाहिए, क्योंकि वे दोनों ही व्यक्ति की विचारधारा को प्रभावित करती है। विश्वनाथ के काव्य-लक्षण पर विचार करते समय भी इन बातों पर ध्यान देना होगा।

विश्वनाथ जिस युग (तेहरवीं शताब्दी का अन्तिम तथा चौदहवीं शताब्दी का प्रथम चरण) में थे, उस युग तक साहित्यशास्त्र में रस सिद्धान्त अपना निश्चित स्थान बना चुका था। भामह, वामन, दण्डी, कुन्तक आदि ने कथा की अपेक्षा कथन-प्रकार पर जो बल दिया था, उसके विरोध में ध्वन्यालोककार आनन्दवर्धन ध्वनि-सिद्धान्त की स्थापना का प्रयत्न किया था। इन सिद्धान्त के विरोध में भट्टनायक तथा मुकुलभट्ट ने खूब लिखा। परन्तु आचार्य मम्मट ने ध्वनि-सिद्धान्त एवं रसवाद को इस रूप में मिश्रित किया है कि दोनों में कोई भेद नहीं रह गया तथा रस-सिद्धान्त जिसको ध्वनि में ध्वनिकार ने पुनर्जीवित करने का प्रयत्न किया था वह मम्मट के युग में तथा उनके पश्चात् पूर्णरूप से प्रतिष्ठित हो गया था। उसमें कोई सन्देह नहीं कि रस के विषय में जो विरोध था उसमें शिथिलता तो ध्वनिकार के विवेचन के समय ही आने लगी थी। ध्वनि-सिद्धान्त के कटु आलोचक महिमभट्ट ने भी "काव्यस्यात्मनि अंगिनि रसादिरूपे न कस्यचिद् विमति अर्थात् काव्य के आत्म-तत्व अंगीभूत रस आदि के विषय में कोई मतभेद नहीं है" कहकर इसी ओर संकेत किया गया है, फिर भी मम्मट के काल तक यह विरोध चलता रहा था। मम्मट के काव्य-लक्षण में कष्ट और कथन शैली, दोनों का सामंजस्य उस काल की साहित्यिक मान्यताओं की ही देन है परन्तु उसके बाद रस-सिद्धान्त ही एकमात्र सर्वमान्य नहीं तो कम से कम बहुमान्य सिद्धान्त बन चुका था। इस परिस्थिति में विश्वनाथ ने काव्य का लक्षण देने का प्रयत्न किया है।

उपर्युक्त पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर विचार करें तो निश्चित रूप से वाक्यं रसात्मकं काव्यम्- जैसा काव्य-लक्षण एकदम युक्तिसंगत प्रतीत होता है। रस-सिद्धान्त के डिण्डिम घोष के होते हुए यदि विश्वनाथकृत काव्य-लक्षण रसवाद के नारे का रूप धारण कर ले तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। परन्तु कविसम्प्रदाय एवं काव्यालोचक जिस कृतिसमुदाय को काव्य कहते रहे हैं वह समुदाय विश्वनाथ के काव्य-लक्षण से गृहीत हो जाता है, इसमें सन्देह है। स्वयं विश्वनाथ को इस बात का सन्देह था कि उनके काव्य-लक्षण के होने पर सम्भवतः गुण, अलंकार तथा रीतियों का कोई महत्त्व नहीं रह जाएगा तथा उनका लक्षण

काव्यसामान्य का लक्षण न होकर काव्यविशेष का ही लक्षण बनकर रह जाएगा। इसलिए काव्य का लक्षण देकर अन्त में उन्होंने गुण, अलंकार और रीतियों की उपयोगिता की बात भी की है। परन्तु उनके तर्क, उनके काव्य-लक्षण को सामान्य काव्य-लक्षण की भूमि पर नहीं ला सके। यदि रसात्मक वाक्य ही काव्य है तो वाल्मीकि, कालिदास जैसे कवियों को छोड़कर और कवियों को कवि-सम्प्रदाय से बहिष्कृत करना पड़ेगा। इन कवियों की रचनाओं में भी अनेक स्थल ऐसे हैं जहाँ रस नहीं है। विश्वनाथ सम्मत प्रबन्ध रस के अभाव में उन स्थलों को भी अकाव्य ही कहा जाएगा। विश्वनाथ के इस काव्य लक्षण की सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि यह केवल उत्तम काव्य का लक्षण ही हो सकता है। अधम की बात ही क्या, मध्यम काव्य पर भी यह लक्षण घटित नहीं होता। यद्यपि इस दोष से बचने के लिए विश्वनाथ ने काव्य के केवल दो ही भेद किए हैं। उनके अनुसार काव्य ध्वनिर्गुणीभूतव्यग्यं चेति द्विधामतम् अर्थात् काव्य दो प्रकार का होता है, ध्वनि-काव्य और गुणीभूतव्यंग्य काव्य। इन दोनों भेदों में ध्वनि-काव्य के लिए तो उनका लक्षण ठीक है क्योंकि ध्वनि-काव्य में ध्वनि रूप रस की प्रधानता रहती है। इसलिए वहां रस आत्मा रूप में स्थित होता हो। परन्तु गुणीभूतव्यंग्य में व्यंग्य (रसादि गुण होते हैं) प्रधान वाच्यार्थ ही रहता है। ऐसी स्थिति में रस के अप्रधान होने से उसे रसात्मक कैसे कहा जा सकता है। नियम है कि व्ययदेश (नामकरण) प्रधानता के कारण हुआ करता है। गुणीभूतव्यंग्य में रस के अप्रधान होने के कारण उसे रस सहित भले ही कह लें रसात्मक नहीं कह सकते। विश्वनाथ ने- रस एवं आत्मा साररूपतया जीवनधायको यस्य- यह कहकर स्वयं गुणीभूतव्यंग्य को अपने लक्षण से बहिर्भूत कर दिया है। इस लक्षण के अनुसार प्रकृति-वर्णन सम्बन्धी सारा काव्य भी अकाव्य कहलाएगा क्योंकि इन वर्णनों में रस की स्थिति सार्वत्रिक नहीं है। पशु-पक्षियों के स्वभाव का वर्णन करने वाले पथ भी विश्वनाथ की परिभाषा के क्षेत्र में नहीं आएंगे। इस प्रकार रचनाएँ अनेक स्थलों पर उद्दीपन विभाव के रूप में वर्णित हुई है वहां पर विभाव, अनुभाव तथा संचारी आदि के आक्षेप से उन्हें रसात्मक कहा जा सकता है। परन्तु ऐसे स्थलों की संख्या भी कम नहीं है जहाँ प्रकृति-वर्णन उद्दीपन के रूप में न होकर आलम्बन के रूप में ही हुआ है। वहीं पर शुद्ध स्वाभावोक्ति है। अतः रस की स्थिति किसी भी प्रकार नहीं मानी जा सकती। यदि ऐसे स्थानों पर भी येन केन प्रकारेण रस की स्थिति मानेंगे तो भाषा में प्रयुक्त सभी उक्तियाँ सरल हो उठेंगी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि विश्वनाथ ने अलंकारों के उदाहरण देते समय इस बात का पूरा ध्यान रखा है कि उनमें किसी न किसी रूप में रस की स्थिति बनी रहे। उनका स्वाभावोक्ति अलंकार का उदाहरण इस बात का प्रमाण है। उन्होंने जिस व्याघ्र की चेष्टाओं का वर्णन किया है ये भय के आलम्बन की चेष्टाएँ होने के कारण उद्दीपन विभाव है। अन्य सामग्री का आक्षेप हो जाता है तथा भयानक रस को अनुभूति होने के कारण स्वभावोक्ति अलंकार से अलंकृत रचना भी सरस होने से काव्य लक्षण के अन्तर्गत ही है। इतना हीं नहीं उन्होंने शब्दालंकारों के उदाहरण भी ऐसे ही दिए हैं जहाँ रसादि किसी न किसी रूप में स्थित है। उन्होंने यह सारा प्रयास इसलिए किया है कि उनका काव्य-लक्षण कम से कम उनकी कृति में संगत रहे। परन्तु संस्कृत साहित्य में विश्वनाथ ही अकेले कवि तथा आचार्य नहीं है। यदि वे अकेले होते तो वाक्यं रसात्मकं काव्यम् पर कोई आपत्ति नहीं होती। परन्तु इसे विश्वनाथ जी का दुर्भाग्य समझिए कि उनके अतिरिक्त भी कवि है जिनको अन्य काव्याचार्यों ने कवि माना है तथा रस-प्रधान न होने पर उनकी गुणालंकार से युक्त तथा निर्दुष्ट रचनाएं काव्य मानी गई है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

1. 'वाक्यं रसात्मकम् काव्यं किसका लक्षण है?
2. चन्द्रकला नाटिका किसी रचना है?
3. मंगलाचरण में किसी स्तुति की गई है?
4. 'वक्रोक्ति काव्यजीवितम्' काव्य का लक्षण किसके द्वारा प्रदत है?

18.4 सारांश

विश्वनाथ ने मम्मट आदि काव्य के लक्षण का खण्डन किया है तदोपरान्त उन्होंने काव्य का लक्षण प्रस्तुत किया है वाक्यं रसात्मक काव्यं जिसमें उनकी व्याख्या प्रस्तुत की है।

18.5 कठिन शब्दावली

1.क्वापि—थोड़ा**2.वैचक्षण्यं**– निपुणता**3.निषेपणम्** – अध्ययनार्द **4.अभिधेय** – विषय**5.अपकर्ष** - हीनता**6.वक्ष्यामः** - कहेंगे।

18.6. स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. आचार्य विश्वनाथ 2. विश्वनाथ 3. वाग्देवी सरस्वती 4. कुन्तक।

18.7सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बंग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

18.8अभ्यास के लिए प्रश्न

1. वाक्यं रसात्मकं काव्यं की विवेचना कीजिए।
2. वक्रोक्ति जीवितम् लक्षण की विवेचना कीजिए।
3. 'काव्यस्यात्मा ध्वनिः' लक्षण की विवेचना कीजिए।

इकाई-19

वाक्य, महावाक्य, पद एवं शब्द शक्तियों के लक्षण

संरचना

19.1 प्रस्तावना

19.2 उद्देश्य

19.3 वाक्य, महावाक्य एवं पद का लक्षण

19.3.1 अर्थ के भेद

19.3.2 शब्द शक्तियाँ- अभिधा, लक्षणा, व्यंजना

19.3.3 अभिधा शब्द शक्ति 1) संकेतग्रह के उपाय

2) संकेतग्रह का क्षेत्र

19.3.4 लक्षणा शब्द शक्ति

19.3.5 लक्षणा के भेद 1) उपादान लक्षणा

2) लक्षण लक्षणा

- स्वयं आकलन प्रश्न

19.4 सारांश

19.5 कठिन शब्दावली

19.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

19.7 सहायक ग्रन्थ

19.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

19.1प्रस्तावना

पिछलीइकाई में साहित्यदर्पणकार एवं उनकी कृतियों, काव्य प्रयोजन तथा उसके द्वारा मम्मटादि आचार्यों के काव्यलक्षण का खण्डन आप विस्तार में पढ़ चुके हैं। इस इकाई में वाक्य, महावाक्य, पद किसे कहते हैं उससे विस्तार से पढ़ेंगे। अर्थ के प्रकार, तीन प्रकार, की शब्द शक्तियों अभिधा, लक्षणाका विस्तार में अध्ययन करेंगे।

19.2उद्देश्य

- इस अध्याय के पश्चात आप वाक्य, महाकाव्य एवं पद का लक्षण जानेंगे।
- वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य, अभिधा, लक्षणा, शब्द शक्तियों, उनके भेदों के विषय में जानने में सक्षम होंगे।

19.3वाक्य, महावाक्य एवं पद का लक्षण

वाक्य किसे कहते हैं?

गत इकाई में आप विश्वनाथ कविराज-कृत काव्य की परिभाषा पढ़ चुके हैं। उन्होंने रसात्मक वाक्य को काव्य कहा है। इस परिभाषा में रसात्मक पद विशेषण है तथा वाक्य पद विशेष्य है। अतः रस क्या है? यह बतलाने से पहले कि वाक्य क्या है? यह बतलाना आवश्यक समझते हुए विश्वनाथ ने पहले वाक्य की परिभाषा दी है- **वाक्यं स्याद्योग्यताकांक्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः** अर्थात् योग्यता, आकांक्षा तथा आसत्ति से युक्त-पदों का समूह ही वाक्य है। वाक्य में प्रयुक्त पदों के अर्थों में पारस्परिक सम्बन्ध का होना ही योग्यता है। वह्निवना सिंचति अर्थात् वह अग्नि से सींचता है- जैसे पद-समूह को वाक्य नहीं कह सकते, क्योंकि वह्नि शब्द के अर्थ जलाने वाला द्रव्य का सींचना अर्थ से सम्बन्ध नहीं है। संचन क्रिया जल जैसे तरल से ही हो सकती है, अग्नि से नहीं। आकांक्षा का अर्थ है- प्रतीति (बोध) की समाप्ति का अभाव अर्थात् वाक्य में एक पद के अर्थ का बोध अपेक्षित रहता है। जैसे 'पुरुषोगच्छति' जैसे पदों में पुरुष पद का अर्थ-बोध होने पर अस्ति, भवति, विद्यते अथवा गच्छति आदि किसी क्रिया-पद के अर्थ की आकांक्षा श्रोता के मन में जिज्ञासा के रूप में विद्यमान रहती है। यही जिज्ञासा आकांक्षा है। इस आकांक्षा के बिना भी यदि मात्र पद-समूह को वाक्य कहा जाएगा तो पुरुष, गौः, अश्व, हस्ती जैसे क्रियाहीन पद भी वाक्य श्रेणी में आने लगेंगे। आसक्ति का अर्थ है सामीप्य। एक वाक्य में अनेक पदों का प्रयोग होता है। उन सभी के अर्थों का बोध अवच्छिन्न रूप से होने पर ही पद-समूह को वाक्य कहते हैं। आसत्ति के अभाव में यदि पद-समूह वाक्य होने लगे तो आज उच्चारित किए गए 'देवदत्त' आदि शब्द का कल उच्चारित किए जाने वाले गच्छति पद के साथ सम्बन्ध होने पर वाक्यता आने लगेगी। इसलिए आसत्ति अर्थात् पदार्थज्ञान का अविच्छेद या सामीप्य भी वाक्य के लिए आवश्यक है। इसी आसत्ति को शास्त्रकारों ने सन्निधि भी कहा है।

यहाँ पर एक बात विचारणीय है। आकांक्षा श्रोता का जिज्ञासा रूप धर्म है अतः वह श्रोता की आत्मा में रहती है। उस पद-समूह का धर्म कहना आपत्तिजनक हो सकता है तथापि श्रोता के मन में यह आकांक्षा पद-समूह से ही उत्पन्न होती है, इसलिए वह पद-समूह से जन्य है तथा पद-समूह में उस आकांक्षा का जनक है। जन्य जनक होने के कारण परम्परा सम्बन्ध से पद-समूह में आकांक्षा मान ली जाया करती है। इसी प्रकार योग्यता भी पद-समूह की नहीं, अपितु पदों के अर्थ का धर्म है क्योंकि 'जलेन सिंचति' जैसे पद-समूह में परस्पर सम्बन्ध की योग्यता नहीं होती। वह तो जल के अर्थ 'द्रव पदार्थ' तथा सिवति पद का अर्थ से किया

करती है- रूप पदार्थ में ही रहता है। फिर भी उसे पद-समूह का धर्म मान लेते हैं, क्योंकि वाक्य में अर्थ पद के आश्रय पर ही रहता है। अतः आश्रय-आश्रयीभाव के योग्यता पद-समूह में भी मान ली जाती है। यहाँ पर भी साक्षात् सम्बन्ध नहीं है, अपितु परम्परा सम्बन्ध है। इसी का उपचार या गौण सम्बन्ध कहते हैं, उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पद-समूह में आसक्ति धर्म तो साक्षात् रहता है। परन्तु आकांक्षा और योग्यता धर्म-परम्परा सम्बन्ध से रहते हैं। **'अत्राऽऽकाङ्क्षायोग्यतयोरात्मार्थधर्मत्वेऽपि पदोच्चयधर्मत्वमुपचारात्'** पंक्ति का यही अभिप्राय है।

महावाक्य क्या है?

'वाक्योच्चयो महावाक्यम्' आकांक्षा, योग्यता तथा आसक्ति से युक्त वाक्यों के समूह को महाकाव्य कहते है। इस प्रकार वाक्य के ये दो भेद होते है- वाक्य तथा महाकाव्य। तन्त्र वार्तिककार ने भी महाकाव्य की सत्ता स्वीकार की है। उनका कहना है कि प्रत्येक वाक्य अपना निजी अर्थ बताकर समाप्त हो जाता है। फिर यदि एक से अधिक वाक्यों में एक वाक्य दूसरे का पूरक होता है, तो उनमें पुनः एक वाक्यता होती है तथा इस प्रकार एक से अधिक वाक्यों से मिलकर महावाक्य बन जाता है। इस प्रकार एकवाक्यता सीमित नहीं होती। इस दृष्टि से रामायण, महाभारत, रघुवंश तथा अभिज्ञान शाकुन्तल आदि महाकाव्य ही हैं। इनमें आए हुए श्लोकों को वाक्य कहेंगे।

पद का लक्षण

'वर्णाः पदं प्रयोगार्हानन्वितैकार्थबोधकाः'ऊपर पद-समूह को वाक्य कहा है। अब प्रश्न उपस्थित होता है- पद किसे कहते हैं। विश्वनाथ की दृष्टि में वर्ण ही पद है यदि वे प्रयोग योग्य हों, अन्वय रहित एवं अर्थ के बोधक हो, जैसे घटः। संस्कृत भाषा में प्रायः सुप या तिङ् विभक्ति युक्त पद ही प्रयोग होते हैं। कभी भी भाषा में अपद का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसलिए प्रतिपादित अर्थात् मात्र सार्थक इकाई, जिसके अन्त में सुप् विभक्ति नहीं है, पद नहीं होता क्योंकि वह प्रयोग योग्य नहीं है। अन्वय रहित विशेषण इसलिए दिया है जिससे वाक्य और महावाक्य पद ही परिभाषा में न आएं, क्योंकि वाक्य और महावाक्य में एकार्थता तो होती है परन्तु वह अनेक अन्वय-युक्त पदों की होती है, अनन्वित अर्थात् अन्वय रहित पदों की नहीं। एकार्थबोधक वर्ण ही पद है। यह इसलिए कहा है जिससे साकांक्ष वाक्य और महावाक्य पद की परिभाषा से पृथक रहे क्योंकि वे अनेक अर्थों के बोधक होते हैं। अर्थबोधक विशेषण के कारण निरर्थक क च ट त प आदि वर्ण समुदाय पद नहीं कहलाता। यद्यपि विश्वनाथ ने पद की परिभाषा में वर्णाः पद के साथ बहुवचन का प्रयोग किया है तथापि इसका तात्पर्य यह नहीं है कि तीन से कम वर्षों का पद नहीं हो सकता। उ, इ आदि अव्यय एक ही वर्ण के होने पर भी पद है क्योंकि वे अनन्वित एकार्थ के बोधक हैं तथा प्रयोग योग्य है। इस प्रकार कारिका में वर्णाः पद में बहुवचन की विवक्षा नहीं है। एक अथवा दो वर्षों का समूह भी पद हो सकता है।

19.3.1 अर्थ के भेद

पद की परिभाषा करते समय अर्थ-बोधकता की बात कही गई है। अर्थ के भेदोपभेदों का विवरण देते हुए विश्वनाथ ने वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य से तीन प्रकार के अर्थ माने है- **"अर्थो वाच्यश्च लक्ष्यश्च व्यंग्यश्चेति त्रिधामतः"** वाच्य अर्थ यह है जो अभिधा नामक शक्ति से ज्ञात होता है। इसके बोधक पद वाचक कहलाते हैं। इसी प्रकार लक्षणा शक्ति से लक्षण शब्द लक्ष्य अर्थ के बोधक होते हैं तथा व्यंजना शक्ति से व्यंजक शब्द-व्यंग्य अर्थ के बोधक होते हैं।

19.3.2 शब्द शक्तियाँ अभिधा, लक्षणा, व्यंजना

वाच्योऽर्थोऽभिधया बोध्यो लक्ष्यो लक्षणया मतः।
व्यंग्यो व्यंजनया ताः स्युस्तिस्रः शब्दस्य शक्तयः।।

जो अर्थ अभिधा से बोधित हो वह वाच्य, जो लक्षणा से ज्ञात हो वह लक्ष्य और जो व्यंजना से सूचित हो वह व्यंग्य कहलाता है। ये तीनों अभिधा, लक्षणा और व्यंजना शब्द की शक्तियाँ हैं।

19.3.3 अभिधा शब्द शक्ति

"तत्र संकेतितार्थस्य बोधनादग्रिमाऽभिधा" अभिधा शब्द शक्ति उस शक्ति को कहते हैं जो शब्द से संकेतित अर्थ का बोध कराती है। शब्द का संकेतित अर्थ परम्परा से चलता रहता है तथा इसका बोध निम्न उपायों से हुआ करता है-

1) संकेतग्रह (संकेतबोध) के उपाय

(क) **वृद्धव्यवहार-**भाषा में पदों के संकेतिक अर्थ का बोध अधिकतर व्यवहार से ही होता है। सर्वप्रथम बालक किसी बड़े व्यक्ति द्वारा किसी छोटे व्यक्ति से 'गाय लाओ' ऐसा कहते सुनकर छोटे व्यक्ति द्वारा गाय लाने की क्रिया को देखकर गलकम्बल युक्त पशु विशेष का लाया जाना इस प्रकार का प्रथम ज्ञान प्राप्त करता है। तदनन्तर 'गाय को बांधों', 'घोड़ा लाओ' इत्यादि वाक्यों से 'लाओं' के स्थान पर 'बांधों' तथा 'गाय' के स्थान पर 'घोड़ा' शब्दों के प्रयोग से 'गाय' शब्द का 'गल-कम्बल युक्त पशु विशेष' तथा 'लाओं' शब्द का 'लाना' अर्थ रूप संकेत का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। संकेतज्ञान के इस उपाय को वृद्ध व्यवहार कहते हैं।

(ख) **प्रसिद्ध पद समभिव्यवहार-** कभी-कभी किसी प्रसिद्ध अर्थ वाले पद के सान्निध्य के कारण भी दूसरे पद का संकेतित अर्थ जाना जाता है। इह प्रभिन्नकमलोदरे मधूनि मधुकरः पिबति- इस खिले हुए कमल के भीतर मधुकर (भौंरा) मधुपान कर रहा है, इस वाक्य में कमल के साहचर्य से मधुकर शब्द का भौंरा रूप से संकेत ज्ञान होता है।

(ग) **आप्तोपदेश-** कभी-कभी आप्त अर्थात् यथार्थवक्ता के कथन से भी संकेत का ज्ञान हो जाता है जैसे किसी बड़े व्यक्ति द्वारा किसी बालक को घोड़ा दिखाकर 'यह घोड़ा है इस प्रकार का ज्ञान कराना है।

उपर्युक्त उपायों द्वारा जिस संकेतित अर्थ का बोध होता है। उस संकेतित अर्थ की बोधक शब्दशक्ति को अभिधा कहते हैं। अभिधा के संकेतित अर्थ का बोध कराते समय अन्य कोई शक्ति बीच में नहीं होती।

2) संकेतग्रह (बोध या ज्ञान) का क्षेत्र

'संकेतो गृह्यते जातौगुणद्रव्यक्रियासु च' संकेत का बोध जाति, गुण, क्रिया तथा द्रव्य अर्थात् एक व्यक्ति- इन चारों में हुआ करता है। तात्पर्य यह है कि भाषा के शब्द-भण्डार को चार भागों में विभक्त किया जा सकता है- जातिवाचक शब्द, गुणवाचक शब्द, क्रियावाचक शब्द तथा व्यक्ति या द्रव्यवाचक शब्द। जातिवाचक शब्द जैसे गौ, अश्व आदि गौत्व तथा अश्वत्व के बोधक है। वे किसी एक गौ या अश्व के बोधक नहीं होते अपितु सभी गौ या अश्व जाति से सम्बद्ध व्यक्तियों के बोधक होते हैं। गुणवाचक शब्द वस्तुओं के उस सिद्ध धर्म के बोधक होते हैं जो धर्म एक वस्तु की विशेषता का बोध कराके उसे तत्सदृश दूसरी वस्तुओं से पृथक कर देता है। शुक्ल आदि गुणवाचक शब्द वस्तु के साध्य धर्म के बाधक होते हैं जैसे 'पकाना' आदि। चूल्हे पर चढ़ाने से लेकर उतारने तक के एक के बाद दूसरा सभी व्यापार समूह पकाना शब्द से संकेतित होते हैं। द्रव्यवाचक शब्द केवल एक द्रव्य अर्थात् वस्तु के बोधक होते हैं- जैसे हरि, विष्णु, देवदत्त, यज्ञदत्त आदि। इन्हें ही व्यक्तिवाचक भी कहते हैं।

संकेत का ग्रहण उपाधि में होता है

उपर्युक्त गौ आदि जातिवाचक, शुक्ल आदि गुणबोधक, पाक (पकाना) आदि क्रियाबोधक तथा यज्ञदत्त, देवदत्त आदि द्रव्यबोधक (व्यक्तिबोधक) चारों प्रकार के शब्दों में संकेत का ग्रहण व्यक्तियों की उपाधि अर्थात सामान्य रूप- जिसे जाति भी कहते हैं में ही होता है, व्यक्ति अर्थात् विशेष में नहीं, क्योंकि यदि सामान्य में संकेत का बोध न मानकर विशेष में मानेंगे तो गौ शब्द से किसी एक विशेष गौ का ही बोध होगा। अनेक गौ व्यक्तियों का बोध कराने के लिए प्रत्येक गौ शब्द में अलग-अलग संकेत का ग्रहण कराना पड़ेगा। इस प्रकार अनन्त संकेत ग्रहण करने से आनन्त्य (अनन्त होना) दोष आ जाएगा। यदि हम दोष को हटाने के लिए यह कहें कि गौ शब्द के संकेत का ग्रहण होगा तथा शेष गौ शब्द बिना ही संकेत ग्रहण के यदि शब्द अर्थ का बोध कराने लगेगा तो गौ शब्द से अश्व-अर्थ को बोध भी होने लगेगा। इस प्रकार व्यभिचार दोष आएगा। आनन्त्य तथा व्यभिचार दोषों को हटाने के लिए यह मानना आवश्यक है कि सभी प्रकार के शब्द सामान्य का बोध कराते हैं, विशेष का नहीं। इसी सामान्य की उपाधि नाम में अभिहित किया गया है। अन्य शास्त्रों में इसी को जाति, सामान्य महान् तथा अपोह नामों से भी पुकारा जाता है। 'एध्वेय हि व्यस्तेयपाधिषु संकेतों गृह्यते, न व्यक्ती, आनन्त्य-व्यभिचारदोषापातत्' इस पंक्ति का यही आशय है।

19.3.4 लक्षणा शब्द शक्ति

मुख्यार्थवाधे तद्युक्तो ययाऽन्योऽर्थः प्रतीयते।
रूढेः प्रयोजनाद्वाऽसौ लक्षणा शक्तिरर्पिता।।

जब शब्द से प्रतीत होने वाला संकेतित अर्थ का बाध होने पर अर्थात् वाक्य में मुख्यार्थ का अन्वय अनुत्पन्न होने पर रुढ़ि के कारण अथवा किसी विशेष प्रयोजन का सूचन करने के लिए मुख्यार्थ से सम्बन्ध, अन्य अर्थ का ज्ञान, जिस शक्ति द्वारा होता है उसे लक्षणा कहते हैं। यह शक्ति शब्द की स्वाभाविक शक्ति नहीं है, अपितु आरोपित शक्ति है। लक्षणा शक्ति के लिए तीन बातें आवश्यक है-

1) मुख्यार्थ का बाध अर्थात वाच्यार्थ का अनुत्पन्न होना।

2) मुख्यार्थ से लक्ष्यार्थ का सम्बन्ध।

3) लक्षणा का कारणः रूढ़ि अथवा प्रयोजन।

'कलिंगः साहसिक' अर्थात् कलिंग साहसी है- जैसे वाक्यों में कलिंग शब्द का मुख्य अर्थ देश विशेष प्रकृत में संगत नहीं है क्योंकि देश जड़ वस्तु है अतः साहसी नहीं हो सकता। ऐसी स्थिति में कलिंग शब्द अपने से सम्बद्ध पुरुष अर्थात् कलिंग देशवासी अर्थ का बोध कराता है। इस प्रकार के प्रयोग भाषा में प्रवाह से चलते हैं। अतः उन्हें रूढ़-प्रयोग कहते हैं। प्रयोग प्रवाह रूप रूढ़ि के कारण ही यहाँ लक्षणा होती है। इसी प्रकार 'गंगायां घोषः' अर्थात् गंगा पर गाँव है- जैसे प्रयोगों में गंगा शब्द का मुख्य अर्थ 'प्रवाह विशेष' है जो संगत नहीं होता तो उससे सम्बन्ध 'तट' अर्थ का बोध की लक्षणा शक्ति से ही होता है। यहाँ गाँव की शीतलता तथा पवित्रता का अतिशय बताना ही प्रयोजन है। इसी कारण यह लक्षणा प्रयोजनवती लक्षणा कहलाती है। गंगा के तट पर गाँव है ऐसा कहने से शीतलता तथा पवित्रता अतिशय प्रतीत नहीं होता। इसीलिए गंगा पर गाँव है ऐसा लाक्षणिक प्रयोग किया जाता है। बिना कारण के लक्षणा नहीं हो सकती और ये कारण है- रूढ़ि अथवा प्रयोजन।

काव्य प्रकाशकार आचार्य मम्मट ने रूढ़ि लक्षणा का उदाहरण 'कर्मणि कुशलः' अर्थात् कर्म में कुशल है- यह दिया है। आचार्य मम्मट का अभिप्राय यह है कि कुशल शब्द का मुख्य अर्थ है 'कुशान लाति' इति कुशलः अर्थात् यह व्यक्ति जो कुशों को (दर्भो को) ग्रहण करता है, कुशल कहलाता है। यह अर्थ 'कर्मणि कुशलः' इस वाक्य में संयत नहीं होता। इसलिए जिस प्रकार की चतुरता कुश ग्रहण करने वाले (कुशों की धार तीक्ष्ण होती है तथा तनिक असावधानी होते ही हाथ को चीर देती है) व्यक्ति में होती है वैसी ही चतुरता इसमें भी है, इस आशय के बोध के लिए चतुरता रूप समान धर्म से सम्बद्ध चतुर या दक्ष अर्थ 'कुशल' शब्द से प्रतीत होता है। मम्मट की यह मान्यता अन्य आचार्यों को अभीष्ट नहीं है। उनका कहना है कि चाहे कुशल शब्द व्युत्पत्तिलभ्य (कुशान् लाति- इति कुशलः) अर्थ कुश ग्रहण करने वाला' हो परन्तु उसका मुख्य अर्थ 'दक्ष' ही है क्योंकि शब्दों के व्युत्पत्ति निमित और प्रवृत्ति निमित भिन्न-भिन्न हुआ करते है। यदि व्युत्पत्ति (प्रकृति प्रत्यय विभाग कल्पना) सभ्य अर्थ को ही मुख्य अर्थ मानेंगे तो 'गौः शेते' जैसे वाक्यों में प्रयुक्त 'गौ' शब्द में भी लक्षणा माननी पड़ेगी। गौ शब्द का व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ- गच्छति इति में गौः अर्थात् जो आती है, वह गौ है- होता है। ऐसी स्थिति में शयनकाल में गौ शब्द का 'जाने वाला' रूप मुख्य अर्थ

बाधित होगा तथा वहाँ पर भी लक्षणा की आवश्यकता होगी। इसलिए व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ को मुख्य अर्थ न मान कर प्रवृत्ति निमित्त को ही मुख्यार्थ मानना उचित है। ऐसी स्थिति में कुशल शब्द में लक्षणा का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि कुशल का प्रवृत्ति निमित्त अर्थ दक्ष ही है और वही मुख्य अर्थ है। इस अर्थ के लिए लक्षणा प्रवृत्ति निमित्त अर्थ दक्ष ही है और वही मुख्य अर्थ है। इस अर्थ के लिए लक्षणा की आवश्यकता नहीं है।

19.3.5 लक्षणा के भेद एवं प्रभेद

विश्वनाथ ने लक्षणा के रूढ़ी और प्रयोजनवती दो मुख्य भेद करने के पश्चात् प्रत्येक के 'उपादान लक्षणा तथा लक्षण लक्षणा' ये दो भेद किए हैं। ये दोनों ही सारोपा तथा साध्यवसाना नाम से दो प्रकार की होती हैं। शुद्धा तथा गौणी रूप में पुनः इनके दो भेद होते हैं। इस प्रकार सदी के तो केवल आठ ही भेद हैं परन्तु प्रयोजनवती के और भी अवान्तर भेद हैं। प्रयोजन सदा व्यंग्य होता है। यदि वह व्यंग्य गूढ़ हो तो गूढ़ाव्यंग्या और यदि गूढ़ न हो तो अगूढाव्यंग्या, ये दो भेद होते हैं। इस प्रकार प्रयोजनवती लक्षणा 16 प्रकार की हो जाती है। यह व्यंग्य धर्मीगत भी हो सकती है तथा धर्मगत भी। इस प्रकार प्रयोजनवती लक्षणा 32 प्रकार की होती है। रूढ़ी के आठ भेदों के साथ लक्षणा 40 प्रकार की होगी। यदि लक्षणा केवल पद में है तो पदगत और यदि वाक्य में है तो वाक्यगत कहलाएगी। ये सारे भेद मिलकर 80 हो जाते हैं। लक्षणा के इस प्रपंच में प्रयुक्त उपादान, लक्षणा, लक्षण लक्षणा, सारोपा, साध्यवासना, शुद्धा तथा गौणी का ज्ञान आवश्यक है।

उपादान लक्षणा (अजहत्स्वार्था)
मुख्यार्थस्येतराक्षेपो वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये।
स्यादात्मनोऽप्युपादानादेषोपादानलक्षणा।।

उपादान लक्षणा का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है- उपादीयते मुख्यार्थोऽपि अनया अर्थात् जहाँ मुख्यार्थ का बाध होने पर वाक्यार्थ में अन्वय की सिद्धि के लिए, मुख्यार्थ किसी स्वसम्बद्ध अन्य अर्थ के आक्षेप के साथ अपना भी ग्राहक होता है, वहाँ उपादान लक्षणा होती है। श्वेतो (श्वेतगुणवान) धावति अर्थात् सफेद (घोड़ा आदि) दौड़ता है- जैसे प्रयोगों में श्वेत गुणवाचक शब्द में धावन (दौड़ना)। योग्यता नहीं है। अतः धावन क्रिया के साथ अन्वय की सिद्धि के लिए श्वेत शब्द श्वेत गुणवान द्रव्य का बोधक होता है। यहाँ गुणी के साथ श्वेत गुण का भी ग्रहण (उपादान) है, अतः यह उपादान लक्षण का स्थल है। ऐसे प्रयोग रूढ़ि के कारण चलते है। विशेष प्रयोजन से कुन्ताः प्रविशन्ति (भाले घुस रहे हैं) जैसे प्रयोग किए जाते हैं। यहाँ कुन्त जड़वस्तु में प्रवेश करने की विशेषता नहीं है। अतः कुन्त शब्द स्वाधारी (कुन्तधारी) पुरुषों का बोधक होता है। कुन्तों की अतिगहनता प्रकट करना ही यहीं प्रयोजन है। उपादान लक्षणा को ही अजहत्स्वार्था (नहीं छोड़ा है अपने अर्थ को जिसने) भी कहते है।

लक्षण लक्षणा (जहत्स्वार्था)
अर्पणं स्वस्य वाक्यार्थे परस्यान्वयसिद्धये।
उपलक्षणहेतुत्वादेषा लक्षणलक्षणा।।

लक्षण लक्षणा का अर्थ है- ''लक्ष्यते अन्योऽर्थ: यथा सा'' अर्थात् जहाँ मुख्यार्थ बाधित होने पर अपने से सम्बद्ध अन्य अर्थ को बोध कराने में अपना समर्पण कर देता है तथा इस प्रकार अपना पूर्ण परित्याग करके केवल पदार्थ (लक्ष्यार्थ) के ही वाक्यार्थ में अन्वय का कारण बनता है, यहाँ लक्षण लक्षणा होती है। 'कलिंग साहसिकः' कलिंग साहसी है तथा 'गंगायां घोषः' गंगा पर गाँव है जैसे प्रयोग में कलिंग का अर्थ है 'कलिंगवासी' तथा गंगा का अर्थ 'गंगा का तट' है। इन दोनों ही स्थलों पर मुख्यार्थ का स्वार्थ परित्याग है क्योंकि साहसिक पुरुष होता है, देश नहीं तथा गाँव तट पर बसता है, प्रवाह में नहीं। उपर्युक्त स्थलों में क्रमशः रूढ़ी तथा प्रयोजनवती लक्षणा है। इसी का जहत्स्वार्था (छोड़ दिया है स्वार्थ जिसने) भी कहते हैं।

सारोपा लक्षणा

सारोपा लक्षणा वहाँ होती है जहाँ विषय अर्थात् आरोप विषय- जिस पर आरोप किया जाता है अपने स्वरूप में विद्यमान रहकर ही अपने से भिन्न अर्थात् विषयी आरोप्यमाण, जिसका आरोप किया जाता है- के साथ मिलकर एकाएक रूप से प्रतीत होता है। रूपक अलंकार के मूल में यही लक्षणा कार्य करती है। मुखचन्द्र को देखकर नेत्रकमल विकसित हो जाते हैं जैसे वाक्यों में मुख विषय पर चन्द्र विषयी का आरोप है। यहीं मुखचन्द्र के साथ अभिन्न रूप से प्रतीत होता हैं रुढ़ि में- 'अश्व: श्वेतो धावति' अर्थात सफेद घोड़ा दौड़ता है, जैसे वाक्यों में श्वेत शब्द लक्षणा द्वारा श्वेत गुणवान् अर्थ का बोधक है। यहाँ अश्व और श्वेत गुणवान दोनों अभिन्न रूप से प्रतीत होते है। प्रयोजन में- 'ऐते कुन्ताः प्रविशन्ति'। यहाँ 'एतत्' सर्वनाम से कुन्तधारी पुरुषों का निर्देश दिया गया है और कुन्तों के साथ उनकी अभेद प्रतीति है, अतः यहाँ यह प्रयोजनवती सारोपा का उदाहरण है।

साध्यवसाना लक्षणा

साध्यवसाना लक्षणा में विषयी द्वारा विषय का पूर्णरूप से अध्यावसान (निगीरण या गोपन) होने पर विषय, विषयों के साथ अभिन्न रूप से प्रतीत होता है। 'श्वेतो धावति' जैसे प्रयोगों में श्वेत शब्द के लक्ष्यार्थ 'श्वेत गुणवान्' अश्व को पूर्ण रूप से निगीर्ण कर लिया है। ऐसे प्रयोग रूढ़ि के कारण ही होते हैं। कुन्ताः प्रविशन्ति- प्रयोजनवती साध्यवासाना लक्षणा का उदाहरण है। अतिश्योक्ति अलंकार के मूल में साध्यवसाना लक्षणा विद्यमान रहा करती है।

शुद्धा एवं गौणी

यदि वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ का पारस्परिक सम्बन्ध सादृश्य से भिन्न कोई भी (कार्यकारण या आधार आधेय आदि) हैं तो वहाँ शुद्धा लक्षणा होती है सादृश्य सम्बन्ध ही इनका प्रयोजक हो तो इन्हें गौणी लक्षणा कहते हैं क्योंकि यह सदृश्य गुणों के कारण होती है। इसलिए उसे गौणी कहा जाता है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

  1. आकांक्षा योग्य आसक्ति से युक्त क्या होता है?
  2. शब्द शक्ति कितने प्रकार की है?

3. चार प्रकार के संकेत क्षेत्र कौन-कौन से हैं?

4. लक्षणा को शब्द की कौन-सी शक्ति कहा जाता है?

5. वाक्यं रसात्मकं काव्यं किसे कहते हैं?

6. अर्थ के कितने भेद है?

7. संकेतित अर्थ का बोध किस शब्द शक्ति से होता है?

8. लक्ष्य अर्थ का बोध किस शब्द शक्ति से होता है?

9. विश्वनाथ का समय क्या था?

10. विश्वनाथ के पिता कौन थे?

19.4सारांश

उपर्युक्त इकाई में 'वाक्यं रसात्मकं काव्यं' के अन्तर्गत वाक्य, महावाक्य, पद का अर्थ वर्णित है। अर्थ तीन प्रकार का होता है- वाच्य, लक्ष्य व्यंग्य वाच्य के द्वारा अभिधा, लक्ष्य के द्वारा लक्षणा तथा व्यंग्य के द्वारा व्यंजना शब्द शक्तियों का बोध होता है। तदुपरान्त अभिधा, लक्षणा, भेद-प्रभेदों का वर्णन लक्षण सहित किया है।

9.5कठिन शब्दावली

1. हस्ती-हाथी**2. गिरि-**पर्वत **3.भुक्तम्-**खाया **4.त्रिंधा-**तीन **5. आनय-**लाओ **6. संकेतित-**मुख्य**7. अग्रिमा–**सबसे पहली**8.पदसमभिहारात्–**पद के साहचर्य से**9. मधुकर–**भ्रमर **10. प्रभिन्न–**खिलना**11. आप्त–**प्रामाणिक**12. शुक्ल–**सफेद**13.कुन्ताः-**भाले

19.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. वाक्य, 2. तीन प्रकार की,3. जाति, गुण, द्रव्य और क्रिया, 4. अर्पिता शक्ति, 5. वाक्य, 6. अर्थ के तीन भेद हैं- वाच्य, लक्ष्य, व्यंग्य, 7. अभिधा शब्द शक्ति, 8. लक्षणा शब्द शक्ति, 9. 14वीं शताब्दी, 8. चन्द्रशेखर।

19.7 सहायक ग्रन्थ

1. कादम्बरी - सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

2. कादम्बरी कथामुख - सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।

3. साहित्य दर्पण - सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

4. बाणभट्ट का साहित्यिक - अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बंग्लो

अनुशीलन रोड जवाहर नगर दिल्ली-7

5. बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी - नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।

6. साहित्यदर्पण - सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

19.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. वाक्य किसे कहते हैं?
2. अभिधा शब्द शक्ति परिभाषित कीजिए।
3. लक्षणा के भेदोपभेद परिभाषित कीजिए।
4. उपादान लक्षणा का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।
5. निम्नलिखित की व्याख्या कीजिए-
    1) अर्थो वाच्चश्च लक्ष्यश्च व्यंग्यश्चेति त्रिधा मतः।
    2) तत्र संकेतितार्थस्य कोध्नादग्रिमाऽभिधा।
    3) मुख्यार्थ बाघे लक्षण शक्तिरर्पिता।
    4) अर्पणं स्वस्य लक्षणलक्षणा।

इकाई-20
शब्द शक्तियाँ

संरचना

20.1 प्रस्तावना

20.2 उद्देश्य

20.3 गौर्वाहीक एवं गौर्जल्पति में लक्षणा सम्बन्धी मतभेद

20.3.1 व्यंजना शब्द शक्ति एवं उसके भेद

20.3.2 तात्पर्य वृत्ति

- स्वयं आकलन प्रश्न

20.4 सारांश

20.5 कठिन शब्दावली

20.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

20.7 सहायक ग्रन्थ

20.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

20.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में गोर्वाहीक तथा गौर्जल्पति में लक्षणा सम्बन्धी मतभेद का वर्णन किया गया है। व्यंजना शब्द शक्ति एवं भेद-प्रभेदों का विवेचन किया गया है। तात्पर्य वृति का अर्थ व विवेचन इस इकाई में किया गया है।

20.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे

1. व्यंजना शब्द शक्ति का ज्ञान होगा।
2. अभिधा लक्षणा मूला व्यंजना, लक्षण लक्षणा मूला व्यंजना का बोध होगा।
3. तात्पर्य वृत्ति के विषय में ज्ञान होगा।

20.3 गौर्बाहीक तथा गौर्जल्पति में लक्षणा सम्बन्धी मतभेद

प्रयोजनवती लक्षणा सारोपा गौणी लक्षणा का उदाहरण है- गौर्बाहीकः जल्पति तथा प्रयोजनवती साध्यवसाना गौणी का उदाहरण है- गौर्जल्पति। इन दोनों स्थलों पर गौः शब्द का प्रयोग बाहीक (बाहीक) देश का निवासी मूर्ख व्यक्ति के लिए किया गया है। बैल बाहीक नहीं हो सकता और न ही वह मनुष्य के समान बोल सकता है, इसलिए मुख्यार्थ का बाध होने पर लक्षणा का आश्रय लेना पड़ता है। लक्षणा द्वारा गौ शब्द के मुख्य अर्थ पशु से सम्बद्ध अर्थ है- गौ सदृश व्यक्ति। गौ और व्यक्ति का यह सादृश्य मूर्खता आदि गुणों के कारण होता है। अतः लक्ष्यार्थ 'गौसदृश मूर्ख व्यक्ति' होता है। गौ शब्द से 'गौसदृश मूर्ख बाहीक अस्ति यह अर्थ कैसे निकलता है, इस विषय में विद्वानों के तीन मत है।

कुछ विद्वानों का कहना है कि गौर्बाहीक या गौर्जल्पति जैसे प्रयोगों में गौः शब्द का मुख्यार्थ पशु रूप बाधित होने पर गौ के साथ रहने वाले जड़ता, मन्दता आदि गुण लक्षणा द्वारा प्रतीत होते हैं। इस मत के अनुसार गौ शब्द का लक्ष्यार्थ है गौ के जड़ता, मन्दता आदि गुण। वे जड़ता, मन्दता आदि गुण ही गौ शब्द से अभिधा द्वारा बाहीक रूप अर्थ का बोध कराने में कारण बन जाते हैं। इसका तात्पर्य है कि गौ शब्द का लक्ष्यार्थ तो गौ में स्थित गुण है तथा वाच्यार्थ बाहीक है। स्पष्ट है कि यह मत ठीक नहीं है क्योंकि अभिधा से तो संकेतित अर्थ का ही बोध होता है। गौ शब्द का संकेतित अर्थ 'पशु' ही है, बाहीक नहीं। अतः बिना संकेत ग्रह के गौ शब्द बाहीक रूप को अभिधा से नहीं बता सकता। वह तो केवल पशु अर्थ का ही बोध करा सकता है। एक बार अभिधा गौ शब्द का अर्थ बताकर विरत हो जाती है तो फिर दोबारा अभिधा के उत्थान का प्रश्न ही नहीं उठता।

दूसरे आचार्य कहते हैं कि गौ शब्द से अभिधा द्वारा बाहीक रूप अर्थ की प्रतीति नहीं होती अपितु 'स्वार्थ' अर्थात् गौ शब्द के अपने अर्थ 'पशु' में रहने वाले मूर्खता आदि गुणों के समान बाहीक के मूर्खता आदि गुण ही लक्षणा से प्रतीत होते हैं। तात्पर्य यह है कि गौ शब्द का लक्ष्यार्थ है गौ गुण सदृश बाहीक के गुण। यह मत भी विद्वानों को मान्य नहीं है। उनका कहना है कि यहाँ पहले इस बात का निर्णय आवश्यक है कि गौ शब्द से बाहीकरूप अर्थ प्रतीत होता है, या नहीं? यदि यहाँ प्रथम विकल्प अर्थात् गौ शब्द से बाहीक अर्थ प्रतीत होता है- मानते हैं तो फिर दो विकल्प उपस्थित होते हैं। वे हैं- यदि होता है तो गौ शब्द से ही होता है या लक्षित गुणों के अविनाभाव सम्बन्ध द्वारा? क्योंकि गुण गुणी के बिना नहीं रह सकते, इसलिए लक्षित मूर्खता आदि गुण अपने गुणी बाहीक का बोध अविनाभाव सम्बन्ध में करा सकते हैं- इनमें प्रथम विकल्प अर्थात् गौ शब्द से अभिधा द्वारा बाहीक अर्थ की प्रतीति होती है ठीक नहीं है, क्योंकि बाहीक अर्थ गौ शब्द का सांकेतिक अर्थ नहीं है। दूसरा विकल्प अर्थात् अविनाभाव सम्बन्ध से गुण-गुणी का बोध कराते हैं- यह भी ठीक नहीं है क्योंकि अविनाभाव सम्बन्ध से प्रतीत होने वाला अर्थ शब्दार्थ नहीं हुआ करता। शब्द सम्बन्धी आकांक्षा शब्द से ही पूर्ण हो सकती है, अन्य किसी से नहीं। प्रथम उपस्थापित विकल्पों में दूसरा विकल्प अर्थात् गौ शब्द से बाहीक अर्थ प्रतीत नहीं होता- ऐसा माने तो 'गौर्बाहीक:' में दोनों पदों में समान विभक्ति (प्रथमा, एकवचन) कैसे हो सकती है। इन दोनों में समानाधिकरण तभी हो सकता है जब गौ शब्द का बाहीक अर्थ हो।

तीसरे आचार्य कहते हैं कि यहाँ गौ शब्द से अभिधा द्वारा प्रतीत पशु अर्थ का वाहीक के साथ अन्वय नहीं होता। इसलिए मुख्य अर्थ का बोध होने पर मुख्य अर्थ 'पशु' से सम्बद्ध पशु सदृश्य मूर्ख बाहीक कर अर्थ मूर्खता आदि समान धर्मों के कारण प्रतीत होता है। इस प्रकार गौ शब्द की लक्ष्यार्थ बाहीक (मूर्ख व्यक्ति) है। बाहीक की मूर्खता का आधिक्य बताना ही वहीं प्रयोजन है।

मूर्खता आदि गुणों के कारण होने से इसे गौणी कहते हैं। इसमें उपचार का मिश्रण होता है। अत्यन्त भिन्न पदार्थ भी जब अत्यधिक सादृश्य के कारण अभिन्न प्रतीत होने लगे तो उसे उपचार कहते हैं।

जैसे किसी तेजस्वी बालक के लिए उसके अग्निसदृश्य तेज को देखकर 'अग्निः' आगच्छति कह देते हैं। यहाँ अग्निः और मणियक (बालक) भिन्न होते हुए भी तेज सम्बन्धी के कारण अभिन्न प्रतीत होने लगते हैं। ऐसे स्थलों में गौणी लक्षणा होती है।

20.3.1 व्यंजना शब्द शक्ति

विरतास्वभिधाद्यासु ययाऽर्थो बोध्यते परः।।
सा वृत्तिर्व्यंजना जना नाम शब्दस्यार्थादिकस्य च।।

अर्थात् अभिधा, लक्षणा तथा तात्पर्या नामक वृत्तियों वाच्य, लक्ष्य तथा तात्पर्य रूप अर्थों का बोध कराकर शान्त हो जाती है, तब यदि उपर्युक्त तीनों प्रकार के अर्थों से भिन्न ही अर्थ प्रकट होता है तो वह व्यंजना नामक शक्ति से ही प्रकट हुआ करता है, क्योंकि अभिधा आदि शक्तियाँ अपना-अपना अर्थ बोध कराकर क्षीण-शक्ति हो जाती हैं, तब यह अर्थ को बोध होगा तो वह किसी अन्य शक्ति से ही होगा। शब्द, ज्ञान तथा क्रिया जब एक बार अपना काम कर चुकते हैं तो फिर उसमें व्यापार नहीं होता। इसलिए वाक्य आदि अर्थों से भिन्न अर्थ अतिरिक्त शक्ति व्यंजना द्वारा ही प्रतीत हुआ करता है। इसी व्यंजना को ध्वन् (ध्वनि) गमन् तथा प्रत्यायन आदि शब्दों से ही अभिहित किया जाता है। उदाहरण के लिए 'सूर्य अस्तं गतः' (सूर्य छिप गया) इस वाक्य का मुख्यार्थ है- दिन में प्रकाशित होने वाला ग्रह पृथ्वी की ओट में आ गया। सन्ध्याकाल में प्रयुक्त इस वाक्य में मुख्यार्थ बाधित नहीं होता, क्योंकि जिस समय इस वाक्य का प्रयोग किया जाता है उस समय वास्तव में सूर्य पृथ्वी की ओट में आ जाता है। अतः मुख्यार्थ का बोध न होने से यहाँ लक्षणा का तो प्रश्न ही नहीं उठता। अभिधा केवल मुख्यार्थ का बोध कराकर शान्त हो जाती है। तात्पर्या वृत्ति भी 'सूर्यः' कर्ता है तथा 'अस्तं गतः' क्रिया है। इस रूप में कर्तु क्रिया भाव रूप वाक्यार्थ का प्रतिपदान करके समाप्त हो जाती है। अब यहाँ वक्ता तथा श्रोता के भेद से चलो घूमने चलें, चलो लौट चलें, वह अभी तक भी नहीं आया, 'गौ' दूहने का समय हो गया, दीप जला दें आदि अनेक अर्थ निकलते हैं। वे सब व्यंजना नामक शक्ति से ही निकलते हैं। व्यंजना शक्ति शब्दाश्रित तथा अर्थाश्रित ही नहीं होती अपितु पदों केअवयव, प्रकृति और प्रत्यय आदि के कारण भी हो सकती है। कई बार मात्र चेष्टा ही व्यंजना का कारण हो जाती है। इस प्रकार व्यंजना अनेक प्रकार की हो सकती है। उनके प्रमुख भेद निम्नलिखित हैं-

शाब्दी-व्यंजना

शाब्दी व्यंजना दो प्रकार की होती है- अभिधा मूला तथा लक्षणा मूला।

अभिधा मूला व्यंजना

अनेकार्थस्य शब्दस्य संयोगाद्यैर्नियन्त्रिते।
एकत्रार्थेऽन्यधीहेतुर्व्यन्जना साऽभिधाश्रया।।

संयोग आदि के द्वारा अनेकार्थक शब्द के प्रकृतोपयोगी एक अर्थ के निर्णीत हो जाने पर भी जिसके द्वारा अन्य अर्थ का ज्ञान होता है वह व्यंजना अभिधाश्रया या अभिधामूला व्यंजना कहलाती है।

'संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्य विरोधिता। अर्थः प्रकरणं लिंगं शब्दस्यान्यस्य संनिधिः।।
सामर्थ्यमौचिती देशःकालो व्यक्तिः स्वरादयः। शब्दार्थस्यानवच्छेदे विशेषस्मृतिहेतवः।'

संयोग, विप्रयोग, साहचर्य, विरोधिता, अर्थ, प्रकरण, लिंग, अन्य शब्द का संनिधान, सामर्थ्य, औचिती, देश, काल, व्यक्ति और स्वरादिक ये सब शब्द के अर्थ का 'अनवच्छेद' होने पर विशेष ज्ञान के कारण होते हैं। अर्थात् जब कहीं किसी अनेकार्थक शब्द का तात्पर्य सन्दिग्ध होता है तो प्रकरणादि के द्वारा विशेष ज्ञान हुआ करता है तथा इन 14 अभिधा नियामक कारण में से कोई एक कारण एक ही अर्थ में शब्दों का नियामन कर देता है। वहीं अन्य अर्थ का बोध अभिधा मूला व्यंजना द्वारा ही होता है। स्पष्ट है ऐसे स्थलों में क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग होता है। परन्तु प्रकरण आदि से एक अर्थ निश्चित हो जाता है, फिर भी अन्य अर्थ निकला करता है। यह सब व्यंजना का ही महात्मय है।

अभिधा के नियामक आदि कारणों में स्वर भी दिया है। परन्तु स्वर उदात्त, स्वरित वेद में ही अर्थ-नियामक होते हैं। लौकिक संस्कृत में स्वर अर्थ-भेद के कारण नहीं होते, इसलिए वे नियामक भी नहीं होते। इसीलिए स्वर सेअर्थ-नियमन का उदाहरण विश्वनाथ ने नहीं दिया है।

कुछ आचार्य कहते हैं कि स्वर भी काकु (विशेष कण्ठध्वनि) आदि के रूप में विशेष अर्थ का कारण होता है, उदात्त आदि भी शृंगार आदि के रस में विशेष अर्थ के द्योतक होते हैं- ऐसा भरत ने भी कहा है। इसलिए स्वर विषयक उदाहरण देना ही चाहिए। प्रस्तुत मत ठीक नहीं है क्योंकि स्वर चाहे काकू हो, चाहे उदात्त आदि हो, वे केवल व्यंग्य रूप अर्थ की विशेषता का ही बोध कराते हैं न कि प्रस्तुत प्रसंग में उपयोगी अनेकार्थक शब्दों का एक अर्थ में नियमन रूप कार्य करते हैं। यदि कहीं पर अनेकार्थक शब्दों का प्रकरण आदि से नियमन न होने पर भी किसी विशेष स्वर से उच्चारण करने से नियमन होने लगे तो फिर ऐसे स्थलों पर श्लेष अलंकार को स्वीकार करना पड़ेगा। जबकि वास्तव में वहाँ श्लेष ही स्वीकार किया गया है। इसलिए आचार्य मम्मट ने श्लेष अलंकार के प्रसंग मेंस्पष्ट कहा है कि काव्य परम्परा में स्वर (उदात्तादि) का कोई महत्त्व नहीं है। इस विषय पर अधिक लिखना मान्यआचार्यों की आलोचना करना है, अतः इतना ही पर्याप्त है।

अभिधा मूला व्यंजना का उदाहरण है-

'दुर्गालिङ्घतविग्रहो मनसिजं संमीलयंस्तेजसा प्रोद्यद्राजकलो गृहीतगरिमा विष्वग्वृतो भोगिभिः।

नक्षत्रेशकृतेक्षणो गिरिगुरौ गाढां रुचिं धारयन् गामाक्रम्य विभूतिभूषिततनू राजत्युमावल्लभः।।'

यह पद्य उभा नामक रानी के पति राजा भानुदेव की प्रशंसा में लिखा गया है, अतः प्रकरण के नियमन से उन्हीं का बोध होता है, परन्तु शब्दरचना इस प्रकार की है जिससे महादेवपरक अर्थ भी व्यंजना से प्रतीत होता है और फिर अन्त्य में इन दोनों (राजा और शिव) का उपमानोपमेयभाव फलित होता है। यहीं प्रकरण के द्वारा 'उमावल्लभ:' शब्द का उमा नामक राजमहिषि के पति भानुदेव नामक राजा-अर्थ का बोधन करने में नियन्त्रित हो गया है। अब यहाँ उमावल्लभ (पार्वती पति, शिव) विषयक अन्य अर्थ व्यंजना से ही प्रतीत होता है।

लक्षणामूला व्यंजना
लक्षणोपास्यते यस्य कृते तत्तु प्रयोजनम्।
यया प्रत्याय्यते सा स्याद्व्यंजना लक्षणाश्रया।।

जिसके लिए लक्षणा का आश्रयण किया जाता है वह प्रयोजन, जिस शक्ति के द्वारा प्रतीत होता है वह व्यंजना लक्षणाश्रय (लक्षणामूलक) कहलाती है। प्रयोजनवती लक्षणा के स्थलों में जिस विशेष अर्थ का बोध कराने के लिए लक्षणा की जाती है, उसे प्रयोजन कहते हैं। यह प्रयोजन लक्ष्यार्थ से भिन्न होता है इस प्रयोजन की प्रतीति जिस शक्ति से होती है वह व्यंजना ही है। 'गंगायां घोष:' गंगा पर गाँव है, जैसे वाक्यों में अभिधा से गंगा शब्द का अर्थ होता है- जलमय। मुख्य अर्थ बाधित होने पर लक्षणा द्वारा 'तट' अर्थ का बोध होता है। लक्षणा के विरत होने पर शीतलता तथा पवित्रता की अतिशयता की प्रतीति जिस शब्द शक्ति के द्वारा होगी उसे लक्षणामूलक व्यंजना कहते हैं। यहाँ मध्य में लक्षणा शक्ति विद्यमान है। अतः इसे लक्षणा मूलक व्यंजना कहते हैं।

आर्थी व्यंजना

वक्तृबोद्धव्यवाक्यानामन्यसंनिधिवाच्ययोः।
प्रस्तावदेशकालानां काकोश्चेष्टादिकस्य च।।
वैशिष्टयादन्यमर्थं या बोधयेत्साऽर्थसंभवा।

वक्ता, बोद्धव्य, वाक्य, अन्य का सन्निधान, वाच्य, प्रस्ताव, देश, काल, काकु तथा चेष्टा आदि की विशेषता के कारण जो शब्दशक्ति अन्य अर्थ का बोधन करती है वह अर्थमूलक व्यंजना है। अर्थ वाच्य, लक्षण तथा व्यंग्य तीन प्रकार के होते हैं, अतः आर्थी व्यंजना भी वाच्यार्थ मूला, लक्ष्यार्थ मूला तथा व्यंग्यार्थ मूला रूप से तीन प्रकार कीहोती है।

शाब्दी तथा आर्थी व्यंजना के नामकरण

यद्यपि शाब्दी व्यंजना में अर्थ भी होता है, क्योंकि काव्य में सार्थक शब्दों का ही प्रयोग होता है तथा आर्थी व्यंजना में शब्द भी महत्त्व रखते हैं, क्योंकि अर्थ का बोध शब्दों से ही होता है, फिर भी शाब्दी तथा आर्थी के नामकरण का आधार है- शब्द और अर्थ में एक की प्रधानता तथा दूसरे की सहकारिता। 'प्राधान्वेज

व्यापदेश भवति' अर्थात् प्रधानता के कारण ही नाम रखा जाता है, इसलिए जहाँ शब्द प्रधान तथा अर्थ गौण या सहकारी मात्र है, वहाँ शाब्दी तथा जहाँ अर्थ प्रधान तथा शब्द गौण या सहकारी मात्र है, वहां आर्थी व्यंजना होती है।

20.3.2 तात्पर्य वृत्ति

तात्पर्याख्यां वृत्तिमाहुः पदार्थान्वयबोधने।
तात्पर्यार्थं तदर्थं च वाक्यं तद्बोधकं परे।।

अभिधा शक्ति मात्र पदों के अर्थों का बोध कराकर समाप्त हो जाती है वाक्य में पदार्थों का अन्वय कराने बाली शक्ति को तात्पर्य कहते हैं। इस प्रकार का अन्वित अर्थ तात्पर्यार्थ कहलाता है तथा उसके बोधक पद समूहको वाक्य कहते हैं। 'देवदतः ग्रामं गच्छति' इस पद समूह रूप वाक्य में प्रयुक्त देवदतः, ग्राम तथा गच्छति, ये तीनों पद अपना अर्थ अभिधा शक्ति से उपस्थित करते हैं, कर्ता, कर्म तथा क्रिया के रूप में इनका अन्वय पदों के अर्थों की उपस्थिति के बाद ही होता है। तब तक अभिधा अपना कार्य करके समाप्त हो जाती है। क्रिया कारक के रूप में पदार्थों के अन्वय के लिए अतिरिक्त शक्ति माननी चाहिए। यह अभिहितान्वयवादी आचार्यों की मान्यता है।

अन्विताभिधानवादी आचार्य इसको नहीं मानते। उनके मत में अन्वित पदों का अर्थ अभिधा से ही ज्ञात होता है। इसलिए अन्वय के लिए अतिरिक्त शक्ति की आवश्यकता नहीं है। वाक्य में स्थित पद पहले ही क्रिया तथा कारण के रूप में अपने अर्थ को बोध कराते हैं।

इनमें प्रथम मत श्रोता की दृष्टि से ठीक है तथा दूसरा वक्ता की, क्योंकि जब श्रोता वाक्य में स्थित शब्दों को सुनता है तो पहले मात्र पदार्थ का ज्ञान होता है। सम्पूर्ण वाक्य को सुनने के पश्चात् ही उसे शब्दों के पारस्परिक सम्बन्ध (अन्वय) का ज्ञान होता है। अतः उसके लिए अभिधा के अतिरिक्त भी किसी शक्ति की आवश्यकता है। परन्तु वक्ता पहले से ही पदार्थ का पारस्परिक सम्बन्ध निर्धारित कर लेता है, तब शब्दों को प्रयोग करता है। उसके लिए वाक्य में प्रयुक्त सभी शब्द पहले से ही अन्वय हैं। अतः उसे अभिधा के अतिरिक्त किसी शक्ति के मानने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार उपर्युक्त दोनों ही मत आंशिक रूप से उचित है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

 1. वाच्य, लक्ष्य, व्यंग्य, अर्थों से भिन्न अर्थ किस शब्द शक्ति के द्वारा बोधित होता है।
 2. व्यंजना कितने प्रकार की होती है?
 3. .... यस्य कृते तत्तु प्रयोजनम्।
 4. तात्पर्याख्यां वृत्तिमाहुः.................।

20.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में गौर्वाहीक एवं गौर्जल्पति में लक्षणा सम्बन्धी मतभेद, व्यंजना शब्द शक्ति तथा वाक्य में पदार्थों का अन्वय कराने वाली शक्ति को तात्पर्या वृत्ति कहते है जिसका वर्णन किया गया है।

20.5 कठिन शब्दावली

1. वाहीक-मूर्ख व्यक्ति **2. गौ**-गाय (पशु विशेष) **3. वक्तृ**-वक्ता **4. काकु**-विशेष कण्ठ ध्वनि **5. संयोग**-संबंध

20.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. व्यंजना 2. दो प्रकार 3. लक्षणोपास्यते 4.पदार्थान्वयबोधने

20.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4.	बाणभट्ट का साहित्यिकअनुशीलन	-	अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बंग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5.	बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी	-	नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6.	साहित्यदर्पण	-	सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

20.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. व्यंजना शब्द शक्ति के भेद प्रभेदों की विवेचना कीजिए।
2. शाब्दी एवं आर्थी व्यंजना का उदाहरण सहित लक्षण दीजिए।
3 तात्पर्या वृत्ति किसे कहते हैं?
4. तात्पर्यख्यां वृत्तिमाहु: तद्बोधक परे पर टिप्पणी लिखिए।

इकाई-21
रस सिद्धान्त

संरचना

21.1 प्रस्तावना

21.2 उद्देश्य

21.3 रस सिद्धान्त मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि, लौकिक दृष्टान्त, शास्त्रीय स्वरूप

21.3.1 विश्वनाथ के अनुसार रस का लक्षण

21.3.2 रस की अलौकिकता

- स्वयं आकलन प्रश्न

21:4 सारांश

21.5 कठिन शब्दावली

21.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

21.7 सहायक ग्रन्थ

21.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

21.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में शब्दशक्तियों एवं तात्पर्य वृत्ति का अध्ययन कर चुके हैं। इस अध्याय के अन्तर्गत रस विषयक सिद्धान्त रस का स्वरूप, रसानुभूति की प्रक्रियाका विस्तार से अध्ययन करेंगे।

21.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे

- इस अध्याय के अन्तर्गत आप रस के सिद्धान्त, पृष्ठभूमि में जानने में सक्षम होंगे।
- रस के लक्षण, रसानुभूति की प्रक्रिया से अवगत होंगे।

21.3रस सिद्धान्त- मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि, लौकिक दृष्टान्त, शास्त्रीय स्वरूप

मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि

मनुष्य स्वभाव से अनुभवशील प्राणी है। जन्मकाल से ही सुखात्मक तथा दुःखात्मक अनुभूतियों उसके स्वभाव का अंग बन जाती हैं। स्वेतर सृष्टि के प्रति मानव की अनुकूल प्रतिक्रिया सुख तथा प्रतिकूल

प्रतिक्रिया दु:ख कहलाती है। संसार में पदार्पण करते ही शिशु का रुदर बाह्य संसार के प्रति उसकी प्रतिकूल प्रतिक्रिया का ही परिचायक है। माता के गर्भ से भिन्न वातावरण में प्रवेश करते समय इस प्रकार की प्रतिक्रिया स्वाभाविक ही कही जाएगी। कुछ ही काल पश्चात् दायी के दयापूर्ण व्यवहार तथा माता की ममतामयी गोद के प्रति उसकी अनुकूल प्रतिक्रिया होते ही उसका रुदन शान्त हो जाता है। इस प्रकार जन्म की प्रारम्भिक घड़ियों में ही मानव दुःखात्मक तथा सुखात्मक अनुभूतियों का भोक्ता बन जाता है। जैसे-जैसे बालक बड़ा होता है, उसकी अनुभूतियों का सीमित संसार विस्तृत होने लगता है। जब वह अपनी इच्छानुसार कार्य करता है तो उसे परमसुख प्राप्त होता है। परन्तु जब भी उसके स्वेच्छानुसार में व्याघात होता है तो उसकी प्रतिक्रिया अनेक रूपों में प्रकट होती है। पहले यह उसी कार्य को करने का आग्रह करता है। रोके जाने पर उत्साह से उस कार्य की ओर प्रवृत होता है मानो रोकने वाले को परास्त करके ही दम लेगा। परन्तु जब यह स्वयं को परास्त अनुभव करता है तो उसे क्रोध आने लगता है। इसी क्रोध की प्रतिक्रिया में वह मार-पीट तक को तैयार हो जाता है। यदि तब भी कुछ और बड़ा होता है तो उसकी रुचि और अरुचि और भी उभर कर सामने आती है। भोजन को ही लीजिए कुछ खाद्य-पदार्थों के प्रति बालक की रुचि अधिक होती है। उन्हें वह चाव से खाता है। परन्तु कुछ खाद्य-पदार्थ ऐसे होते हैं जिन्हें वह तनिक भी नहीं चाहता। उनसे वह बचने का प्रयत्न करता है। यदि उससे उन पदार्थों को खाने का आग्रह किया जाता है तो वह अनिच्छा से उन्हें खाता है। दुबारा कभी इस प्रकार का प्रसंग उपस्थित होने पर वह साफ बच निकलता है। इस प्रकार सुख-दुःख के द्वन्द्व से प्रारम्भ होने वाली उसकी अनुभूतियाँ अनेकरूपता प्राप्त करने लगती हैं।

ऊपर की पंक्तियों में जिन अनुभूतियों की ओर संकेत किया गया है इनमें सुख-दुःख, हर्ष, शोक, उत्साह, क्रोध, घृणा प्रमुख है। ये अनुभूतियॉ बार-बार होती है, अतः धीरे-धीरे इनका संस्कार जमता रहता है। कुछ ही काल में अनेक प्रकार की अनुभूतियों के संस्कार मानव के मानव पटल पर अंकित हो जाते हैं। ये सभी अनुभूत्तियाँ मानव मस्तिष्क में सदैव विद्यमान रहती है सुप्तावस्था में भी। किसी एक काल में मानव एक ही प्रकार की अनुभूति का अनुभव करता है। मन का स्वभाव ही ऐसा है कि वह एक समय में एक से अधिक ज्ञान का आश्रय नहीं हो सकता। इसी बात को दर्शनकार ने 'युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिंगम्' अर्थात् एक साथ से अधिक ज्ञान की उत्पत्ति न होना ही मन की विशेषता है इन शब्दों में कहा है। जिस किसी अनुभूति के कारण सामग्री विद्यमान होती है, मानव-मन उसी का अनुभव करने लगता है। यही कारण है कि सारी अनुभूतियों के रहते हुए भी मानव-मन सदा सभी अनुभूतियों का अनुभव नहीं करता। इन अनुभूतियों की स्थिति उस चिन्गारी के समान है जिस पर राख की परत छा गई है जिससे उसका स्फुलिंग दिखना बन्द हो गया है। यदि इस राख को हटा लिया जाए तो स्फुलिंग पुनः चमकने लगता है। इस प्रकार कारण सामग्री स्फुलिंग पर से राख हटाने का कार्य करने वाली वायु के समान होती है। वह कारण सामग्री वास्तविक भी हो सकती है तथा काल्पनिक भी। मोदकों को देखकर मुंह में भी पानी भर आना स्वाभाविक है। परन्तु मनमोदक (काल्पनिक जगत्) भी कम स्वादिष्ट नहीं होते। वास्तविक मोदक तो कम मीठा हो सकता है, परन्तु मन के लड्डू कभी फीके नहीं होते।

लौकिक दृष्टान्त

कारण सामग्री से मन में प्रसुप्त भाव किस प्रकार उद्‌बुद्ध हो जाते हैं? इसे निम्न उदाहरण द्वारा सहज ही समझा जा सकता है। मान लीजिए कि निम्नलिखित घटना सत्य है-

नगर के चौराहे पर स्थित मकान में आग लग गई है। मकान में जाने के लिए एकमात्र जीना (सीढ़ी) आग की लपेट में आ चुका है। मकान में रहने वाले सभी समर्थ व्यक्ति आतंकित होकर सहसा भाग निकलते है। एक पाँच वर्ष की बालिका जो छत पर खेल रही थी, समय पर नहीं भाग सकती है। जब उसे आग का आभास होता है तो सीढ़ी आग की चपेट में आ चुकती है। यह मकान के छज्जे पर खड़ी होकर 'मुझे बचाओ, मुझे बचाओ' का आर्तनाद करने लगती है। कभी आग को देखती है तो कभी चौराहे पर खड़े जन समुदाय को। आग के साथ-साथ उसका आर्तनाद भी बढ़ता जाता है। जन समुदाय उसकी आर्तपुकार सुनता है। परन्तु कुछ भी करने में विवश है। बालिका की जान बचाने के लिए अपनी जान को कौन खतरे में डाले? इसी जन समुदाय में एक युवक भी है। यह बालिका की पुकार सुनकर सिहर उठता है। आग से घिरी हुई सीढ़ी की ओर देखता है तो बालिका को बचाने का आग्रह मन्द पड़ने लगता है परन्तु बालिका का आर्तनाद उसे फिर उत्साहित करता है। वह सीढ़ी की ओर चल पड़ता है। उसके मुख पर एक दृढ़ निश्चय की रेखा दिखाई देती है। लपटों में घिरी हुई सीढ़ी पर चढ़ने लगता है तथा झुलसने की चिन्ता न करता हुआ ऊपर पहुँच जाता हैं बालिका को, जो भय के कारण मूर्च्छित सी हो गई है, अपनी गोद में उठा लेता है तथा कम्बल लपेट कर पुनः अपनी साहसिक यात्रा प्रारम्भ कर देता है। बालिका को बचाने में युवक का शरीर पर्याप्त झुलस जाता है परन्तु उसे इसकी चिन्ता नहीं है। उसे इस बात की प्रसन्नता है कि उसने एक आर्त प्राणी की रक्षा करके अपने कर्तव्य को निभाया।

उपर्युक्त घटना से जो बातें सामने आती हैं, वे हैं- जन समुदाय में स्थित युवक का उत्साह, जो बालिका का आर्तनाद सुनने से पहले सुप्त पड़ा हुआ था। बालिका के आर्तनाद ने उसके सुप्त उत्साह को जागृत किया। परन्तु इस उत्साह की चरम अनुभूति तक पहुँचने में कुछ अन्य बातें भी हैं जिनका योग युवक का उत्साह बढ़ाने में दिखाई देता है। आग से घिरी हुई बालिका का करुण-क्रन्दन तथा आग की बढ़ती हुई लपटों की भयंकरता युवक का उत्साह बढ़ाने में सहायक है। उसकी मानसिक उथल-पुथल स्वयं आग में घिर जाने की आशंका तथा अन्त में बालिका को बचाने का दृढ़ निश्चय भी उसके उत्साह को बढ़ाने में सहायक होते हैं। इन सबकी सहायता से उसका उत्साह इस सीमा तक पहुँच जाता है कि वह अपनी जान तक की परवाह न करता हुआ अन्त में बालिका को बचाने में समर्थ हो जाता है।

लौकिक दृष्टि से युवक के उत्साह को चरम सीमा तक पहुँचाने वाली इस कारण सामग्री को निम्न भागों में विभक्त कर सकते हैं-

(क) बालिका का आग से घिरना युवक के उत्साह को उद्‌बुद्ध करने का कारण है।

(ख) युवक का बालिका की ओर करुणापूर्ण नेत्रों से देखना, उसे बचाने के लिए चलना तथा सीढ़ी चढ़ना आदि कार्य है।

(ग) आग की भयंकरता को देखकर क्षण-मात्र के लिए शकित होना, फिर तर्क-वितर्क के बाद दृढ़ निश्चय करना आदि सहकारी कारण है।

शास्त्रीय स्वरूप

उपर्युक्त लौकिक सामग्री को काव्यशास्त्रीय शब्दों में अभिव्यक्त करना चाहे तो युवक के हृदय में स्थित उत्साह स्थायीभाव है जो आग से घिरी हुई बालिका को देखकर उद्‌बुद्ध होता है। इसी कारण को शास्त्र में विभाव कहते हैं। उत्साह के उद्‌बुद्ध होने के पश्चात् हाने वाली युवक की चेष्टाएँ कार्य है, जिन्हें अनुभाव कहा जाता है। युवक के शंका, तर्क तथा धैर्य आदि भाव सहकारी कारण है, जिन्हें संचारीभाव या व्यभिचारीभाव कहा जाता है। यहीं बात ध्यान में रखने योग्य है कि उपर्युक्त सारी की सारी सामग्री काव्य में उपनिबद्ध होने पर रस की कारण-सामग्री बन जाती है तथा सहृदय-हृदय स्थित स्थायीभाव ही परमावस्था को प्राप्त होकर रस रूप में स्वदित होता है।

काव्यशास्त्रीय ने भाव को पांच श्रेणियों में विभक्त किया है- स्थायीभाव, विभाव, अनुभाव, सात्विकभाव तथा संचारीभाव। इन्हें भाव इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये रसों को भावित (आस्वाद योग्य) कराते हैं। भावयन्ति (रसाम्) इति भावा, अर्थात् जो रसों को भावित कराएँ, वे भाव कहलाते हैं।

स्थायीभाव उस स्थिरभाव को कहते हैं जो विरोधी अथवा अविरोधी (सहकारी), भावों से पुष्ट होता हुआ अन्त में रसरूपता को प्राप्त करके आस्वाद योग्य होता है। यह बीच में उच्छिन्न नहीं होता, इसलिए इन्हें स्थायीभाव कहते हैं।

विभाव उस कारण सामग्री को कहते हैं जो सामाजिक (काव्य-रसिक) के हृदय में स्थित स्थायीभावों को आस्वादन के अंकुरण के प्रादुर्भाव के योग्य बना दे। विभाव के दो भेद होते हैं- आलम्बन विभाव तथा उद्दीपन विभाव। जिसके सहारे काव्य-रसिक के हृदय में स्थित स्थायीभाव का उद्बोध होता है उसे आलम्बन-विभाव कहा जाता है। काव्य में वर्णित नायक-नायिका आदि आलम्बन विभाव होते हैं। क्योंकि इन्हीं के कारण सहृदय का भाव आस्वादन होने की स्थिति में आना प्रारम्भ होता है। वहीं पर एक बात विशेष रूप से समझ लेनी चाहिए। यदि नायिका-विषयक नायक की रति का वर्णन है तो नायक भाव का आश्रय तथा नायिका भाव का आलम्बन होती है। यदि नायक-विषयक नायिका की रति का वर्णन है तो नायिका भाव का आश्रय तथा नायक भाव का आलम्बन होता है। यह अन्तर इसलिए जानना आवश्यक है क्योंकि आलम्बन की चेष्टाएँ उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत होती है तथा आश्रय की चेष्टाएँ अनुभाव की कोटि में आती है। भाव को और अधिक उद्‌बुद्ध करने वाली सामग्री को उद्दीपन विभाव कहते हैं। रतिभाव को उद्दीपन करने बसन्त ऋतु, चाँदनी रात तथा एकान्त स्थान आदि सहायक होते हैं, अतः उद्दीपन कहलाते हैं। प्रत्येक भाव के उद्दीपन विभाव भिन्न-भिन्न होते हैं। परन्तु कुछ उद्दीपन विभाव अनेक भावों के उद्दीपन भी हो सकते हैं। एकान्त स्थान रति का उद्दीपन है तो भय का भी।

अनुभाव उन चेष्टाओं को कहते हैं जो स्थायीभाव के उद्‌बुद्ध होने के पश्चात् उत्पन्न होती है तथा भाव को प्रकट करने में समर्थ होती है। आश्रय की चेष्टाएँ कोटि में ही आती है।

अनुभावों का ही एक भेद सात्विक अनुभाव है। इन्हें सात्विक इसलिए कहते हैं क्योंकि ये सत्य के उद्रेक के कारण उत्पन्न होते हैं। इनकी उत्पत्ति में शारीरिक चेष्टा कारण नहीं होती अपितु मानसिक स्थिति ही कारण होती है।

संचारी भाव या व्यभिचारी भाव उन भावों को कहते हैं जो स्थायी भाव के अनुभूतिकाल में बीच-बीच में उद्बुद्ध रहते हैं। ये संचरणशील होते हैं तथा स्थिर नहीं रहते। इसीलिए इन्हें संचारी भाव कहा जाता है। स्थायी भाव तथा संचारी भाव का अन्तर यही है कि स्थायी भाव की परिणति रस रूप में होती है, जबकि संचारी भाव स्वरूपता को प्राप्त नहीं होता। यदि कहीं पर कोई स्थायी भाव रस-रूपता को प्राप्त न हो तो उसे भी संचारी भाव ही माना जाता है। यदि कहीं पर शृंगार रस का स्थायी भाव रति करुण का अंग बन जाता है तो वहाँ रति नामक भाव संचारी भाव ही होता है, स्थायी भाव नहीं।

उपर्युक्त विवेचन के सन्दर्भ में यदि पूर्वोक्त घटना का विश्लेषण करें तो पता चलेगा कि काव्य में उपनिबद्ध होने पर वह सारी सामग्री, कारण सामग्री बन जाती है। लौकिक कारण, कार्य तथा सहकारी कारण काव्य में विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के नाम से पुकारे जाने पर स्थायी भाव को रसात्मक बनाने में कारण-भूत होते हैं। लोक में तो युवक के हृदय में स्थित स्थायी भाव उद्बुद्ध होता है, परन्तु काव्य में रसिक के हृदय में स्थित उत्साह नामक स्थायी भाव ही रक्षा के लिए पुकारती हुई आग से घिरी बालिका रूपी आलम्बन विभाव में उद्बुद्ध होता है। बालिक का आर्तनाद तथा बढ़ती हुई आग की लपटें उद्दीपन विभाग के रूप में, उद्बुद्ध स्थायी को और उद्दीप्त कर देती है। युवक का बालिका को बचाने के लिए लपटों से घिरी सीढ़ी चढ़ना तथा बालिका को लेकर नीचे आना अनुभाव है। उसके तर्क-वितर्क तथा उसका धैर्य रूपी संचारी भाव उसी उद्दीप्त भाव को और भी अनुभव योग्य बनाते हैं। यह सारी सामग्री मिलकर पाठक को उत्साह की उस चरम अनुभूति का पात्र बना देती है जिसे वीर रस कहा जाता है।

इस पांठ के प्रारम्भ में जिन अनुभूतियों की चर्चा की गई है। उनकी संख्या के सम्बन्ध में काव्यशास्त्रियों में मतभेद रहा है। यह संख्या आठ से प्रारम्भ होती है तथा बारह तक पहुँचती है। ये स्थायी भाव ही रसरूपता को प्राप्त होते हैं। अतः रसों की संख्या भी इन्हीं पर आधारित होने के कारण आठ से बारह तक है। रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय, शम या निर्वेद, वात्सल्य, श्रद्धा तथा मैत्री, ये स्थायी भाव क्रमशः शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत, शान्त, वत्सल, भक्ति तथा संख्या रस में परिणत होते हैं। इनके अतिरिक्त अर्द्ध स्थायी भाव, रस तथा आर्द्रता स्थायी भाव स्नेह रस में परिणत होता है, यह अभिनवगुप्त की मान्यता है। रसों की संख्या के सम्बन्ध में यह मतभेद रस सम्बन्धी विवेचना के क्रमिक विकास का परिचायक है।

उपर्युक्त पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए ही संस्कृत काव्यशास्त्रियों ने 'विभावानुभावव्यभिचारिभाव संयोगाद् रसनिष्पत्तिः' इस भरत-सूत्र की अनेक व्याख्याएँ प्रस्तुत की है। रस तथा ध्वनि के समर्थक आचार्यों ने रस के सम्बन्ध में अभिव्यक्तवाद को ही स्वीकार किया है।

21.3.1 विश्वनाथ के अनुसार रस का लक्षण

विभावेनानुभावेन व्यक्तः संचारिणा तथा।
रसतामेति रत्यादिः स्थायिभावः सचेतसाम्।।

इसका अभिप्राय है कि विभाव, अनुभाव (सात्त्विक अनुभाव सहित) तथा संचारी भावों में अभिव्यक्ति को प्राप्त हुआ सहृदयों के हृदय में स्थित स्थायी भाव ही रस रूप में स्वादित होता है। इस प्रसंग में अभिव्यक्ति किसी पूर्व सिद्ध वस्तु को नहीं होती जैसे दीपक से पहले रखे हुए घड़े की अभिव्यक्ति हुआ करती है अपितु स्थायी भाव का रस-रूप में रूपान्तरण मात्र होता है जैसे दूध दही के रूप में परिणत हो जाता है।

रसानुभूति की प्रक्रिया

रसानुभूति के सम्बन्ध में कुछ बातों पर विचार करना आवश्यक है। काव्य को पढ़ने या नाटक को देखते समय पाठक या दर्शक किस प्रकार रसानुभूति करता है? काव्य या नाटक के समान होने पर भी सभी पाठक या दर्शकों को समान रसानुभूति क्यों नहीं होती? क्या सभी रसों की अनुभूति सुखात्मक ही होती है? आदि कुछ प्रश्न ऐसे हैं जिन पर विस्तार से विचार करने की आवश्यकता है। सबसे पहले रसानुभूति की प्रक्रिया पर विचार करेंगे?

ऊपर जिस कारण सामग्री का विश्लेषण किया है वही काव्य में उपनिबद्ध होने पर सहृदय पाठक या दर्शक के मनोभावों को आन्दोलित करके एक ऐसे वातावरण की सृष्टि करती है जिस वातावरण में पाठक या दर्शक का मन कवि द्वारा वर्णित भाव को अनुभव करने योग्य बन जाता है। मन की इस स्थिति को सात्विक स्थिति कहते हैं। मन को इस स्थिति में लाने के लिए एक ओर तो काव्य कारण है दूसरी ओर पाठक या दर्शक के निजी संस्कार (वासना) भी सहायक है। यदि पाठक या दर्शक काव्यार्थ की भावना से ही शून्य है तो उसे रसानुभूति हो ही नहीं सकती। वास्तव में काव्य पढ़ते समय या नाटक देखते समय पाठक या दर्शक, जिसे काव्यशास्त्रीय सामाजिक या सहृदय कहते हैं, एक ऐसी भावभूति पर पहुँच जाता है जहाँ वह अपने पराए का भेदभाव भूलकर मात्र काव्य-वर्णित भाव का भोक्ता बनकर रह जाता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि वह विशेष व्यक्ति न रहकर साधारण व्यक्ति बन जाता है। इसी को काव्यलोचक साधारणीकरण कहते हैं।

रसानुभूति और साधारणीकरण

रसानुभूति की प्रक्रिया में साधारणीकरण का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। साधारणीकरण शब्द का अर्थ है असाधारण को साधारण बनाना। काव्य के असंख्य पाठक एक-दूसरे से नितान्त भिन्न होने के कारण असाधारण होते है। जब वे सब एक ही काव्य को पढ़ते हैं या नाटक को देखते हैं तो काव्यार्थ की भावना से वे अपने विषय व्यक्तित्व का परित्याग करके साधारण पाठक या दर्शक बन जाते हैं। इस स्थिति में पहुँचने पर उन सभी पर काव्य का समान प्रभाव पड़ता है। वे सभी कवि द्वारा वर्णित भाव का अनुभव करने लगते हैं। यदि किसी कारण से किसी पाठक या दर्शक का साधारणीकरण नहीं होता तो वह रसानुभूति नहीं कर पाता। कुछ पाठकों के संस्कार ऐसे होते हैं जिनके कारण ये अपने राग-द्वेष को नहीं छोड़ पाते। इसी कारण उनका विशेष व्यक्तित्व उनको साधारण भावभूति पर नहीं आने देता। परिणाम यह होता है कि वे कवि

द्वारा वर्णित भाव की अनुभूति से वंचित ही रह जाता हैं। उदाहरण के लिए यदि कोई रामभक्त पाठक अपने दृढ़ संस्कारों के कारण बंगला काव्य मेघनादवध के लेखक श्री माइकेल मधुसूदनदत्त के उन भावों से अपना तादात्मय स्थापित नहीं कर पाता जिनमें मेघनाद को राम तथा लक्ष्मण से अधिक वीर चित्रित किया गया है तो वहाँ पर साधारणीकरण न होने से रामभक्त पाठक को उन प्रसंगों में वीर रस की अनुभूति नहीं होगी। रामभक्त पाठक के संस्कार ही साधारणीकरण में बाधक बनकर खड़े हो जाते हैं। विभिन्न पाठकों पर एक ही दृश्य की जब भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियाएँ होती हैं तो इसमें भी साधारणीकरण तथा काव्यार्थ को समझने में पाठक का सामर्थ्य ही कारण होते हैं।

यह साधारणीकरण की महिमा है कि एक भीरू व्यक्ति भी वीर रस का आस्वाद लेता है तथा निर्भय व्यक्ति भयानक का। इसी की महिमा से काव्य में वर्णित राम आदि पात्र भी साधारण पात्र के रूप में प्रतीत होने लगते हैं। यदि उनका साधारणीकरण नहीं होगा तो काव्य में वर्णित उनकी रति आदि से पाठक का तादात्मय नहीं हो सकेगा। वस्तुतः काव्य में वर्णित विभाव आदि सामग्री के विषय में पाठक न तो यह सोचता है कि उनका सम्बन्ध काव्य वर्णित किसी राम आदि अन्य व्यक्ति से है और न ही वह उस सामग्री को अपने से सम्बद्ध मानता है। काव्य के आस्वाद के समय विवादि कारण समाग्री तथा सामाजिक दोनों ही साधारणीकरण होते हैं। इसी कारण काव्यानुभव, लोकानुभव से भिन्न हैं तथा अलौकिक है।

साधारणीकरण के साथ-साथ सामाजिक के मन में विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों में मिश्रित स्थायीभावने अखण्ड रूप मेंप्रकाशित होते हुए आनन्द रूप में स्वादित होने लगता है।

रस के स्वरूप का निरूपण एवं आस्वादन का प्रकार

सत्त्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्दचिन्मयः।
वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वादसहोदरः।।

अन्तःकरण में रजोगुण और तमोगुण को दबाकर सत्त्वगुण के सुन्दर स्वच्छ प्रकाश होने से रस का साक्षात्कार होता है। अखण्ड, अद्वितीय, स्वयं प्रकाशस्वरूप आनन्दमय और चिन्मय यह रस का स्वरूप है। रस के साक्षात्कार के समय दूसरे विषय का स्पर्श तक नहीं होता। इस आनन्दानुभूति के समय अन्य किसी वस्तु का ज्ञान नहीं रहता, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार समाधि में योगियों को ब्रह्मानन्द के अतिरिक्त और वस्तु का ज्ञान नहीं रहता। उस समय चित्त एक अलौकिकचमत्कृति से युक्त रहता है। यह सुखात्मक चमत्कृति ही वह है जिसे केवल रसिक पाठक या दर्शक अनुभव कर सकते हैं कि अरसिक व्यक्तियों को रसानुभूति नहीं होती।

रस स्वयं आस्वाद रूप है, इसलिए रसः स्वाधते अर्थात् रस का आस्वादन लिया जाता है, यह प्रयोग रस और आस्वाद के काल्पनिक भेद को ध्यान में रखकर ही किया गया है। 'राहु' सिर मात्र ही है फिर भी 'राहु का सिर' जैसा प्रयोग इसी प्रकार के काल्पनिक भेद को ध्यान में रखकर किया गया है। अथवा रसः स्वाधते का अर्थ रस स्वयं स्वदित होता है, यह है। ऐसी स्थिति में कर्म को ही कर्ता मान कर यह प्रयोग किया गया है। इससे सिद्ध हो जाता है कि रस आस्वादन रूप होने के कारण एक प्रकार का ज्ञान ही है। रस ज्ञान है,

श्रेय नहीं- ऐसा मानने पर रस की व्यंग्यता पर आघात पहुँचता है, क्योंकि व्यंजना से श्रेय वस्तु ही व्यंग्य हो सकती है। जब रस ज्ञान रूप है तो वह व्यंजना से अभिन्न नहीं होता है क्योंकि व्यंजना भी एक प्रकार का ज्ञान ही है। व्यंजना ज्ञान तथा व्यंग्य ज्ञेय उसी प्रकार भिन्न-भिन्न होते हैं जैसे दीपक व्यंजक और घट व्यंग्य अलग-अलग होते हैं। ऐसी स्थिति में रस को व्यंग्य कहना भी केवल इतने ही अंश में संगत है कि वह वाच्य, लक्ष्य तथा तात्पर्य से भिन्न है। यदि उसे कोई नाम देना ही है तो वह व्यंग्य ही कहा जा सकता है। अन्यथा तो उसे रसन, आस्वादन, चमत्करण आदि विलक्षण नामों से पुकारना ठीक है।

21.3.2 रस की अलौकिकता

रस एक ऐसी विलक्षण वस्तु है जिसे लौकिक मानदण्डों से नहीं मापा जा सकता। इसलिए इसे अलौकिक कहा जाता है। अभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों से अभिव्यक्त हुआ सामाजिक के हृदय में स्थित स्थायीभाव ही रसता को प्राप्त करता है। रस की इस परिभाषा में रस की अभिव्यक्ति की बात कही गयी है। अभिव्यक्त होते हुए भी रस ज्ञाप्य नहीं है क्योंकि ज्ञाप्य वस्तु घट, पट आदि उस स्थिति में भी विद्यमान रहती हैं जब वे ज्ञान का विषय नहीं होती। परन्तु इसका स्वभाव है कि वह केवल ज्ञान दशा में ही रहता है। यदि उसका ज्ञान नहीं होता तो यह भी नहीं रहता क्योंकि रस ज्ञान रूप ही है। रस विभावादि के संयोग से व्यक्त होता है, परन्तु वह विभावादि कारणों से उत्पन्न कार्य नहीं है क्योंकि यदि रस-कार्य होगा तो विभावादि ज्ञान ही उसका कारण होगा। जब रस की प्रतीति के समय विभावादि की प्रतीति नहीं होगी। कारण का ज्ञान तथा कार्य का ज्ञान एक ही काल में नहीं हो सकते। चन्दन के स्पर्श का ज्ञान तथा उसके स्पर्श से उत्पन्न सुख का ज्ञान एक ही काल में नहीं हुआ करते। रस सदा विभावादि से अभिन्न ही समूहासम्बन्धनात्मक ज्ञान के रूप में ही प्रतीत होता है इसलिए वह विभावादि में ज्ञान रूप कारण से उत्पन्न कार्य नहीं हो सकता। यद्यपि स्थायीभाव सदा हृदय में विद्यमान रहते हैं परन्तु उनकी रस-रूप में परिणति नित्य नहीं हैं क्योंकि रसानुभूति काल के पश्चात भी इसकी सत्ता नहीं रहती। नित्यवस्तु उस समय भी रहती है जब उसका ज्ञान नहीं हो रहा होता। रस भविष्यता से भी रहित है, क्योंकि यह केवल साक्षात् आनन्दमय स्वप्रकाश रूप है और क्योंकि रस न तो कार्य है और न ज्ञाप्य अतः वर्तमान भी नहीं है। लौकिक वर्तमान वस्तुएँ या तो कार्य होती है या ज्ञाप्य। रस इन दोनों में विलक्षण है। रस को निर्विकल्पक ज्ञान का विषय भी नहीं कह सकते क्योंकि यह बात अनुभव सिद्ध है कि विभाव आदि के ज्ञान से सहृदयों को परमानन्द के रूप में उनका ज्ञान होता है। रस सबिकल्पक ज्ञान का विषय भी नहीं है क्योंकि सविकल्पक ज्ञान को विषयभूत वस्तुएँ घट, तट आदि किसी न किसी वाचक शब्द से अभिहित की जाती है। परन्तु रस को किसी वाचक शब्द से नहीं जान सकते। यदि ऐसा होता तो शृंगार शब्द के ज्ञान मात्र से शृंगार की अनुभूति होने लगती। अतः रस सविकल्पक ज्ञान का विषय भी नहीं है। वह केवल साक्षात्कार के समय ही भासित होता है इसलिए उसे परोक्ष भी नहीं कह सकते। न ही यह प्रत्यक्ष है क्योंकि वह एक ऐसा शब्द ज्ञान है जो काव्योपनिद्ध विभावादि के ज्ञान से उद्द्भुत अद्भुत अनुभव है। इसलिए रस एक सर्वथा अलौकिक वस्तु है जो केवल सहृदयों द्वारा ही संवेद्य है। ऐसी अलौकिक वस्तु की सत्ता का अकाट्य प्रमाण सहृदय का हृदय ही है। जहाँ उसका आस्वाद लिया जाता है। इसी आस्वाद को चर्वणा भी कहते हैं। भरत रस-सूत्र में,

निष्पत्ति शब्द उत्पत्ति वाचक नहीं है, अपितु उसका अर्थ अनुभूति है जो अनुभूति विभावादि के ज्ञान के समय ही होती है, अतः निष्पत्ति मान ली जाती है। रस स्वप्रकाश है तथा अखण्ड है, क्योंकि रत्यादि भावों के ज्ञान के समय अग्नि रूप में ही इसका ज्ञान होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रस वस्तुत: एक अलौकिक वस्तु है।

विभाव आदि में से एक के सद्‌भाव में भी रसानुभूति होती है।

यद्यपि विभाव, अनुभाव तथा संचारीभाव- इन तीनों से पुष्टि को प्राप्त हुआ स्थायीभाव रसरूपकता को प्राप्त होता है फिर भी उपर्युक्त तीनों को सर्वत्र उपनिबन्धन आवश्यक नहीं है। एक या दो के सद्भाव में भी रसानुभूति हुआ करती है। वास्तव में विभाव आदि में किसी एक या दो के वर्णनों-प्रसंगों में शेष दो या एक का आक्षेप स्वतः हो जाता है तथा इस प्रकार के कल्पना-लोक में विभाव, अनुभाव तथा संचारी भाव का चित्र उभरकर आता है। जिससे हृदय में स्थित स्थायी भाव परिपुष्ट होकर रस-रूप स्वादित होने लगता है। इसलिए रस-सिद्ध कवियों की रचनाओं में भी सर्वत्र तीनों का वर्णन नहीं मिलता।

रस का भोक्ता कौन?

नाटक-जगत् में तीन प्रकार के प्राणी होते हैं। नाटक के वे पात्र जिन्हें कवि ने आलम्बन आदि के रूप में उपनिबद्ध किया है। रामायण के राम, सीता तथा अभिज्ञानशाकुन्तलम् के दुष्यन्त, शकुन्तला इसी श्रेणी में आते हैं। दूसरे पात्र है अभिनेता या नट। नाटक में राम, सीता आदि का अभिनय करने वाले पात्र इसी दूसरी श्रेणी के प्राणी है। नाटकीय संसार के तीसरी श्रेणी के प्राणिदर्शक हैं। इनमें प्रथम श्रेणी के प्राणी अनुकार्य कहलाते हैं क्योंकि नाटक में इन्हीं का अनुकरण किया जाता है। दूसरी श्रेणी अनुकर्ताओं की है क्योंकि ये अनुकार्यों का अनुकरण करते है। अन्तिम वर्ग को सामाजिक, सभ्य, सहृदय, सचेत आदि नामों से पुकारा जाता है। अब प्रश्न उपस्थित होता है कि रसानुभूति किस को होती है। इसका सीधा सा उत्तर है कि रसानुभूति मात्र सभ्यों को होती है। अनुकार्य तो अनुकरण के समय उपस्थित होता नहीं है। अतः उनकी रसानुभूति का प्रश्न ही नहीं उठता। रसादि की रति लौकिक है तथा सीमित है। अतः वह अलौकिक तथा असीमित रस के उद्‌बोध का कारण नहीं हो सकती। अनुकर्ता में रस की स्थिति नहीं होती। वह तो शिक्षा तथा अभ्यास के द्वारा केवल अनुसरण मात्र करता है। हाँ यदि कोई अभिनेता अनुसरण करते समय काव्यार्थ भावना से पूर्ण होने के कारण स्वयं भी रसानुभूति करने लगे तो उसे उस समय सभ्य या सामाजिक ही समझा जाएगा। चलचित्रों से चित्रांकन के समय कई बार ऐसे प्रसंग आ चुके हैं जब अभिनेता स्वयं भी रसानुभूति करने लगे थे। माता का अभिनव करते समय एक बार एक अभिनेत्री इतनी विहल हो गई कि उसे स्वस्थ चित्त होने में पर्याप्त समय लगा। तब तक अगले दृश्य का चित्रांकन रोक देना पड़ा। ऐसी स्थिति में अनुकर्ता को भी रसानुभूति हो सकती है परन्तु इस प्रकार के सिद्ध अभिनेता कम ही होते हैं; सामाजिकों में भी काव्यार्थ भावना या वासना से युक्त व्यक्तियों को ही रसानुभूति होती है, प्रत्येक को नहीं। वासना से रहित दर्शक रंगशाला की दीवार और कुर्सियों जैसे ही हैं।

क्या सभी रस आनन्दमय है?

इस पाठ में जिन रसों की परिगणना कराई गई है, उनमें करुण, रौद्र, वीभत्स तथा भयानक रस ऐसा है जिनकी कारण सामग्री सुखात्मक नहीं है। अतः इस प्रकार की कारण सामग्री से उद्भूत रस सुखात्मक रस कैसे हो सकता है? कारण के गुण कार्य में जाया करते हैं। इस नियम के अनुसार तो दुःखजनक कारण सामग्री से जनित रस भी दुःखात्मक होने चाहिए। ऐसी स्थिति में तो उन्हें रस कहना भी उचित नहीं क्योंकि रस तो आनन्द रूप ही होता है। इस शंका का सीधा सा समाधान यह है कि सभी रस आनन्दात्मक है।

करुणादावपि रसे जायते यत्परं सुखम्।
सचेतसामनुभव: प्रमाणं तत्र केवलम्।।

करुण आदि रसों में भी जो परम आनन्द होता है उसमें केवल सहृदयों का अनुभव ही प्रमाण है। यदि करुणादि रस दुःखात्मक होते तो कोई भी व्यक्ति करुण रसप्रधान काव्यों को न तो पढ़ता और न समय और पैसा खर्च करके देखता। कोई भी व्यक्ति जान बूझकर दु:ख देखना नहीं चाहता। करुण रस प्रधान नाटकों को देखने के लिए भी उसी उत्साह से देखे जाते गए हैं जिस उत्साह से शृंगार या हास्य रस प्रधान नाटकों को देखते हैं। इससे सिद्ध होता है कि करुण रसप्रधान काव्य भी सुखात्मक ही है दुःखात्मक नहीं। यदि करुण रस को दुःख का कारण मानेंगे तो रामायण आदि करुण रसप्रधान काव्य भी दुःखात्मक होने चाहिए। परन्तु अनुभव यह बताता है कि रामायण पढ़कर पाठक परम आनन्दित होते हैं। इससे सिद्ध होता है कि करुण रस भी सुखात्मक ही है।

यह ठीक है कि लोक में करुण रस की सामग्री, इष्ट वस्तु का नाश आदि दुःखजनक ही है परन्तु दुःख की सामग्री से दुःख होता है तथा सुख की सामग्री से सुख होता है, यह नियम लोक में ही है। काव्य तो अलौकिक वस्तु है। लौकिक कारण, कार्य तथा सहकारी कारण ही जब काव्य में विभाव,अनुभाव तथा संचारीभाव के रूप में उपनिबद्ध होते हैं तो उस समय, वे अलौकिक हो जाते हैं इसलिए उनके पुष्ट सभी स्थायीभाव आनन्दायक रस-रूप से परिणत होते हैं।

अब एक प्रश्न उपस्थित होता है। यदि करुण रसप्रधान काव्यों से आनन्द प्राप्ति होती है तो इन काव्यों को पढ़ते या देखते समय पाठक या दर्शकों के आँसू तथा कण्ठ से क्रन्दन क्यों फूट जाते हैं? काव्य-शास्त्रियों ने इसका उत्तर दिया है कि- **अश्रुपातादयस्तद्वद् द्रुतत्वाच्चेतसो मताः।** अर्थात् अश्रुपात तथा क्रन्दन चित्त के पिघल जाने से ही होते हैं दुःख के कारण नहीं। कई बार अत्यधिक प्रसन्न होने पर भी आँसू देखे गए हैं। बहुत हँसने पर भी आँखों में पानी आ जाता है। चित्त की द्रवता सुख से भी हो सकती है तथा दुःख से भी। रसानुभूति के कारण जहाँ अश्रुपात होता है वहाँ चित्त की दवता सुख के कारण ही है। अतः यह भी आनन्दात्मक है।

संस्कृत काव्यशास्त्र की उपर्युक्त मान्यता कम से कम करुण रस के प्रसंग में कुछ चिन्त्य है। अनुभव की इस बात का साक्षी है कि करुण रस की अनुभूति के समय जो अनुपात होता है या क्रन्दन और रुदन होता है यह सुख के कारण नहीं दुःख के कारण होता है। परन्तु यह दुख सहानुभूति-जन्य होने के कारण प्रेय होता है, हेय नहीं। किसी दूसरे के दु:ख में दु:खी होने में भी लोग सुख का अनुभव करते हैं। परोपकार के लिए कष्ट उठाया जाता है तो उस कष्ट से भी एक अपूर्व आनन्द की प्राप्ति होती है। मातृभूति के रक्षार्थ गोली खाकर

भी जवान हँसते रहते हैं। इन सभी अवसरों पर दुःख-सुख का जनक है। करुण रस में भी परदुःख-कातरता सुख का कारण बनती है न कि दुःखजनक सामग्री से सुख प्राप्ति होती है। करुण रसप्रधान काव्यों को पढ़कर या देखकर जो परदुःख कातरता होती है वह अन्त में मन को हल्का कर देती है। परदुःख-कातरता एक उदात्तभाव है। इस दुख के अनुभव में ही मानव जीवन की सार्थकता है और इसलिए बार-बार करुण रसप्रधान नाटकों को देखकर आँसू बहाता है तथा क्रन्दन करता है। इसी आँसू के बहाने में क्रन्दन करने में अर्थात् दुःखी होने में उसे सुख मिलता है। पहले मत में और इस मत में अन्तर यह है कि पूर्व मत में करुण रस को साक्षात् सुखात्मक माना गया है जबकि दूसरे मत में वह परम्परा से ही सुखात्मक है साक्षात् नहीं। प्रस्तुत मत अशास्त्रीय अवश्य है परन्तु है विचारणीय। सत्य क्या है, इसका निर्णय तो करुण रसप्रधान काव्यों के पाठकों तथा दर्शकों पर ही छोड़ना उचित होगा।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

  1. स्थायी भाव किसे कहते हैं?
  2. 'विभावानुभावव्यभिचारिभाव संयोगाद्' रस सम्बन्धी किसकी व्याख्या है?
  3. .... व्यक्त संचारिणा तथा।
  4. अखण्ड अद्वितीय किसका स्वरूप है।
  5. स्वयं प्रकाशस्वरूप आनन्दमय और चिन्मय किसका स्वरूप है?

21.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में रस के लक्षण,रसानुभूति की प्रक्रिया, रस के स्वरूप का निरूपण एवं आस्वादन के प्रकार एवं रस की अलौकिकता का वर्णन वर्णित है।

21.5 कठिन शब्दावली

1. अलौकिक-अद्वितीय (अद्भुत) **2. दृष्टा**-दर्शक **3. चिन्मय**-पूर्ण

21.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. स्थिर भाव 2. भरतमुनि 3. विभावानुभावेन 4.रस 5. रस

21.7 सहायक ग्रन्थ

1. कादम्बरी - सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2. कादम्बरी कथामुख - सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3. साहित्य दर्पण - सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4. बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन - अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बंग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5. बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी - नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।

6. साहित्यदर्पण - सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

21.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. रस की अलौकिकता एवं रसास्वादन का विवचेन कीजिए।
2. विश्वनाथ के अनुसार रस का लक्षण लिखिए।
3. रस के स्वरूप का निरूपण कीजिए।

इकाई-22

रस के आवश्यक तत्त्व

संरचना

22.1 प्रस्तावना

22.2 उद्देश्य

22.3 रस- 1) विभाव

2) अनुभाव

3) व्यभिचारी भाव

4) स्थायी भाव

- स्वयं आकलन प्रश्न

22.4 सारांश

22.5 कठिन शब्दावली

22.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

22.7 सहायक ग्रन्थ

22.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

22.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में रस के आवश्यक तत्वों विभाव,अनुभाव व्यभिचारी भाव तथा स्थायी भावों का विवेचन किया गया है।

22.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

1. विभाव का ज्ञान होगा।
2. अनुभाव का ज्ञान होगा।
3. व्यभिचारी भाव से अवगत होंगे।
4. स्थायी भावों के बारे में जानने में सक्षम होंगे।

22.3 रस

विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों के योग से रसाभिव्यक्ति या रसानुभूति होती है।

1) विभाव

रत्याद्युद्बोधका लोके विभावाः काव्यनाट्ययोः

लोक में राम आदि पात्रों के रति आदि भावों को उद्बुद्ध कराने वाले सीता आदि कारण की काव्य अथवा नाटक में उपनिबद्ध होने पर विभाव नाम से पुकारे जाते हैं। इन्हें विभाव इसलिए कहा जाता है क्योंकि इनमें सामाजिक के हृदय में स्थित भाव विभाजित अर्थात् आस्वादांकुर के प्रादुर्भाव के योग्य होते हैं। कवि के शब्द एक ऐसे बौद्धिक वातावरण की सृष्टि करते हैं जिससे भावविभोर होकर पाठक कवि सृष्टि सत्य समझकर रसास्वाद करता है। भर्तृहरि ने भी शब्द की इस महिमा को स्वीकार करते हुए लिखा है-

शब्दोपहितरुपांस्तान्बुद्धेर्विषयतां गतान्।
प्रत्यक्षानिव कंसादीन्साधनत्वेन मन्यते।।

श्रोता या पाठक शब्दों द्वारा प्रतिपादित कंस और कृष्ण आदि को अपनी बुद्धि में ग्रहण करके बध्य तथा घातक के रूप में उनका साक्षात्कार करता है।

आलम्बनोद्दीपनाख्यौ तस्य भेदावुभौ स्मृतौ।

विभाव दो प्रकार के होते है- आलम्बन तथा उद्दीपन।

आलम्बन

आलम्बनो नायकादिस्तमालम्ब्य रसोद्गमात्।

जिनको आलम्बन मानकर भाव उद्भूत होता है वह नायक अथवा नायिका आदि पात्र आलम्बन विभाव कहलाता है।

नायक, नायिका तथा सहयोगी अन्य पात्र अनेक प्रकार के होते हैं। विश्वनाथ ने 30 कारिका से 130 कारिका तक इनका परिचय दिया है। यह भाग परीक्षा में नियत नहीं है। परन्तु सामान्य ज्ञान के लिए आप स्वयं इसका अध्ययन करना चाहें तो कर सकते हैं।

उद्दीपन

उद्दीपनविभावास्ते रसमुद्दीपयन्ति ये आलम्बनस्य चेष्टाद्या देशकालादयस्तथा

अर्थात् उद्दीपन विभाव उन्हें कहते हैं जो रसरूपता को प्राप्त होने वाले भाव को और भी उद्दीपित करते है। इसमें आलम्बन की चेष्टा, रूप, भाषण आदि तथा देश और काल आदि का ग्रहण होता है। यहीं एक बात का ध्यान रखना आवश्यक है, काव्य में जहाँ नायक-नायिका के भावों का वर्णन होता है वहीं एक पात्र भाव का आलम्बन तथा दूसरा भाव का आश्रय होता है। जिस पात्र के विषय में कोई भाव उद्बुद्ध होता है वह पात्र आलम्बन तथा जिसके मन में उद्बुद्ध होता है वह आश्रय कहलाता है। उदाहरण के लिए यदि शकुन्तला का आलम्बन कर दुष्यन्त के मन में कोई भाव उत्पन्न होता है तो शकुन्तला का आलम्बन तथा दुष्यन्त आश्रय होगा। परन्तु यदि दुष्यन्त के सम्बन्ध में शकुन्तला के हृदय में किसी भाव की उत्पत्ति वर्णित है तो दुष्यन्त आलम्बन तथा शकुन्तला आश्रय होगी। आलम्बन की चेष्टा आदि उद्दीपन विभाव होती है तथा

आश्रय की चेष्टाओं से आश्रय के हृदय में स्थित भाव और अधिक उद्दीपित होता है। तदन्तर आश्रय की जो चेष्टाएँ होती है उससे आश्रय के हृदयस्थित भावों का प्रकाशन होता है। इसलिए उन्हें अनुभाव कहा गया है।

2) अनुभाव

उद्‌बुद्धं कारणैः स्वैः स्वैर्बहिर्भावं प्रकाशयन्।।
लोके यः कार्यरूपः सोऽनुभावः काव्यनाट्ययोः।

लोक में सीता आदि आलम्बन तथा चन्द्र, बसन्त आदि उद्दीपन कारणों के उद्‌बुद्ध होने पर राम आदि के हृदय में उद्‌बुद्ध रत्यादि को बाहर प्रकाशित करने वाला लोक में रति का कार्य कहलाता है वही काव्य और नाट्य में अनुभाव कहलाता है। पूर्वोक्त अंगज तथा स्वभावज स्त्रियों के अलंकार, स्तम्भ आदि सात्त्विक भाव तथा आश्रय की अन्य चेष्टाएँ, अनुभाव ही कहलाती है।

सात्विक अनुभाव

विकाराः सत्त्वसंभूताः सात्विकाः परिकीर्तिताः।
सत्त्वमात्रोद्भवत्वात्ते भिन्ना अप्यनुभावतः।

जब अन्तःकरण बाह्य विषयों के प्रभाव से मुक्त होकर अपने आप विश्राम में करता है तो इस स्थिति को सत्व कहते हैं। ऐसी स्थिति में जो भाव व्यक्त होते हैं उन्हें सात्विक भाव कहते हैं। इन्हें सामान्य अनुभावों से अलग इसलिए माना जाता है कि ये केवल वित्त की सात्विक अवस्था में ही उत्पन्न होते हैं। जैसे गो से बलीवर्द (साँड) का भी ग्रहण हो जाता है। फिर भी उसके विशेष बोध के लिए गोबलीवर्द जा रहा है यह कहा जाता है। उसी प्रकार अनुभाव से गृहीत होने पर भी विशेष बोध के लिए सात्विक भावों को अलग माना जाता है। सात्विक भाव ये है-

स्तम्भः स्वेदोऽथ रोमांचः स्वरभंङ्गोऽथ वेपथुः।
वैवर्ण्यमश्रु प्रलय इत्यष्टौ सात्त्विकाः स्मृताः।

स्तम्भ स्वेद, रोमांच, स्वरभंग, वेपथु (कम्प), वैवर्ण्य तथा अश्रु तथा प्रलय आठ प्रकार के सात्त्विक अनुभाव हैं।

3) व्यभिचारी भाव

विशेषादाभिमुख्येन च रणाद्वयभिचारिणः।
स्थायिन्युन्मग्ननिर्मग्नास्त्रयस्त्रिश्च्च तद्भिदाः।।

जो विशेष अर्थात् विविध रूप से तथा (प्रमुखता) से रति आदि स्थायी भाव में कभी प्रादुर्भूत होकर तिरोहित हो जाते हैं उन्हें व्यभिचारी भाव कहते हैं। व्यभिचारी भावों की संख्या 33 है-

निर्वेदावेगदैन्यश्रममदजडता औग्रयमोहौ विबोधः
स्वप्नापस्मारगर्वा मरणमलसतामर्षनिद्रावहित्थाः।
औत्सुक्योन्मादशंकाः स्मृतिमतिसहिता व्याधिसंत्रासलज्जा
हर्षासूयाविषादाः सधृतिचपलता ग्लानिचिन्तावितर्काः।।

अर्थात् 1 निर्वेद,2 आवेग, 3 दैन्य,4 श्रम, 5 मद, 6 जड़ता, 7 औग्रय, 8 मोह, 9 विबोध, 10 स्वप्न, 11 अपस्मार, 12 गर्व, 13 मरण, 14 अलसता, 15 अमर्ष, 16 निद्रा, 17 अवहित्था, 18, औत्सुक्य, 19 उन्माद, 20 शंका, 21 स्मृति, 22 मति, 23 व्याधि, 24 संत्रास, 25 लज्जा, 26 हर्ष, 27 असूया, 28 विषाद, 29 धृति, 30 चपलता, 31 ग्लानि, 32 चिन्ता एवं 33 वितर्क ये तैंतीस व्याभिचारी अथवा संचारी भाव कहलाते हैं।

स्थायी भाव भी व्यभिचारी हो सकते हैं

कभी-कभी ऐसा भी होता है जब रति आदि स्थायी भाव भी किसी अन्य प्रमुख स्थायी भाव के साथ गौण रूप से अथवा अंग रूप से वर्णित होते हैं तब वे भी व्यभिचारी भाव कहलाते है। शृंगार में रति भाव निरन्तर विद्यमान होने के कारण स्थायी भाव होता है। परन्तु इसके साथ ह्रास का वर्णन व्यभिचारी भाव के रूप में ही होता है। इसी प्रकार करुण रस के व्यभिचारी भाव के रूप में रति भाव का वर्णन हो सकता है। स्थायी भाव वहीं होता है जो रसरूपता को प्राप्त हो सके। शेष भाव व्याभिचारी भाव ही होते हैं।

4) स्थायी भाव

अविरुद्धा विरुद्धा वा यं तिरोधातुमक्षमाः।
आस्वादांकुरकन्दोऽसौ भावः स्थायीति संमतः।।

अनुकूल अथवा प्रतिकूल भाव (व्यभिचारी भाव) जिसको तिरोहित नहीं कर सकते तथा जिसमें आस्वाद रूप का अंकुरण हुआ करता है उसे स्थायी भाव कहते हैं। जैसे अनेक प्रकार के फूलों की माला में सूत्र निरन्तर विद्यमान रहता है। ऐसे ही अनेकों भावों की माला में स्थायी भाव निरन्तर है, अन्य भाव केवल कुछ ही काल के लिए वर्णित होते हैं।

रति, ह्रास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा तथा विस्मय- ये आठ शृंगार आदि रसों के स्थायी भाव हैं। शान्त रस का स्थायी भाव शम है आचार्य मम्मट ने शांत का स्थायी भाव निर्वेद माना है।

रति आदि स्थायी भाव, निर्वेद-आदि व्यभिचारी या संचारीभाव तथा स्तम्भ आदि सात्विक भावों को भाव इसलिए कहते हैं क्योंकि ये अनेक प्रकार के रसों को जिनका सम्बन्ध अनेक प्रकार के अभिनयों से है, भावित (अनुभव योग्य) कराते हैं। सुख, दुःख आदि भावों से भावित होते है अर्थात् सुख दुःख आदि का अनुभव करते हैं, अतः सुख दुःख को भाव कहा जाता है।

स्थायी भावों के प्रकार

रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा।
जुगुप्सा विस्मयश्चेत्थमष्टौ प्रोक्ताः शमोऽपि च।।

अर्थात् 1 रति, 2 हास, 3 शोक, 4 क्रोध, 5 उत्साह, 6 भय, 7 जुगुप्सा, 8 विस्मय और 9 शम ये नौ स्थायी भाव होते हैं।

रतिर्मनोनुकूलेऽर्थे मनसः प्रवणायितम्।

वागादिवैकृतैश्चेतो विकासो हास इष्यते।।
इष्टनाशादिभिश्चेतोवैक्लव्यं शोकशब्दभाक्।
प्रतिकूलेषु तैक्ष्ण्यस्यावबोधः क्रोध इष्यते।।

अर्थात् प्रिय वस्तु में मन के प्रेमपूर्ण उन्मुखीभाव का नाम 'रति' है। वाणी आदि के विकारों को देखकर चित का विकसित होना 'ह्रास' कहाता है। इष्टनाशादि के कारण चित्त की विक्लवता को 'शोक' कहते हैं। शत्रुओं के विषय में तीव्रता के उद्बोध का नाम 'क्रोध' है। कार्य के करने में स्थिरतर तथा उत्कट आवेश 'संरम्भ' को 'उत्साह' कहते हैं। किसी रौद्र (सिंहादि) की शक्ति से उत्पन्न, चित्त को व्याकुल करने वाला भाव 'भय' कहलाता है। दोषदर्शनादि के कारण किसी (वस्तु) में उत्पन्न घृणा को 'जुगुप्सा' कहते हैं। लोक की सीमा से अतिक्रान्त, अलौकिक सामर्थ्य से युक्त किसी वस्तु के दर्शन आदि से उत्पन्न चित्त के विस्तार को 'विस्मय' कहते हैं। निःस्पृहता (किसी प्रकार की इच्छा न होने) की अवस्था में आत्मा (अन्तःकरण) के विश्राम (बहिर्मुखता छोड़कर अन्तर्मुख हो जाने) से उत्पन्न सुख का नाम 'शम' है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

  1. रति आदि भावों को उदबुद्ध कराने वाले कारण क्या कहलाते है?
  2. विभाव कितने प्रकार के होते है?
  3. व्यभिचारी भाव कितने है?
  4. निर्वेद क्या है?

22.4 सारांश

उपर्युक्त इकाई में रस के विभाव, अनुभाव व्यभिचारी एवं स्थायी भावों को वर्णित किया गया है।

22.5कठिन शब्दावली

1. स्वेद-पसीना **2. वेपथु**-कम्प **3. विकार**-परिवर्तन **4. असूया**-जलन

22.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. विभाव 2. दो प्रकार 3. तैंतीस 4.व्यभिचारी भाव में से एक

22.7 सहायक ग्रन्थ

1. कादम्बरी - सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2. कादम्बरी कथामुख - सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3. साहित्य दर्पण - सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4. बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन - अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7
5. बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी - नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।
6. साहित्यदर्पण - सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

22.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. विभाव किसे कहते हैं?
2. अनुभाव किसे कहते हैं?
3. स्थायी भाव परिभाषित कीजिए।
4. व्यभिचारी भाव कितने है? व्याख्या कीजिए।

इकाई-23

रस

संरचना

23.1 प्रस्तावना

23.2 उद्देश्य

23.3 रस के भेद 1) शृंगार 2) हास्य 3) करुण
4) वीर 5) भयानक 6) बीभत्स
7) अद्भुत 8) रौद्र 9) शान्त
10) वात्सल्य

23.3.1.रसों का परस्पर विरोध, भावात्मक रसानुभूति

- स्वयं आकलन प्रश्न

23.4 सारांश

23.5 कठिन शब्दावली

23.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

23.7 सहायक ग्रन्थ

23.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

23.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में रस के भेदों का वर्णन किया गया है। इसमें शृंगार, हास्य, करूण, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत, रौद्र, शान्त तथा वात्सल्य रस का लक्षण एवं भेदोंका वर्णन किया गया है।

23.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जानने में सक्षम होंगे-

1. रस के भेदों का ज्ञान होगा।
2. नव रस के अतिरिक्त वात्सल्य रस का भी ज्ञान होगा।

23.3 रस के भेद

शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्भुत और शान्त इन नौ रसों के अतिरिक्त विश्वनाथ ने वात्सल्य रस भी माना है जिसका स्थायी भाव वत्सलता स्नेह होता है।

शृंगार रस

श्रृंग हि मन्मथोद्भेदस्तदागमनहेतुकः।
उत्तमप्रकृतिप्रायो रसः शृंगार इष्यते।।
स्थायिभावो रतिः श्यामवर्णोऽयं विष्णुदैवतः।।

शृंगार का लक्षण-'शृंग हि इति' कामदेव के उद्‌भेद (अंकुरित होने) को 'शृंग' कहते हैं, उसकी उत्पत्ति का कारण, अधिकांश उत्तम प्रकृति से युक्त रस 'शृंगार' कहलाता है।

इसका स्थायीभाव रति है और वर्ण श्याम है एवं देवता इसके विष्णु भगवान है। उदाहरण जैसे-

'शून्यं वासगृहं विलोक्य शयनादुत्थाय किंचिच्छ नैर्निद्राव्याजमुपागतस्य सुचिरं निर्वर्ण्य पत्युर्मुखम्।

विश्रब्धं परिचुम्ब्य जातपुलकामालोक्य गण्डस्थली लज्जानम्रमुखी प्रियेण हसता बाला चिरं चुम्बिता।।'

अर्थात् इसमें पूर्वोक्त पति और पत्नी आलम्बन विभाव तथा शून्य वासगृह उद्दीपन विभाव है। चुम्बन अनुभाव है। लज्ज और हास संचारी है। इन सबसे अभिव्यक्त होकर रतिभाव शृंगाररस के रूप में परिणत होता है।

शृंगार रस दो प्रकार का होता है- विप्रलम्भ तथा सम्भोग।

विप्रलम्भ शृंगार
यत्र तु रति प्रकृष्टा नाभीष्टमुपैति विप्रलम्भोऽसौ।

अर्थात् जहाँ अनुराग तो अति प्रगाढ़ है, परन्तु प्रियसमागम नहीं होता उसे विप्रलम्भ (वियोग) कहते हैं। सचेति- वह विप्रलम्भ, 1 पूर्व राग, 2 मान, 3 प्रवास और 4 करुण इन भेदों से चार प्रकार का होता है।

सम्भोग शृंगार

दर्शनस्पर्शनादीनि निषेवेते विलासिनौ।
यत्रानुरक्तावन्योन्यं संभोगोऽयमुदाहृतः।।

अर्थात् परस्पर प्रेम नायक और नायिका के परस्पर दर्शन, स्पर्शन आदि की अनुभूति सम्भोग शृंगार कहलाताहै।

हास्य रस

विकृताकारवाग्वेषचेष्टादेः कुहकाद्भवेत्।
हास्यो हासस्थायिभावः श्वे: प्रमथदैवतः।।
ज्येष्ठानां स्मितहसिते मध्यानां विहसितावहसिते च।
नीचानामपहसितं तथातिहसितं तदेष षड्भेदः।।

अर्थात् विकृत आकार, वाणी, वेष तथा चेष्टा आदि के नाटय से हास्यरस का अविर्भाव होता है। इसका स्थायीभाव 'हास' है। वर्ण शुक्ल और अधिष्ठातृ-देवता प्रथम (शिवगण) है।

हास्य के छ: भेद बताते हैं-

ज्येष्ठानां स्मितहसिते मध्यानां विहसितावहसिते च।
नीचानामपहसितं तथातिहसितं तदेष षड्भेदः।।

अर्थात् बड़े आदमियों में 'स्मित' और 'हसित' होते हैं। मध्यम श्रेणी के लोगों में 'विहसित' और 'अवहसित' हुआ करते हैं। नीच पुरुषों में 'अपहसित' और 'अतिहसित' होते हैं, अतः इन हसन क्रियाओं के भेद से हास्य भी छह भेदों में विभक्त होता है। जहाँ नेत्रों में कुछ विकास हो और ओष्ठ जरा-जरा फड़कें वह 'स्मित' कहलाता है और यदि उक्त क्रियाओं के साथ दाँत भी कुछ-कुछ दीखने लगें तो उसे 'हसित' कहते हैं। इन सबके साथ मधुर शब्द भी हो तो 'विहसित' होता है और यदि कन्धे, सिर आदि में कँपकँपी भी हो तो वह 'अवहसित' कहलाता है। जिसमें आँखों में पानी भी आ जाए वह 'अपहसित' और जिसमें इधर-उधर हाथ-पैर भी पटके जाए वह 'अतिहसित' होता है।

उदाहरण

गुरोर्गिर: पंच दिनान्यधीत्य वेदान्तशास्त्राणि दिनत्रयं च।
अमी समाघ्राय च तर्कवादान् समागताः कुक्कुटमिश्रपादाः।।

अर्थात पण्डितों की सभा में वस्त्रादिकों का आडम्बर रचकर निशंक आते हुए किसी मूर्ख को देखकर किसी परिहासप्रिय पुरुष का वचन है- आगे से हट जाओ। कुक्कुटमिश्रजी आ रहे हैं। आपने प्रभाकर गुरु की सब विद्याएं पाँच दिन में ही चूस ली है और तीन दिन में सम्पूर्ण वेदान्त शास्त्र को साफ कर दिया है।

करुण रस

इष्टनाशादनिष्टाप्ते: करुणाख्यो रसो भवेत्।
धीरैः कपोतवर्णोऽयं कथितो यमदैवतः।।

अर्थात् इष्ट के नाश और अनिष्ट की प्राप्ति से करुणरस आविर्भूत होता है। यह कपोतवर्ण होता है। इसके देवता यमराज है। इसमें स्थायी भाव शोक होता है।

उदाहरण -

'विपिने क्व जटानिबन्धनं तव चेदं क्व मनोहरं वपुः।

अनयोर्घटना विधेः स्फुटं ननु खड्गेन शिरीषकर्तनम्।।'

अर्थात् कहाँ जंगल में जाके जटाओं का बांधना और कहाँ तुम्हारा यह सुकुमार मनोहर देह! विधि का इन दोनों को जोड़ना वैसा ही है जैसा तलवार से सिरस के कोमल फूल का काटना।

इस पद्य में राम वनवास के शोक से व्याकुल राजा दशरथ की, की गई दैवनिन्दा है। इसी प्रकार बन्धुवियोग और धननाशादि के भी उदाहरण जानने चाहिए।

रौद्र रस -

रौद्रः क्रोधस्थायिभावो रक्तो रुद्राधिदैवतः।
आलम्बनमरिस्तत्र तच्चेष्टोद्दीपनं मतम्।।

अर्थात् रौद्ररस में क्रोध स्थायीभाव होता है। इसका वर्ण लाल और देवता रुद्र है। इसमें 'आलम्बन' शत्रु होता है और उसकी चेष्टायें 'उद्दीपन' होती हैं।

उदाहरण -

'कृतमनुमतं दृष्टं वा यैरिदं गुरु पातकं मनुजपशुभिर्निर्मर्यादैर्भवद्भिरुदायुधैः।
नरकरिपुणा साधं तेषां सभीमकिरीटिनामयमसृङ्मेदोमांसैः करोमि दिशां बलिम्।।'

अर्थात् द्रोणाचार्य का वध सुनकर क्रुद्ध अश्वत्थामा की उक्ति है- तुम्हारे जैसे जिन शस्त्रधारी निर्मर्याद नरपशुओं ने यह महापातक किया है अथवा इसमें अनुमति दी है या इसे देखा है उन सबके तथा श्रीकृष्ण, भीम और अर्जुन के रुधिर, चर्बी और मांस से मैं आज दिशाओं को बलि देता हूँ।

वीर रस -

उत्तमप्रकृतिर्वीर उत्साहस्थायिभावकः।
महेन्द्रदैवतो हेमवर्णोऽयं समुदाहृतः।।

अर्थात् उत्तम पात्र (रामादि) में आश्रित वीररस होता है। इसका स्थायीभाव उत्साह, देवता महेन्द्र और रंग सुवर्ण के सदृश होता है।

उदाहरण -

तत्र दानवीरो यथा परशुरामः-
'त्यागः सप्तसमुद्रमुद्रितमहीनिर्व्याजदानावधिः' इति।

दान, धर्म, दया और युद्ध के कारण यह (वीर) चार प्रकार का होता है। 1 दानवीर, 2 धर्मवीर, 3 दयावीर, 4 युद्धवीर। उनमें से दानवीर जैसे परशुराम त्याग इति सातों समुद्रपर्यन्त पृथ्वी का निष्कारण-बिना किसी दृष्टफल की इच्छा के दान कर देना जिन परशुराम के 'त्याग' (दान) की सीमा है। अन्नति यहाँ त्याग में परशुराम का उत्साह, स्थायीभाव है। वह (स्थायी) दानपात्र ब्राह्मणरूप आलम्बनविभाव से तथा उनकी सत्त्वगुणपरायणता आदि उद्दीपनविभायों से विभावित होकर और सर्वस्वपरित्याग आदि अनुभावों से अनुभावित होकर एवम् हर्ष धैर्य आदि संचारीभावों से परिपोषित होकर दानवीररस के स्वरूप में परिणत होता है।

भयानक रस-

भयानको भयस्थायिभावः कालाधिदैवतः।
स्त्रीनीचप्रकृतिः कृष्णो मतस्तत्त्वविशारदैः।।

अर्थात् भयानक रस का स्थायीभाव भय है। देवता काल, वर्ण कृष्ण और इसके आश्रयपात्र स्त्री तथा नीचपुरुष आदि होते हैं। जिससे भय उत्पन्न हो वह (सिंहादि) इसमें आलम्बन और उसकी चेष्टाएँ उद्दीपन मानी जाती है।

उदाहरण -

नष्टं वर्षवरैर्मनुष्यगणनाऽभावादपास्यत्रपाम्।
अन्तः कंचुकिकंचुकस्य विशति त्रासादय वामनः।
पर्य्यन्ताश्रयिभिर्तिजस्य सदृशं नाम्न: किरातैः कृतम्।
कुब्जा नीचतयैव यान्ति शनकैरात्मेक्षषाशंकिनः।।

वानर को देखकर अन्तःपुर के भय का वर्णन बड़े सुन्दर ढंग से किया गया है, जिसमें बन्दर को देखकर हिजड़े, कंचुकी, किरात व कुब्ज भय के मारे अन्तःपुर से पलायन करते हैं।

बीभत्स रस -

जुगुप्सास्थायिभावस्तु बीभत्सः कथ्यते रसः।

नीलवर्णो महाकालदैवोऽयमुदाहृतः।।

अर्थात वीभत्स रस का स्थायीभाव जुगुप्सा, वर्ण नील और देवता महाकाल है। दुर्गन्धियुक्त मांस, रुधिर, चर्बी आदि इसके आलम्बन होते हैं और उन्हीं में कीड़े पड़ जाना आदि उद्दीपन होता है। थूकना, मुँह फेर लेना, आँख मीचना आदि इसके अनुभाव होते हैं।

उदाहरण -

उत्कृत्योत्कृत्य कृत्तिं प्रथममथ पृथूच्छोथभूयांसि मांसा।
न्यंसस्फिक्पृष्ठपिण्डाद्यवयवसुलभान्युग्रपूतीनि जग्ध्वा।
आर्तः पर्यस्तनेत्रः प्रकटितदशनः प्रेतरंकः करंका-
दंकस्थादस्थिसंस्थं स्थपुटगतमपि क्रव्यमव्यग्रमत्ति।।

अर्थात् यह दरिद्र प्रेत अपने अंक (गोद) में रखे हुए इस मुर्दे के देह (करंक) की चमड़ी उधेड़-उधेड़ कर पहले तो कन्धे, चूतड़, पीठ, पिंडली आदि अवयवों के मोटे-मोटे सूजे हुए अतएव सुलभ, दुर्गन्धमुक्त सड़े मांस को खा चुका और उसके खाने पर भी भूख से आर्त आँखें फाड़े, दाँत निकाले, अब हड्डियों में चिपके और जोड़ों में घुसे माँस को भी बिना किसी व्यग्रता के बड़े चाव से चबा रहा है।

अद्भुत रस -

अद्भुतो विस्मयस्थायिभावो गन्धर्वदैवतः।।
पीतवर्णो, वस्तु लोकातिगमालम्बनं मतम्।

अर्थात् अद्भुतरस का स्थायीभाव विस्मय, देवता गन्धर्व और वर्ण पीत है। अलौकिक वस्तु इसका 'आलम्बन' और उसके गुणों का वर्णन उद्दीपन होता है। स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, गद्गदस्वर, सम्भ्रम और नेत्र विकास आदि इसके अनुभाव होते हैं।

उदाहरण-

'दोर्दण्डांचितचन्द्रशेखरधनुर्दण्डावभंगोद्यतष्टंकारध्वनिरार्यबालचरितप्रस्तावनाडिण्डिमः।
द्राक्पयस्तकपालसंपुटमिलब्रह्माण्डभाण्डोदरभ्राम्यत्पिण्डितचण्डिमा कथमहो नाद्यापि विश्राम्यति'।।

अर्थात् भुजदण्ड से उठाए शंकर के धनुष के भंग होने से उत्पन्न हुई टंकारध्वनि, जो आर्य के बालचरित आरम्भ होने का डिण्डिम स्वरूप है, जिसके कारण ब्रह्माण्डरूप पात्र के कपालसम्पुट दोनों भाग पहले झट से प्रक्षिप्त होकर अब आपस में मिल रहे हैं और जिसकी पिण्डीभूत प्रचण्डता ब्रह्माण्ड के उदर में घूम रही है, वह घोर टंकारध्वनि अब भी नहीं थमती। इस पद्य में लक्ष्मण का विस्मय स्थायीभाव है। टंकारध्वनि आलम्बन है। उसकी 'अतिदीर्घता' आदि उद्दीपन हैं। इस प्रकार महिमा का वर्णन अनुभाव है और इस वर्णन से अनुमति हर्ष आदि व्यभिचार है। इन सबके द्वारा अद्भुतरस प्रकट होता है।

शान्त रस -

शान्तः शमस्थायिभाव उत्तमप्रकृतिर्मतः।।
कुन्देन्दुसुन्दरच्छायः श्रीनारायणदैवतः।
अनित्यत्वादिनाऽशेषवस्तुनिःसारता तु या।।

अर्थात शान्तरस का स्थायीभाव शम, आश्रय उत्तमपात्र, वर्ण कुन्दपुष्प तथा चन्द्रमा आदि के समान सुन्दर शुक्ल और देवता भगवान् लक्ष्मीनारायण है। अनित्यत्व दुःखमयत्व आदि रूप से सम्पूर्ण संसार की असारता का ज्ञान अथवा परमात्मा का स्वरूप इस रस में 'आलम्बन' होता है और ऋषि आदि को के पवित्र आश्रम, हरिद्वार आदि पवित्र तीर्थ, रमणीय एकान्तवन तथा महात्माओं का संग आदि उद्दीपन विभाव होते हैं। रोमांच आदि इसके अनुभाव होते हैं। निर्वेद, हर्ष, स्मरण, मति, प्राणियों पर दया आदि इसके संचारीभाव होते हैं।

उदाहरण -

'रथ्यान्तश्चरतस्तथा धृतजरत्कन्थालवस्याध्वगैः
सत्रासं च सकौतुकं च सदयं दृष्टस्य तैर्नागरैः।
निर्व्याजीकृतचित्सुधारसमुदा निद्रायमाणस्य मे
निःशंकः करटः कदा करपुटीभिक्षां विलुण्ठिष्यति।।'

अर्थात् हे भगवन्! वह कौन सा दिन होगा जब फटी गुदड़ी का टुकड़ा लपेटे, गली में घूमते हुए तथा किसी नगरनिवासी से भयपूर्वक, किसी से कौतूहलपूर्वक और किसी से दयापूर्वक देखा गया मैं, वास्तविक आत्मज्ञान के अगन्द अमृतरसमय आनन्द से निद्रायमाण (समाधिमग्न) होऊँगा और निःशंक कौआ मेरे हाथ

पर रखी भिक्षा को विश्वासपूर्वक खायेगा। शकार और ककार के पूर्व आये अनेक विसर्गों से श्रुतिकटुत्व आ गया है, जो शान्त रस के प्रतिकूल है।

वात्सल्य रस-

> **स्फुटं चमत्कारितया वत्सलं च रसं विदुः।**
> **स्थायी वत्सलतास्नेहः पुत्राद्यालम्बनं मतम्।।**

अर्थात् प्रकट चमत्कार होने के कारण कोई-कोई वात्सल्य रस भी मानते हैं। इसमें वात्सल्य स्नेह स्थायी होता है। पुत्रादि इसका आलम्बन और उसकी चेष्टा तथा विद्या, शूरता, दया आदि उद्दीपन विभाव होते हैं। आलिंगन, अंगस्पर्श, सिर चूमना, देखना रोमांच आनन्दानु आदि इसके अनुभाव होते हैं। अनिष्ट की आशंका, हर्ष, गर्व आदि संचारी होते हैं। इसका वर्ण कमलगर्भ के समान और ब्राह्मी आदिक माताएं इसकी अधिष्ठात्री देवियां हैं।

उदाहरण -

> **'यदाह धात्र्या प्रथमोदितं वचो ययौ तदीयामवलम्ब्य चांगुलिम्।**
> **अभूश्च मूंच नम्रः प्रणिपातशिक्षया पितुर्मुदं तेन ततान सोऽर्भकः।।'**

अर्थात् वह बालक रघु, धाई के कहे हुए वचनों को तुरन्त कह देता था। उसकी उँगली पकड़कर चलता था और प्रणाम करने को कहते ही नम्र हो जाता था। इससे पिता के आनन्द को परिवर्धित करता था।

23.3.1 रसों का परस्पर विरोध, भावात्मक रसानुभूति

उपर्युक्त रसों में कुछ का पारस्परिक विरोध होता है। विश्वनाथ ने रसों के पारस्परिक विरोध को तो यहीं गिना दिया है परन्तु रस, विरोध में परिहार व प्रकार सातवें परिच्छेद में गिनाते हैं।

रति आदि स्थायी भावों के अतिरिक्त अन्य भाव स्थायी नहीं होते। कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि रति आदि के अतिरिक्त भी कोई भाव काव्य में प्रकृष्ट रूप से वर्णित हो। जैसे महाकवि कालिदास के विक्रमोर्वशीयनाटक के चौथे अंक में नायक पुरुरवा का उन्माद ही वर्णित है। परन्तु यह भाव स्थायी नहीं है क्योंकि वह किसी पात्र में स्थायी रूप से नहीं रहता। इसलिए इसे स्थायी भाव नहीं कहते।

यहाँ तक रस रूप रसानुभूति का विवरण दिया है। अब शेष सात प्रकार की अनुभूतियों का वर्णन करेंगे क्योंकि ये सभी अनुभूतियाँ रस्यते, आस्वादयते इति रस, अर्थात् जिसका आस्वाद लिया जाता है- वह रस है। इस व्युत्पत्ति के अनुसार रसात्मक ही है हालांकि वे रस के नौ भेदों के बाहर है। इन अनुभूतियों का परिचय आपको प्रथम परिच्छेद के अन्त में ही दिया जा चुका है।

भावात्मक रसानुभूति

भावानुभूति तीन प्रकार की हो सकती है- 1. संचारी भाव का प्रधान रूप से वर्णन, 2. देवता आदि विषयक रति, 3. उद्‌बुद्ध मात्र स्थायी भाव।

1. काव्य में रस की ही प्रधानता होती है। परन्तु कई स्थानों पर रस की उपेक्षा व्यभिचारी भाव ही प्रमुख रूप से भासित होता है तथा रस गौण रूप से। वहाँ पर रसानुभूति ही होती है। जैसे राज्य में सर्वत्र राजा ही प्रमुख होता है। परन्तु किसी अनुचर के विवाह में सम्मिलित होने पर वह गौण तथा नृत्य प्रधान होता है उसी प्रकार कभी-कभी रस गौण तथा भाव (व्यभिचारी भाव) प्रधान होता है।

2. नायक-नायिका की रति को छोड़कर शेष रति का परिपाक भाव कोटि में ही माना जाता है।

3. यहाँ स्थायी भाव केवल अंकुरित होकर ही रह जाए अर्थात् विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों की उचित योजना के अभाव में रसरूपता प्राप्त न हो सके, वहाँ पर भी भावानुभूति ही होती है, रस संज्ञक अनुभूति नहीं।

संचारी भाव की प्रमुखता कैसे

यद्यपि विभाव, अनुभाव तथा संचारी भाव की सम्मिलित अनुभूति प्रपाणक के रस के समान संचलित रूप में ही स्वदित होती है फिर भी जैसे प्रपाणक के रस में मिर्च अथवा खांड का आधिक्य हो सकता है, इसी प्रकार विभावादि में संचारी भाव का प्राधान्य हो सकता है।

रसाभास तथा भावाभास

वहाँ पर रसानुभूति तथा भावानुभूति के लिए उपयुक्त सामग्री का उपनिबन्धन नहीं होता वहाँ रसाभास के रूप में भी रसानुभूति होती है, रस तथा भाव के रूप में नहीं। औचित्य का विधान ही रसाभासता या भावाभासता का कारण होता है।

किसी भाव की शान्ति, उदय, सन्धि अथवा मिश्रण होने से यथाक्रम भावशान्ति, भावोदय, भावसन्धि और भावशबलता कहलाती है।

भावशान्ति

जहाँ किसी प्रवृत्त भाव के शमन होने का वर्णन ही हृदयावर्जक होता है वहाँ भावशान्ति नामक रसानुभूति होती है।

सुतनु जहिहि कोपं पश्य पादानतं मां, न खलु तव कदाचित्कोप एवं विधोऽभूत।
इति निगदति नाथे तिर्यगामीलिताक्ष्या नयनजलमनल्पं मुक्तमुक्तं न किंचित्।।

अर्थात् हे सुतनु, क्रोध छोड़ो देखो मैं तुम्हारे पैरों पर गिरा हूँ। ऐसा कोप तो तुम्हें कभी नहीं हुआ था। स्वामी के कुछ मीलित तिरछे नयनों से युक्त उस भामिनी ने आँसू बहुत बहाए परन्तु कुछ बोली नहीं। इस श्लोक मेंअश्रुमोचन द्वारा ईर्ष्या नामक संचारीभाव का शसन सहृदयों को आह्लादित करता है, अतः यहाँ भावशान्ति नामक रसानुभूति है।

भावोदय

जहाँ किसी भाव का उदित होना वर्णित होता है तथा हृदय को आह्लादित करता है वही भावोदय नामक रसानुभूति होती है।

चरणपतनप्रत्याख्यानात्प्रसादपरांगमुखे निभृतकितवाचरेत्युक्त्वा रुषा परुषीकृते।
व्रजति रमणे निःश्वस्योच्चैः स्तनस्थितहृस्तया नयनसलिलच्छन्ना दृष्टिः सखीषु निवेशिता।।

चरणपतन (प्रणाम) का भी तिरस्कार करने से प्रसन्नता के विषय में निराश तथा 'हे प्रच्छन्न धूर्ताचार' इस शब्द को (नायिका के मुख से) सुनकर रुष्ट प्रियतम को लौटा जाते देख, छाती पर हाथ रखकर उस कामिनी ने गहरी साँस ली और आँसू भरी दृष्टि सखियों की ओर डाली। यहाँ नायिका के विवाद का उदय 'आँसू भरी आँखों में सखी को देखा' इस अनुभाव से व्यक्त है। अतः यहाँ भावोदय नामक रसानुभूति है।

भावसन्धि

जहाँ दो भागों का मेल (समान रूप से स्थिति) वर्णित हो, वहीं भाव संधि नामक रसानुभूति मानी जाती है।

नयनयुगासेचनकं मानसवृत्त्यापि दुष्प्रापम्।
रूपमिदं मदिराक्ष्या मदयति हृदयं दुनोति च मे।।

अर्थात् मस्त नेत्र वाली सुन्दरी का सुन्दर रूप मेरे हृदय को आनन्दित करता है और दुःखी भी करता है। यहाँ रूप द्वारा एक ही साथ 'मस्त करना तथा दुःख देना' इन दोनों भावों की स्थिति वर्णित है, अतः यहाँ भाव संधि नामक रसानुभूति है।

भावशबलता

जहाँ अनेक भावों की स्थिति एक ही साथ वर्णित होती है वहाँ भावशबलता नामक रसानुभूति होती है।

क्वाकार्यं शशलक्ष्मणः क्व च कुलं, भूयोऽपि दृश्यते सा,
दोषाणां प्रशमाय नः श्रुतमहो कोपेऽपि कान्तं मुखम्।
किं वक्ष्यन्त्यपकल्मषाः कृतधियः, स्वप्नेऽपि सा दुर्लभा,
चेतः स्वास्थ्यमुपैहि, कः खलु युवा धन्योऽधरं पास्यति।।

अन्य अप्सराओं के साथ उर्वशी के स्वर्ग को चले जाने पर विरहोत्कण्ठित राजा पुरूरवा के मन में उठते हुए अनेक प्रकार के विचारों का इस पद्य में यथाक्रम वर्णन है। 1 कहाँ तो यह निषिद्ध आचरण और कहीं मेरा निर्मल चन्द्रवंश। 2 क्या फिर भी कभी वह दीख पड़ेगी? 3 ओ! यह क्या? मैंने तो कामादि दोषों के दबाने वाले शास्त्र पढे हैं। 4 ओहो, क्रोध में भी अतिकमनीय वह उसका मुख! 5 भला, मेरे इस आचरण से निष्कल्मष तथा हर एक बात को परखने वाले विद्वान् लोग क्या कहेंगे? 6 हाय! वह तो अब स्वप्न में भी

दुर्लभ है। 7 हे चित्त, धीरज घर, 8 न जाने कौन बड़भागी उसके अधरामृत का पान करेगा? इस पद्य में पहले वाक्य से वितर्क, दूसरे से उत्कण्ठा, तीसरे से मति, चौथे से स्मरण, पाँचवें से शंका, छठे से दैन्य, सातवे से धैर्य और आठवें से चिन्ता प्रतीत होती है। अतः अनेक संचारी भावों के मिश्रण होने से यह पद्य भावशबलता का उदाहरण है।

- **स्वयं आकलन प्रश्न**

    1. हास्य के कितने भेद है?
    2. विश्वनाथ ने शृंगार के कितने प्रकार बताए है?
    3. विश्वनाथ के अनुसार वीर रस कितने प्रकार का होता है?
    4. करुण रस का स्थायी भाव क्या होता है?
    5. हास रस का वर्ण क्या होता है?
    6. रौद्र रस के देवता कौन है?
    7. बीभत्स रस का स्थायी भाव क्या है?
    8. शान्त रस के देवता कौन है?

23.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में रसों के भेदों-प्रभेदों का वर्णन वणित है। भावशान्ति, भावोदय, भावसन्धि, भावशबलता उदाहरण सहित वर्णित है।

23.5 कठिन शब्दावली

1. लोकोत्तर - अलौकिक2. **विलक्षण विशेष-** लक्षण से युक्त3. **अन्यथा-** नहीं तो 4. **शृंग -** कामदेव के उद्भेद।

23.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. छः, 2. दो,3. चार, 4. शोक, 5. शुक्ल, 6. रुद्र. 7. जुगुप्सा, 8. भगवान् लक्ष्मीनारायण।

23.7 सहायक ग्रन्थ

1.	कादम्बरी	-	सं० कृष्णमोहन शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2.	कादम्बरी कथामुख	-	सं० राधे श्याम शर्मा, साहित्य सरोवर आगरा, उत्तरप्रदेश।
3.	साहित्य दर्पण	-	सं० शालिग्राम शास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

4. बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन - अक्षरनाथ पाण्डेय भारतीयविद्या प्रकाशन यू० बी० बंग्लो रोड जवाहर नगर दिल्ली-7

5. बाणभट्ट-ए लिटरेरी स्टडी - नीता शर्मा मुंशीराम मनोहर लाल दिल्ली।

6. साहित्यदर्पण - सं० डॉ० सत्यव्रत सिंह चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

23.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. वीर रस उदाहरण सहित परिभाषित कीजिए।
2. शान्त रस उदाहरण सहित परिभाषित कीजिए।
3. हास्य रस के कितने भेद होते हैं? उदाहरण सहित परिभाषित कीजिए।
4. भावशान्ति भावोदय, भावसन्धि, भावशबलता उदाहरण सहित परिभाषित कीजिए।

समनुदेशन (Assignment) हेतु प्रश्न

समनुदेशन (Assignment) लिखकर अन्तर्राष्ट्रीय दूरवर्ती शिक्षा एवं मुक्त अध्ययन केन्द्र को भेजे।

निम्नलिखित में से किन्हीं चार प्रश्नों के उत्तर लिखिये।

1. कादम्बरी की कथावस्तु का सार लिखिए।
2. राजा शूद्रक का चरित्र-चित्रण प्रतिपादित कीजिए।
3. महाकवि बाणभट्ट का जीवन परिचय लिखो।
4. आचार्य विश्वनाथ के अनुसार काव्य का प्रयोजन लिखिए।
5. लक्षणा उदाहरण सहित लिखिए।
6. रस के स्वरूप का निरुपण और उसके आस्वादन का प्रकार बताइए।
7. आचार्य विश्वनाथ के अनुसार रस उदाहरण सहित लिखिए।